ग्यारहवाँ प्रकरण।

दीवान-ए-आम।

तरह तरहके अलंकारोंसे अलंकृत रूप-यौवनसम्पन्ना स्त्रीकी शोभा जिस प्रकार कुंकुम-तिलकके अभावके कारण अपूर्ण रहती है, अथवा अमावास्याका स्वच्छ आकाश-मण्डल असंख्य तारोंके रहते हुए भी जिस प्रकार चन्द्रमाके विना निस्तेज जान पड़ता है, उसी तरह आज दीवान-ए-आम भी शोभाहीन और फीका जान पड़ता था। इस लोकका स्वर्ग कहे जानेवाले दीवान-ए-आमको सजानेके लिए आर्थिक व्यय या शारीरिक परिश्रम करनेमें किसी प्रकारकी कमी नहीं की गई थी। वड़े वड़े वजीर, मशीर, अमीर, सरदार, माण्डलिक राजे, नवाव, जागीरदार और शाही खानदानके लोग वड़े अदव-कायदेसे अपने अपने स्थानपर बैठे हुए थे। उनके बढ़िया बढ़िया कपड़े, तरह तरहके वहुमूल्य जड़ाऊ गहने, एकसे एक बढ़कर अलग अलग ठाठ और स्वरूप आदि देखकर जान पड़ता था कि वे परमेश्वरकी मानवी-रचनाओंकी एक अच्छी खासी प्रदर्शिनी हैं। दरवारियोंकी शान-शौकतमें किसी तरहकी कमी नहीं थी। सारा दरवार सुगन्धित फूलों और इत्रोंकी मनोहर महकसे भरा हुआ था। वहुत दूर पर चारों ओर चार नक्कारखानोंमें मधुर शहनाइयाँ वज रही थीं। सव लोग शान्त होकर मूर्तियोंकी तरह वैठे हुए दरवारकी शोभा वढ़ा रहे थे। पर वह शोभा थी कि वढ़ना जानती ही न थी। विना सौभाग्यालंकारके, दूसरे सैकड़ों गहने रहते हुए भी, क्या कभी किसी वालाके मुखकी शोभा वढ़ सकती है? विना चन्द्रमाके क्या आकाश सुशोभित हो सकता है? तव फिर दरवार-ए-आमके सौभाग्यतिलकके विना, दीवान-ए-आमके चन्द्रमाके विना दरवारकी शोभा क्योंकर वढ़ सकती थी?

वादशाह आलमगीरका तख्त-ताऊस अभी तक ज्योंका त्यों खाली था। अधिकांश लोग तो वादशाहके आनेकी प्रतीक्षामें ही थे; पर कुछ थोड़ेसे चुने हुए वजीरों और सरदारोंको मन-ही-मन इस विषयमें कुछ शंका थी। वादशाह सलामत वहुत दिनोंसे वीमार थे और उनके स्वास्थ्यके सम्वन्धमें किसीको ठीक ठीक समाचार न मिलता था। शाही फरमानोंका पालन करनेके लिए दरवारमें

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-का २२ वाँ ग्रन्थ।

छत्रसाल ।

मराठी भाषाके एक सुप्रसिद्ध
ऐतिहासिक उपन्यासका
हिन्दी अनुवाद ।

अनुवादकर्त्ता—

श्रीयुत बाबू रामचन्द्र वर्मा,

सम्पादक नागरीप्रचारिणीपत्रिका और

हिन्दी शब्दसागर ।

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

दिसम्बर, सन् १९

[मूल्य २॥)] तृतीयावृत्ति । [सादीका मूल्य १॥)]

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी, मालिक
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई।

मुद्रक—
डी. एस. सांखळकर,
लोकसेवक प्रेस, खटाव बिल्डिंग,
गिरगांव, बम्बई नं. ४.

निवेदन ।

आधुनिक हिन्दी-साहित्यमें प्रायः उपन्यासोंकी ही भरमार है; और उन उपन्यासोंका भी अधिकांश बंगलासे ही अनुवादित है । यद्यपि भारतकी अन्यान्य देशी भाषाओंमें भी बहुतसे अच्छे उपन्यास और दूसरे ग्रन्थ हैं; पर न जाने क्यों हिन्दीके लेखक उनसे बहुत ही कम काम लेते हैं । हिन्दी-सेवियोंको इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

मराठी भाषा बहुत ही उन्नत और पुष्ट है । उसके सेवियोंमें केवल अनुवादक ही नहीं बल्कि बहुतसे लेखक भी हैं । श्रीयुत वालचन्द नानचन्द शाह वकील भी उन्हींमेंसे एक नये, पर होनहार लेखक हैं । आपने 'सम्राट्-अशोक' नामक एक बहुत अच्छा उपन्यास लिखा है । आपकी रचना-चातुरीसे प्रसन्न होकर सुप्रसिद्ध देशभक्त दादासाहब खापर्डेने सम्मति दी है कि आप मराठी भाषाके सर वाल्टर स्काट होंगे । प्रस्तुत पुस्तक आपके ही लिखे हुए छत्रसाल नामक उपन्यासका अनुवाद है । पुस्तककी उपयोगिता आदि सिद्ध करनेके लिए केवल इतना ही बतला देना यथेष्ट है कि 'केसरी' और 'इन्दुप्रकाश' आदि अच्छे अच्छे पत्रोंने उसकी बहुत अच्छी आलोचना और श्रीयुत शिवराम महादेव परांजपे तथा श्रीयुत दादासाहब खापर्डेने बहुत प्रशंसा की है ।

औरंगजेबके राजकालमें बुन्देलखण्डको मोगलोंके अधिकारसे निकालकर स्वतन्त्र करनेके लिए महेवाके राजा (बल्कि जागीरदार) चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसालको जितना परिश्रम और जैसी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था उनका इस पुस्तकमें बहुत ही उत्तम वर्णन है । सभी युगों और देशोंमें देशसेवी भी होते हैं और देशद्रोही भी और इस पुस्तकमें दोनों प्रकारके लोगोंके कार्य आदि दिखलाये गये हैं । इस पुस्तकसे सबसे बड़ी शिक्षा इसी बातकी मिलती है कि जो कार्य्य—विशेषतः देशसेवाका कार्य्य—सच्चे हृदयसे, परोपकारके विचारसे और दृढतापूर्वक किया जाता है वह अन्तमें अवश्य पूरा हो जाता है । इस उपन्यासके नायक छत्रसाल बहुत बड़े वीर, प्रतापी, और देश-हितैषी थे, इस लिए देशसे कुछ भी प्रेम रखनेवाले मनुष्यके लिए यह उपन्यास बड़े ही महत्त्वका और अवश्य पठनीय है । इसके पढ़नेसे हृदयमें स्वाभिमानकी जाग्रति होगी, इसमें कोई सन्देह नहीं । सुन्दर चरित्रांकन और मनोहर स्थल-वर्णन इस उपन्यासरूपी स्वर्णमें मानों सुगन्ध हो गये हैं ।

हमारी समझमें चरित्रांकनमें थोड़ासा दोष आ गया है, पर तो भी अनेक कारणोंसे वह क्षम्य है। मूल पुस्तकमें बादशाही महलोंके दृश्य दिखलाते समय कुछ असंबद्धता आ गई है, पर इसका कारण केवल यही है कि लेखक महाराष्ट्र हैं और वे शाही महलोंकी रीति नीति आदिसे यथेष्ट परिचित नहीं हैं। कंचुकीरायका चरित आवश्यकतासे कहीं अधिक नीच, तुच्छ और घृणित दिखलाया गया है। तीसरे प्रकरणमें कंचुकीरायको जनाने वेशमें रणदूलहखाँके पास भेजा है और वहाँ उनसे खाँके पैर दबवाये हैं। औरंगजेबकी बेगम आयेशाको राजा शुभकरणकी बहन सिद्ध किया है। इनके अतिरिक्त कई ऐतिहासिक और नाम-सम्बन्धी भूलें भी हैं। चम्पतरायको 'महोबा' का राजा लिखा है जो वास्तवमें 'महेवा'के जागीरदार थे। महोबा और महेवा जुदा जुदा स्थान हैं।

पर तो भी पुस्तकमें जितने गुण हैं उन्हें देखते हुए उक्त दोष विशेष महत्त्वके नहीं रह जाते। इस अनुवादमें यथासाध्य वे दोष निकाल दिये गये हैं। जो बातें बहुत अनावश्यक, अनुचित या असंबद्ध जान पड़ी हैं वे या तो छोड़ दी गई हैं और या बदल दी गई हैं। इसके अतिरिक्त मूल पुस्तकका चौबीसवाँ प्रकरण बिलकुल ही छोड़ दिया गया है; क्योंकि उसमें राजा शुभकरणकी दिल्लीके शाही महलमें उनकी बहन आयेशा (असली ललिता) से भेंट कराई गई है। पर इस अनुवादमें ललिताका आयेशा होना इस लिए सिद्ध नहीं किया गया है कि बुन्देलखण्डके राजकुलकी कोई कुमारी मोगलोंके महलोंमें नहीं गई।

आशा है, एक परम शिक्षा-प्रद, मनोहर और उच्च कोटिके उपन्यासका यह अनुवाद पाठकोंको रुचिकर होगा।

काशी,
१ जून १९१६

निवेदक—
रामचन्द्र वर्म्मा।

कृतज्ञता-प्रकाश।

छत्रसालके मूल लेखक श्रीयुत बालचन्द नानचन्द शाह वकील और प्रकाशक श्रीयुत बालचन्द रामचन्द कोठारी बी० ए० महाशयके हम बहुत ही कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने इस अपूर्व उपन्यासके हिन्दी अनुवादको प्रकाशित करनेकी आज्ञा देकर हमें बहुत ही उपकृत किया है। आप लोग यदि आज्ञा न देते, तो हिन्दी संसार इस अभिनव रचनाके आस्वादसे वंचित रहता।

—प्रकाशक।

छत्रसाल ।

पहला प्रकरण ।

देवीका प्रसाद ।

'जय ! विन्ध्यवासिनी देवीकी जय !' मुक्त-कंठसे जय-घोष करते हुए चम्पतरायके मनमें तरह तरहके भावोंकी विमल लहरें उठने लगीं। उनके चेहरे पर मनकी उच्चताकी मनोहर झलक दिखाई देने लगी। उनके स्वभावतः गम्भीर और तेजस्वी चेहरेपर सुजनता और अभिमानका अलौकिक चित्रसा खिंच गया। भक्तिकी पराकाष्ठा दिखलानेके अभिप्रायसे देवीके चरणोंपर अपना सिर अर्पित करनेके लिए उद्युक्त बुंदेले राज-घरानेके मूल-पुरुषका स्मरण करके उनका प्रेमभाव जाग्रत हुआ और देवीकी कृपासे अपनी तलवारके भरोसे पर स्वावलंबन और स्वतंत्रताका मार्ग ग्रहण करनेवाले अपने प्रपितामह रुद्रप्रतापका स्मरण करके उनके मनमें अभिमानका संचार हुआ। दोनों एक ही देवीके भक्त थे। परन्तु उन दोनोंकी उपासना करनेकी पद्धति अलग अलग थी। एकने देवीके सामने अपना रक्त बहाकर बुंदेले राज-वंशकी स्थापना की थी और दूसरेने अपने शत्रुओंका रक्त बहाकर बुंदेले राज-वंशका नाम उज्ज्वल किया था। मन्दिरमें प्रवेश करनेके समय चम्पतरायकी आँखोंके सामने अपने कुलकी उत्पत्ति और वैभवका चित्र खिंच गया। उनकी आँखोंमें प्रेमाश्रु भर आये। अभिमानके कारण उनके सारे शरीरमें रोमांच हो आया। मन्दिरके मंडपमें देवीके सामने पहुँचकर उन्होंने पुनः देवीका जयजयकार किया। परन्तु उस समय उन्हें देवीके दर्शन न हुए। चम्पतरायको इस बातके कारण बहुत आश्चर्य हुआ कि बहुत

दूरसे तो मुझे देवीके दर्शन हो गये पर बहुत पास पहुँचनेपर दर्शन न हुए उन्होंने अपने उद्विग्न मनको शान्त किया; रोल्हेके किनारेसे उन्होंने अपने, आँखोंके आँसू पोंछे: तब कहीं जाकर उन्हें दिखलाई पड़ा कि विन्ध्यवासिनी देवी सोनेके सिंहासनपर अचल रूपसे बैठी हुई हैं ।

ज्यों ही चम्पतराय देवीके दर्शन करके वहाँसे हटने लगे त्यों ही फिर देवीका जयजयकार हुआ । उस जयजयकारके कारण चम्पतरायको कुछ आश्चर्य हुआ । आज देवीका वार्षिक शृंगार और उत्सव था, इसलिए वे अच्छी तरह जानते थे कि अपनी कुलदेवीके दर्शनोंके लिए विंध्याचलपर सारे बुंदेलखंडी उमड़ पड़े हैं । वे अच्छी तरह जानते थे कि देवीके जय-कारों और उनकी प्रतिध्वनि-योंसे महोत्सवके दिन वह सारा वन्यप्रदेश गूँज उठता है । इतना होनेपर भी जयजयकारकी ध्वनि सुनते ही चम्पतराय चकित हो गये । उस काँपती हुई और बहुत ही धीमी आवाजसे उन्होंने अनुमान करलिया कि यह जय-ध्वनि किसी मरणोन्मुख वृद्धके गलेसे निकली है । उन्होंने पीछे उलटकर देखा कि रणवीर शुभकरण खड़े हैं । चम्पतराय यह न समझ सके कि रामरक्षेत्रमें समरतेजसे विचरनेवाला वीर देवीके सामने इतना भीरु क्यों हो गया । अपनी भीषण गर-जसे सारे जंगलको कँपा देनेवाले शेरकी तरह समरभूमिको कँपाकर शत्रुओं पर अपनी वीरताका सिक्का जमानेवाला रणकेसरी देवीके मन्दिरमें पहुँचकर गीदड़ोंकी तरह क्यों बोला । चम्पतरायकी समझमें यह बात न आई कि देवीका जयजयकार करते समय मेरा मन जैसा प्रफुल्लित और प्रसन्न रहता है वैसा ही उनका भी क्यों नहीं है; किसी पातकी मनुष्यकी तरह उनका मुँह काले ठीकरेसा क्यों हो गया है; उनकी आवाज इतनी निःसत्व क्यों हो रही है । चम्पतरायके शुभकरण कट्टर वैरी थे । परन्तु शुभकरणकी वह शोचनीय दशा देखकर चम्पत-रायको बहुत दुःख हुआ । वे उनकी ओर करुणाकी दृष्टिसे देखने लगे । उस समय उन्हें शुभकरणके गालोंपर दो बूँद आँसू चमकतेहुए दिखाई दिये । वे उसी समय ताड़ गये कि वे आँसू प्रेमके नहीं बल्कि दुःखके हैं; रणधीर शुभ-करण अपने किये हुए दुष्कर्मोंके लिए पश्चात्ताप और शोक कर रहे हैं । चम्पत-रायको अपनी और शुभकरणकी बाल्यावस्थाके वे दिन याद आगये जब कि वे दोनों मिलकर स्वावलंबनकी बातें किया करते थे और अपनी जन्म-भूमि बुंदेल-खंडको यवनोंके दासत्वसे मुक्त करनेके उपाय सोचा करते थे । उन्हें यह भी

स्मरण हो आया कि बाल्यावस्थाके मधुर स्वप्नका आनन्द लेनेके समय अकस्मात् बीचमें ही हम लोगोंकी मित्रता और उसके साथ हमारी सारी कल्पनाओंका किस प्रकार विनाश हो गया और परस्पर एक दूसरेकी सहायता करनेवाली तलवारें किस प्रकार एक दूसरेकी खूनकी प्यासी हो गईं। उन्होंने एक वार फिर अपने लड़कपनके मित्रकी ओर देखा। वे अच्छी तरह समझ गये कि यद्यपि बाल्यावस्थाके कल्पनाओंके अंकुरसे बड़ा वृक्ष न तैयार हुआ हो तो भी वह अंकुर पहलेकी तरह ज्योंका त्यों बना है, उसका समूल नाश नहीं हुआ है। यह सोचकर चम्पतरायके मनमें कुछ दुःख हुआ कि हमने आजतक अपने मित्रके मनवाले अंकुरको बढ़ने न दिया बल्कि समय समयपर उसपर आघात किया; उनके अविवेक और विचारशून्यताका उचित बदला लेकर ही हम सन्तुष्ट हुए। उन्होंने उसी समय मनमें निश्चय किया कि अब तक जो कुछ भूल हुई है उसका सुधार होना चाहिए और अपने मित्रके मानसिक दोषका कारण पूछकर उसे निर्मूल करना चाहिए। अपने पुराने मानापमानकी सब बातें वे भूल गये। चम्पतराय मेल करनेके लिए ज्यों ही कुछ बोलना चाहते थे त्यों ही उन्होंने देखा कि शुभकरण मेरी ओर करुणादृष्टिसे देख रहे हैं और दूर खड़े हुए दाँड़ेरके राजा कंचुकीरायसे बातें कर रहे हैं। मानी चम्पतरायका स्वाभिमान फिर जाग्रत हुआ। वे मन-ही-मन यह निश्चय करके पासके एक आसनपर बैठ गये कि इस देशद्रोहीके प्राण लेकर इसकी लाशपर ही बुंदेलखंडकी स्वतंत्रताका झंडा खड़ा करना चाहिए।

बाल्यावस्थाकी शुभकरणकी प्रेमपूर्वक मित्रताका स्मरण करके तो चम्पतरायका हृदय पुराने प्रेमसे भर जाता था और उसके उपरान्तका उनका दुष्टतापूर्ण व्यवहार याद करके तुरन्त ही उनके मनमें घृणा उत्पन्न हो आती थी। इतनेमें ओड़छेके राजा पहाड़सिंह और उनकी रानी हीरादेवीका वहाँ सपरिवार आगमन हुआ। उनके चोपदार तथा दूसरे सेवक उस समय भी उनके साथ थे। ज्यों ही राजा पहाड़सिंहकी सवारी मन्दिरके दरवाजेके पास पहुँची त्यों ही उनके चारणों और भाटोंने ललकारकर उनकी विरुदावलीका बखान आरम्भ किया। कदाचित् यह जाननेके लिए कि देवी इस ललकारका क्या उत्तर देती है उनकी सवारी थोड़ी देर तक दरवाजेपर ही रुकी रही। अभिमानी पहाड़सिंह और उनके चारणों आदिको यह बतलानेके लिए कि यह गर्वोक्ति देवीको स्वीकार नहीं है, उनकी ललकारका प्रत्येक शब्द प्रतिध्वनिके रूपमें उनके कानोंतक

पहुँचा। उसे सुनकर पहाड़सिंह मुस्कराए; उन्होंने अपने मनमें समझा कि स्वयं देवी अपने मुँहसे कह रही है कि वन्दीजनोंकी ये सब बातें सत्य हैं। यह देख-कर कि देवीने हमारे स्वामीकी महत्ता स्वीकार कर ली है, वन्दीजनों, चोपदारों और दूसरे सेवकोंने जोरसे जय-घोष किया। चाहे यह कह लीजिए कि उस जयजयकारमें सम्मिलित होनेमें पहाड़सिंह और उनकी रानीने अपनी अप्रतिष्ठा समझी और चाहे यह मान लीजिए कि उन्होंने बड़े आदमी होकर सब लोगोंके सामने ईश्वरका नाम लेना उचित नहीं समझा, पर उन लोगोंके मुँहसे उस समय एक भी शब्द न निकला। वे दोनों उसी प्रकार सिर उठाये हुए मन्दिरमें घुसे और चम्पतरायसे जहाँ तक दूर हो सका एक ऊँचे आसनपर जा बैठे। चम्पत-राय उनके चचेरे भाई थे; वे उन्हें ओड़छेका राज्य दिलवानेवाले और उनके हितकर्ता थे। उनके पास जाकर उनसे शिष्टाचारकी बातें करना तो दूर रहा, उन दोनोंने शान्त और सौम्यभावसे उनकी ओर देखना भी उचित न समझा। मत्सर, क्रोध और तुच्छता आदि विकारोंसे कलंकित दृष्टिसे देख कर ही वे दोनों अपने उपकार करनेवालेके उपकारोंका बदला दे रहे थे।

पहाड़सिंह और उनकी रानीका आजका व्यवहार देखकर चम्पतराय बहुत ही चकित हुए। कार्य्य सिद्ध होने तक—ओड़छेके राजसिंहासनपर पूरा पूरा अधिकार पानेके समय तक—हमारे चचेरे भाई पहाड़सिंह हमारे साथ कितना अच्छा व्यवहार करते थे, उनकी पत्नी हीरादेवी हमारा कितना आदरसत्कार करती थी, परंतु ओड़छेका राजमुकुट सिरपर धारण करते ही पहाड़सिंहका नम्र जानपड़नेवाला मस्तक कितना उद्धत हो गया, हीरादेवीका पहलेका आदर-सत्कार फीका पड़ता पड़ता अन्तमें किस प्रकार बिलकुल मायावी प्रमा-णित हुआ, आदि आदि सब बातोंका चित्र चम्पतरायकी आँखोंके सामने खिंच गया। चम्पतरायने स्वप्नमें भी इस बातका अनुमान नहीं किया था कि दिखौआ व्यवहारके स्वच्छ परदेकी आड़में उनका कितना निन्दनीय स्वभाव छिपा हुआ है। वे आज तक पहाड़सिंहका उपकार ही करते आये थे। हीरादेवीके आजके वैभव और अभिमानके कारण ये ही थे। उन्होंने पहाड़सिंह या हीरादेवीका कोई ऐसा उपकार नहीं किया था जिसके कारण वे लोग उनके साथ मत्सर और द्वेष करते अथवा उनकी ओर तुच्छतापूर्ण दृष्टिसे देखते। अपने पराक्रमसे मुसलमानोंके अधिकारसे ओड़छेका प्रबल राज्य निकाल कर और उस-

पर परावलंबी पहाड़सिंह और हीरादेवीका अधिकार कराके चम्पतराय महेवाकी अपनी छोटीसी जागीर पर ही संतुष्ट रहे थे। जिस ओड़छा राज्यपर उन्होंने स्वयँ अधिकार किया था उसपर अधिकार बनाये रखनेकी उन्हें कभी इच्छा नहीं हुई। उनके इस उदार व्यवहार और अलौकिक उपकारके वदलेमें ही उन्हें पहाड़सिंहके मत्सर, क्रोध और तुच्छता आदिभाव इनाममें मिले थे। अस्तु।

बुंदेलखंडके सब राजा-महाराजाओंको अपने अपने स्थानपर बैठे हुए देखकर मन्दिरके मुख्य पुजारी चम्पतरायके पास पहुँचे और हाथ जोड़कर कहने लगे— "राजन्, देवीकी पूजाकी सव सामग्री तैयार है। यहाँके प्रधान प्राणनाथ महाराज पूछते हैं कि पूजा आरम्भ हो अथवा अभी और कोई आनेवाला है?"

चम्पतरायने कहा—"आजका पुण्यमहोत्सव देखनेके लिए प्रतिवर्षके नियमानुसार सभी बुंदेले नृपति यहाँ आगये हैं। महाराजसे जाकर मेरी ओरसे प्रार्थना करो कि अव पूजा आरम्भ कर दी जाय।" इसके वाद इधर उधर चारों ओर देखा, पर वहाँ उन्हें कुमार दिखाई न दिये। इस पर उन्होंने पुजारीसे फिर कहा—"आचार्य! कुमार यहाँ दिखलाई नहीं देते। वह अभी आते ही होंगे। आजका पुण्य महोत्सव देखनेकी उनकी वड़ी इच्छा है। इस लिए महाराजसे कह दो कि यदि वे थोड़ी देर ठहर जायँ और कुमारके आनेपर पूजन आरम्भ करें, तो कुमार आपके और समस्त उपस्थित सज्जनोंके वहुत कृतज्ञ होंगे।" इसके उपरान्त तुरन्त ही चम्पतरायने अपने एक सेवकको आज्ञा दी कि वहुत जल्दी जाकर कुमारको ढूँढ़ लाओ।

पुजारीको चम्पतरायसे पूजनकी आज्ञा माँगते हुए देखकर हीरादेवीने मनमें अपना वहुत अपमान समझा। उसे इस वातका वहुत दुःख हुआ कि एक क्षुद्र राजकुमारके लिए हम लोगोंको रुकना पड़ता है और विना उसके आये पूजन आरम्भ नहीं हो सकता। उसने तुरन्त अपने पतिसे आज्ञायुक्त प्रार्थना की कि इस अपमानकारक व्यवहारके लिए पुजारीको उचित दंड दिया जाना चाहिए। शुभकरण बुँदेलेने भी उसकी वातका समर्थन किया। पहाड़सिंह विकट रूपसे हँस पड़े। वे वोले—"पहले यह देख लो कि युवराज विमलदेव और युवराज दलपतिराय यहाँ उपस्थित हैं या नहीं। यदि उन दोनोंकी अनुपस्थितिमें भी तुम लोग पूजन प्रारंभ करना चाहो तो मैं आज्ञा दे दूँगा कि महेवाके राजकुमारकी प्रतीक्षा न की जाय और पूजन तुरन्त आरम्भ किया जाय।"

हीरादेवी और शुभकरणको शान्त होकर अपना अपना क्रोध दवाना पड़ा। वे दोनों फिर कुछ न वोले। हाँ दोनोंने राजकुमारोंको ढूँढ़नेके लिए नौकर भेज दिये।

जो नौकर युवराजोंको ढूँढ़नेके लिए निकले थे उन्हें मंदिरसे वाहर निकलनेके पहले ही दोनों युवराज मिल गये।

इतनेमें ही वहाँ वारह वर्षकी एक वालिका दौड़तीहुई आ पहुँची। उसके घने वाल कन्धोंपर विखरकर इधर उधर हवासे खेल रहे थे, दौड़नेके कारण जल्दी जल्दी चलनेवाली उसकी साँससे मंदिरकी हवा सुगन्धित हो रही थी। भयके कारण उसके लाल हुए कपोल और चंचल दृष्टिको उसके ललाटके साथ एक ही समयमें देखकर मनमें आप ही आप यह प्रश्न उत्पन्न होता था कि वरफके समान स्वच्छ आकाशमें रक्तवर्णकी उषादेवीको चमकते हुए देखकर चंचल चपला उसके साथ क्यों सम्मिलित हो रही है ? उसके कलहप्रिय ओंठ यह समझकर कि संसारके किसी युवतीके ओंठ हमारी वरावरी नहीं कर सकते आपसमें झगड़ झगड़कर लाल और एक दूसरेसे अलग हो रहे थे। उस कलहसे लाभ उठाकर उसके दाँतोंने भी अपनी सौम्य किरणें और साँसकी सुगंधि वाहर निकालकर मानों यह कहना आरंभ किया कि—"हममें जूहीके फूलोंकी सुगंधि और शुद्धता तथा चंद्रकिरणोंकी रुचिरता और तेज है; तुम्हारे सौन्दर्यमें रक्खा ही क्या है ?" दौड़ती हुई वालिका आकर मंदिरमें मंडपके पास खड़ी हो गई। यदि उसकी मनोहर गति, नेत्रोंकी दिव्य चपलता और साँसमेंसे निकलनेवाली अलौकिक सुगंधिको एक ओर छोड़ दिया जाता और देवीके अस्त्रों और क्रूरदृष्टि पर ध्यान न दिया जाता तो अवश्य ही कुछ देरके लिए सव लोगोंको यह भ्रम अवश्य हो जाता कि वह साक्षात् विन्ध्यवासिनी देवी ही है। विन्ध्यवासिनीके मस्तकपर मोतियोंका मुकुट सुशोभित था; परंतु वालिकाके माथेपर पसीनेके मोती ऐसी उत्तमतासे लगे हुए थे कि विंध्यवासिनीकी वरावरी करनेके लिए उसे किसी दूसरे नकली मुकुटकी आवश्यकता ही न थी। वहुतसे लोगोंको यह आशंका होने लगी कि सुन्दरताकी वह जीती जागती पुतली वढ़ती वढ़ती कहीं विन्ध्यवासिनीकी मूर्तिमें मिलकर एकरूप न हो जाय। पर उस सुन्दर वालिकाने लोगोंकी वह आशंका थोड़ी ही देरमें दूरकर दी। विशाल मंडपके पास खड़ी होकर वह मंदिरके प्रधान प्राणनाथजीसे स्वर्गीय मनोहर स्वरमें कहने लगी,—

"प्रभो! युवराज छत्रसाल और उनके मित्र युवराज दलपतिराय तथा युवराज विमलदेव एक सत्कार्यमें यश प्राप्त करके देवीके दर्शनोंके लिए आ रहे

ह । उन्होंने मुझे आपसे यह प्रार्थना करनेकी अनुमति दी है कि जब तक वे लोग न आवें तब तक आप मंगलकार्य आरंभ न करें ।" मंडपसे बाहर निकलते हुए प्राणनाथने पूछा—"छत्रसाल और उनके मित्रोंने किस कार्यमें यश प्राप्त किया है ?" जिस समय वे बाहर निकले उस समय उनके तेजस्वी चेहरेके चारों ओर तेजका मंडलसा चमकता हुआ दिखाई पड़ता था। उनकी निष्काम बुद्धि, अखंड ब्रह्मचर्य्य और उत्कट तपोबलका पूरा पूरा पता उनके गंभीर परंतु तेजस्वी चेहरेसे सहजमें ही लग जाता था। जिस समय वे हँसते हुए मुखसे बालिकासे पूँछते हुए मंडपके बाहर निकले, उस समय उन्हें देखकर उनके भक्त-चकोरोंने समझा कि अमृतकी वर्षा करनेवाला चंद्रमा मेघके काले आवरणको दूर हटाकर अपना वदन प्रकाशित करने लगा है । उनके प्रति आदर प्रकट करनेके लिए सब लोग उठ खड़े हुए । केवल ओड़छेके राजा पहाड़सिंह और उनकी पत्नी हीरादेवीने अपना स्थान न छोड़ा । भक्तोंको बैठनेका इशारा करके प्राणनाथने कहा—"सज्जनो ! बैठ जाइए । मेरे हर बार आने जानेपर इस प्रकार उठने बैठनेकी आवश्यकता नहीं । यह सुंदर बालिका आप लोगोंके लिए जो समाचार लाई है उसे आप लोग शांत होकर सुनें । (बालिकाकी ओर मुड़कर) हाँ, बतलाओ, हमारे छत्रसाल और उनके मित्र कौनसा उत्तम कार्य करके यहाँ आ रहे हैं ? किस सत्कार्यमें लगे रहनेके कारण उन लोगोंको यहाँ आनेमें इतना विलंब हो रहा है ?"

इस पर बालिकाने उत्तर दिया—"देवीको सुन्दर माला चढ़ानेके उद्देश्यसे विन्ध्यपर्वतपरसे वनपुष्प संग्रह करनेके लिए आज प्रातःकाल मैं युवराज विमलदेवके साथ दाहिनी ओरकी पहाड़ीसे ऊपर चढ़ी थी । उस समय बाल-रविकी सुनहरी किरणें वहाँके फूलोंपर पड़ रही थीं । ऐसा जान पड़ता था कि मानो वे फूल सोनेके बने हुए हैं । उस प्रकारकी शोभा हम लोगोंने पहले कभी नहीं देखी थी और आगे हम लोगोंको और भी सुंदर दृश्यकी आशा थी, इस लिए हम लोग बहुत दूर निकल गये । हम लोगोंके फूल-संग्रह कर चुकनेके बाद पूजन आरंभ होनेमें बहुत विलंब था । इस लिए हम लोगोंने वहीं बैठ कर माला गूँथना निश्चय किया । एक ओरसे मैं माला गूँथने लगी और दूसरी ओरसे युवराज विमलदेव गूँथने लगे । थोड़ी ही देरमें माला तैयार हो गई । विमलदेवने बहुत ही जल्दी और बहुत ही अच्छी माला गूँथी थी, इस लिए मैं हँसती

हुई स्त्रियोंके योग्य काममें उनकी इस चतुरताकी प्रशंसा करने लगी । इतनेमें वहुतसे मनुष्योंने—मनुष्यों क्या वल्कि असुरोंने—हम लोगोंको घेर लिया ।”

वालिकाकी वातें सव लोग एकाग्रचित्त होकर सुनते रहे। विमलदेवका नाम सुनते ही हीरादेवी और पहाड़सिंह दोनों आकर उस वालिकाके पास खड़े हो गये । ढाँड़ेरके राजा कंचुकीराय तो पहलेसे ही वहाँ खड़े हुए थे ।

पंडित प्राणनाथने पूछा—“तुम लोगोंको घेरकर खड़े हो जानेवाले लोग कौन थे ? तुम लोगोंको क्या वे असुर सरीखे जान पड़े ?”

वालिकाने उत्तर दिया,—“जी हाँ । सीतादेवीकी कथामें लंकाके असुरोंके स्वभावका आप जैसा वर्णन करते हैं, उन लोगोंका स्वभाव भी वैसा ही था । पर असुरोंकी तरह उनके लंवे दाँत, मोटी नाक और होंठोंसे वाहर निकली हुई जीभ न थी । उनके कपड़े वढ़िया और अधिक दामोंके थे । अफीमचियोंकी तरह उनकी आँखें झपी हुई और आधी वंद थीं । वे लोग मनमें मानो समझते थे कि और लोगोंको क्षुद्र समझ कर उनपर हुकुम चलाना हमारा कर्तव्य है । ऐसे असुर पिताजीके दरवारमें प्रायः आया करते हैं । पिताजी उन्हें देवताओंकी तरह पूज्य समझते हैं और उनका वहुत आदर-सत्कार करते हैं । जव तक वे लोग उनके पास रहते हैं तव तक वे वरावर उनकी सेवामें निमग्न रहते हैं ।—”

ढाँड़ेरके राजा कंचुकीरायने वीचमें ही वात काट दी और विगड़कर कहा—“विजया, व्यर्थकी वातें मत कर । साफ साफ वतला कि हमारे सार्वभौम राजाके उन जात-भाइयोंने क्या किया ?”

चम्पतरायने कहा—“कंचुकीराय ! इस वालिकाको क्या मालूम कि सार्वभौम राजा कौन हैं और उनके जात-भाई कौन हैं । दिल्लीके वादशाही तख्तके सामने जानेपर, वल्कि दिल्लीकी वादशाहीका नाम सुनते ही अपने ही भाईवंदोंमें अभिमानसे उठा रहनेवाला मस्तक कितना झुकाना पड़ता है, उद्धतपनसे वातें करनेवाली जवानको कितना सौम्य करना पड़ता है, और अपने प्रभुत्वका ध्यान छोड़कर सेवक वने रहनेमें ही किस प्रकार अपनेको धन्य समझना पड़ता है, ये सव राजनीतिके गूढ़ तत्त्व यह अज्ञान वालिका किस प्रकार समझ सकती है ? यह अपनी टेढ़ी सीधी भाषामें जो कुछ कह रही है, उसी पर हमें सन्तोप करना चाहिए ।”

चम्पतरायकी बात सुनकर कंचुकीरायने क्रोधभरी दृष्टिसे उनकी ओर देखा और तब अपनी कन्यासे पूछा—" हाँ, तब क्या हुआ ? "

बालिका फिर कहने लगी—" हम लोगोंको चारों ओरसे घेरकर वे लोग बहुत देर तक आपसमें बातचीत करते रहे और हम लोगोंको देखकर हँसते रहे । उनकी बातचीत उसी आसुरी भाषामें होती थी, इस लिए मैं उसका तात्पर्य न समझ सकी । तो भी—" इतना कहते कहते उस बालिकाको कुछ आवेश आगया—" इतना मैंने अवश्य समझ लिया कि वे मेरे और विमलदेवके अत्यन्त अपमानकी बातें कर रहे हैं । वे लोग यह कहकर हम लोगोंका अपमान कर रहे थे कि मैं शाहजादेके महलमें रक्खी जाने योग्य सुंदर हूँ और युवराज विमलदेव दरबारमें गुलाम बनाये जानेके काबिल हैं ।" उस समय बालिकाका चेहरा क्रोधसे लाल हो गया और वह अधिक न बोल सकी ।

चम्पतराय बोले—" सुनो कंचुकीराय, सुनो, तुम्हारे सार्वभौम राजाके ये जात-भाई तुम्हारी ही कन्याके विषयमें क्या कहते थे ! केवल तुम्हारी कन्याका ही नहीं बल्कि अपनी अधीनतामें आये हुए प्रत्येक स्त्री-पुरुषका ये असुर राजकर्म्मचारी सदा इसी प्रकारका अपमान किया करते हैं । दिल्लीके सुलतान और उनके जात-भाई चाहते हैं कि हम लोगोंकी कन्यायें उनकी अमानुषी विषय-लालसा तृप्त करें, हम लोगोंके सुकुमार राजकुमार उनके दरबारके गुलाम बनें, उनकी जूतियाँ और उगालदान उठावें, हम लोग अपने ही भाईबंदोंको उनके अधीन करनेके लिए लड़ें, हम लोग दिन रात दाने दानेको मोहताज होनेके लिए ही प्रयत्न करें और हमारे चतुर कारीगर अपने देवताओंके मंदिर गिराकर उनके स्थान पर बढ़ियाँ मसजिदें बनानेमें ही अपना जन्म बितावें । तुम्हारे सार्वभौम राजा और उनके जातभाई बुंदेलखंडकी राजकन्याओंको सस्ते दामोंपर बाजारमें मिलनेवाला मेवा समझते हैं और बुंदेलखंडके राजपुत्रोंको पदवीके टुकड़ोंके लालची कुत्ते समझकर हम लोगोंके साथ व्यवहार करते हैं । बेटी ! तुमने उन असुरोंको यह बात बतला दी थी न कि मैं ढाँड़ेरके राजाकी कन्या हूँ और विमलदेव ओड़छेके युवराज हैं ? "

बालिकाने उत्तर दिया—" मैंने यही समझ कर उन लोगोंको अपना परिचय दे दिया था कि हम लोगोंकी योग्यता समझ कर कदाचित् वे लोग जल्दी ही हमें छोड़ देंगे । परंतु हम लोगोंका परिचय पाकर हमें छोड़ना तो दूर

रहा, उन लोगोंने यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि ये हम लोगोंको ले जाकर शाहजादेकी नजर करें।"

चम्पतरायने कंचुकीरायसे कहा,—"राजासाहब! आप सुन रहे हैं न?"

कंचुकीराय बोले,—"हाँ हाँ, मैं सुन रहा हूँ। पर आप मुझे क्या सुनाते हैं? ऐश्वर्य और सौन्दर्यमें इंद्रकी अमरावतीसे बढ़कर दिल्ली, देवलोककी अप्सराओंको लज्जित करनेवाली शाही महलकी सुंदरियाँ, और इंद्रसे भी बढ़ कर ऐशो आराम करनेवाले दिल्लीके सुलतानके जब तक आपको दर्शन न हों, तब तक आपको मुसलमानोंके वास्तविक महत्त्व, ऐश्वर्य और बल आदिका ज्ञान नहीं हो सकता।"

चम्पत०—"राजासाहब! बादशाहके मायावी वैभवसे आपकी आँखें चौंधिया गई हैं, नहीं तो आप इस संसारके नरककी उपमा अमरावतीसे न देते। यदि किसीको संसारमें निर्लज्जता और विषयासक्तताका जन्मस्थान और विलास तथा आलस्यका अड्डा देखना हो, अतिशय नीच कोटिकी क्रूरता, और संसार भरके दुर्गुणों और व्यसनोंको एक ही स्थान पर एकत्र देखना हो, तो वह दिल्ली जाय। पर विषयासक्तताको विलास, क्रूरताको शूरता, आलस्यको सुख, और व्यसनोंको आनंद माननेवाले मूर्खोंने भ्रममें पड़कर उस दिल्लीको इस संसारका स्वर्ग बना दिया है। जब तक ऐसे मूर्ख इस भूमाताके गर्भमें जन्म लेते रहेंगे, तब तक इस देशका मुसलमानोंके हाथसे निकल कर स्वतंत्र होना बहुत ही कठिन है। अस्तु, इस प्रकार शोक करनेके लिए बहुत समय है। (विजयासे) बेटी, बतलाओ फिर क्या हुआ?"

विजया—"हम लोगोंको दिल्लीके शाहजादेकी भेट करनेका विचार करके वे लोग थोड़ी देरके लिए विश्राम करने लगे। इतनेमें उन्हींसे पर उनसे कुछ अधिक मूल्यवान् वस्त्र पहने हुए एक और असुर वहाँ आ पहुँचा। उसके आते ही पहलेवाले सब असुरोंने झुक कर उसे सलाम किया; इससे हम लोगोंने समझ लिया कि वह उन सबका प्रधान है। पहलेवाले असुरोंने उस नये असुरको हम लोगोंका परिचय देकर अपना विचार बतलाया। उसे सुनकर वह हँसता हुआ बोला,—'शाही दरबारमें बड़े बड़े पद और ऊँचे आसन पानेके लिए यहाँके सभी हिन्दू राजे अपनी लड़कियों और बहनोंको शाही महलमें भेजनेको तरसते हैं। हिन्दू राजे अब यह भी समझ गये हैं कि हमारे राजकुमार दिल्लीके शाही

दरवारमें खिदमतगारीके सिवा राज्यका और कोई भारी उत्तरदायित्वका काम नहीं कर सकते । इस लिए आजकल पहलेकी तरह शाही महलके लिए राजकन्याओं और खिदमतगारीके लिए राजकुमारोंको धर पकड़ कर लानेकी आवश्यकता नहीं रह गई । इन लोगोंको छोड़ दो, और निश्चय रक्खो कि ये आप ही शाही महल और दरवार तक पहुँच जायँगे' । "

रानी हीरादेवी वीचमें ही वोल उठी—" हाँ, हाँ, उन लोगोंका कहना वहुत ठीक है । क्या कहें, आजकल हम लोगोंकी वादशाह तक पहुँच नहीं है, नहीं तो युवराज विमलदेव अव तक कभीके वादशाहकी सेवामें नियुक्त हो गये होते ।"

चम्पत०—" हे ईश्वर, कहाँ हो ? ऐसे देशद्रोहियों और दासत्व-प्रिय लोगोंसे कव देशका छुटकारा होगा ? हीरादेवी, वोलनेसे पहले कुछ तो सोच समझ लिया करो । जिस रुद्रप्रतापने इतना रक्त वहाकर अपने देशको स्वतंत्र किया था, उसी अपने भक्त रुद्रप्रतापके एक वंशजको म्लेच्छोंके दरवारमें सेवा करनेके लिए तैयार देखकर देवीके पत्थरके नेत्रोंसे भी आँसू निकलने लगे हैं । "

चम्पतरायकी वात अनसुनी करके हीरादेवी वोली—" हाँ विजया, तव फिर क्या हुआ ? "

विज०—" उस प्रधान असुरने हम लोगोंको वहाँसे चले जानेकी आज्ञा दी । हम लोग भी देवीकी पूजाके समय पर पहुँचनेके लिए वहाँसे चल पड़े । इतनेमें हम लोगोंकी भाषामें उस प्रधान असुरने हम लोगोंसे पूछा कि क्या यहाँ पास ही देवीका कोई मंदिर है ? उस समय मैं उसके पूछनेका अभिप्राय न समझ सकी, इस लिए मैंने सरलतासे कह दिया कि पास ही विन्ध्यवासिनी देवीका सुंदर मंदिर है; आज वहाँका वार्षिक शृंगार और उत्सव है, इस लिए बुंदेलखंडके सभी राजे और वहुतसे बुंदेले वहाँ एकत्र हैं । इसपर उसने पूछा कि उत्सव कव आरंभ होगा, तो भी उसके पूछनेका अभिप्राय मेरी समझमें न आया । मैंने सीधी तरहसे उसे वतला दिया कि सूर्योदयके दस घड़ी वाद पूजा आरंभ होगी । उसने कहा कि अभी पूजामें दो घड़ीकी देर है, इस लिए मैं पूजासे पहले ही वहाँ पहुँच कर मंदिर तोड़ फोड़ डालता हूँ । उस समय मैं धकसे हो गई । विमलदेव भी वहुत सुस्त होकर मेरे पास खड़े थे । मेरा मन आप-ही-आप इस विचारसे वहुत ही कचोटने लगा कि देवीके मंदिरका हाल वतलाकर मैंने वड़ा भारी पातक किया । यद्यपि विन्ध्यवासिनीका मंदिर वहाँसे वहुत दूर

नहीं था, पर तो भी मैं समझती थी कि नये आदमीको जल्दी उसका पता नहीं लग सकता। उस प्रधान असुरने मुझसे कहा कि आगे आगे चलकर मुझे देवीके मंदिरका रास्ता दिखलाओ। मैंने भी अपने मनमें निश्चय कर लिया कि उसे देवीका मंदिर नहीं दिखलाऊँगी और अपना यह विचार विमलदेवको भी वतला दिया। उन सब असुरोंको हम मंदिरसे उलटी तरफ ले चले। वे लोग भी बड़ी प्रसन्नतासे तरह तरहके वाँधनू वाँधते हुए हम लोगोंके पीछे आ रहे थे। इस प्रकार हम लोग मंदिरसे वरावर दूर होते जा रहे थे। इतनेमें हम लोगोंको दूरसे युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय अपने अपने घोड़ोंपर सवार आते हुए दिखाई पड़े।"

शुभकरणने पूछा—"तुम लोगोंके साथ चलनेवाले यवन संख्यामें कितने थे?"

वि०—"प्रधान असुर समेत वे सब मिलाकर वीस थे। परंतु उनमेंसे आधेसे अधिक विना अस्त्र-शस्त्रके थे। पास पहुँचते ही छत्रसालने प्रधान असुरसे पूछा कि इन लोगोंको कहाँ ले जा रहे हो? जव विमलदेवने देखा कि उन्हें अपमानकारक हास्यके अतिरिक्त और कोई उत्तर नहीं मिला, तव उन्होंने थोड़ेमें सव वातें वतला दीं। सुनते ही दोनों युवराजोंने अपनी अपनी तलवारें म्यानसे वाहर निकाल लीं और यह कहते हुए वे दोनों उन असुरों पर टूट पड़े कि—देवीके मंदिरका मार्ग भक्तोंके लिए भले ही सुगम और सुखदायक हो, पर तुम्हारे सरीखे पामरोंके लिए वह वहुत ही दुर्गम और धोखेका है।"

पहाड़सिंह वोले उठे,—"क्या कहा? दो लड़के और वीस वहादुरों पर टूट पड़े? इसीको लड़कपन कहते हैं। (शुभकरणसे) शुभकरण! तुम्हारा दलपति इस छत्रसालके साथ रह कर विगड़ता जा रहा है। इन लड़कोंको उनकी मूर्खताके लिए उचित दंड देना चाहिए।"

कंचुकीराय वोले,—"वहुत करके तो उन्हें वहीं दंड मिल गया होगा। औ यदि उन उदार यवन वीरोंने उन्हें वालक समझकर छोड़ दिया हो तव अवश्य उन्हें यहाँ आते ही उचित दंड देना चाहिए। अपने शासकोंके जात-भाइयोंका अपमान करना भला यह भी कोई वात है? अगर वह एक मंदिर गिरा देते तो हम लोग दूसरा वना लेते। पत्थरोंकी यहाँ कोई कमी तो थी ही नहीं। (विज--यांसे) हाँ भला वतलाओ तो, उन लड़कोंने वहाँ क्या क्या अनाचार किये।"

वि०—"उन लोगोंने वहाँ अनाचार नहीं किया। उन्होंने उन वीसों असुरोंसे केवल लड़ना आरंभ कर दिया। अकेले अभिमन्युके साथ जिस प्रकार कौरवोंने अधर्म युद्ध किया था, उसी प्रकार वे वीसों असुर उन युवराजोंसे लड़ने लगे। विमलदेवसे पुरुष होकर भी युद्ध देखा न गया, तव भला मैं किस गिनतीमें थी ! अकेले छत्रसाल पर छः असुर अपनी अपनी तलवारें लेकर टूट पड़े। उनमेंसे एककी तलवारका घाव भी छत्रसालको वहुत गहरा लग गया। युवराज दलपति अकेले ही दस असुरोंसे लड़ रहे थे। वह भयानक संग्राम देख कर मैंने भयसे आँखें वंद कर लीं। थोड़ी देर वाद जव मैंने आँखें खोलीं, तव देखा कि विमलदेव सामने खड़े हुए मुस्करा रहे हैं और पास ही खूनमें नहाये हुए चार पाँच असुर जमीन पर लोट रहे हैं। प्रधान असुरकी सारी शेखी किरकिरी हो गई थी और वह सिर नीचा किये हुए खड़ा था। युवराज छत्रसाल और दलपतिराय उसकी मुश्कें वाँध रहे थे। मेरी ओर देख कर छत्रसालने कहा 'देवीके पूजनका समय हो रहा है। तुम दौड़ कर जाओ और महाराजसे थोड़ी देरके लिए पूजा रोकनेकी प्रार्थना करो; तव तक हम लोग इस यवन सरदारको लाकर वहाँ पहुँचते हैं।' युवराजकी वात सुनते ही मैं वहाँसे चल पड़ी और जल्दी जल्दी यहाँ आ पहुँची।"

विजयाकी वात समाप्त होते होते मंदिरके वड़े दालानके पास ही जयजयकार हुआ। जयजयकारकी ध्वनि वड़ी ही मधुर थी। प्राणनाथ प्रभु इतनी देर तक शांत होकर विजयाकी वातें सुन रहे थे। परन्तु अव उनसे न रहा गया। तुरन्त ही उनके शिष्य युवराज छत्रसाल आकर उनके चरणोंपर अपना सिर रखते हुए दिखलाई देते; पर इतनी देर तक उन्होंने अपने प्रेमके जिस आवेशको रोक रक्खा था वह अव उनसे रोका न गया। खोये हुए वालकसे मिलनेके समय माताके कोमल मनकी जो स्थिति होती है, वही प्रेम-पूर्ण स्थिति प्राणनाथ प्रभुकी भी हुई। वहुत देरसे छूटे हुए वछड़ेसे मिलनेके लिए जितनी आतुरतासे गौ आगे वढ़ती है, उतनी हीं आतुरतासे वे वड़े दालानकी ओर वढ़े। उस समय छत्रसाल और उनमें जो थोड़ासा अंतर था, वह अंतर अकेले छत्रसाल ही कम करें, यह उनसे देखा न गया। जयजयकारकी प्रतिध्वनि उत्पन्न होनेसे पहले ही वे मंदिरके वड़े दालानमें पहुँच गये। वहाँ उनका प्राणोंसे भी अधिक प्रिय वालक छत्रसाल सजल नेत्रोंसे उनके चरणोंकी धूलि लेनेके लिए तैयार खड़ा हुआ था।

यह बात प्रायः सभी लोग जानते हैं कि बहुत ही छोटी छोटी बातोंकी ओर विशेप ध्यान देनेवालेंसे भी कभी कभी भारी भूलें हो जाया करती हैं। न जाने इसी सिद्धान्तकी सत्यता दिखलानेके लिए अथवा किसी और कारणसे जगतकी रचना करनेवाले परमेश्वरने अपने रचना-चातुर्यमें एक बड़ा धब्बा लगा लिया था। यह तो परमेश्वर अवश्य ही जानता था कि चन्द्र-सूर्यकी रचना करना हँसी खेल नहीं है। पर तो भी सूर्यमें आवश्यकतासे अधिक प्रचण्डता और चंद्रमामें आवश्यकतासे अधिक सौम्यता रह गई थी। इसका कारण या तो यह हो सकता है कि चन्द्रमा और सूर्य्यको ईश्वरने सबसे पहले बनाया था और उस समय तक चीजें तैयार करनेमें उसका हाथ अच्छी तरह मँजा नहीं था, अथवा उन दोनोंको उसने सबके अंतमें बनाया था और उस समय उसकी सब सामग्री प्रायः समाप्त हो चुकी थी। परंतु अपनी कृतिका यह दोप जगन्नियन्ताके ध्यानमें अवश्य आ गया। बहुत सी छोटी और फुटकर बातोंको निर्दोप और केवल प्रधान वस्तुओंको सदोप देख कर सहस्रनेत्र परमेश्वरको बहुत ही पश्चात्ताप हुआ और इसी लिए वह सालमें चार महीने अपने सब नेत्रोंसे आँसू बहाने लगा। परमेश्वरके इस पश्चात्तापको नष्ट करनेके लिए बुंदेलखंडने एक प्रकाशराजका उदय किया। उस प्रकाशराजमें सूर्य्यका तेज भी था और चंद्रमाकी शीतलता भी थी। चंद्रमा और सूर्य्यने भी जब देखा कि संसारमें एक ऐसा अवतार हुआ जिसमें हम लोगोंके गुण तो सब हैं पर दोप एक भी नहीं, तब उन लोगोंने अपना अपना विशेप अंश उस नये प्रकाशराजमें आरोपित कर दिया। एक ओर प्रतापशाली दलपतिराय अपने तीव्र तेजसे सुशोभित थे और दूसरी ओर विमलदेवका निष्कलंक मुखचंद्र सौम्यतासे प्रकाशित हो रहा था। बुंदेलखंडके इस सूर्य्य और चंद्रमाके बीचमें वह नया प्रकाशराज अपने पूरे तेजसे प्रकाशित हो रहा था, जिसके प्रकाशमें सूर्य्यके प्रकाशका प्रभाव भी था और चंद्रमाके प्रकाशकी रुचिरता भी; जिसमें प्राणिमात्रमें नवीन जीवन और तेजकी वृष्टि करनेवाले चंद्रमाके भी गुण थे और शांति तथा सुखकी वर्पा करनेवाले सूर्य्यके भी। उसीके पास पहुँच कर प्राणनाथने गद्‌गद स्वरसे कहा,—

"छत्रसाल! तुम धन्य हो। इस थोड़ी अवस्थामें ही तुम्हारी धर्मनिष्ठा और स्वातंत्र्य-प्रियताकी सुन्दर किरणें प्रकाशित होने लगी हैं।"

जिस प्रकार उदयकालका सूर्य्य अपनी भूमाताका चरणरज लेनेके लिए आगे बढ़ कर उसके प्रभांकित रक्त वर्ण अंक पर विराजमान् होता है, उसी

प्रकार युवराज छत्रसाल अपने गुरु प्राणनाथ प्रभुकी वात सुनकर उनका चरण-रज लेनेके लिए सिर झुकाए हुए आगे वढ़कर प्रभुकी वाँहोंमें सुशोभित हो गये।

गुरु-शिष्यकी यह प्रेम-पूर्ण भेंट देखकर युवराज दलपतिराय और युवराज विमलदेवको भी इस वातका ध्यान हुआ कि हम लोग आकाशकी ज्योति नहीं वल्कि संसारके प्राणी हैं। चंद्रमा और सूर्य्यके काम जिस प्रकार इच्छारहित वुद्धिसे ही होते रहते हैं उस प्रकार हमारे काम नहीं होते, हम लोगोंकी कार्य्य करनेकी इच्छा जाग्रत है और छत्रसालकी तरह हम लोगोंका भी अभिनंदन होना चाहिए। प्राणनाथ प्रभुने युवराज छत्रसालकी तरह दलपतिरायको भी प्रेमपूर्वक गले लगाया, परंतु विमलदेवका उन्होंने दूरसे ही अभिनंदन किया। इस शाब्दिक अभिनंदनसे ही विमलदेव अत्यंत प्रसन्न हो गये; कदाचित् प्रभुसे गले मिलकर उन्हें इतना आनंद न होता।

उस दिन अपने पुत्रका वह उदात्त कृत्य सुनकर चम्पतराय आनंदसे फूले न समाते थे। उन्होंने छत्रसालको अपने पास खींच लिया और उनके सिरपर प्रेमसे हाथ फेरते हुए कहा,—

"मेरा वड़ा पुत्र सारवाहन यवनोंसे युद्ध करते समय मारा गया था। वह वहुत ही शूर था, इस लिए उसके मरनेसे मुझे और तुम्हारी माताको अत्यंत दुःख हुआ था। उस समय उसने हम लोगोंको स्वप्नमें यह कह कर ढारस दिया था कि हम तुम्हारे यहाँ फिर जन्म लेकर मुसलमानोंसे वदला लेंगे। इस घटनाके कई महीने वाद ही तुम्हारा जन्म हुआ था। तो भी उस स्वप्नपर मुझे पूरी तरहसे विश्वास नहीं हुआ था। पर आजकी तुम्हारी यह वीरता सुनकर मुझे उसका पूरा पूरा विश्वास हो गया है। अव मुझे यह भरोसा हो गया है कि यदि मैं स्वयं अपना उद्देश्य पूरा न कर सका तो तुम उसे अवश्य पूरा कर दोगे।" इतना कह कर चम्पतरायने छत्रसालको छातीसे लगा लिया। उस समय तक युवराज दलपतिराय अपने पिताके पास जाकर वैठ गये थे। युव-राज विमलदेव भी अपनी माताके पास वैठे हुए थे। विजया अपने हाथमें अपनी माला लिये पास ही खड़ी हुई थी और उसे देवीको चढ़ानेके अवसरका आसरा देख रही थी। इतनेमें प्राणनाथ प्रभुने देवीका पूजन आरंभ किया।

पूजन समाप्त करनेके उपरान्त प्राणनाथ प्रभुने प्रसाद देनेके लिए सब राजाओंको मंदिरके भीतर बुलाया। विन्ध्यवासिनी देवी सोनेके ऊँचे सिंहासन पर विराजमान थीं। उनकी बाईं ओर प्राणनाथ खड़े हुए थे और दाहिनी ओर विजया और विमलदेव हाथमें अपनी माला लिये हुए खड़े थे। देवीके चरणोंपर अपना मस्तक झुकाये हुए युवराज छत्रसाल भी खड़े थे। प्राणनाथ प्रभुके पास चम्पतराय और शुभकरण खड़े थे। हीरादेवी सहित खड़े हुए पहाड़सिंह एक कोनेमें कंचुकीरायसे बातें कर रहे थे। सब लोगोंको सम्बोधन करके प्राणनाथ प्रभुने कहा,—

"राजा-महाराजाओ! प्रतिवर्षकी तरह आज भी देवीका महोत्सव हम लोगोंने बड़े आनंदसे किया। पर अब हम लोगोंको यह संशय होने लगा है कि अगले वर्ष भी हम लोग इसी प्रकार उत्सव कर सकेंगे या नहीं। दिन पर दिन यवनोंकी प्रबलता होती जाती है और हिंदुओंके हिंदुत्वको नष्ट करनेकी उनकी इच्छा भी बढ़ती ही जा रही है। ऐसे विकट अवसर पर हम लोगोंका पारस्परिक विरोध बढ़ना बड़े ही दुर्भाग्यकी बात है। हमारा यह बुंदेलखंड भारतभूमिके सौन्दर्यका केंद्रस्थान, सृष्टिसुंदरीका विलास-गृह और लक्ष्मीका क्रीडाभवन है। पहले तो बहुत दिनों तक दिल्लीके विलासी और धनलोलुप सुलतानोंने बुंदेलखंड पर हाथ बढ़ानेका साहस नहीं किया था। जब तक बुंदेलखंडकी आबरू रखनेवाले बुंदेले नृपति स्वतंत्रताकी रक्षा, धर्मके पालन और देशकी मर्य्यादा बनाये रखनेके लिए आपसका वैर विरोध भूलकर रणक्षेत्रमें स्वतंत्रताके एक ही झंडेके नीचे खड़े होते थे तब तक बुंदेलखंडके सुंदर सौन्दर्यकी ओर देखनेमें दिल्लीके बादशाहोंको डर लगता था। राजनीति, सैन्यबल और धार्मिक उदारता आदिके जाल बिछाकर अकबर दूर दूरके जिन लोगोंको फँसा न सका था, उन्हींको फँसानेके लिए जहाँगीर और शाहजहाँने उद्योग आरंभ किये। सेना और धार्मिक सुविधाओंसे टक्कर लेकर विजयी होनेवाले बुंदेलखंडको अकारण परतंत्रताके कीचड़में फँसते देखकर आसपासके देशोंको अवश्य ही बहुत आश्चर्य हुआ होगा। पर बुंदेलखंडकी आजकी स्थिति देखकर किसीको आश्चर्य न होगा। एकताके सूत्रसे बँधी हुई पुरानी वीर-माला कालका प्रबल धक्का खाकर नष्ट हो गई है। पहलेकी मालामें एकमत होकर रहनेवाले सुगंधित, सतेज और दुर्लभ फूल आज भी बुंदेलखंडमें बहुत हैं। पर पहले वे जितनी उत्तमतासे गुँथे हुए थे, उतनी उत्तमतासे इस समय नहीं गुँथे हैं। पहले वे फूल देवताओं पर

चढ़ाये जानेके योग्य थे, पर अब चम्पतराय सरीखे दो एक पुष्पोंको छोड़कर बाकी प्रायः सभी फूल असुरोंकी शोभा बढ़ानेके लिए लालायित जान पड़ते हैं। बहुतसे फूल तो जंगलके जंगलमें ही सूखकर नष्ट हो जाते हैं। शुभकरण! पहाड़सिंह! मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह आप लोग सुनते हैं न? आप लोग असुरोंके पैरोंको सुशोभित करना छोड़ दें। आप लोग एकताके सूत्रमें बद्ध होकर ऐसी सुन्दर माला बनावें जिससे आप लोगोंकी सुगंधि एकत्र हो और वह माला अपनी स्वतंत्रता देवी विंध्यवासिनीको प्रेमपूर्वक अर्पित करें। विजया! तुम्हारी मालाके अर्पित होनेका यही समय है। तुम अपनी यह सुंदर माला देवीको पहनाओ और देवीसे कहो कि अगले वर्ष सत्पुरुषोंकी एक ऐसी ही माला यहाँ आवेगी।"

प्राणनाथ प्रभुकी आज्ञा पाते ही विजया अपनी माला लियेहुए आगे बढ़ी। उस समय उसे ध्यान हुआ कि जो माला मैंने विमलदेवकी सहायतासे बनाई है वह मैं अकेले ही कैसे चढ़ाऊँ। उसने विमलदेवकी ओर देखा। वे भी माला चढ़ानेके लिए आगे बढ़नेकी चिंतामें ही थे। विजयाने माला चढ़ानेके लिए अपना जो हाथ उठाया था वह उसने क्षणभरके लिए ज्योंका त्यों रक्खा। जब विमलदेव पास आगये तब दोनों समवयस्क मित्रोंने अपने हाथ खूब ऊँचे करके देवीके गलेमें माला पहनानेका प्रयत्न किया। उन्होंने अपनी समझसे अच्छी तरह देवीके गलेमें माला पहना दी, और जो लोग वहाँ उपस्थित थे उनकी समझमें भी वह माला अच्छी तरह ठीक जगहपर बैठ गई। इतनेमें वह माला वहाँसे खिसकी और देवीके पैरोंके पास सिर झुकाकर खड़े हुए छत्रसालके ठीक गलेमें जा पड़ी! देवीके गलेकी माला युवराज छत्रसालके गलेमें सुशोभित हो गई, यह देखकर सब लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ। छत्रसाल अपने गलेसे वह माला उतारने लगे; पर प्राणनाथ प्रभुने उन्हें रोककर कहा,—

"बाल-वीर! यह देवीका प्रसाद है। इसका निरादर मत करो। विंध्य-वासिनी देवी भी यही समझती है कि युवराज विमलदेव और राजकन्या विजयाकी माला तुम्हारे ही गलेमें अधिक शोभायमान होगी। अपनेको पावन करके श्रेष्ठ बनानेवाली देवीकी तुम्हें ऐसी उत्तमतापूर्वक रक्षा करते देखकर विंध्याचलने यह सुन्दर उपहार तुम्हींको दिया है और स्वयं देवीने अपने गलेकी माला तुम्हें देकर तुम्हारी शूरता और धर्म्मनिष्ठाका अभिनंदन किया है। जंगली फूलोंका यह सुंदर हार विजया और विमलदेव सरीखे नगरवासी पुरुषोंके हाथसे तैयार

हुआ है, विंध्याचलकी अचलता और देवीकी पवित्रतासे उसका स्पर्श होनेके कारण उसकी स्वाभाविक सुगंधि और विमलतामें स्थिरता और पवित्रता भी मिल गई। आज तुम्हारे विजयी होनेके समय विमलदेव और विजयाके हाथोंसे देवीकी मध्यस्थतामें तुम्हें यह पवित्र उपहार मिला है; उसे स्वीकार करो। आगे चलकर तुम्हारे द्वारा स्वतंत्रता देवीकी जो अद्वितीय सेवा होनेवाली है उसका यह बहुत ही शुभ शकुन है। देवीके इस अनुग्रहका तुम तनिक भी अपमान न करो।"

छत्रसालने "प्रभुकी आज्ञा शिरोधार्य्य है" कहतेहुए उस मालाको सिर और आँखोंसे लगा लिया।

उस समय विजयाकी मुद्रा देखने ही योग्य थी। अपनी मालाको छत्रसालके गलेमें सुशोभित देखकर वह सरला बालिका लज्जाका स्वरूप बन गई। उसके कपोलोंपर लज्जाकी लाली छा गई। चंचलतासे इधर उधर फिरनेवाले उसके नेत्र संकुचित होकर धरतीकी ओर गड़ गये। उसकी ऐसी इच्छा होने लगी कि अब मैं किसीको अपना मुँह न दिखलाऊँ। अपने आपको छिपानेके लिए उसने धीरे धीरे मंदिरका किवाड़ा अपनी ओर खींचा। उस समय सब राजे देवीका प्रसाद लेकर अपने अपने स्थानकी ओर बढ़ने लगे। उन्हें देखते ही विजया वहाँसे भागी। सामने ही उसे विमलदेव मिले। उसने उनकी ओर देखा तो उनकी मुद्रा भी वैसी ही बदली हुई थी। विजयाको देखकर विमलदेवने कहा,—

"विजया! हम लोगोंकी बनाई हुई माला अंतमें युवराज छत्रसालके गलेमें ही पड़ी।"

विजया यह कहनेको ही थी कि "तब इसमें बुरा क्या हुआ।" पर उसने अपने मनको रोका। वह कुछ भी नहीं बोली।

सदा उच्छृंखलताका व्यवहार करनेवाली विजयाको अपने जीवनमें उसी दिन पहले पहल आत्मसंयमन करना पड़ा।

\+ \+ \+ \+

दूसरा प्रकरण।

विंध्याचलका स्नान।

विंध्याचल चंद्रमाकी विमल चाँदनीमें स्नान कर रहा था। गंगाका गहन प्रवाह देखकर जिस प्रकार विहारप्रिय मस्त हाथीको आनंद होता है उसी प्रकार चन्द्रमाके प्रकाशको विमल सागर देखकर विंध्याचल अत्यंत आनं-

-दित जान पड़ता था। यदि विंध्याचलके अर्द्धवर्तुलाकार भागको हाथीका सूँड़ मान लिया जाता और उसके उन्नत मस्तकके दोनों ओरकी कानके आकारकी छोटी छोटी टेकाड़ियोंको हिलता हुआ मान लिया जाता तो यही जान पड़ता कि गंगाके शुभ्र प्रवाहमें गजराज आनंदसे क्रीड़ा कर रहा है। विंध्याचलपरके सुंदर वृक्षों, पहाड़के नीचेके विंध्यवासिनी देवीके मंदिर और उसके ऊपर प्रकाशित होनेवाले चन्द्रमासे भी यह कल्पना वहुत देरतक नष्ट न होती थी। देवीके मंदिरके आसपास पड़े हुए खेमों और तंबुओंसे भी इस कल्पनाके पुष्ट होनेमें सहायता ही मिलती थी। वे देखनेमें गंगाका शुभ्र प्रवाह नहीं वलिक चन्द्रमाकी शुद्ध ज्योत्स्ना जान पड़ते थे और उनके बीचमें विंध्यपर्वत गजराजकी तरह दिखलाई पड़ता था।

एका वड़ा कठिन प्रश्न यह हो सकता है कि विंध्याचलको स्नानकी क्या आवश्यकता पड़ी? अग्निको विशुद्ध करनेके लिए भट्टीमें डालना, शुद्ध और पवित्र जलको धोकर निर्मल करनेका प्रयत्न करना, अथवा दूधकी सफेदी वढ़ानेके लिए कोई उपाय करना जितना व्यर्थ और युक्तिरहित है, पवित्र विंध्याचलको स्नान करानेका प्रयत्न भी उतना ही निरर्थक और भोंड़ा जान पड़ेगा। परंतु विंध्याचलने अपने स्नानके लिए ऐसा समय ढूँढ़ निकाला था जिस समय क्या मनुष्य क्या पशुपक्षी सभी विश्रान्ति-सुखका अनुभव कर रहे थे। विंध्याचलने अपना स्नान उस शान्त समयमें आरंभ किया था जब कि वायु शांतिपूर्वक वृक्षोंके पत्तोंपर सुखसे सो रहा था और निरंतर गतिमें रहनेवाला जल-प्रवाह भी अंग पसारकर थोड़ी देरके लिए विश्राम कर रहा था। इसी लिए वह अच्छी तरह समझता था कि हमारा यह कृत्य कोई देखता नहीं है।

विंध्याचलका स्नान शान्तिपूर्वक हो रहा था। चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओंसे विंध्याचलपर अपना अमृत वरसा रहा था। इतनेमें देवीके मन्दिरके पासके एक तंबूमेंसे शुभकरण बाहर निकले। उन्होंने पहले तो भयभीत होकर देवीके मंदिरकी ओर देखा, फिर जरा क्रुद्ध होकर चन्द्रमापर दृष्टि डाली और अंतमें वहुत ही विस्मित होकर विंध्याचलकी ओर देखना आरंभ किया। आँखोंमें नींद नामको भी न थी। हाँ, रातको जागनेके कारण उनका चेहरा कुछ उतरा हुआ अवश्य था और उसपर चिंताकी छाया स्पष्ट दिखलाई पड़ती थी। चन्द्रमाके अमृत वरसानेपर भी उनकी चिंता जरा भी कम नहीं हुई।

उस समय इतनी मोहिनी शांति थी कि रोगसे जर्जर रोगी भी थोड़ी देरके-लिए विश्राम करता, सम्पत्तिके अभाव अथवा आधिक्यके कारण सदा जागने-वाले लक्ष्मीके भक्त भी थोड़ी देरके लिए आराम करते और प्रेमी लोग थोड़ी देरतक विरह सहनेके लिए तैयार हो जाते। पर जिन शुभकरणके शरीरको छूनेका साहस भी कभी किसी रोगको न हो सकता, जिन शुभकरणके वज्रसरीखे हृदयकी स्थिरता सम्पत्तिकी वृद्धि या विनाशसे जरा भंग न हो सकती और जो शुभकरण प्रणयका प्रलय हो जानेपर भी एक क्षणके लिए विचलित न होते, उन्हीं शुभकरणको चिन्तामें पड़ेहुए देखकर बड़ा आश्चर्य होता था। कौन कह सकता है कि अपनी प्रतिज्ञा और अपने निश्चयके लिए सुखदुःखको लात मार-कर शांतिसे जीवन वितानेवाला यह वीर किस प्रकार चिंतामें फँस गया।

बहुत देरतक शुभकरण टकटकी लगायेहुए विंध्याचलकी ओर देखते रहे। उनके चेहरेपरकी चिंताकी छाया तनिक भी कम न हुई। उलटे वह प्रशान्त वदन चंद्रमाकी तरह और भी फीका पड़ता जाता था।

विंध्याचल अभीतक चंद्रमाके प्रकाशमें डूबा हुआ था। शुभकरणके आ जानेके कारण उसके स्नानमें कोई वाधा नहीं पड़ी थी। शायद विंध्याचलने यही सम-झकर स्नान आरंभ किया था कि जब शुभकरण उठकर अपने तंबूसे बाहर आवेंगे तब उन्हें मैं अपना यह स्नान दिखलाऊँगा।

थोड़ी देर वाद शुभकरण विंध्याचलकी ओर देखकर विकट रूपसे हँसे। उनकी उस हँसीका उत्तर प्रतिध्वनि रूपमें और भी जोरसे मिला। उसे सुनकर शुभकरणने मनमें कहा,—" क्या यह विंध्याचल मूर्ख हो गया है? इतनी पवि-त्रता और इतनी शुद्धि पाकर भी, अंगमें तनिक भी मल न होनेपर भी, यह चंद्रमाके प्रकाशमें व्यर्थ स्नान कर रहा है। स्नान वहीं होता है जहाँ मलिनता होती है। शुद्धि वहीं होती है जहाँ गन्दगी होती है। पर इस पर्वतमें तो जरा भी मलिनता नहीं है; इसपर फूलनेवाले फूल इतने शुद्ध होते हैं कि उनकी उपमा आकाशकी ज्योति और बालकोंके हृदयसे दी जाती है; परमपूज्य देवता-ओंके मस्तकपर उनकी स्थापना की जाती है; नदीके प्रवाहकी तरह बहनेवाले उसके धर्म्म-प्रवाहको हम लोग इतना पवित्र मानते हैं कि उसके वहिरंग-स्नानसे भी भीतरका मल धुल जाता है। ऐसे पवित्र पर्वतराजका स्नान करना मूर्खता नहीं तो और क्या है?" शुभकरण फिर विकट रूपसे हँसे।

उनके हास्यकी ध्वनि पहाड़के पत्थरोंसे क्षणभर खेलकर ज्योंकी त्यों लौट आई। पर उस बहुत ही थोड़े समयमें भी शुभकरण अपने कल्पनाराज्यमें बहुत दूर तक चले गये। उन्होंने मनमें सोचा—"निर्मलताके उत्पत्तिस्थान विंध्याचलको भी जब शुद्ध होनेकी आवश्यकता जान पड़ती है तब अपवित्र विचारोंसे भरेहुए, अनेक प्रकारके विकारोंसे पूर्ण और काम क्रोध तथा लोभ आदिके जालमें फँसेहुए हमारे सरीखे मनुष्य भी अपने मनकी शुद्धि क्यों न करें? विंध्याचलमेंसे जब उनके हास्यकी प्रतिध्वनि निकली तब उन्होंने समझा कि हमें देखकर विंध्याचल विकट रूपसे हँसरहा है। विंध्याचल सरीखे निर्जीव पदार्थको भी अपनी हँसी करतेहुए देखकर शुभकरण मन-ही-मन बहुत लज्जित हुए। लज्जासे उनका चेहरा उतर गया। तो भी विंध्याचलका स्नान बराबर हो रहा था।

अब शुभकरणको विंध्याचलका स्नान मूर्खतापूर्ण न जान पड़ता था; उलटे वह उन्हें प्रशंसनीय जान पड़ने लगा। उन्होंने समझ लिया कि विंध्याचल निसर्गतः निर्मल और पवित्र होनेपर भी केवल हमारे समान पातकी मनुष्योंको उपदेश देनेके लिए, मूकभावसे हमें यह समझानेका प्रयत्न कर रहा है कि "तुम भी अपने पापी हृदयको शुद्ध करो।" विंध्याचलके उस परोपकारके उपलक्ष्यमें उन्होंने मन-ही-मन उसे बहुत धन्यवाद दिया। उन्होंने मनमें कहा-"विंध्याचल! तुम धन्य हो। तुममें मलका अंश भी नहीं है, दोष तुम्हें छू भी नहीं गया है, तुममें मूर्तिमती पवित्रता निवास करती है, तुममें परले सिरेकी निर्मलता और पवित्रता है तो भी तुम स्नानकी आवश्यकता समझते हो। जिस प्रकार ज्ञानी लोग दिनरात ज्ञानके पीछे ही लगे रहते हैं, उन्हें अपना ज्ञान कभी पूर्ण नहीं जान पड़ता, ठीक उसी प्रकारकी तुम्हारी भी दशा है। परन्तु मेरी स्थिति इससे बहुत ही भिन्न है। अज्ञानसे पूरी तरह ग्रस्त मनुष्य जिस प्रकार अपने आपको बुद्धिमान् समझकर वास्तविक ज्ञानको तुच्छ बतलाता है, अथवा व्यसनी मनुष्य एक व्यसन छोड़नेके बहानेसे बहुतसे दूसरे व्यसनोंमें फँस जाता है, अथवा बहुत ही गन्दा और दुर्गन्धयुक्त कुत्ता अपने आपको शुद्ध करनेके लिए कीड़ोंसे भरी हुई कीचड़की गड़हीमें गिरकर और भी अपवित्र हो जाता है, ठीक वैसी ही दशा मेरे विचार, मन और विवेककी भी हो रही है। मेरा विवेक बड़े ही भ्रममें पड़ा हुआ है। मेरा मन मुझे उलटी ओर ले जा रहा है। अपने जिस बंधुकी रक्षाके लिए मेरी तलवार म्यानसे बाहर

निकलनी चाहिए उसी बंधुके रक्तकी वह इस समय प्यासी हो रही है। जिस देशको दासत्वसे बचानेके लिए मुझे अपने प्राण देने चाहिए थे उसी देशके दासत्वका विषवृक्ष सींचनेमें मुझे अपना जीवन बिताना पड़ता है। जिस देशके कल्याणमें मुझे अपनी सारी बुद्धि लगानी चाहिए थी उसी देशके अपकारमें मुझे अक्लमन्दी खर्च करना पड़ती है। बुंदेलखंडके हितके लिए प्राण देनेवाले लोगोंको मैं अपना शत्रु समझता हूँ; जो लोग यहाँकी प्रजाको सुखी करना चाहते हैं वे मेरे प्रतिद्वन्द्वी हैं। बुंदेलखंडकी स्वतंत्रताके झंडेके नीचे खड़े होनेवाले वीर मेरे कट्टर दुश्मन हैं। मेरे मनकी अवस्था इतनी विपरीत हो रही है, मेरे मनकी अपवित्रता और मलिनता इतनी बढ़ गई है कि मैं गुणको दोष, सत्कृत्यको अपकृत्य और विचारको अविचार समझता हूँ। नित्य मेरे हाथोंसे ऐसे कृत्य होते हैं, जिनसे मेरे मनका मल, हृदयकी अपवित्रता और विचारोंकी मलिनता दूर होनेके बदले दिनपर दिन बढ़ती ही जाती है। मैं कैसी हीन दशामें पहुँच गया हूँ!"

इसके बाद बहुत देर तक शुभकरणके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। वे आँखें बन्द करके अपनी बाल्यावस्थाके सुख-स्वप्नोंका ध्यान कर रहे थे। स्वप्नके काल्पनिक सुखका अनुमान निद्रित मनुष्यके मुखपर जिस प्रकार प्रसन्नताकी बहुत ही स्पष्ट छटा उत्पन्न करता है, उसी प्रकारके आनंदकी लहर थोड़ी देर तक शुभकरणके चिन्तित मुखपर दिखाई दी। पर ज्यों ज्यों उनके विचार बाल्यावस्थासे युवावस्थाकी ओर बढ़ने लगे, त्यों त्यों आनंदकी वे लहरें भी कम होने लगीं। उन्हें जान पड़ने लगा कि कोमल कलियाँ मानो जगह जगहसे झुलस गई हैं। उन्हें मानो निश्चय हो गया कि इस पौधेको मैं सुंदर वृक्षके रूपमें फलता फूलता हुआ न देख सकूँगा। थोड़ी ही देर बाद उन्हें ऐसा मालूम होने लगा कि मेरी बाल्यावस्थाके मनोहर पौधेके आसपास बहुतसे कँटीले पौधे लग गये हैं। धीरे धीरे वे कँटीले पौधे इतने बढ़ गये कि वह पहलेका सुंदर पौधा उनमें छिप गया। अब शुभकरणको अपने अंतःकरणमें उन कँटीले पौधोंके सिवा और कुछ भी दिखलाई न पड़ता था। वे बहुत ही व्यथित हुए। अपने पिछले जीवनपर विचार करना उनके लिए असह्य हो गया। जब उन्होंने अपनी आँखें खोलीं तब उन्हें अपने सामने एक स्त्री दिखलाई दी। वह स्त्री उनकी ओर देखकर हँस रही थी।

शुभकरणकी आँखें खुलतीं देखकर उस स्त्रीने पूछा—"कहिए, इतनी रातको आप क्या विचार कररहे हैं?"

शुभ०—"रानी हीरादेवी! दिनभर मेरा यह जड़ शरीर अपना जड़त्व भूलकर और मन अपनी स्वाभाविक चंचलता त्याग कर बराबर तुम्हारी सेवामें उपस्थित रहता है। मैं अपने विचारोंकी परवा न करके तुम्हारा उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए दिनभर अविचल रूपसे प्रयत्न करता रहता हूँ। मनकी उच्चता, विचारोंकी पवित्रता और व्यवहारकी शुद्धताको लात मारकर निर्जीव यंत्रकी तरह मैं दिनभर तुम्हारे लिए परिश्रम करता हूँ। इतना होनेपर भी क्या तुम यह बात सहन नहीं कर सकतीं कि रातको विश्रामके समय भी मैं शांतिपूर्ण, विशुद्ध और पापरहित विचारों या कार्योंमें लगूँ?"

शुभकरणकी बात सुनकर हीरादेवी बहुत ही चकित हुई। उसने पूछा—"हैं! आज आप यह क्या कह रहे हैं? आप हमारी कौनसी सेवा करते हैं? हमारे किस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए आपने कौनसे प्रयत्न किये हैं? निर्जीव यंत्रकी तरह हमारे लिए आपने कब परिश्रम किया है? ओड़छेके राजा आज तक सदा आपको अपने बराबरका दोस्त समझते आये हैं। हममें और आपमें सेव्य सेवकका भाव तो कभी उत्पन्न नहीं हुआ।"

शुभ०—"हाँ, तुम्हारा कहना ठीक है। जबजब मैं ओड़छेके राजदरबारमें जाता हूँ अथवा तुम लोगोंका अतिथि होता हूँ तबतब तुम लोग मेरा जितना आदर-सत्कार करते हो उसके लिए मैं तुम लोगोंका बहुत ही कृतज्ञ हूँ। पर यदि थोड़ी देरके लिए इस ऊपरी आव-भगतको छोड़ दिया जाय और वास्तविक अवस्थापर ध्यान दिया जाय तो जान पड़ेगा कि ओड़छेके दरबारमें मुझे जो सम्मान मिलता है वह केवल दिखौआ और ढोंग है। पर नहीं, उन सब बातोंको जाने दो, इस शांतिके समय उन हीन विचारों पर ध्यान न देना चाहिए। हीरादेवी! यदि चम्पतरायके स्वतंत्र होनेमें बाधा डालनेकी आवश्यकता थी, अथवा उसपर संकटका पहाड़ गिराना था, अथवा दिल्लीके शाही दरबारमें पहुँच कर उसे दंड दिलवाना था तो उन सब कार्य्योंके लिए कलका सारा दिन पड़ा हुआ था। इस समय जब कि रातकी दस पाँच घड़ियाँ ही बाकी रह गई हैं वह स्वतंत्रताके प्रसाद पर अधिकार नहीं किये लेता था, सारे ऐश्वर्यको वह अपने अधीन नहीं किये लेता था। तब फिर तुमने इतनी रातके समय मुझसे यहाँ आकर

भेंट करनेकी जल्दी क्यों की ? मेरी शांति भंग करनेकी तुम्हें क्या आवश्यकता थी ?"

हीरा०—"मैं इस समय यहाँ यह देखनेके लिए आई हूँ कि अपनी मित्र-मंडलीके समक्ष आवेशमें प्रतिज्ञा करनेवाले, एक वार अपने जीवनका कर्त्तव्य निश्चित करके दृढतापूर्वक सदा उसके पालनमें लगे रहनेवाले और अपने मुँहसे निकले हुए शब्दोंका मूल्य अपने प्राणोंसे भी अधिक समझनेवाले शुभ-करण रातका समय शांतिपूर्वक क्यों कर बिता रहे हैं।"

शुभकरणने अधिकार जतलानेवाले स्वरमें कहा,—"मैं अपनी रात किस प्रकार विताता हूँ, यह देखनेका तुमको क्या अधिकार है ? मैंने अपना कर्त्तव्य निश्चित किया है; पर क्या केवल इसी लिए, मैंने अपनी सारी स्वतंत्रता भी तुम्हारे हाथ वेच दी है ?"

हीरा०—"वड़े दुःखकी वात है कि शुभकरणकी स्मरणशक्ति यह नहीं वतला सकती, शुभकरणका मस्तिष्क यह नहीं सोच सकता कि उनकी स्वतंत्रता विकी हुई है या नहीं। आपने प्रतिज्ञा करते समय मेरे जिस दाहिने हाथ पर वचन दिया था, मेरे जिन कानोंने प्रतिज्ञाके शब्द सुने थे और मेरे जिन नेत्रोंने आपके चेहरे पर प्रतिज्ञाको प्रत्यक्ष प्रतिविंवित देखा था, यदि उनमें वोलनेकी शक्ति होती तो इस प्रश्नका पूरा उत्तर मिल जाता। आज शुभकरण अपनी प्रतिज्ञा भूल रहे हैं। कल शायद उन्हें यह भी भ्रम होने लगेगा कि हम मनुष्य हैं या नहीं।"

शुभ०—"रानी! यह वात असम्भव है कि मैं अपनी प्रतिज्ञा भूल जाऊँ। जिस दुष्ट प्रतिज्ञाके कारण मेरी वाल्यावस्थाके समस्त सुंदर विचार नष्ट हो गये हैं, जिस प्रतिज्ञा-राहुने मेरे कर्त्तव्य-सूर्य्यको पूरी तरहसे ग्रस लिया है, जिस प्रतिज्ञाके विषवृक्षकी समीपताके कारण मेरे मनसे सुविचारोंका अंकुर निर्मूल हो गया है, उस उग्र और कठोर प्रतिज्ञाको भूलना असम्भव है। मेरे पवित्र कर्त्त-व्यपर कालिमा लगानेवाली, मेरे स्वाभिमानका अधःपतन करनेवाली, मुझे स्वतंत्रताकी ज्योतिसे हटाकर घोर अन्धकारमें डालनेवाली और मेरी वाल्याव-स्थाकी वड़ी और पवित्र आकांक्षाओंको नष्ट करनेवाली वह भयंकर प्रतिज्ञा वरावर मेरे मनको संतप्त करती रहती है। प्राण छूटनेके समय ही उससे पीछा छूटेगा। इससे पहले यह आशा करना मेरे भाग्यमें नहीं वदा है कि क्षण भरके लिए भी उससे मेरा पीछा छूट जायगा।"

हीरा०—"क्या शुभकरणको अपनी प्रतिज्ञाके लिए पश्चात्ताप हो रहा है ?"

शुभ०—"हाँ पूरा पूरा पश्चात्ताप हो रहा है। अब तो मेरा यही काम हो गया है कि मैं दिन भर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए यत्न करूँ और रातके समय अपने दिन भरके आचरित पातकोंके लिए पश्चात्ताप करूँ। आज दिनके समय प्रत्यक्ष स्वतंत्रता देवी—विंध्यवासिनी—के सामने जो जो पातक मैंने किये हैं उनके लिए मुझे रातभर पश्चात्ताप करना पड़ा है। तथापि अभी तक मेरे अन्तःकरणको तनिक भी शांति नहीं मिली। जो समय मुझे सुखपूर्वक विश्राम करनेमें बिताना चाहिए था वही समय यदि मैं अपने मनको शुद्ध करनेमें बिताने लगा तो इसमें कौन सा अन्याय हो गया ?"

हीरादेवीने कुछ क्रुद्ध होकर कहा,—"मैं तो यह बात पहले ही समझ गई थी। आज सवेरे देवीके मंदिरमें ही मैं ताड़ गई थी कि शुभकरण अपनी प्रतिज्ञासे कुछ हटना चाहते हैं।"

शुभकरणने बड़े आवेशमें आकर कहा,—"बस! हीरादेवी बस! अपनी जबान रोको। बहुत कुशल है कि ऐसी बात कहनेवाली जबान एक स्त्रीके मुँहमें है। यदि यह बात किसी पुरुषने कही होती तो मेरी तरवार उसकी जबानके टुकड़े टुकड़े कर डालती। हीरादेवी! प्रत्येक मनुष्यको कुछ कहनेके समय इस बातका अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि हम किसके विषयमें और क्या कह रहे हैं। जिस मनुष्यने अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए अपने सिद्धान्तों और उच्चाकांक्षाओंका नाश कर दिया, न्याय और अन्यायका जिसने जरा भी विचार न रक्खा, नीतिके पर्वत परसे जिसने अपने आपको अनीतिके गहरे गड़हेमें गिरा दिया, सुविचारोंके सुंदर उपवनका त्याग करके जिसने कुविचारोंके भीषण वनको स्वीकार किया और स्वतंत्रता रमणीके प्रिय होनेके बदले जिसने परतंत्रता-रूपी बाजारू वेश्याकी सेवा करनेमें ही सारा सुख माना, उसके विषयमें यह कहना कि वह अपनी प्रतिज्ञासे हट रहा है, मानों सत्यकी हत्या करना है। तुम्हारे सरीखी झूठी स्त्रीके मुँहसे यह बात निकली है, इसी लिए उस पर मेरा विश्वास भी हुआ है। नहीं तो मैं उसे स्वप्नकी बातके बराबर भी न समझता। हीरादेवी! तुम्हारे इस मिथ्या अनुमानका कारण क्या था ?"

उसी समय शुभकरणके आवेशको देखकर हीरादेवी कुछ भयभीत हुई। शुभकरणके आवेशके सामने उसका क्रोध दब गया। वह अच्छी तरह समझती

थी कि यदि मैं कुछ अधिक बोलूँगी तो शुभकरणका क्रोध बहुत ही भीषणरूप धारण कर लेगा और उस दशामें वे जो अनर्थ न कर डालें सो थोड़ा है। शुभकरणकी तेजस्विताका बलिदान करके अभी उसे उनसे बहुतसे काम लेने थे। इसलिए उसने उस समय कुछ दब जाना ही उत्तम समझा। शुभकरणके प्रश्नका उसने कोई उत्तर न दिया।

परंतु हीरादेवीका मौन शुभकरणको शांत न कर सका। उन्होंने फिर आवेशसे कहा,—"हीरादेवी! तुमने किस प्रकार यह अनुमान किया कि मैं अपनी प्रतिज्ञासे हट रहा हूँ? बोलो मेरे प्रश्नका उत्तर दो।"

जब हीरादेवीने देखा कि शुभकरणके प्रश्नका उत्तर दिये बिना किसी प्रकार छुटकारा नहीं है तब वह बहुत ही नम्र होकर बोली—"युवराज दलपतिरायने छत्रसालके फेरमें पड़कर आज कितने यवनोंके सिर काटे! दिल्ली दरबारके प्रधान दरबारी और अधिकारी रणदूलहखाँसे लड़कर उन लोगोंने उसकी मुश्कें बाँधीं और उसे कैद कर लिया। ऐसे ऐसे अनर्थ करके जब वे आपके पास आये तब आपने उन्हें जरा भी न डाँटा डपटा, आपने एक शब्द भी बिगड़ कर न कहा। इसी लिए हम लोग बड़े फेरमें पड़ गये। जब प्राणनाथ प्रभु कोमलहृदय युवराजको भविष्यमें सदा ऐसे ही कृत्य करते रहनेके लिए उत्साहित करने लगे तब भी आप चुप रह गये। छत्रसालके कार्य्य पर चम्पतरायने जितना अभिमान प्रकट किया था, युवराज दलपतिरायके कृत्य पर आपको उतना ही असंतोष प्रकट करना चाहिए था। परंतु आप प्रसन्नतासे युवराजकी तरफ देखते ही रह गये। इतनी रातके समय मैं आपके पास यही जाननेके लिए आई थी कि आपके इस विलक्षण व्यवहारका क्या कारण था। आपके इसी व्यवहारके कारण सहजमें यह अनुमान किया जा सकता है कि आप अपनी प्रतिज्ञासे हट रहे हैं; पर तो भी उसकी सत्यता पर मुझे विश्वास न होता था। अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रह कर आजतक आपने जितने कार्य और आचरण किये हैं उनके कारण तो हम लोग बड़े ही निश्चिन्त थे; पर आपके आजके व्यवहारसे मेरे मनमें सन्देह उत्पन्न होने लगा। अपना सन्देह दूर करनेके लिए ही मैं यहाँ आई हूँ और इसी लिए मुझे अभी तक चैन नहीं पड़ा, मेरी आँख नहीं लगी। मैं आपसे यही जाननेके लिए इतनी रातके समय अपने खेमेसे बाहर निकली थी कि सबेरेके व्यवहारका आप क्या कारण बतलाते हैं। संयोगसे यहाँ आपसे

भेंट हो गई। अव आप अपनी सवेरेकी उदासीनताका कारण संदेह दूर करें।"

हीरादेवीकी वात सुन कर शुभकरण कुछ सोचमें पड़ गये। धीरे धीरे उनके चिन्तित मुखपर प्रसन्नताकी झलक दिखाई पड़ने लगी। थोड़ी देर वाद ऐसा जान पड़ा कि वे विचार-तंद्रासे एकदम जाग्रत हुए हैं। वे कुछ तो अपने आपसे और कुछ हीरादेवीको लक्ष्य करके वोले,—"मेरा आजका व्यवहार अवश्य ही आश्चर्यजनक था। युवराजने आज जो अद्वितीय कार्य्य किया उसके लिए मुझे वहुत कुछ करना चाहिए था, पर तो भी मैं चुप रहा। युवराज अव वड़े हुए हैं। आगे चलकर उनके द्वारा इससे भी भयंकर और उग्र कार्य्य होंगे। मैं तो इस वातका प्रण कर चुका हूँ कि चम्पतरायका और स्वतंत्रताके लिए उनके होनेवाले प्रयत्नोंका पूरी तरहसे नाश करूँगा, और मेरा पुत्र बुंदेलखंडसे यवनोंकी सत्ता नष्ट करनेके लिए छत्रसालकी सहायता करनेको तैयार है। ऐसे अवसर पर मेरा चुप रहना ठीक नहीं। मुझे इस समय यह निश्चय करना चाहिए कि मैं अवतक जिस प्रकार चम्पतरायसे द्वेप करता आया हूँ, उनके प्रयत्नोंको नष्ट करना जिस प्रकार अपना कर्तव्य समझता आया हूँ और स्वतंत्रताके लिए उनके उद्योगोंमें जिस प्रकार विघ्न डालता आया हूँ उसी प्रकार मेरे पुत्रको भी सव कार्य करना चाहिए अथवा युवराज छत्रसालसे मित्रताका व्यवहार करके उनकी सहायता करनी चाहिए। आज मुझे इस वातका निर्णय कर लेना चाहिए कि अवतक मैं जिस प्रकार लड़ता भिड़ता रहा हूँ उसी प्रकार हमलोगोंके पुत्रोंको भी लड़ना-भिड़ना चाहिए अथवा परस्पर मिलकर वुंदेलखंडको दासत्वसे छुड़ानेका प्रयत्न करना चाहिए। हीरादेवी! मेरे आजके मौनके कारण जिस प्रकार तुम्हें मेरे सम्वन्धमें शंका हुई है, उसी प्रकार कुमार दलपतिरायको भी हुई होगी। उनकी समझमें भी यह वात न आई होगी कि उनका आजका कार्य मुझे पसन्द आया या नहीं। तुम्हारी तरह उनकी शंका भी दूर होनी चाहिए। चलो, युवराज दलपतिरायके पास चलें। वहीं चलकर मैं सव वातोंका स्पष्ट निर्णय करूँगा। विना इसके मेरे मनकी व्याकुलता दूर न होगी।"

यह कहकर शुभकरण वाईं ओरके खेमेकी तरफ वढे। उस समय उन्होंने सारी चिन्ताओंसे अपना पीछा छुड़ा लिया था। आकाशमें चमकनेवाले चन्द्रमाकी तरह उनका मुख प्रफुल्लित जान पड़ता था। रानी हीरादेवी उनके पीछे पीछे चल रही थी। वह अपने मनमें यह समझकर वहुत प्रसन्न हुई थी कि आज

सवेरे युवराज दलपतिरायने जो अनुचित कार्य्य किया है इस समय उन्हें उसका दंड मिलेगा। उन्होंने अच्छी तरह समझ लिया था कि आज रातके प्रयत्नमें मुझे पूरी पूरी सफलता हुआ चाहती है।

शुभकरणने प्रसन्न होकर चन्द्रमाके प्रकाशमें स्नान करनेवाले विंध्याचलकी ओर फिर एक वार देखा। उस समय उनकी दृष्टिमें निश्चय आनन्द और अभिमानकी मिश्रित छाया दिखाई पड़ती थी। यद्यपि वे मुँहसे कुछ भी न बोले थे, तो भी उनके चेहरेसे प्रकट होता था कि वे मन-ही-मन विंध्याचलसे कह रहे हैं,—"पर्वतराज! तुम्हारा यह कृत्य मुझे पसन्द है।" उनके चेहेरेकी कान्तिने उनके भाषणसे भी बढ़कर काम किया।

शुभकरणके पीछे पीछे चलकर हीरादेवी युवराज दलपतिरायके खेमेके पास पहुँची। शुभकरण विना उसकी ओर ध्यान दिये सीधे अपने पुत्रके पलंगके पास चले गये।

हीरादेवी इस आशासे खड़ी होकर उन दोनोंकी ओर देखने लगी कि अब शुभकरण बड़े जोरसे अपने पुत्र पर बिगड़ेंगे और उन्हें पलंग परसे नीचे खींच लेंगे। परंतु उसे कुछ निराला ही दृश्य दिखलाई दिया। उसकी आशा व्यर्थ हुई, उसका आनन्द नष्ट हो गया। वह आश्चर्यसे स्तम्भित हो गई। उसने जो कुछ देखा उस पर उसे विश्वास नहीं हुआ।

अपना सन्देह दूर करनेके लिए उसने फिर दलपतिरायके पलंगकी ओर देखा। उस समय भी उसे यही दिखलाई दिया कि शुभकरण प्रेमभरी दृष्टिसे अपने पुत्रका मुँह निहार रहे हैं।

शुभकरणके निर्णयके सम्बन्धमें क्या हीरादेवीके भाग्यमें यही देखना बदा था?

* * * * *

तीसरा प्रकरण।

राजाओंके कलंक।

चंपतराय थे तो राजा, पर उनमें योग्यता साधारण मनुष्योंकी भी न थी। वे शरीरसे जितने अशक्त थे, मनसे भी वे उतने ही दुर्बल थे; इस लिए वे एक साधारण कुटुम्ब चलानेके योग्य भी न थे। बुंदेलखंडके एक

बड़े प्रांतके राजकुलमें उत्पन्न होनेके कारण ही उन्हें अपना पैतृक राज्यासन मिल गया था।

जिस प्रकार अमृत और विषका भेद न जाननेवाले व्यक्तिको भी केवल एक वैद्यराजके लड़के होनेके कारण धन्वन्तरिकासा मिजाज रखना पड़ता है, अथवा किसी निरक्षर भट्टाचार्य्यको किसी महामहोपाध्यायके लड़के होनेके कारण शालकी जोड़ी कंधेपर रखकर पंडितशिरोमणि बनना पड़ता है, अथवा अपने स्वरसे गदहेको भी मात करनेवाले व्यक्तिको किसी गवैयेके लड़के होनेके कारण तानसेनकासा अभिमान करना पड़ता है, उसी प्रकार कंचुकीरायको भी अपनी राजसी मर्य्यादा रखनी पड़ती थी। उनके पूर्वज ढाँड़ेरके राजा थे, इसी लिए कंचुकीरायको भी ढाँड़ेरका राजा होना पड़ा था। शास्त्र और लोकाचारके अनुसार ढाँड़ेरके राज्यासनके उत्तराधिकारी होनेके अतिरिक्त उनमें न तो और कोई गुण ही था और न पात्रता ही थी। अपने युवराजकालमें वे कुछ दिनों तक जहाँगीर और शाहजहाँके महलोंमें कंचुकीका काम कर चुके थे। इसी लिए शाहजहाँ उन्हें दिल्लगीसे कंचुकीराय कहा करता था; तभीसे उनका यह नाम पड़ गया था। अन्य भारतवासियोंकी तरह बुंदेलखंडकी सारी प्रजा भी अपने राजामें ईश्वरका अंश मानती थी। ढाँड़ेरके निवासी भी कंचुकीरायको ईश्वरका अंश ही समझते थे।

अपनी कुमारावस्थामें उन्होंने यह बात बहुत अच्छी तरह जान ली थी कि मुसलमान बादशाहों और उमराओं आदिकी किस प्रकार सेवा होती है और उन्हें प्रसन्न करनेके कौन कौन से उपाय होते हैं। यही नहीं बल्कि तभीसे मुसलमानोंके लिए उनके हृदयमें बहुत कुछ आदर और पूज्यभाव उत्पन्न हो गया था। उनके दरबारमें बहुधा मुसलमान अमीर-उमराव आया करते थे और वहाँ उनका अच्छा आदर-सत्कार होता था। बहुतसे मुसलमानोंको उनके राज्यमें ऊँचे ऊँचे पद भी मिल गये थे; जिनपर वे बड़े ऐश-आरामसे रहते थे। कंचुकीरायको उनके सुभीतेका विशेष ध्यान रहता था। मुसलमानोंके प्रति ऐसी श्रद्धा केवल कंचुकीरायमें ही नहीं थी। उन दिनों भारतके भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें और भी अनेक ऐसे छोटे मोटे राजे थे जिनके राजकुमार शाहीदरबारोंमें तरह तरहकी सेवायें किया करते थे और जिनके राज्यमें मुसलमानोंकी खूब खातिर होती थी। ऐसी दशामें कंचुकीरायको कोई विशेष दोष देना ठीक नहीं।

विंध्यवासिनीदेवीके मन्दिरमें जब कंचुकीरायको यह मालूम हुआ कि युवराज छत्रसाल और दलपतिरायने रणदूलहखाँ और उनके सिपाहियोंकी बहुत दुर्दशा की है तब उन्हें बहुत दुःख हुआ। उनकी समझसे वे दोनों युवराज दण्डके योग्य थे; पर उनका दुःख बढ़ानेके लिए उलटे उनका गौरव और सम्मान हुआ। छत्रसालको दंड दिलाना तो उनकी शक्तिके बाहर था; पर दलपतिरायको कुछ दण्ड दिलवा देनेकी इच्छा और आशा उन्हें अवश्य थी; क्योंकि वे समझते थे कि शुभकरण आजकल हीरादेवीके हाथकी कठपुतली हो रहे हैं और इसी लिए वे अपने पुत्रको कुछ दण्ड दे सकेंगे। पर स्वयं कंचुकीरायमें इतना मनोबल ही नहीं था कि हीरादेवी या शुभकरणसे इस विषयमें कुछ कहते। अतः दलपति-रायको भी दण्ड न मिल सका। मन्दिरसे बाहर निकलते ही उन्होंने देखा कि रणदूलहखाँ सामने एक पेड़से बँधा हुआ है। उसे छुड़ा सकनेमें असमर्थ होनेके कारण उन्हें और भी दुःख हुआ और वह अपना दुःख साथ लिये अपने खेमेमें पहुँचे! उनके विशेष दुःखी होनेका यह कारण किसीकी समझमें न आया।

कंचुकीरायने किसी प्रकार सोच-विचारमें तो वह सारा दिन बिता दिया, पर सन्ध्याको उन्हें रणदूलहखाँकी विशेष चिन्ता हुई। कोई उपाय सोचने और परामर्श करनेके लिए उन्होंने हीरादेवीको बुलाया। हीरादेवीके आनेपर दोनोंमें बहुत देरतक कानाफूसी होती रही। यह कानाफूसी प्रायः आधी रातके समय समाप्त हुई। वहाँसे उठकर हीरादेवी अपने डेरेकी ओर नहीं गई बल्कि उस तरफ गई जिधर शुभकरणका खेमा पड़ा हुआ था।

हीरादेवीके चले जानेके उपरान्त कंचुकीराय बहुत देर तक सोचमें पड़े रहे। वह कभी बैठते, कभी लेटते ओर कभी खेमेमें चारों ओर चक्कर लगाते। इसी प्रकार बहुतसा समय चिन्तामें बिताकर उन्होंने एक खिदमतगारको बुलाकर धीरेसे उसके कानमें कुछ कहा। सुनते ही उसने कुछ आश्चर्यभरी दृष्टिसे अपने मालिककी तरफ देखा और तब वह वहाँसे चल दिया। उसे लौटकर आनेमें अधिक विलम्ब नहीं लगा; पर तो भी इसी बीचमें कंचुकीराय अपने बहुतसे कपड़े और जेवर उतार चुके थे। खिदमतगारके लाये हुए साधारण कपड़े उन्होंने पहन लिये और ऊपरसे नकली दाढ़ी मोछ लगा ली। उस समय उनका वेष ऐसा विलक्षण हो गया था कि देखनेमें न तो वे पूरे हिंदू ही जान पड़ते और न पूरे मुसलमान। खिदमतगारको भी उनका वह वेष देखकर बहुत

आश्चर्य हुआ। कंचुकीराय उसे साथ लिये लिये एक वड़े आइनेके सामने जा खड़े हुए। जब वे उस आइनेमें स्वयं अपने आपको न पहचान सके तब उन्हें दृढ विश्वास हो गया कि अब और मुझे कोई नहीं पहचान सकेगा और मेरा काम मजेमें हो जायगा। इस प्रकार निश्चिन्त होकर उन्होंने खिदमतगारसे कहा—"किशुन! महेवाके राजा चम्पतरायने रणदूलहखाँको जिस जगह कैद कर रक्खा है, वहाँ मुझे ले चल।"

कि०—"उनसे तो महाराज साधारण वेपमें भी मिल सकते थे।"

कंचु०—"तुझे इन सब झगड़ोंसे क्या मतलब? तू आगे आगे रास्ता दिखलाता हुआ चल।"

इस पर किशुन कुछ भी न बोला। वह अपने स्वामीके आगे आगे चलने लगा। थोड़ी देर तक चुपचाप चलनेके उपरान्त एक स्थान पर किशुन ठहर गया और एक खेमेकी तरफ हाथसे इशारा करके बोला,–महाराज! इसी खेमेमें रणदूलहखाँ कैद है। पर उस खेमेके बाहर पहरा है। इस लिए मुझे सन्देह है कि महाराजके भीतर जानेमें रुकावट होगी।"

कंचु०—"तू इन सब बातोंकी चिन्ता न कर और लौट जा। (कुछ ठहर कर) और नहीं तो तू यहीं कहीं छिपकर खड़ा हो जा और मेरा रास्ता देख।"

किशुन एक पेड़की आड़में छिपकर खड़ा हो गया और कंचुकीराय धीरे धीरे दिखलाये हुए खेमेकी ओर बढने लगे। परन्तु उस समय तक उन्होंने खेमेमें प्रवेश करनेका कोई उपाय नहीं सोचा था। वे दूसरे ही विचारोंमें मग्न चले जाते थे। खेमा पास ही था, इस लिए वे शीघ्र ही पहरेदारके पास पहुँच गये। पहरेदारने भी उन्हें पहलेसे आते हुए न देखा था, इस लिए उनके पास पहुँचने पर उसने कुछ कड़ककर कहा–"कौन?" कंचुकीरायको वह शब्द कुछ परिचितसा जान पड़ा। उन्होंने दो कदम और आगे बढ़कर जब गौरसे पहरेदारका मुँह देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि वह उनका पुराना नौकर सौभाग्यसिंह है। उन्होंने उसके कन्धेपर हाथ रखकर कहा–-"सौभाग्यसिंह! हमें पहचानो, हम हैं राजा कंचुकीराय।"

इस विचित्र वेषमें अपने पुराने स्वामी राजा कंचुकीरायको देखकर पहले तो सौभाग्यसिंहको विश्वास नहीं होता था; पर उनकी आवाजके कारण उसने उन्हें

अच्छी तरह पहचान लिया। उसने झुककर सलाम किया और आश्चर्यसे कहा—"इतनी रातके समय इस वेषमें महाराज किधर निकले?"

कंचुकी०—"मुझे एक बहुत आवश्यक कार्य्यके लिए रणदूलहखाँसे मिलकर कुछ परामर्श करना था। कोई मुझे पहचान न ले, इस लिए मैंने यह विलक्षण वेष बनाया है। संयोगसे यहाँ पहरेपर तुम मिल गये। तुम मेरे पुराने विश्वास-पात्र थे, इस लिए मैंने तुम्हें अपना परिचय देनेमें कोई हानि न समझी।"

कंचुकीरायको खेमेमें प्रवेश करनेके लिए उद्यत देखकर सौभाग्यसिंह बड़ी ही असमंजसमें पड़ा। उसने कहा,—"महाराज! मैं तो......" पर कंचुकीरायने उसे बोलने न दिया और बीचमें ही रोककर कहा—"नहीं नहीं, तुम डरो मत। चिन्ताकी कोई बात नहीं है। मैं अभी दो चार बातें करके ही लौट आऊँगा। मुझे कोई विशेष कार्य्य नहीं है। तुम घबराओ मत। मेरा यहाँ आना किसीको कानोंकान भी न मालूम होगा। और अगर तुमपर किसी तरहकी आँच आवे तो उसका जिम्मेदार मैं हूँ।" इतना कहते हुए—बिना सौभाग्यसिंहके उत्तरकी प्रतीक्षा किये—कंचुकीराय खेमेके अन्दर चले गये। सौभाग्यसिंहको उन्हें रोकनेका साहस नहीं हुआ।

खेमेके भीतर पैर रखते ही कंचुकीरायको जो आनन्द हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। उसके आनन्दका मुख्य कारण यह था कि अब उन्हें रणदूलहखाँके मुक्त होने और चम्पतराय तथा शुभकरणको दण्ड मिलनेकी पूरी आशा होगई थी। उन्होंने भीतर घुसते ही देखा कि एक बहुत साधारण खाटपर रणदूलहखाँ पड़ा हुआ खर्राटे ले रहा था। वह थोड़ी ही देर पहले सोया था। कंचुकीराय उसके पास खड़े होकर उसे जगानेका प्रयत्न करने लगे। उनके दो तीन बार खाँसने-खखारने पर रणदूलहखाँकी नींद खुल गई और उसने सिर उठाकर कर्कश स्वरमें पूछा "कौन है?"

कंचुकीरायने बड़ी ही नम्रतासे कहा,—"जनाब! मैं यहाँ इस मौके पर आपकी कुछ मदद करनेके लिए आया हूँ।"

रण०—माफ करो! भाई मुझे माफ करो! मैं तुम्हें नहीं पहचानता और न मैं तुम्हारी मदद चाहता हूँ। तुम तो मुझे इस वक्त खासे शैतान मालूम होते हो! खुदा इन काफिरोंको गारत करे, ये भी क्या क्या ढोंग रचते हैं।"

कंचु०—"हाँ जनाब, आपका कहना बहुत दुरुस्त है। मगर आप कमसे कम मेरा एतबार करें। मैं आपका खैरख्वाह हूं और मुझसे आपको फायदा पहुँचेगा।"

लेकिन रणदूलहखाँपर न जाने कहाँका भूत सवार था कि कंचुकीराय विलक्षण वेषमें उसे शैतान ही मालूम होते थे। ज्यों ज्यों कंचुकीराय नम्रता दिखलाते थे त्यों त्यों वह उनसे और भी डरता जाता था। उसने कुछ डरकर और कुछ खिझलाकर कहा—"न भाई, मुझे तेरी मदद नहीं चाहिए। तू माफकर और अपना रास्ता ले। मेरी मदद खुदा करेगा, तू मुझे इसी हालतमें रहने दे। अगर मैंने कभी तेरा कोई कसूर किया हो तो उसके लिए तू मुझे माफ कर। मैं तेरे पैरों पड़ता हूं, मुझे तुझसे डर लगता है।"

कंचुकीरायको इस बातका मन ही मन बहुत दुःख हुआ कि मैंने पहले ही खाँसाहबको अपना परिचय क्यों न दिया और व्यर्थ उन्हें इतना क्यों डरा दिया। इसी लिए शायद उन्होंने मुझे चम्पतरायके पक्षका कोई आदमी समझा। उन्होंने फिर कोमल स्वरमें कहा—"जनाब, मैं शैतान नहीं हूं बल्कि..."

रण०—"अगर तू शैतान नहीं है तो कमसे कम उसका भाई-बिरादर जरूर है।"

कंचु०—"जनाब! आप एतबार करें, मैं शैतान या भूत-प्रेत नहीं हूं बल्कि देहलीके शाही दरबारका सच्चा खैरख्वाह और पुराना नमकख्वार ढाँढेरका राजा कंचुकीराय हूं। और..."

पर रणदूलहखाँको इतनेपर भी विश्वास न हुआ। वह अपनी पहली बातपर ही अड़ा रहा। उसने कहा,—"भाई तू मेरा पीछा छोड़ दे, मुझे तुझसे डर लगता है। किसी दूसरे मौकेपर तू जो कुछ कहेगा मैं पूरा करदूंगा; पर इस वक्त तू मुझे माफ कर।"

इस प्रकार अपना तिरस्कार होते देखकर कंचुकीरायको बहुत ही दुःख हुआ। उन्होंने फिर कहा,—"जनाब, आप मुझसे जरा भी न डरें और मुझे अपना दोस्त समझें। आपने मुझे इस वक्त नहीं पहचाना। पर पहले आप एक बार मेरे दरबारमें आचुके हैं और ढाँड़ेरमें मेरे मेहमान रह चुके हैं। न जाने आपको इस वक्त क्या खयाल हो गया है जिससे आप इतना डर रहे हैं। आप इतमीनानसे बातें करें। मैं आपको इस कैदसे छुड़ानेका इरादा करके यहाँ आया हूँ।"

अब रणदूलहखाँकेलिए अविश्वास करने अथवा भयभीत होनेका कोई कारण न रह गया। उसने हँसतेहुए कहा—"राजा साहब! आपने तो मुझे इस वक्त बिलकुल डरा दिया। आइए, बैठ जाइए।"

कंचुकीराय बड़े अदबसे खाँ साहबके पास बैठ गये। खाँसाहबने उन्हें अच्छी तरह पहचानकर कहा,—"कहिए आप यहाँ क्योंकर और किस इरादेसे आये हैं?"

कंचु०—"आज सुबह ही जब मैंने मन्दिरसे बाहर निकलतेहुए आपको पेड़में बँधेहुए देखा तो मुझे बहुत रंज हुआ। पर क्या करूँ, उस वक्त मैं लाचार था। दिनभर मैं आपको छुड़ानेकी तदबीरें सोचता रहा; मगर किसीमें मुझे कामयाबीकी सूरत न दिखाई दी। लाचार इस वक्त मैं आपसे ही इसकी कोई तदबीर पूछनेकेलिए किसी तरह यहाँ आ पहुँचा।"

रण०—"खैर, आपने बड़ी मेहरबानी की। इस लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ। खुदाका शुक्र है कि हिन्दुओंमें कुछ राजे ऐसे बहादुर और समझदार भी हैं जो अपना फर्ज अच्छी तरह समझते हैं और मौका पड़नेपर उसे पूरा करनेकेलिए इतनी तकलीफ उठाते हैं।"

कंचु०—"अजी जनाब! आप यह क्या फरमाते हैं! यह तो मेरा फर्ज था। इसमें मैंने आपपर कोई एहसान नहीं किया। खैर, अब आप बतलावें कि आपने यहाँसे अपने छूटनेकी क्या तदबीर सोची है?"

रण०—"राजासाहब! आप मुझसे क्या तदबीर पूछते हैं? आप खुद ढँढेरके राजा थे। आपके साथ यहाँ सौ दो सौ आदमी भी थे। आपने उन सबको साथ लेकर इस खेमेपर छापा डाला होता और मुझे यहाँसे छुड़ा लिया होता। चोरोंकी तरह छिपकर रातको यहाँ आनेकी क्या जरूरत थी?"

कंचुकी०—(कुछ लज्जित होकर) "आपका कहना बजा है। मगर बात यह है कि एक तो चम्पतरायके साथ फौज ज्याद: है और दूसरे इस जगह मेरा कोई बड़ा मददगार नहीं है। खैर, अगर आपने अबतक कोई तदबीर सोची हो तो बतलावें, मैं उसके मुताबिक काम करनेकेलिए तैयार हूँ।"

रण०—"राजा साहब, जब आप इस जगह मेरी मदत नहीं करसकते, तब खैर आप किसी तरह मेरे कैद होनेकी खबर बहुत जल्द देहली पहुँचा दें। वहाँसे मेरी मददकेलिए काफी फौज आ जायगी। (कमरसे एक कटार निका-

लकर) लीजिए, मैं आपको यह कटार देता हूँ । इसकी मददसे आप देहलीके शाही महलों और दरवारोंमें बहुत ही आसानीसे आ जा सकेंगे; कहीं कोई आपको रोक न सकेगा । (कंचुकीरायको कुछ चकित देखकर) आप इस कदर तअज्जुव में क्यों आगये ? क्या आपको मेरी वातका यकीन नहीं है ? "

कंचुकी०—" भला आपकी वात और उसपर यकीन न हो ! गैरमुमकिन ! मैं सिर्फ यही जानना चाहता था कि इस कटारसे मुझे कैसे और क्या काम लेना पड़ेगा । "

रण०— 'आप इसे लेकर सीधे देहली चले जाँय । दरवार या महलमें जिस जगह जहाँपनाह होंगे उस जगह आप इस कटारको दिखलातेहुए वखूवी जा सकेंगे । वहाँ पहुँचकर शाहंशाहसे अर्ज कीजिएगा कि मैं अपने कुछ साथियोंके साथ देवीका मन्दिर ढानेकी तैयारीमें था कि इतनेमें चम्पतरायका शरीर लड़का एक वड़ी फौज लेकर मुझपर चढ़ आया । हालाँ कि मैंने उसकी ताकत तोड़नेमें अपनी तरफसे कोई वात उठा न रक्खी थी, ताहम मेरे १५–२० साथी उसके तीन चार सौ आदमियोंके सामने न ठहर सके। उसी मौकेपर चम्पतराने खुद भी पहुँचकर उसकी मदद की और दोनोंने जहाँपनाहके नमकख्वारोंको कैद करलिया। अव काफिर चाहते हैं कि अगर उन्हें इस वातका पक्का यकीन दिला दिया जाय कि आइन्दः मन्दिर तोड़नेकी कोई कोशिश न की जायगी तो वे मुझे छोड़ देंगे। यह भी कह दीजिएगा कि वे लोग मुझे कैद करके महेवा ले गये हैं और वहींके किलेमें मुझे कैद रखनेका उनका इरादा है । इतनी वातें कहकर आप जहाँपनाहसे मेरी मददके लिए सिफारिस कीजिएगा और उनसे फौज माँगिएगा । और फिर आप खुद समझदार हैं । आपको ज्यादः समझानेकी जरूरत नहीं । आप जव जैसा मौका देखेंगे तव वैसा काम करलेंगे । "

कंचु०—" मैं उम्मेद करता हूँ कि इतना होनेपर जरूर आपकी रिहाई हो जायगी । "

रण०—" राजासाहव ! यह आप क्या फरमाते हैं ! हुजूरवालाको खुद अपने नमकख्वारोंकी फिक्र होगी । इसके अलावः वे आपके साथ वहुत खातिरसे पेश आवेंगे और ताज्जुव नहीं कि खुश होकर आपका मर्तवः और मन्सव भी वढ़ा दें । हाँ, मैं आपको एक वात वतलाना भूल गया । शाहंशाहवालाके दुश्मनोंकी

तबियत आजकल बहुत अलील है। उनकी बहन रोशनआरा बेगम उनकी तीमारदारीमें लगी होंगी। महलोंमें सैकड़ों तातारी औरतोंका नंगी तलवारोंका पहरा होगा और उसी पहरेपर यह कटार आपकी मदद करेगी। आप किसी तरह रोशनआरा बेगमके हुजूरमें पहुँचकर उन्हींसे सब बातें अर्ज कीजिएगा, आजकल सलतनतके सब काम वही अंजाम फरमाती हैं। वे इसका मुनासिब इन्तजाम करदेंगी।"

कंचु०—"हाँ जनाब, यह तो बतला......" इतनेमें ही कंचुकीरायके कानोंमें चम्पतरायका कर्कश स्वर पड़ा। वह घबरा गये। उन्होंने आँखें उठाकर देखा, चम्पतराय यह कहते हुए उनकी ओर बढ़ रहे थे-"खबरदार! अगर एक शब्द भी मुँहसे निकला तो अभी टुकड़े टुकड़े करडालूँगा। दुष्ट तू कौन है और यह उपद्रव करनेकेलिए यहाँ किस प्रकार पहुँच गया?"

कंचुकीराय उनकी बातका उत्तर देना चाहते थे पर उनके मुँहसे शब्द न निकलता था। चम्पतरायने यह कहतेहुए कि "यह दुष्ट इस प्रकार न मानेगा" अपनी तलवार खींच ली। कंचुकीरायने लड़खड़ाती हुई जबानसे कहा—"मैं हूँ ढाँड़ेरका राजा कंचुकीराय।"

चम्पतरायको उसकी बातपर बहुत ही आश्चर्य्य हुआ। थोड़ी देरतक वे टक लगायेहुए उनकी ओर देखते रहे। अन्तमें उन्होंने कहा,-"तुम राजा काहेको हो, राजाओंके कलंक हो।"

× × × ×

चौथा प्रकरण।

पिता और पुत्र।

पूर्व दिशाकी एक ऊँची टेकरीकी आड़में खड़े होकर भगवान् भास्कर प्रेमपूर्वक अपने असंख्य बालकोंकी ओर देखरहे थे। अपने पिताका आगमन-काल निकट जानकर वनस्पतिकुल प्रफुल्लित होकर, वृक्षोंने उनकी प्रतीक्षा कररहा था। लताओंने प्रफुल्लित होकर, वृक्षोंने नम्र होकर और दूसरी वनस्पतियोंने प्रेम-पूर्वक अपने पिताकी ओर देखा। सामने ही उन्हें निर्मल आकाशमें पिताके दर्शन हुए।

युवराज दलपतिराय उस समय तक जाग उठे थे । उन्होंने आँखें खोलकर देखा—शुभकरण प्रेमपूर्वक उनके पलंगके पास खड़ेहुए उनकी ओर देखरहे थे और उनसे कुछ हटकर रानी हीरादेवी काठकी पुतलीकीतरह खड़ी हुई थी । उन्हें आश्चर्य भी हुआ और आनन्द भी । उन्होंने चटपट उठकर पिताजीके चरण छुए । उन्हें उठाकर छातीसे लगाते हुए शुभकरणने गद्गद स्वरसे कहा,—" बेटा, एक बार अच्छी तरह मेरे गलेसे लग जाओ । "

दल०—" पिताजी ! मैं बड़ा ही भाग्यवान् हूँ । आज सबेरे ही आपके शुभ दर्शन हुए; मैं धन्य हूँ । विन्ध्यवासिनीके सहस्र दर्शनोंसे भी मुझे जो आनन्द न मिल सकता वह मुझे आपके एक बार दर्शन करनेसे हुआ । मैं समझता हूँ कि आज मेरे पूर्व-जन्मके पुण्य उदय हुए हैं । "

शुभ०—दलपति, तुम्हें अभी तक मेरे हार्दिक विचारोंका पता नहीं लगा । सद्गुणों, सत्कार्यों और विवेक आदिका मैंने बहुत ही बुरी तरह निरादर किया है, और इसीलिए उनकी ज्वाला मेरा अन्तःकरण जलारही है; मुझे मनुष्य-कोटिसे निकालकर पिशाच-कोटिमें रख रही है । आज बुन्देलखंडमें पहलेका शुभकरण नहीं बल्कि उसका पिशाच घूम रहा है । तुम पवित्र और दैवी गुणोंके अधिकारी हो, व्यर्थ मुझ पिशाचको महत्त्व मत दो । "

बड़े ही आश्चर्य और दुःखसे युवराजने कहा,—" पिताजी, आप यह क्या कह रहे हैं ? "

शुभ०—" जो कुछ मैं कहता हूँ वह बहुत ठीक है । क्या तुम नहीं जानते कि आजतक मैं क्या करता आया हूँ ? क्या मेरे कार्य्योंमें तुम्हें कभी तनिक भी मनुष्यत्व दिखाई दिया है ? ऐसे ऐसे कार्य्य मेरे दैनिकक्रममें सम्मिलित हो गये हैं जिन्हें देखकर पिशाचोंको भी डर लगता और ग्लानि होती है । चम्पतरायसरीखे वीरशिरोमणि जब बुन्देलखंडके ऐहिकस्वर्ग स्वतंत्रताकी प्राप्तिकेलिए दिनरात प्रयत्न करते हैं, तब उनकी मददकरना तो दूर रहा, शुभकरणसे जड़की तरह चुपचाप बैठा भी नहीं जाता, उलटे शुभकरणका यह पिशाच यथा-साध्य उनके कार्योंमें विघ्न डालता है । सारे बुन्देलोंको दासत्वके नरककी ओर ले जाना ही मेरा अन्तिम उद्देश्य हो गया है । ऐसे कार्योंमें जितना अधिक बन्धु-द्रोह, देश-द्रोह और धर्म्म-द्रोह करना पड़ता है उसकी कल्पना भी तुम्हारे सरीखे निष्पाप आचरणवाले युवकको न करनी चाहिए । तुम अपने सद्गुणोंसे

इस लोकको स्वर्ग बनाओ, अपने निष्पाप आचरण और उत्तम कृत्योंसे अपने देशको सब प्रकारसे सुखी करो! तुम्हारे लिए यही उत्तम है कि तुम मेरे सरीखे पातकी और दुष्टकी ओर ध्यान न दो।"

दलपतिरायने काँपते हुए स्वरमें कहा,—"पिताजी! अभी तो आपके सद्गुणोंकी मुझमें छाया भी नहीं आई है। सूर्य्यके सामने किसी बहुत ही छोटे ग्रहकी जो दशा होती है, आपके सद्गुणोंके सामने मेरी भी वही स्थिति है। आप व्यर्थ अपने आपको दोष न लगावें। आपके बहुतसे गुण बड़े ही प्रशंसनीय हैं।"

शुभकरणने आवेशमें आकर कहा,—"नहीं तुम्हारा कहना ठीक नहीं है। तुम्हारी आँखोंके सामने पितृप्रेमका परदा पड़ा हुआ है। पहले उस परदेको हटा लो और तब मुझे देखो। तुमने शायद यही न कहा था कि मुझमें गुण हैं? यह तुम्हारा भ्रम है। बहुत दिन हुए गुणोंसे मेरा सम्बन्ध टूट चुका है। अपने भाईके साथ द्रोह करनेवाले, उसके अपमान और दुःखमें ही अपना सारा सुख समझनेवाले और दिनरात अपने भाईके नाशके प्रयत्नमें लगे रहनेवाले मनुष्यसे सद्गुणोंका क्या सम्बन्ध? जो मनुष्य बिना किसी प्रकार दुखीहुए अपने धर्म्मको अपमानित और पददलित होते देखता है, जो अपने धर्म्मका नाश करनेके लिए विधर्मियोंको सहायता देनेमें ही अपना बड़प्पन समझता है और अपने धर्म्मका ह्रास और देशका नाश देखकर जिसकी आँखोंसे दुःखाश्रुके बदले आनन्दाश्रु निकलते हैं वह पातकी सद्गुणोंका मूल्य क्या जाने? मैं किसी समय अवश्य सद्गुणी था। तब देशकेलिए मेरी आत्मा बहुत दुःखी रहती थी, बुन्देलोंकी स्वतंत्रताकी दिव्यज्योति मुझे निरन्तर दिखलाई पड़ती थी। पर उस समय मैं चम्पतरायका मित्र और साथी था। बुन्देलखण्डकी प्रजा समझने लगी थी कि चम्पतराय और शुभकरण मिलकर राष्ट्रका अन्तिम उद्देश्य सिद्ध करदेंगे, बुन्देलोंको इस लोकका मोक्ष—स्वातंत्र्य—दिलवा देंगे। पर देशके ऐसे भाग्य कहाँ? शीघ्र ही आगे चलकर मुझे चम्पतरायको अपना शत्रु समझना पड़ा। सामने और पास ही दिखलाई पड़नेवाली स्वतंत्रताको छोड़कर मुझे अपने प्रयत्नोंकी दिशा बदलनी पड़ी। स्वतंत्रता प्राप्तिके लिए प्रयत्न करनेवाले हाथोंको दासत्व बढ़ानेके उद्योगोंमें लगाना पड़ा। जो नेत्र स्वतंत्रतादेवीका स्वर्गीय सौंदर्य्य देख रहे थे उन्हें परतंत्रतारूपी राक्ष-

सीकी ओर फेरना पड़ा। स्वतंत्रताका कर्ण-मधुर और मनोहर संगीत छोड़कर परतंत्रताका भयंकर और कर्कश रव सुनना पड़ा। दलपति! मैं भी किसी समय तुम्हारे समान निष्कलंक आचरण करता था, मुझमें अनेक उत्तम उच्चाकांक्षायें थीं और मुझमें अनेक गुण थे..........."

दल०—(बीचमें ही) "तब आपको अपने कार्य्य और व्यवहार बदलनेकी क्या आवश्यकता हुई? चम्पतरायसे मित्र-भाव बनाये रखकर आपने अपने देशको स्वतंत्र क्यों न किया?"

शुभ०—"वह स्वर्ग-सुख भोगना मेरे भाग्यमें बदा ही न था। जिस समय स्वच्छ आकाशमें स्वतंत्रताका सुन्दर चन्द्रमा उदित होकर प्रजापर अमृत सींचना ही चाहता था उसी समय बादल दिखलाई दिया। थोड़ी ही देरमें सारे आकाशमें काली घटायें छागई। एक ओरसे काले मेघोंने और दूसरी ओरसे दुष्ट राहुने स्वातंत्र्य-चन्द्रमाको ग्रसना आरम्भ किया। चारों ओर दासत्वका घोर अन्धकार छागया। उस अन्धकारमें जितने पिशाच घूम रहे थे मैं उन सबका सरदार बन गया और उस अन्धकारको और भी भीषण करनेका प्रयत्न करने लगा।"

दल०—"पिताजी, उस अन्धकारके नाशका प्रयत्न छोड़कर आप उसे बढ़ानेका उद्योग क्यों करने लगे? दासत्वके नाशको ही सर्वोत्तम समझकर भी आप उसको वृद्धिमें क्यों लग गये?"

शुभ०—"चम्पतरायसे बदला लेनेके लिए, उनके प्रयत्नोंमें बाधा डालनेकेलिए, उनका महत्त्व घटानेकेलिए और अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेकेलिए ही मुझे दासत्वका पक्ष ग्रहण करना पड़ा। मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं स्वयं दास बनूँगा, अपने भाइयोंको दास बनाऊँगा, सारे बुन्देलखण्डको दासकरके छोड़ूँगा पर चम्पतराय और उनके प्रयत्नोंको विना नाश किये न छोड़ूँगा।"

युवराज दलपतिरायने चकित होकर कहा,—"कैसी अघोर प्रतिज्ञा है! ऐसी अघोर बातको तो प्रतिज्ञा ही नहीं कह सकते। प्रतिज्ञायें देशोद्धार, धर्म्मपालन या अनाथोंकी रक्षाकेलिए हुआ करती हैं। देश, धर्म्म और अपने प्रिय बन्धुओंपर शस्त्र उठाना बड़ा भारी पातक है। उस पातकको प्रतिज्ञाके साथ मिलाना तो और भी बुरा है।"

शुभकरणने गम्भीर होकर कहा,—“ मैं यह सब जानता हूँ । प्रतिज्ञाका वह दिन इस समय भी मेरे सामने मूर्तिमान खड़ा है । हीरादेवी इस समय जिस प्रकार पत्थरकी पुतलीकी तरह खड़ी है उसी प्रकार यह उस दिन भी खड़ी हुई थी । क्षणभरमें मैं मनुष्यसे पिशाच बन गया । मेरी बाँहोंमें संचार करनेवाली शूरता, मेरे मनमें अटल रूपसे रहनेवाली धीरता और मेरी बातोंकी दृढ़ता उस समय तक केवल स्वतंत्रतादेवीके लिए ही थी । इन सब बातोंको उस ओरसे हटाकर मुझे परतंत्रता राक्षसीकी ओर लगाना पड़ा । पहलेकी तरह अब भी मेरी तलवार म्यानमें शान्त होकर नहीं रहती, अब भी मेरा बल मुझे चैन नहीं लेने देता, अब भी मेरे मनका निश्चय भीतर-ही-भीतर दबा नहीं रहता, मेरी तलवार, मेरी वीरता और मेरा निश्चय सब कुछ पहलेकी ही तरह है । मेरी तलवार अब भी उतना ही रक्त पीती है जितना पहले पीती थी । मेरी वीरता अब भी पहलेका सा रक्तपात करती है । मेरा निश्चय अब भी पहलेकी तरह खूनकी नदियाँ बहाता है । पर भेद केवल इतना ही है कि अब वह रक्त स्वयं मेरे प्रिय बंधुओंका होता है । दलपति ! क्या ऐसे पातकी पिताके साथ रहना तुम अच्छा समझते हो ? जिस प्रकार मैंने अपने जीवनका नाश किया है, क्या उसी प्रकार तुम भी अपने जीवनका नाश करना चाहते हो ? मेरे समान पिशाचके साथ रहनेमें तुम्हें क्या लाभ होगा ? ”

दल०—“ पिताजी, जब आप यह समझते हैं कि प्रतिज्ञाके कारण ही आपको इतने अनाचार और अनर्थ करने पड़ते हैं तब आप उस प्रतिज्ञाको छोड़ क्यों नहीं देते ? ”

शुभकरणने कुछ क्रोधमें आकर कहा,—“ प्रतिज्ञा छोड़ दूँ ! तुम्हारे मुँहसे ऐसी नामर्दीकी बात नहीं निकलनी चाहिए थी । तुम शुभकरणके पुत्र हो । तुम्हें अपने शब्दों और वचनोंका मूल्य समझना चाहिए । जब हमारे पितरोंको यह मालूम होगा कि शुभकरणने अपनी प्रतिज्ञा छोड़ दी तब उन्हें कितना दुःख होगा ? ”

दल०—“ तो क्या आप समझते हैं कि जब उन्हें यह मालूम होगा कि बुन्देलखण्डकी पराधीनताके आप ही कारण हैं तब क्या उन्हें दुःख न होगा ? भला, आपको ऐसी अघोर प्रतिज्ञा करनेकी क्या आवश्यकता पड़ी ? ”

सभा०—" दलपति, उसका कारण मत पूछो। मैं यह चाहता हूँ कि जिस प्रकार मेरी शूरता, मेरे कर्तृत्व और मेरी उच्चाकांक्षाओंका नाश हुआ, मेरा बल, मेरा उद्देश्य जिस प्रकार नष्ट हुआ, मेरा सांसारिक जीवन जिस प्रकार निष्फल हुआ उसी प्रकार तुम्हारा भी न हो। यदि मैं तुम्हें अपनी प्रतिज्ञाका कारण बतला दूँगा तो तुम्हारा जीवन भी नष्ट हो जायगा; तुम्हारे सुखमें भयंकर बाधा पड़ेगी; तुम एक घड़ी भी शान्तिपूर्वक न बिता सकोगे। अतः मुझे वह कारण गुप्त ही रखना चाहिए। पर दलपति! एक बात मैं तुम्हें और बतला देना चाहता हूँ, चाहे तुम लाख प्रयत्न करो पर मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ूँगा। केवल बुन्देलखंड ही क्या यदि सारे संसारका भी नाश हो जायगा तो भी मैं अपनी प्रतिज्ञासे न हटूँगा। मैंने अपना कर्तव्य निश्चित करलिया और अनन्त-शक्ति परमेश्वर भी उसपरसे मेरा लक्ष्य नहीं हटा सकता।"

अपने पिताके ऐसे दृढ़ वचन सुनकर दलपतिरायको बहुत ही दुःख हुआ। उसी दुःखके कारण वे बहुत देरतक चुप रहे। अन्तमें निराश होकर उन्होंने कहा,—" पिताजी! यदि आप स्वतंत्रताके उदात्त कार्य्योंमें अपना हाथ डालते तो वह किसी न किसी प्रकार सिद्ध ही हो जाता। हाथ डालना तो दूर रहा, यदि आप केवल गुपचुप बैठे रहते तो भी आज नहीं तो दस दिन बाद वह पूरा हो ही जाता। पर आपका प्रयत्न तो उसके विपरीत है। अब बुन्देलखंडकी प्रजाका यह बेड़ा स्वतंत्रादेवीके सुन्दर घाटपर किस प्रकार लगेगा? आप, हीरादेवी तथा अन्य अनेक राजे इस बेड़ेको दासत्वके भीषण भँवरकी ओर ले जानेकेलिए यथासाध्य प्रयत्न कररहे हैं। ऐसीदशामें वे लोग स्वतंत्रताके घाटकी ओरकी चढ़ाई किस प्रकार चढ़ सकेंगे?

कुछ देर सोचकर शुभकरणने कहा,—"तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। पर मैं अपनी प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूंगा। यह प्रतिज्ञा पूरी करनेकेलिए मुझे न जाने कौन कौनसे पातक करने पड़ेंगे। मुझे ऐसे कृत्य करने पड़ेंगे जिन्हें देखकर असुरोंको भी लज्जा मालूम होगी। मुझे न्याय और अन्यायका विचार छोड़ना पड़ेगा, नीतिकी हत्या करनी पड़ेगी, अपने प्रिय बन्धुओं और सम्बधियोंके प्राण लेने पड़ेंगे। दलपति! मैं सब प्रकारसे पराधीन हूँ। मुझे प्रतिज्ञारूपी राहुने ग्रस लिया है। वह प्रतिकाररूपी मदारी मुझे जो नाच नचावेगा वही मैं नाचूंगा। इसके सिवा मेरे लिए और कोई उपाय नहीं है। कल ही बहुतसे

यवनोंके प्राण लेकर तुमने अपने धर्म्मपरसे एक भारी संकट टाला था । महा-पूजाके दिन तुमने विन्ध्यवासिनी देवीका मन्दिर नष्ट होनेसे बचाया था। तुम्हारी यह अपूर्व धार्मिकता, अतुल पराक्रम और अवर्णनीय धैर्य्य देखकर मुझे अभि-मान होना चाहिये था। चम्पतरायने जिस प्रकार अपने पुत्रके कार्य्योंकी प्रशंसा की थी, उसी प्रकार मुझे भी तुम्हारी प्रशंसा करनी चाहिए थी। तुम्हें उत्सा-हित करके मुझे अपना सन्तोप प्रकट करना चाहिए था । पर क्या करूं, मैं स्वाधीन नहीं था। मैं प्रतिज्ञाके जालमें फँसा हुआ था इसलिए मुझे मुरदेकी तरह चुपचाप बैठे रहना पड़ा। पर इस आधी रातके समय हीरादेवी यह जाननेकेलिए मेरे पीछे लगी फिरती है की तुम्हारे उस प्रशंसनीय कार्य्यके-लिए मैंने तुम्हें डाँट-डपट क्यों न बतलाई और वहीं तुमसे क्यों न कह दिया कि मुझे तुम्हारा यह कृत्य बुरा मालूम हुआ। दलपति! अब तो तुम समझ गये न कि मैं कितना पराधीन हूँ? तुम्हारा इस प्रकार, सब तरहसे पराधीन बने हुए मानवी पिशाचके साथ रहकर अपनी श्रेष्ठ विभूतिका नाश करना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता । विन्ध्यावासिनीके मन्दिरसे लौटकर अबतक मैं बराबर यही विचार करता हूँ। सोचते सोचते मेरा सिर चकराने लगा । अपने इस उत्तरदायित्वसे मुक्त होनेकेलिए मैंने दिनरात विचार किया । पर बेटा! अन्तमें मुझे यही निश्चय करना पड़ा कि हम और तुम पिता-पुत्रका सम्बन्ध भूलकर अपने अपने कर्त्तव्योंके पालनकेलिए एक दूसरेसे अलग और दूर रहें।"

गहरी साँस लेते हुए दलपतिरायने कहा,—"पिताजी, आप इस प्रकार मेरा त्याग न करें।"

शुभ०—"नहीं, इसके सिवा और कोई उपाय ही नहीं है। तुम्हारे कर्त-व्यका मार्ग अलग है और मेरे कर्तव्यका अलग है। अब हमारी और तुम्हारी भेट न हुआ करेगी। तुम अपने तेजका प्रकाश करनेवाले सूर्य बनोगे और मैं तुम्हारे तेजसे द्वेष करनेवाला उल्लू बनूँगा। तुम स्वतंत्रतादेवीके उच्च प्रसादकी और बढ़ोगे और मैं दासत्वके गहरे गड्ढेकी तरफ जाऊँगा। तुम धर्माभिमान, बन्धु-प्रेम, स्वातन्त्र्य-लालसा आदि अनेक सद्गुण-सुमनोंकी सुगन्धकी बहार लूटोगे, और मैं विश्वासघात, धर्मशून्यता और हत्यारेपनके दुर्गुणोंकी दुर्गन्धमें रहकर अपना जीवन बिताऊँगा। तुम स्वतंत्रता देवीकी मधुर मुसकानका आनन्द लेोगे और मैं दासत्वका कर्णकटु रोना सुनूँगा। दलपति! लोग तुम्हें

'स्वातंत्र्यदाता' मानकर तुम्हारा स्वागत करेंगे और देशके नाशको तथा वन्धु-द्रोहियोंकी नामावलीमें अन्त तक मेरा नाम सवसे पहले रहेगा। तुममें और मुझमें जमीन आसमानका फरक रहेगा। अगर मैं जमीनपर रहनेवाला उल्लू हूँ तो तुम आकाशमें चमकनेवाले प्रतापशाली सूर्य्य हो। तुम्हारे समान दिव्य पुरुषकेलिए वहुत ही उत्तम निवासस्थान उपयुक्त होगा। जिस अन्धेरे और गहरे गड्ढे—सागरके राजमहलमें—मैं रहूँगा, वह तुम्हारे लिए कभी उपयुक्त नहीं हो सकता।"

मारे दुःखके दलपतिरायकी आँखोंसे आँसू वहने लगे। उन्होंने रोते रोते कहा,—"पिताजी! आप ऐसी वातें न करें। आपका वियोग मैं न सह सकूँगा। आपकी सेवा करनेकी मेरी इच्छा मनकी मनमें ही रह जायगी।"

शुभ०—(आश्चर्यसे) "क्या कहा? तुम मेरी सेवा करोगे? पिशाचकी सेवा करनेसे तुम्हें क्या लाभ होगा? पिशाचका प्रसाद भी वैसा ही आसुरी और भयंकर होता है। मैं चाहता हूँ कि वह प्रसाद तुम्हें न मिले, तुम भी मेरे समान पिशाच वनकर देशसेवासे विमुख न हो जाओ। मैं यह नहीं चाहता कि तुम्हारे कर्तृत्वका नाश करके वुन्देलखण्डको एक उत्तम रत्नसे वंचित करदूँ। दलपति! वुंदेलखंडकी स्वतंत्रता तुम और छत्रसाल दोनोंकी कर्त्तव्यपरायणता-पर अवलंवित है। मैं यह नहीं चाहता कि तुम दोनों एक दूसरेके शत्रु वनकर नष्ट हो जाओ। यदि तुम्हें मुझपर दया आती हो, यदि तुम यह चाहते हो कि अपने पुत्रको कुमार्गमें प्रवृत्त करनेके अपराधमें मुझे नरक न भोगना पड़े तो सागरका राज्य तुम्हें छोड़ देना पड़ेगा। मैं जवतक जीता रहूँगा तवतककेलिए तुम्हें राजकीय अधिकार और विलासका त्याग करदेना चाहिये और मेरा मुँह न देखना चाहिए।"

दलपति रोते हुए केवल "पिताजी!" कहकर रह गये। उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकल सका।

थोड़ी देरतक शोकाकुल दलपतिरायकी ओर देखते रहकर वड़े ही व्यथित हृदयसे शुभकरणने कहा,—"मोह वहुत वुरा होता है; पर इस मोहके फेरमें पड़कर मैं कभी अपने पुत्रका अनिष्ट नहीं करूँगा। मुझे इस वातका भी विश्वास नहीं है कि इस समय मुझमें जैसा विवेक है, विचार करनेकी इस समय मुझमें जितनी शक्ति है, इस समय मेरे हृदयमें पापसे जितना डर है, वह कल तक

भी बचा रहेगा या नहीं। इस लिए अपने भले बुरेकी समझके नष्ट होनेसे पहले ही मुझे अपने उत्तरदायित्वसे मुक्त हो जाना चाहिए। दलपति! इसी वास्ते मैंने यह निश्चय किया है कि तुम यहाँसे तुरन्त चले जाओ, क्षणभर भी यहाँ मत ठहरो। चम्पतराय बड़े उदार पुरुष हैं। यद्यपि वे मेरे शत्रु हैं पर मेरे पुत्रके साथ वे शत्रुता न करेंगे। तुम उन्हींके खेमेमें चले जाओ। जो कुछ वे तुम्हें आज्ञा दें उसका बराबर पालन करो। अबतक जिस प्रकार तुम मेरी सेवा करते रहे हो उसी प्रकार अब उनकी सेवा करो। अबतक जैसे मेरी बात मानते थे, वैसे ही अबसे उनकी बात मानो। युवराज छत्रसालसे अपनी मित्रता बढ़ाओ और देशको स्वतंत्र करनेके प्रयत्नोंमें उनकी सहायता करके अपने कुलकी कीर्तिको उस कलंकसे निर्मल करडालो जो मेरे दुराचारोंके कारण उसपर लगा है। आओ! अन्तिम बार मुझसे गले मिल लो।"

यह कहकर शुभकरणने खूब कसकर अपने पुत्रको गलेसे लगा लिया। उस समय पिता-पुत्र दोनोंकी आँखें आँसुओंसे भर गई थीं। यदि हीरादेवीके अतिरिक्त उस स्थानपर और कोई मनुष्य होता तो वह दशा देखकर उसका हृदय अवश्य ही द्रवित हो जाता। पर हीरादेवी पत्थरकी तरह ज्योंकी त्यों खड़ी रही।

बहुत देर तक पिता-पुत्र एक दूसरेके गले लगे हुए खड़े रहे। अन्तमें शुभकरणने दलपतिरायको छोड़ दिया और गहरी साँस लेकर कहा,—"चलो, हो गया! अब हमारी तुम्हारी अन्तिम भेंट हो चुकी। अब तुम्हें और मुझे पिता-पुत्रका सम्बन्ध भूल जाना चाहिए। अब मैं हूँ और मेरी प्रतिज्ञा है। अब जब कभी मेरी और तुम्हारी भेंट होगी तब मैं तुम्हें चम्पतरायका पक्षपाती और सहायक समझकर अपने शत्रुकी तरह देखा करूँगा।" धीरे धीरे शुभकरणपर फिर उसी प्रतिज्ञाका भूत सवार होने लगा। उन्होंने कहा,— "जब तक मैं जीता रहूँगा तब तक यही माना जायगा कि सागरके राज्यका कोई युवराज नहीं है। मैं मरनेके समय निपुत्रिक माना जाऊँगा। आजसे मैंने युवराज दलपतिराय और उसके युवराजपदको भुला दिया। अब न तो तुम युवराज रह गये और न मेरे राज्यकी प्रजा ही रहे; तुम्हारे सारे अधिकार नष्ट हो गये। अब तुम चले जाओ। मेरी छावनीमें अब मत ठहरो। अब तुम्हारा यहाँ रहना मुझे असह्य होता जाता है। अब यदि तुम इस छावनीमें कहीं दिखलाई पड़ोगे तो चम्पतरायके दूत समझे जाकर दण्डित होगे।"

इतना कहकर विना अपने पुत्रकी ओर देखे हुए शुभकरण वहाँसे चल दिये। थोड़ी दूर जाकर उन्होंने हीरादेवीसे कहा,—क्यों हीरादेवी, अव तो तुम सन्तुष्ट हो गईं न ?"

शुभकरणके शब्दोंकी तीव्रतासे हीरादेवी घवरा गई। वह एक शब्द भी न वोली। जव शुभकरण कुछ दूर निकल गये तव वे कुछ वड़वडाते हुए विकट रूपसे हँसने लगे।

थोड़ी देर वाद युवराज दलपतिरायके खेमेसे एक युवक वाहर निकला। उसकी पोशाक वहुत ही सादी थी। यद्यपि उसके शरीरपर आभूषण आदि नहीं थे तो भी उसके चेहरेपरका राज-तेज छिपता न था। युवराज दलपतिराय अपने युवराजपद और ऐश्वर्यका त्याग करके राष्ट्र-कर्त्तव्यका पालन करनेकेलिए निकले थे। भगवान् अंशुमाली भी उस समय तक उदित हो चुके थे। उनकी ओर देखकर दलपतिरायने कहा,—"भगवान्! तुम्हारा प्रकाश सव जगह पड़ता है, इस लिए तुम पिताजीके हृदयमें पैठकर यदि उनके प्रतिज्ञारूपी अन्धकारको दूर करदोगे तो एक मैं ही क्या, सारा वुन्देलखण्ड तुम्हारा वहुत ही अनुग्रहीत होगा। विन्ध्यावासिनी देवी! अव मैं जाता हूँ। उद्दिष्ट कार्यमें मुझे यश दो।"

× × × ×

पाँचवाँ प्रकरण।

जयसागर सरोवर।

जयसागर सरोवरका जल अपनी स्वाभाविक चंचलता छोड़कर गम्भीरतापूर्वक सृष्टि-सुन्दरीका विलास देख रहा था। उस समय सृष्टि-सुन्दरीके मनपर ससुरालकी विनयशीलता और लज्जाका प्रभाव नहीं था और वह अल्हड़ वालिकाकी तरह स्वच्छन्दतापूर्वक अपने पीहर—वुन्देलखंडमें विलास कररही थी। सारा वुन्देलखंड सृष्टि-सुन्दरीका पीहर अवश्य था, परन्तु उसमें भी महेवा-प्रदेश और विशेषतः उसका जयसागर सरोवर उसे वहुत ही प्रिय था। आज सृष्टि-सुन्दरी अपने वड़े भाई वसन्तराजके साथ मिलकर जयसागर

सरोवरपर विहार कररही थी। वसन्तराजने अपनी माता प्रकृतिदेवीसे बहुतसे सुन्दर आभूषण लेकर अपनी बहन सृष्टि-सुन्दरीको पहनाये थे। वह कभी इन वृक्षोंकी ओर जाती, कभी उस मैदानकी ओर देखती, कभी जयसागरमें झाँकती और कभी महेवाका चक्कर लगाती थी। अन्तमें या तो थककर और या यह समझकर कि विश्राम करनेकेलिए इससे अच्छा स्थान और कहीं न मिलेगा, वह जयसागर सरोवरके किनारे बैठ गई। वसन्त पास ही खड़ा था।

थक जानेके कारण उसके माथेपर पसीनेकी जो बूँदें आगई थीं उसे अपने सेल्हेके कोनोंसे पोंछतेहुए उसने कहा,—" विजया! तुम इतनेमें ही थक गई! अभी तो हम लोगोंको बहुत कुछ देखना और घूमना बाकी है।"

वि०—" विमलदेव! यह स्थान इतना रमणीय है कि इसे छोड़कर और कहीं जानेको जी नहीं चाहता। इन्द्रके नन्दनवनमें फलों और फूलोंकी ही शोभा होगी, पर जयसागरकी समीपताके कारण होनेवाली इस स्थानकी शोभा उसे भी न प्राप्त हुई होगी। देखो ये देवलोकके प्रतिनिधि सूर्य्य और चन्द्रमा दिनरात यहाँकी शोभा देखते रहते हैं; पर तो भी इससे उनका सन्तोष होता नहीं जान पड़ता। जब देखो, तभी वे यहाँकी शोभा देखनेकेलिए तैयार खड़े रहते हैं। शायद इस जयसागरमें बहुतसे पावन तीर्थ आकर एकत्र हो गये हैं, इसीलिए यहाँ आनेपर मन इतना प्रसन्न होता है। इससे अधिक मनोहर और सुन्दर स्थान शायद ही कहीं देखनेको मिलेगा। इसलिए हम लोगोंको थोड़ी देर तक यहीं बैठना चाहिए।"

विमलदेव भी बिना कुछ कहे सुने पासके एक पत्थरपर बैठ गये। वसन्त और सृष्टि-सुन्दरीकी इन सजीव मूर्त्तियोंके कारण जयसागरकी शोभा और भी बढ़ गई। उनके चरण-कमलोंके स्पर्शसे अपने आपको पुनीत हुआ समझकर जयसागर आनन्दसे उनकी चरणसेवा करने लगा। जयसागरके प्रेम-पूर्ण स्पर्शसे उनके मन भी आनन्दसागरमें गोते लगाने लगे।

सूर्य्यके साथ दिनभर प्रवास करनेवाली अपनी बहन प्रभाको पाकर सन्ध्या-काल उसके साथ आकाशके मेघोंसे खेलने लगा। प्रभाकी गौरवर्ण छटा और सन्ध्या-कालके अधगोरे रंगका मेल इतनी उत्तमतासे हुआ था कि जिन जिन मेघोंपर वे क्षण भरके लिए भी ठहरते थे, उन उन मेघोंपर मानों सोनेका मुलम्मा हो जाता था। प्रभाके साथ मेघोंसे खेलकर अन्तमें सन्ध्याकाल जय-

सागरके पास पहुँचा। एक काले मेघपर बैठकर सन्ध्या-काल और प्रभाने जय-सागर सरोवरकी शोभाका आनन्द लेना आरम्भ किया। उनके बैठनेके कारण उस काले मेघका रंग थोड़ी ही देरमें बदलकर सुन्दर सोनेकासा हो गया। उसकी ओर देखकर विजयाने कहा,—"विमलदेव! तुमने इस बादलको देखा? यद्यपि दिनभर चलनेके कारण सूर्यकी प्रभा बहुत थक गई है तो भी इस प्रदेशके अन्तिम दर्शनोंकेलिए अपने भाईके साथ वह इस बादलपर आ बैठी है। दोनों ही जयसागरका सौन्दर्य देखकर कैसे मग्न हो रहे हैं! पर देखो यह कैसे आश्चर्यकी बात है कि आठ पहर तक एक दूसरेसे अलग रहनेपर भी भाई अपनी बहनसे एक शब्द भी नहीं बोल रहा है।"

विमलदेवने गम्भीरता-पूर्वक कहा,—"इसमें आश्चर्य्यकी कौनसी बात है? कबसे वसन्त अपनी बहन सृष्टि-सुन्दरीके साथ जयसागरकी शोभा देख रहा है? पर उसने क्या अब तक यहाँकी शान्ति भंग की है? ऐसे अवसरोंपर और इन सब विषयोंकी बातें या तो परस्पर केवल स्त्रियोंमें अथवा केवल मित्रोंमें हुआ करती हैं। ऐसी दशामें यदि भाई बहनमें कुछ बात चीत न होती हो तो इसमें आश्चर्य्य ही क्या है?"

विज०—"यह अस्त होनेवाला सूर्य और उदय होनेवाला चन्द्रमा दोनों ही जयसागरकी शोभा देख रहे हैं। पर ये दोनों इसके विषयमें क्यों नहीं बातें करते?"

विम०—"उसका कारण यह है कि वे दोनों परस्पर मित्र नहीं हैं। उनके काम एक दूसरेसे अलग हैं और उनकी पसन्द भी अलग अलग है। सूर्य्यको शुभ्र-प्रभा अच्छी लगती है; पर चन्द्रमाको काली रात पसन्द है। एक पृथ्वीको सन्तप्त करता है, दूसरा उसे शान्त और शीतल करता है, इसी लिए उन दोनोंमें नहीं बनती।"

इसपर विजया कुछ न बोली। वह जयसागर सरोवरके जल, सुन्दर कमलों और लहरोंकी ओर टकटकी लगाए देखती रही। परन्तु विमलदेवका ध्यान उस ओर बिलकुल न था। वे कुछ गहन विचारोंमें मग्न जान पड़ते थे। जयसागरके जलकी तरह उनका विमल मुख जयसागर सरोवरकी तरह गम्भीर जान पड़ता था। सौन्दर्य्य-जलसे परिपूर्ण उनके मुख-हृदमें दो सुन्दर नेत्र-कमल

सुशोभित थे; और उन सबकी शोभा बढानेकेलिए उसमें विचारोंकी लहरें उठती थीं।

थोड़ी देर बाद विजयाने विमलदेवकी ओर उलटकर देखा। उस समय वे गम्भीर पर शून्य दृष्टिसे उसीकी ओर देख रहे थे। उसने चकित होकर कहा,—" विमलदेव! क्या सोच रहे हो? वसन्त और सन्ध्याकालकी तरह क्या तुमने भी अपनी बहनके साथ कुछ न बोलना निश्चित करलिया है? शायद तुम यह बात भूल गये हो कि वसन्त और सन्ध्याकाल दोनोंने ही केवल कल्पनाके कारण दृश्य स्वरूप प्राप्त किया है। नहीं तो तुम इस कल्पित भाईका अनुकरण न करते। जरा इस जयसागर सरोवर और उसकी अनुपम गम्भीरताकी ओर देखो। जरा यहाँके हँसतेहुए सुन्दर कमलों और जल-तरंगोंकी ओर ध्यान दो, तब तुम्हें यह संसार भूल जायगा; तुम अपनेको स्वर्गमेंविहार करतेहुए पाओगे—आनन्दसागरमें लहरें लेने लगोगे।"

विमलदेवने मानो स्वप्नसे जाग्रत होकर कहा,—" पर विजया! आनन्द क्या केवल स्वर्गमें ही है? इस संसारको केवल दुःखमय ओर स्वर्गको सुखमय मानना मानो ईश्वरकी निष्पक्षतामें बट्टा लगाना है। स्वर्गलोककी प्रभा जिस प्रकार इस मेघपरसे उस मेघपर अठखेलियाँ करती फिरती है उसी प्रकार इस लोककी सृष्टि-सुन्दरी भी क्रीड़ा कररही है। क्या इन दोनोंके आनन्दमें जरा भी अन्तर है? सन्ध्या-कालके स्वर्गीय होनेमें सन्देह नहीं, पर वह भी दुःखी जान पड़ता है। दुःख और सुख, पृथ्वी और स्वर्गपर अवलंबित नहीं है वल्कि व्यक्ति-मात्रपर अवलंबित है।"

विमलदेवकी ऐसी गम्भीर मुद्रा देखकर और ऐसे गम्भीर विचार सुनकर विजया हँस पड़ी। पर विमलदेव उसकी ओर देखतेहुए अपने विचारोंमें ही मग्न हो गये।

विमलदेवका आजका विलक्षण व्यवहार हँसमुख विजयको पसन्द न आया। उसने कहा,—

" विमलदेव! यदि यहाँकी शोभा देखकर तुम्हें आनन्द न होता हो तो व्यर्थ यहाँ बैठे रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। चलो किसी दूसरी जगह चलें।" इतना कहकर विजया उठ खड़ी हुई। पर विमलदेवने बैठे-ही-बैठे, उसका हाथ पकड़कर उसे फिर बैठा लिया।

विमलदेवने कहा,—"विजया ! जरा ठहरो । इस सन्ध्याने जबरदस्ती पुरुषका रूप धारण कर लिया है और अपना नाम पुरुषवाचक (सन्ध्या-काल) रक्खा है । वसन्त-श्रीने भी उसी प्रकार पुरुषका वेष धारण किया है । यह वसन्तश्री और सन्ध्या दोनों ही वास्तवमें स्त्रियाँ है; पर लोगोंकी आँखोंमें धूल डालने और लोगोंको फँसानेके लिए इन्होंने पुरुषोंकासा वेष बनाया है । यहाँ थोड़ी देर तक ठहरकर देखो कि इन दोनोंका यह नकली वेष कबतक ठहरता है; दोनों एकान्तमें मिलकर भी अपना यह कपट छोड़ती हैं या नहीं ।"

इतना कहकर विमलदेव फिर अपने विचारोंमें मग्न हो गये । विजया फिर आश्चर्यसे विमलदेवकी ओर देखने लगी । विमलदेवकी बातोंका मतलब उसकी समझमें न आया था ।

थोड़ी देर बाद विमलदेवने कहा,—"इस उग्र प्रभाकी अपेक्षा यह सन्ध्या अधिक सुन्दर और शान्त है । उसी प्रकार इस वसन्त-श्रीका सौन्दर्य भी सृष्टि-सुन्दरीके सौन्दर्यसे बढ़कर है । इतना होनेपर भी स्त्री-स्वभावके अनुसार अपना सौन्दर्य दिखलानेकी अपेक्षा वसन्त-श्री और सन्ध्याने पुरुषवेषमें रहना क्यों अधिक उत्तम समझा है ? क्या उन्हें अपने जन्म-सिद्ध वेषका कुछ भी अभिमान नहीं है ? क्या अपनी जनानी पोशाक पहननेकी उनकी जरा भी इच्छा नहीं है ?"

विमलदेवने एक बार विजयाके मनोहर वेषकी ओर देखा । उस समय उनके मनमें न जाने क्या क्या विचार उठ रहे थे । विमलदेवकी विलक्षणता दम पर दम बढ़ती देखकर विजयाने बहुत ही चकित होकर कहा,—"मैं तो सन्ध्या और वसन्त श्रीको कहीं पुरुष-वेषमें विहार करते हुए नहीं देखती ।"

विम०—"क्या सन्ध्या और वसन्त-श्री पुरुष-वेषमें नहीं हैं ? जरा ध्यानसे देखो । अबतक वे दोनों एक दूसरेको धोखा देनेका प्रयत्न कर रही हैं ।"

विज०—"छिः वसन्त-श्री और सन्ध्या तो दोनों कल्पित पात्र हैं । चाहे उन्हें पुरुष मानकर वसन्त और सन्ध्याकाळ कहो और चाहे उन्हें स्त्री मान लो, सारी बात तो कल्पनाकी है ?"

विमलदेवने काँपते हुए स्वरसे कहा,—"विजया ! ऐसी पक्षपातपूर्ण दृष्टिसे न देखो । तुम्हारे लिए सुन्दर जनाने कपड़ोंका ही विधान है, पर इसका यह

अर्थ नहीं है कि प्रत्येक व्यक्तिके लिए वैसा ही विधान है। तुम्हें यहाँ ऐसा कोई दिखलाई नहीं देता जिसने अनुचित रूपसे पुरुषका वेष धारण किया हो?"

विमलदेवका यह प्रश्न सुनकर विजयाने गूढ़ दृष्टिसे आकाशकी ओर देखा। वहाँसे दृष्टि उठाकर उसने अपने आसपास चारों ओर देखा, पर विमलदेवका कल्पित मरदाना वेष उसे कहीं दिखाई न दिया।

अन्तमें विजयाने कहा,—"मुझे तो यहाँ मरदाने कपड़े पहने हुए कोई नहीं दिखाई देता। विमलदेव! तुम्हारे सिवा तो यहाँ और कोई पुरुष मुझे नजर नहीं आता।"

विमलदेवने शान्त और गम्भीर होकर कहा,—"क्या सचमुच तुम्हें कोई नहीं दिखाई पड़ता? अच्छा सुनो, जयसागर सरोवरके आसपास घूमना और उसकी अनुपम शोभा निरखना वास्तवमें स्त्रियोंका ही काम है। इस स्थानपर स्त्रियोंको ही विहार करना चाहिए। पुरुषोंको यहाँ कुछ आनन्द नहीं मिल सकता। वह देखो सन्ध्याने अपने अयोग्य सफेद कपड़े उतारकर अपने असली काले कपड़े पहनने आरम्भ कर दिये हैं। वसन्तश्रीने भी पुरुष-वेष छोड़कर मनोहर स्त्री-वेष धारण करना आरम्भ कर दिया है। पर मैं, केवल मैं ही अब-तक इसी अयोग्य वेषमें हूँ।"

विजयाने आश्चर्यसे पूछा,—"विमलदेव! क्या तुम्हें अपना वेष अयोग्य जान पड़ता है? क्या तुम भी स्त्रियोंका सा वेष धारण करना चाहते हो?"

विम०—"हाँ, सन्ध्याकालने जिस प्रकार स्त्रीवेष धारण किया है और वसन्त जिस प्रकार वसन्त-श्री बन गया है, उसी प्रकार मैं भी थोड़ी देरके लिए—"

विजया हँसती हुई बीचमें ही बोल उठी,—"उसी प्रकार थोड़ी देरके लिए तुम भी विमलदेवसे विमला बनना चाहते हो? विमलदेव, अथवा बहन विमला! तुम्हारे लिए जनाने कपड़े मेरे पास तैयार हैं। मैं यहाँ स्नान करनेके विचारसे आई थी और अपने साथ कपड़े भी लाई थी, पर अब स्नानका समय नहीं रहा। तुम इन कपड़ोंको पहन कर विमला बन जाओ। तुम्हारे इस नाजुक बदन और जनानी खूबसूरती पर स्त्रीवेष बहुत शोभा देगा।"

विमलदेवने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। उनकी दृष्टि विजयाके हाथके वस्त्रों-पर लगी हुई थी।

वि०—"बहन विमला! तुम यह कपड़े लो और उस पेड़की आड़में जाकर अपना शृंगार कर आओ।"

विमलदेवने सचमुच विजयाके हाथोंसे कपड़े ले लिए और उन्हें पहननेके लिए वे पासके एक पेड़की आड़में चले गये।

विजया उनकी ओर आश्चर्य्यसे देख और हँस रही थी। उसने अपने मनमें कहा.—विमलदेवकी स्त्रीवेष धारण करनेकी इतनी प्रबल इच्छा क्यों हुई? पर इसका कोई कारण उसकी समझमें न आया।

आकाशकी बिजली जिस प्रकार एकाएक अपनी सुन्दर प्रभा फेंकती हुई दिखलाई पड़ती है, उसी प्रकार जिस ओर विमलदेव गये थे उस ओरसे सुन्दरताकी एक पुतली आती हुई दिखलाई दी। उसकी आँखोंमेंसे बिजलीका सा तेज निकल रहा था। उसकी साँसमेंसे नन्दन-वनकी सी सुगन्धि निकल रही थी। उसके दाँत मानो आकाशीय तारों और नक्षत्रोंसे बने हुए थे। इन्द्रधनुषने मानो मेघोंसे कालिमा उधार लेकर उसकी भौंहें बनाई थीं। शुभ्र आकाशगंगा उसके मस्तकपर संचार कर रही थी। उषादेवीने अपनी लाली उसके गालों और ओंठोंको दे दी थी; और उसे गति ऐरावतसे मिली थी। स्वर्गीय लावण्यकी उस लताको इस पृथ्वीपर देखकर विजयाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। मुस्कराती और गजगतिसे आती हुई उस सुन्दरीकी ओर विजया और आश्चर्यसे देखने लगी। विमलदेवके मरदाने कपड़े उतार कर जनाने कपड़े पहननेमें, विमलदेवसे विमला बननेमें विजयाको इस प्रकार आकाश-पातालका अन्तर पड़नेकी आशा न थी। विजयाको इस बातका विश्वास करनेमें ही बहुतसा समय लग गया कि यह सुन्दरी जनाने कपड़े पहने हुए विमलदेव ही हैं।

पर इतनी ही देरमें वह सुन्दरी हँसती हुई आकर विजयाके पास खड़ी हो गई। उसने एक हाथ विजयाके कन्धेपर रख दिया। उसके दूसरे हाथकी उँगली उसके मुँह पर थी।

जब विजयाका आश्चर्य कुछ कम हुआ तब उसने विमलदेवसे कहा,—"विमलदेव! यद्यपि मैं यह बात जानती थी कि तुम स्त्री-वेष धारण करके आनेवाले हो तथापि तुम्हें देखते ही मुझे बहुत आश्चर्य्य हुआ। अगर मुझे पहलेसे न मालूम होता और तुम स्त्रीवेष धारण करके अचानक मेरे सामने आ जाते तो

मैं तुम्हें स्वर्गीय देवी समझ कर तुम्हारे चरणोंपर गिर पड़ती, अथवा तुम्हें अप्सरा या नागकन्या समझकर आश्चर्यसे चकित हो जाती।”

विजयाकी बात सुनकर विमलदेवको बहुत आनन्द हुआ। बहुत दिनोंकी इच्छा पूरी होने पर जो समाधान हुआ करता है, विमलदेवके चेहरे पर वही समाधान झलक रहा था। बहुत देर तक चुप रहनेके उपरान्त उन्होंने कहा,—“विजया! यदि मुझे सदा यही वेष धारण किये रहनेकी आज्ञा मिल जाय तो मैं बहुत ही सुखी होऊँगा। मेरी बहुत दिनोंसे यह वेष धारण करनेकी इच्छा थी; आज जाकर मुझे यह अवसर प्राप्त हुआ है।”

विजया०—“विमलदेव! तुम पागलोंकी सी बातें क्यों कर रहे हो?”

विम०—“हाँ, अब तक मैंने जो कुछ किया वह अवश्य पागलपन था। मुझे स्त्रीवेष इतना भला मालूम होता है, पर इतनेपर भी मैं अबतक पुरुष-वेषमें रहा, यह मेरा पागलपन ही है। पर यह पागलपन मुझे केवल दूसरेकी इच्छासे ही करना पड़ा था। उसमें मेरा कोई बस नहीं था।”

विज०—“विमलदेव! तुम क्या कह रहे हो? तुम्हारी बातोंका मतलब मेरी समझमें नहीं आता।”

वि०—“आज सब बातें तुम्हारी समझमें आ जायँगी। माताजीकी इच्छासे ही मुझे अबतक पुरुषोंका वेष धारण करना पड़ा है।” इतना कहकर विमलदेवने एक गहरी साँस ली।

बहुत ही चकित होकर विजयाने पूछा,—“आखिर, इन सब बातोंका मतलब क्या है?”

विम०—“मतलब? मतलब यह कि—” विमलदेव आगे कुछ और भी कहनेको थे, विमलदेवका वास्तविक स्वरूप विजयाको मालूम ही होना चाहता था, यदि विमलदेवको और भी दो शब्द बोलनेका अवसर मिलता तो। पर वह बात ही नहीं हुई। विमलदेव बोलते बोलते बीचमें ही रुक गये। उन्हें थोड़ी दूर पर एक नाव दिखलाई पड़ी। उस पर एक युवक बैठा हुआ जयसागरकी शोभा देख रहा था। विमलदेवको इस बातका भय था कि यदि मैं कुछ अधिक कहूँगा तो वह भी मेरा रहस्य जान जायगा, इसलिए चुप हो गये। उस समय विजयाने कहा,—“विमलदेव! तुम बीचमें ही चुप क्यों हो गये? कहो, क्या कह रहे थे?”

विमलदेवने नावकी तरफ इशारा करके कहा,—"उस नावकी तरफ देखो।"

विज०—"हाँ देख तो लिया। तब क्या हुआ?"

विजयाके प्रश्नका उत्तर विमलदेवके ओठोंपर फिर रहा था। उन्होंने बड़े प्रयत्नसे अपने मनकी घबराहट दबाई और शान्त होकर कहा,—"तब और क्या होता! अगर हम लोग भी इसी तरह एक नाव लेकर जयसागरका आनन्द लेते तो बहुत अच्छा होता।"

विजया उसी समय समझ गई कि विमलदेव अपनी बातोंका रुख पलटना चाहते हैं। लेकिन नावपर चढ़कर जयसागरमें घूमनेवाली बात उसे इतनी अच्छी लगी कि वह उसे सुनते ही और सब बातें भूल गई। उस अल्हड़ बालिकाको अब नाव और जल-विहारके सिवा और कुछ याद ही न रहा। वह नाव ढूंढ़नेके लिए तुरन्त एक तरफ दौड़ी।

बुन्देलखण्डमें जयसागरकी तरह बड़े बड़े बहुतसे सरोवर हैं। उनके कारण बुन्देलखण्डकी धन-श्री बहुत कुछ बढ़ गई है। नावपर चढ़कर सरोवरका आनन्द लेना वहां-वालोंके लिए बहुत प्रिय और स्वाभाविक है। विजयाको भी नावका बहुत शौक था और वह नाव खेनेमें भी बहुत प्रवीण थी। वह प्रायः ओड़छेमें अपने राजमहलके पासवाले सरोवरमें नावपर चढ़कर इधर-उधर घूमा करती थी।

थोड़ी देरमें विजया एक छोटीसी नाव ले आई। विमलदेवको स्वयं तो नाव खेना नहीं आता था पर वे यह जानते थे कि विजया अच्छी तरह नाव खे लेती है, इस लिए उन्होंने उस नावपर बैठनेमें कोई हरज न समझा।

विजयाने विमलदेवसे पूछा,—"क्या तुम इसी जनाने भेसमें नावपर बैठोगे?" पर विमलदेवने उसे उत्तर न दिया। वे उछलकर नावपर चढ़ गये और विजयाके सामने जा बैठे। विजयाने भी समझ लिया कि मेरे प्रश्नका उत्तर मुझे मिल गया। वह हँसती हुई नाव खेने लगी।

नाव धीरे धीरे आगे बढ़ने लगी। उस समय जयसागर-सरोवर नीले आकाश-मण्डलकी तरह जान पड़ता था। उसकी लहरोंके कारण निकलनेवाला सफेद फेन तारोंकी तरह और वह नाव चन्द्रमा-सी जान पड़ती थी। ऐसा मालूम होता था कि दो शापभ्रष्ट देव-कन्याओंको उनके शापकी अवधि समाप्त हो जाने पर चन्द्रमा इस लोकसे स्वर्गकी ओर ले जा रहा है। जयसागर इस काममें

अपने मित्र चन्द्रमाको जो सहायता दे रहा था उसमें कोई आश्चर्य्यजनक बात नहीं थी।

कई पहरोंके बाद अपने प्राणप्रिय स्वामीको अपनी ओर आते हुए देखकर पश्चिमा सुन्दरीके कपोल लज्जासे लाल हो रहे थे। उसे देखकर विमलने कहा,—

"विजया! तुम्हें उस दिनकी बात याद है न?"

एक हाथका डाँड़ छोड़कर और उसी हाथसे अपने माथेपरका पसीना पोंछते हुए विजयाने पूछा,—"किस दिनकी बात?"

विम०—"जिस दिन विंध्यवासिनी देवीका वार्षिक शृंगार था।"

विज०—"क्यों, भला वह दिन भी याद न रहेगा? अभी तो उसे एक अठवाड़ा भी नहीं हुआ। अभी वह दिन कैसे भूल जायगा? पर वह दिन जितना अधिक तुम्हें स्मरण है उतना मुझे नहीं है। न जाने उस दिनकी कौनसी बात तुम्हारे मनमें इतनी समाई है कि वह दिन तुम्हें भूलता ही नहीं। मालूम होता है कि जनाना भेस बनानेकी तुम्हारी इच्छा उसी दिन उत्पन्न हुई थी।"

इतना कहकर विमलदेवके सुन्दर स्त्री-वेषकी ओर देखती हुई विजया हँस पड़ी और फिरसे डाँड़ चलाने लगी।

उसका हाथ पकड़ कर विमलदेवने कहा,—"अगर थोड़ी देर खेना छोड़ दोगी तो कुछ हर्ज न हो जायगा। उस दिन—"

विज०—"फिर वही 'उस दिन'।"

विम०—"उस दिन हम लोगोंने विंध्यवासिनी देवीको जो माला चढ़ाई थी वह गिरकर युवराज छत्रसालके गलेमें जा पड़ी थी। उस समय तुम्हारे मुँहपर जो छटा थी, वह मुझे अब तक याद है। इस पश्चिमा सुन्दरीका मुँह जिस प्रकार अपने पतिके आनेके कारण लाल हो रहा है, उस दिन तुम्हारा मुँह भी उसी प्रकार बल्कि उससे भी कुछ अधिक लाल हो गया था।"

विज०—"तुम्हारा मुँह भी तो प्रायः उतना ही लाल हो गया था; पर इतना होनेपर भी तुम्हारा सारा माथा पसीनेसे भर गया था। मैं तुमसे पूछनेको ही थी। क्या अपनी माताकी तरह तुम भी युवराज छत्रसालसे द्वेष करते हो? छत्रसाल कितने मिलनसार, कितने उदार और कितने सरल हैं। आज प्राणनाथप्रभुने श्रीरामचन्द्रजीके मन्दिरमें लव और कुश दोनों भाइयोंकी वीरताका वर्णन किया था। युवराज दलपतिरायने भी उस दिन वैसी ही वीरता

दिखलाई थी। इतने वीर होनेपर भी छत्रसालका स्वभाव कितना सादा और मिलनसार है। अपने सद्गुणोंके कारण वे सभी लोगोंके प्रिय हो रहे हैं; पर हमारे पिताजी न जाने क्यों उनके साथ द्वेष रखते हैं। उनकी बात जाने दो। स्वयं तुम्हारे पिता (पहाड़सिंह) और तुम्हारी माता (हीरादेवी) का छत्र-सालके साथ कितना निकटका सम्बन्ध है। पर वे भी मनमें छत्रसालसे बहुत बुरा मानते हैं। तुम्हारे पिताको ओड़छेके राजसिंहासनपर छत्रसालके पिताने ही बैठाया है। चम्पतरायने ही अपने अद्वितीय पराक्रमसे तुम्हारे पिताको यह राज्य दिलवाया है। नहीं तो सभी लोग कहते हैं, तुम्हारे माता पिताको किसी गांव देहातमें जाकर अपना सारा जीवन खेती-बारीमें ही बिताना पड़ता। लेकिन इतना होनेपर भी वे लोग चम्पतराय और उनके घरके लोगोंसे बहुत ही बुरा मानते हैं। विमलदेव! क्या अपने माता पिताके इस व्यवहारको तुम पसन्द करते हो?"

विमलदेवने बहुत दुःखी होकर कहा,—"चाहे मुझे पसन्द हो और चाहे नापसन्द, पर मुझे करना वही पड़ेगा जो वे आज्ञा देंगे। मेरी सदा यही इच्छा रहती है कि मैं जाकर छत्रसालसे मिला करूँ, उनके साथ मित्रताका व्यवहार रक्खूँ और जहांतक हो सके उनके कार्य्योंमें सहायता दूं। पर मेरे चाहने मात्रसे क्या होता है? मेरे हर एक कामपर माताकी कड़ी नजर रहती है, इसलिए मैं कोई काम उनकी इच्छाके विरुद्ध नहीं कर सकता। मैं यही गनीमत समझता हूँ कि मेरे मन और मेरे विचारों पर उनका कोई वश नहीं है।"

विज०—"उस दिन जब मैंने महाराज प्राणनाथ प्रभुसे युवराज छत्रसालका सन्देशा कहा तब पिताजी मनहीमन मुझसे कितने नाराज हुए थे। दिनभर उनकी वह नाराजगी बनी रही। दूसरे दिन उन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर बहुत कुछ बुरा भला कहा। उन्होंने मुझसे यहाँ तक कह दिया कि अब यदि कभी तुम छत्रसालके सामने भी होगी तो याद रखना, मुझसे बुरा कोई न होगा। छत्रसालमें कौनसी ऐसी बुराई है, यह वही जानें। अभी हम लोगोंने मन्दिरमें श्रीरामचन्द्रजीकी जितनी सुन्दर मूर्ति देखी है, युवराज छत्रसाल भी मुझे उतने ही सुन्दर जान पड़ते हैं। मेरी तो इच्छा होती है कि पहरों उनके साथ रहूँ। जिस प्रकार रामचन्द्रजीने लंकाके रावण और उनके अनेक जातिभाई असुरोंका नाश करके लोगोंको कष्टसे मुक्त किया था उसी प्रकार युवराज छत्रसाल भी

दिल्लीके असुरोंका नाश करेंगे। युवराजके प्रयत्नसे शीघ्र ही सारा बुन्देलखण्ड इन असुरोंकी अधीनतासे निकलकर स्वतन्त्र हो जायगा। इतने उत्तम और बड़े कार्यमें उनकी सहायता करना तो दूर रहा, पिताजी उलटे और पगपगपर उसमें अड़चनें डालनेकी चिन्तामें रहते हैं।"

विम०—"तुम जानती हो कि तुम्हारे पिताजी कहाँ गये हैं ?"

धीरे धीरे नाव खेती हुई विजया बोली,—"नहीं, मैं कुछ नहीं जानती। एकाएक उनके जानेकी सब तैयारियाँ हो गईं। जब विंध्यवासिनीके अन्तिम दर्शन करके हम लोग लौटे तब एकाएक पिताजीने मुझे बुलाकर कहा कि मुझे एक जरूरी कामके लिए बहुत जलदी कहीं जाना है। तुम रानी हीरादेवीके साथ ओड़छे जाओ। वहाँसे मैं तुम्हें ढाँड़ेर बुलवा लूँगा। बस, इतना कहकर वे चलते बने। तभीसे मैं बराबर तुम लोगोंके साथ हूं। पिताजीने मुझे यह नहीं बतलाया कि हम कहाँ जाँयगे, और मैंने भी उनसे इस सम्बन्धमें कुछ न पूछा। मैं जहाँ तक समझती हूँ, वे ढाँड़ेर ही गये होंगे। बड़ी बड़ी मंजिलें चलनेमें शायद मुझे तकलीफ हो, इसी लिए वे मुझे तुम लोगोंके साथ छोड़कर आगे निकल गये हैं।"

बड़े आश्चर्यसे विमलदेवने कहा;—"विजया, क्या तुम यह भी नहीं जानती कि तुम्हारे पिताजी कहाँ गये हैं ? देखो न उनके मन्सूबे कितने गुप्त होते हैं! वे ढाँड़ेर नहीं गये।"

विजयाने बहुत चकित होकर पूछा,—"भला अगर वे ढाँड़ेर नहीं गये, तब फिर कहाँ गये हैं ?"

विम०—"वे दिल्ली गये हैं।"

विज०—"दिल्ली ?"

विम०—"हाँ हाँ, दिल्ली गये हैं। जानेसे पहले माँके साथ बहुत देर तक वे एकान्तमें बातें करते रहे थे। जब उनकी बातें हो चुकीं तब तुम्हारा खिदमदगार किशुन एक साँड़नी ले आया और उसीपर सवार होकर तुम्हारे पिताजी बिना किसीसे कुछ कहे सुने गुप्त रूपसे दिल्ली चले गये।"

विजयाने डाँड़ छोड़ दिया और कहा,—"बड़े ही आश्चर्यकी बात है। भला तुम्हें यह भी कुछ मालूम हुआ कि वे दिल्ली क्यों गये हैं ?"

विम०—" यदि मैंने यह जाननेका प्रयत्न किया होता तो मुझे सन्देह है कि शायद तुम मुझे इस समय यहाँ देखने भी न पातीं। विजया! मालूम होता है कि अभी तुम मेरी माताका क्रोध नहीं जानतीं। अपना लड़का समझकर वह मुझे कभी छोड़ नहीं सकतीं। जब वहाँसे सब लोगोंके चलनेकी तैयारी हो चुकी तब भी उन लोगोंमें बराबर बात चीत हो रही थी। पिताजीको जब यह मालूम हुआ तब उन्होंने मुझे यह देख आनेके लिए कहा कि माँकी चलनेकी सब तैयारी हो चुकी या नहीं। इस समय जब मैं वहाँ गया तब मेरे कानोंमें तुम्हारे पिताके दिल्ली जानेकी कुछ भनक पड़ गई। इसके सिवा मैंने और कुछ भी नहीं सुना। मुझे उस समय अपने पास आते देखकर माँने बड़े क्रोधसे आँखें निकालकर मेरी ओर देखा। अगर तुम उस समय उन्हें देखतीं तो मारे डरके थरथर काँपने लगतीं।"

विज०—" विमलदेव, तुम्हारी माताका क्रोध मैं जानती हूँ। कल जब हम लोग यहाँ नहेवा पहुँचे थे तब तुम्हारी माताकी दासी गिरिजाने उनसे कहा था कि हर सालकी तरह महेवाके किलेमें रहनेमें क्या हरज है? इतना सुनते ही उन्हें क्रोध चढ़ आया और उन्होंने तुरन्त ही उस बेचारीको बुरी तरह पिटवा दिया।"

हीरादेवीका स्मरण करके युवराज विमलदेव और विजयाके प्रसन्न मुखों पर भी खिन्नताकी झलक आगई। पर वह झलक थोड़ी ही देरतक रही। कुछ ही क्षणोंके उपरान्त उनके मुख फिर जयसागर सरोवरके कमलोंकी तरह प्रफुल्लित हो गये। विजया बराबर नाव खेती जाती थी। सरोवरके बीचमें द्वीपकी तरह थोड़ीसी बहुत ही रमणीक और मनोहर भूमि थी, विजया उसी द्वीपकी ओर जाना चाहती थी।

प्रसन्न होकर विमलदेवने कहा,—" विजया! यदि तुम इतनी तेज नाव चलाओगी तो हम लोग बहुत जल्दी उस द्वीपतक पहुँच जाँयगे। देखो, बड़े बड़े वृक्षोंके बीचमें वह मन्दिर कैसा सुशोभित हो रहा है। जिस प्रकार उस मन्दिरके तैयार करनेमें मानवी कौशलकी परमावधि हो गई है उसी प्रकार रंग-बिरंगे पौधों, लताओं और फूलों आदिसे उन्हें सजानेमें प्रकृतिके कौशलकी भी चरम सीमा ही हो गई है। और इन दोनों कौशलोंका एक ही समयमें दर्शन कैसा सुखकर और पावन है। जो लोग दैवी कौशलको अद्वितीय और अलौकिक

बतलाकर यह कहा करते हैं कि मानवी कौशल उसकी बराबरी नहीं कर सकता, उन्हें यह स्थान देखना चाहिए। उसी प्रकार जो लोग दैवी कौशलमें कोई विशेषता न मानते हों उन्हें भी यह स्थान देखना चाहिए। यहाँ आकर उन लोगोंको मालूम हो जायगा कि मानवी और दैवी कौशल किस प्रकार एक दूसरे पर अवलंबित हैं और उन दोनोंका मेल कितना मनोहर होता है। इस द्वीपकी शोभासे हम लोगोंको मानो यह उपदेश मिलता है कि दैवी कौशलके आदर्शको सामने रखकर मनुष्यको अपना कौशल भी उतना ही विशद करनेका प्रयत्न करना चाहिए।"

विज०—"श्रीरामचन्द्रजीने सज्जनोंका प्रतिपालन और रक्षण करनेके लिए लंकाके दुष्ट असुरोंका नाश किया था। यह दैवी आदर्श सामने रखकर महेवाके युवराज छत्रसाल मानवी कौशलसे दिल्लीके असुरोंको परास्त करनेके लिए उद्यत हुए हैं। जान पड़ता है कि उन्होंने इस द्वीपसे मिलनेवाला उपदेश अच्छी तरह समझ लिया है। इसी लिए वे देव और मनुष्य दोनोंके ही प्रिय होंगे।"

क्या विजयाका यह अनुमान ठीक था? क्या विमलदेवका यह सिद्धान्त सत्य था? क्या विजयाके कथनानुसार युवराज छत्रसाल देव और मनुष्य दोनोंके ही प्रेमपात्र थे?

युवराज छत्रसाल यह समझते थे कि इस समय हम मनुष्य और देव दोनोंके ही प्रिय हो रहे हैं। जिस प्रकार विमलदेव और विजयाके नेत्रोंके सामने मानवी और दैवी सौन्दर्य्य विराजमान था उसी प्रकार छत्रसाल भी दोनों सौन्दर्य देख रहे थे। जयसागर सरोवरके बीचवाले द्वीपकी शोभा सदा उनकी आँखोंके सामने नाचा करती थी। पर दिन रात वह शोभा निरखते रहनेके कारण वे उसका कोई विशेष अभिप्राय न निकाल सके थे। उन्हें इस बातका कभी ध्यान भी नहीं हुआ था कि उस स्थान पर मानवी और दैवी दोनों सौन्दर्य्य एकत्र हैं। तथापि इसमें सन्देह नहीं कि वे उन दोनों सौन्दर्य्योंका आनन्द लेते थे।

अब वह द्वीप बहुत पास आ गया था। वह ज्यों ज्यों पास आने लगा त्यों त्यों विमलदेव और विजयाके मन उसकी ओर खिंचने लगे। उस समय उन लोगोंको सृष्टि-सौन्दर्य्यके सिवा और कुछ दिखाई ही न देता था। विमलदेवको इस बातकी तनिक भी चिन्ता न थी कि मैं अपनी माताकी इच्छाके विरुद्ध जनाने

कपड़े पहनकर घूम रहा हूँ । वसन्तश्रीके साथ कानाफूसी करनेवाली सृष्टि-सुन्दरी, सन्ध्याके गलेमें बाँह डालकर विचरनेवाली प्रभा, दैवी सौन्दर्य्यके हाथमें हाथ देनेवाला मानवी सौन्दर्य्य, दूर तक फैला हुआ पवित्र जलका जयसागर सरोवर, उसकी अनुकरणीय गम्भीरता, उसके तलपर हँसनेवाले कमलों और अपने सामने प्रसन्न वदनसे बैठी हुई विजयाको ही विमलदेव सारा विश्व समझ रहे थे । इन सबके सिवा उन्हें और कुछ दिखलाई ही न पड़ता था । संसारकी और सारी बातोंको वे भूल गये थे । इस समय उन्हें इस बातकी कल्पना भी नहीं थी कि मानवी और दैवी सौन्दर्य्यका आनन्द लेनेके लिए जिस प्रकार हम लोग आगे बढ़ते जा रहे हैं, उसी प्रकार हमारे पीछे पीछे और भी कोई आ रहा है या नहीं ।

चारों ओर तरह तरहके असंख्य कमल जयसागर सरोवरके तलकी शोभा बढ़ा रहे थे । कुछ बिलकुल खिले हुए थे, कुछ बँधे रहकर अपनी गम्भीरता प्रकट करना चाहते थे, कुछने अभी मुस्कराना आरम्भ किया था और कुछ ऐसी मुग्धावस्थामें थे जो खिलना जानते ही न थे । इसी प्रकारके अगणित कमल विमलदेव और विजयाका स्वागत करनेके लिए जयसागर सरोवरके तल-पर खड़े थे । विमलदेव प्रसन्न चित्तसे उनकी ओर देख रहे थे । अन्तमें एक बढ़िया कमल लेनेके लिए वे अपने स्थानपरसे उठे । उनका अभिप्राय समझकर विजयाने कहा,—" विमलदेव ! क्या तुम कमल लेना चाहते हो ? वह यहाँसे तुम्हारे हाथ न आवेगा । जरा ठहरो, मैं नाव उस कमलके पास तक ले चलती हूँ । "

विम०—" विजया, जरा उस कमलकी ओर देखो । उसका दैवी सौन्दर्य्य तुम्हारे मानवी सौन्दर्य्यसे कितना मिलता जुलता है । उसका अधखिलापन तुम्हारी मुस्कराहटसे कितना मिलता हुआ है । हमारे प्राचीन कवियोंने स्त्रीके मुखकी कमलसे जो उपमा दी है वह कितनी ठीक है । "

विज०—" यही क्यों, उन लोगोंकी समझसे स्त्रियोंके हाथ, पैर, नेत्र यहाँ-तक कि प्रायः सभी अंग कमलके ही समान हैं । उन लोगोंने तो मानो यही निश्चय कर लिया है कि स्त्री बहुतसे कमलोंका ढेर है । (कुछ विनोदसे) विमल-देव ! भला बतलाओ तो, तुम वह कमल लेकर क्या करोगे ? "

विम०—" तुम्हारे मानवी सौन्दर्य्यसे उस दैवी सौन्दर्य्यकी तुलना करूँगा । "

इतना कहकर विमलदेव वह कमल लेनेके लिए नावके किनारे पर पहुँचकर नीचेकी ओर झुके। विजया भी अपनी स्वाभाविक चंचलताके कारण हाथका डाँड़ा ऊपर उठाकर विमलदेवकी सहायता करनेके लिए उनके पास पहुँची। उसे इस बातकी कल्पना भी नहीं थी कि मेरे इस कृत्यसे हम दोनोंपर कैसा संकट पड़नेकी सम्भावना है। इतनेमें किसीके मनमें यह भावना उत्पन्न हुई कि सारा भार नावके एक ही ओर हो जानेके कारण वह उलट जायगी और क्षण भरमें वे दोनों जयसागरमें गोते खाने लगेंगे। इस संकटसे उन दोनोंको बचानेके लिए वह अपनी नाव जल्दी जल्दी खेने लगा। जब विमलदेवके हाथमें वह कमल न आया तब विजया भी नावके किनारेपर विमलदेवके पास पहुँचकर झुकती हुई उस कमलकी ओर हाथ बढ़ाने लगी। इतनेमें वह नाव उलट गई और जयसागर सरोवरके असंख्य कमलोंमें गिरकर वे दोनों गोते खाने लगे!

अपनी सुन्दर बाँहोंसे पानीको चीरती हुई विजया बोली,–"विमलदेव! क्या तुम तैरना नहीं जानते? इस तरह व्यर्थ घबराकर हाथ पैर मत पटको। थोड़ी देरके लिए हाथ पैर मारना बंद कर दो। मैं अभी तुम्हें सहारा देती हूँ।" यह कहकर वह चपल बालिका चपलाकी तरह विमलदेवके पास पहुँच गई। उस समय विमलदेवके मुँहमें पानी भर गया था और वे डूबने लगे थे। एक हाथसे उनका हाथ पकड़कर और दूसरे हाथसे पानी चीरते हुए विजयाने कहा,—"घबराओ मत! आँखें खोलकर देखो। तुम्हारी बहन विजया तुम्हारे पास ही है।"

विमलदेवने आँखें खोलीं। आसपासकी विपुल जलराशिकी ओर एकबार भयभीत दृष्टिसे देखकर उन्होंने अपने कोमल हाथोंसे सहारा देनेवाली विजयाकी ओर देखा। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। उन्होंने बड़े ही करुणस्वरसे कहा,—"विजया! तुम मुझे छोड़ दो। मुझे डूबने दो। मुझे तैरना बिलकुल नहीं आता। तुम मुझे सँभाल न सकोगी, इस लिए मुझे छोड़ दो और जाओ।

विज०—"नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता, या तो हम और तुम दोनों ही यहीं डूब मरेंगे और या जो कुछ भाग्यमें बदा–" उससे अधिक बोला न गया। वह चुप हो रही।

विम०—"तुम थक गई हो, मुझे छोड़ दो । दोनोंके मरनेकी अपेक्षा एकका बचना बहुत अच्छा है । मुझे बचानेके लिए तुमने अपने प्राण संकटमें डाले, इसके लिए मैं तुम्हारा ऋणी हूँ । मुझे छोड़ दो । मैं यह ऋण दूसरे जन्ममें चुकाऊँगा ।"

विजयाने बड़ी कठिनतासे कहा,—"नहीं, दोनों ही साथ मरेंगे ।"

विजया इस समय बहुत थक गई थी । अब विमलदेवको बचानेके लिए उन्हें सहारा देना उसकी शक्तिसे बाहर हो चला था । तो भी उसने निश्चय कर लिया था कि शरीरमें प्राण रहते तक मैं उनकी रक्षाका प्रयत्न करूँगी ।

विजयाका दम फूलने लगा था। जब विमलदेवने देखा कि अब वह भी मरना ही चाहती है तब उन्होंने बड़ी कठिनतासे कहा,—"विजया! बस हो चुका, अब मुझे छोड़ दो ।" इतना कहकर उन्होंने अपना हाथ छुड़ा लिया और कहा,—"तुम्हारा स्नेहांकित हाथ मैंने झटकार दिया, इसके लिए मुझे क्षमा करना । तुम्हारे भाग्यमें छत्रसालके गलेमें ही माला डालना था । खैर मुझे भी कभी कभी याद करती रहना । छत्रसालसे कह देना कि वह माला बनानेमें मेरा भी कुछ हिस्सा था और मैं उनका शुभचिन्तक और मित्र था । विजया! जाओ अब दूसरे जन्ममें—"

विमलदेवके मुँहमें पानी भर गया और वे डूबने लगे । उनकी ओर देखती हुई असहाय विजया बोली,—"हा! यदि यहाँ युवराज छत्रसाल होते तो—"

× × × ×

छठा प्रकरण ।

लम्पट दिल्ली ।

दिल्ली! ऐश्वर्य-मदसे अन्धी दिल्ली! अनाचार, व्यसन और आलस्यमें डूबी हुई दिल्ली! तेरे सरीखी विषय-लम्पट, तेरे सरीखी कुलटा और दुराचारिणी स्त्रीके हाथमें भारतवर्ष सरीखे पवित्र देशके अधिकार-सूत्र हों, तेरे समान दुराचारिणीकी आज्ञा बुन्देलखण्डके क्षात्र-तेजको शिरोधार्य करना पड़े, यह भारतवर्षका दुर्भाग्य ही है। राजतृष्णाकी स्वार्थपूर्ण आकांक्षाओंके कारण तूने

आजतक कितने अनाचार किये। दुर्योधनकी मति भ्रष्ट करके थोड़ीसी भूमि पर सन्तुष्ट रहनेवाले पाण्डवोंको उससे तूने ही यह उत्तर दिलवाया था कि तुम लोगोंको सूईकी नोकके बराबर भी जमीन न मिलेगी। महाभारतके युद्धका भयंकर रक्तपात तूने ही कराया था। कनौजके जयचन्द्र राठौरकी सहायता लेकर शहाबुद्दीन गोरीसे तूने ही अपने वीरशाली पति पृथ्वीराज चौहानका खून कराया था। अपने मस्तकको सुशोभित करनेवाले स्वतंत्रताके सुन्दर कुंकुम-तिलकको अपने हाथसे पोंछकर तू ही यवनी बनी थी। यवनी बननेके उपरान्त,यवनोंके रनवासमें जानेके उपरान्त भी तेरा व्यवहार दिन पर दिन हीन और पातकी ही होता गया। मनुष्य-वध, रक्तपात, और लूट-पाट आदि बातें मानों तेरे मनोरंजनकी सामग्री हो गई। तूने लोगोंपर ऐसा जादू डाला कि स्वामीने सेवकभावकी, बन्धुने बन्धुप्रेमकी, पिताने पुत्रवत्सलताकी और पुत्रने पितृधर्मकी हत्या करके तुझे अपनाना चाहा। तूने सेवकोंके मनके विश्वासका नाश करके उनसे अपने स्वामीपर शस्त्र चलवाये। भाई भाईके प्रेमका नाश करके तूने एकसे दूसरेकी हत्या कराई। तूने सबको ऐसा बहकाया कि चचेरे, ममेरे और फुफेरे सम्बन्धी एक दूसरेके कट्टर शत्रु बन गये। इतना ही नहीं, तुझपर अपना अवर्णनीय प्रेम दिखलानेके लिए तुझे भलीभाँति अलंकृत करनेवाला शाहजहाँ जब बुड्ढा हुआ तब तेरा प्रेम उस परसे जाता रहा और तू उसके तरुण पुत्रके ध्यानमें लगी। तेरी प्रवृत्ति सदा अधर्मकी ओर थी, इसी लिए तू कपटी, ढोंगी, स्वार्थी और दगाबाज औरंगजेब पर मरने लगी। तूने अपने वृद्ध पति शाहजहाँको कैद कराया, अपने सब देवरोंका खून कराया और केंचुली छोड़कर फिर ज्योंकी त्यों हो जानेवाली नागिनकी तरह सब पर फुफकारा छोड़ती हुई फिर वैभवका आनंद लेने लगी। वाहरी तेरी चंचलता! वाहरी तेरी अधिकारलालसा! वाहरी तेरी विषय-पिपासा!

शाहजहाँ बादशाहको छोड़कर आलमगीर बादशाहके गलेमें हाथ डाले अभी तुझे देर न हुई, अधिकार-लालसाका पान अभी तूने चबाना भी आरम्भ न किया, अपने नये पतिका स्वरूप भी अभी तक तूने अच्छी तरह न देखा, इतने थोड़े समयमें—केवल आठ दस वर्षोंमें ही क्या तुझे अपने नये पति आलमगीर बादशाहसे घृणा हो गई? क्या तेरी नीति-भ्रष्ट चंचलताको उसके साथ अधिक समय तक रहना पसन्द न आया?

औरंगजेब बहुत बीमार हो गया, मरनेके किनारे आया, क्या इसी लिए तू उससे मुँह फेरनेके लिए तैयार हो गई?

रोशनआरा बेगम औरंगजेबकी प्रिय बहन थी। शाहजहाँका भी उस पर बहुत प्रेम था। पर जिस समय यह प्रश्न उठा कि दिल्ली किसे मिले, दिल्लीकी जयमाला किसके गलेमें पड़े, तब जिस रोशनआराने दारा, शुजा और मुरादके अधिकारोंकी ओर फूटी आँखों भी न देखकर अपने प्रिय भाई औरंगजेबके हाथमें दिल्लीका हाथ दिया, वही रोशनआरा आज दिल्ली और उसके साथ अपने प्यारे भाई औरंगजेबके प्राण लेनेके लिए क्यों तैयार हो गई? दिल्ली! यह सब तेरी ही अनीतिमत्ता, तेरी ही पातकी चंचलताका एक खेल है। तेरा पति बीमार होकर बेहोश पड़ा है और तू उसकी बीमारी और बेहोशीसे लाभ उठाकर अपने ऊपरसे उसका दबाव नष्ट करने और अपनी मनमानी करनेका अवसर पानेके लिए अपने पति औरंगजेबरूपी काँटेको समूल नष्ट कर देनेकी इच्छा रोशनआरा बेगमके मनमें उत्पन्न कर रही है। अपने पतिकी थोड़े दिनोंकी अधीनता भी तुझसे न सही गई! तू भी रोशनआरा बेगमकी तरह स्वच्छन्द और निरंकुश होनेकी इच्छा करने लगी! तूने रोशनआराके मनपर क्यों अधिकार जमाया?

मरदोंकी तरह अकड़कर बैठी हुई रोशनआरा बेगमने अपने सामने खड़े हुए हकीमसे डपटकर कहा,—"हकीम साहब! आपका यह गोलमाल कबतक जारी रहेगा? आपके पास इतनी दवायें हैं और आप कहते हैं कि मेरे पास कोई ऐसी दवा नहीं है जो घंटे या दो घंटेमें इनका काम तमाम कर सके। यह सब आपकी शरारत है। आप शाही हकीम हैं। आप खूब समझ सकते थे कि न मालूम किस वक्त कैसे कातिल जहरकी जरूरत पड़े। देहलीके तख्तके लिए अबतक जो कुछ होता आया है वह सब आप जानते हैं। आप लोग दरबारमें इसी लिए रक्खे जाते हैं कि जरूरतके वक्त काम आवें। आप दो हफ्तेसे दवायें दे रहे हैं मगर कैसे ताज्जुबकी बात है कि किसीका कोई असर नहीं होता!"

हकीमने बड़ी ही दीनतासे कहा,—"जहाँपनाह, शाहंशाह आलमगीर बादशाह—

रो०—(बिगड़कर) "चुप रहो। आलमगीरके नामके साथ "शाहंशाह बादशाह" का लकब न लगाओ, नहीं तो अभी तुम्हारी जबान खिंचवा ली

जायगी। मैं तुम्हारी पूरी बात सुनना चाहती हूँ। उससे पहले ही तुम मुझे मजबूर न करो कि मैं तुम्हारा सिर काटनेका हुक्म दूँ।"

हकी०—"जहाँपनाह! क्या मेरी बात खतम होते ही मेरी गरदन मारनेका हुक्म दिया जायगा?"

रो०—"बेशक! आज मैं तुम्हें जिन्दा न रहने दूँगी।"

हकी०—"क्या आज मैं जिन्दा न बचने पाऊँगा?"

रो०—"नहीं नहीं, हरगिज नहीं।"

हकी०—"क्या मैं जान सकता हूँ कि ऐसा क्यों होगा?"

रो०—"इसी लिए कि तुमने हुक्म नहीं माना, मेरी मरजीके खिलाफ काम किया। आज तुम्हारी जिन्दगीका खातमा है।"

हकी०—"जहाँपनाहकी यही मरजी है न कि मैं शाहंशाह आलमगीरको कातिल जहर दूँ?"

रोशनआराने होंठ चबाते हुए हुँकारी भरी।

हकी०—"मैं ऐसा नामुनासिब हुक्म माननेके लिए क्यों लाचार किया जाता हूँ?"

रो०—"इस लिए कि इस वक्त दिल्लीका तख्त और ताज; मेरे हाथमें है। मेरे बन्दोंके लिए मेरा हुक्म मानना फर्ज है।"

हकी०—"बेगम साहब! मुझे माफ किया जाय; मेरा खयाल है कि जो हुक्म उस पाकपरवरदिगारके हुक्मके खिलाफ हो, जिसकी तामील अल्लाहतआलाको नाखुश करनेवाली हो वह हुक्म चाहे शाहंशाह आलमगीर बादशाहका हो, चाहे तख्त वा ताजकी मलिका बेगम साहबाका हो, कभी उसकी तामील न होनी चाहिए।"

रो०—(कड़ककर) "बस! अपनी जबान बन्द करो। मैं अभी तुम्हें इस शेखी और गुस्ताखीका मजा चखाती हूँ।"

उस समय रोशनआराकी आँखोंसे चिनगारियाँ छूट रही थीं। उसने अपने ख्वाजासरा रहमतखाँको जोरसे आवाज दी।

हकीम साहब अच्छी तरह समझते थे कि रोशनआरा अपनी बातकी पक्की है, वह जो कुछ कहती है, करके छोड़ती है। वे अपने आपको इस दुनियामें थोड़ी देरका मेहमान समझने लगे। पर उनके चेहरे पर चिन्ता या दुःखकी

तनिक भी छाया न दिखलाई पड़ती थी। वे शान्तिपूर्वक और निश्चिन्त होकर सामनेकी ओर देख रहे थे। उनकी घबराहट दूर हो गई थी।

इतनेमें एक परदा हटाता हुआ क्रूर-आकृति रहमतखाँ आता हुआ दिखलाई दिया। उसकी ओर देखकर रोशनआराने कहा,—"इस नाबकारको अपने साथ ले जा और ताज़ी कुत्तोंके सामने छोड़ दे।"

रहमतखाँने बढ़कर हकीम साहबका हाथ पकड़ लिया, पर तो भी उनकी शान्ति नष्ट न हुई। उन्होंने गम्भीर होकर कहा,—

"बेगम साहबा! शायद आप समझती होंगी कि मैं अपनी सजा सुनकर थर थर काँपने लगूँगा, बेहोश हो जाऊँगा या कमसे कम रहमकी दरख्वास्त करूँगा, मगर यह आपकी गलती है। आज नहीं तो दस दिन बाद मुझे खुदाए-तआलाके हुजूरमें जाना ही पड़ता। अगर वह मौका मुझे आज ही मिलता हो तो मैं नाहक पसोपेश क्यों करूँ? एक खुदसर और खुदपरस्त बेगमके सामने आजिजी क्यों दिखलाऊँ? मैं हमेशा मौतके लिए तैयार रहता हूँ। क्यों कि यकीन है कि मुझे बहिश्त मिलेगा। मैंने आजतक कभी किसीको कोई तकलीफ नहीं पहुँचाई, किसीके साथ दगा फरेब नहीं किया, किसीके साथ सख्तीका बर्त्ताव नहीं किया। हमेशा नेकी और रास्तीमें ही अपना वक्त बिताया। ऐसी हालतमें खुदाके सामने जानेमें मुझे कोई खौफ नहीं। चलो रहमतखाँ, मैं तुम्हारे साथ चलनेको तैयार हूँ।"

रोशनआराने रहमतखाँको खड़े रहनेका इशारा करके हकीम साहबसे कहा,—"तू कहता है कि तूने अपनी जिन्दगी नेकी और रास्तीमें बिताई है, मगर यह सरासर झूठ है। तूने अगर जहर देकर बादशाहकी जिन्दगीका खातमा नहीं किया तो भी तूने दवायें देकर अबतक उन्हें बेहोश जरूर रक्खा है। क्या तूने बादशाहके साथ नमकहरामी नहीं की? उन्हें सख्त तकलीफ नहीं पहुँचाई? क्या तेरा यह काम गुनाह नहीं है और तुझे दोजखमें भेजनेके लिए काफी नहीं है?"

रोशनआराके प्रश्नका वास्तविक अभिप्राय हकीम साहबकी समझमें न आया। उन्होंने बहुत ही सरलतापूर्वक उत्तर दिया,—

"बादशाहको जहर देनेके लिए बेगम साहब मुझे बार बार हुक्म फरमाती थीं और तरह तरहके लालच देती थीं। मगर मैंने उस हुक्मकी तामील करना

मुनासिव न समझा। मैंने हमेशा ऐसी दवायें दीं जिनसे बादशाहका मर्ज दूर होता था, और अब वे करीब करीब तन्दुरुस्त हो गये हैं। सिर्फ आपकी तसल्लीके लिए मैं बराबर उन्हें बेहोशीकी दवायें देता आया हूँ। अगर मैं अभी वह बेहोशी दूर कर दूँ तो बादशाह फिर सही-सलामत और तन्दुरुस्त हो जायँ।"

रोश०—(बहुत बिगड़कर) "ओ दगाबाज! ओ नमकहराम! मैं तेरी यह चालाकी पहले ही समझ गई थी। और इसी लिए आज मैं तेरी जिन्दगीका खातमा कर देना चाहती हूँ। रहमत! इसे साथ ले जा और रोशनआरा बेगमके साथ दगाबाजी करनेका मजा चखा।"

यमराजका दूत रहमत तुरन्त हकीम साहबको लेकर चलता बना। पर रोशनआराके चेहरे पर चिन्ताकी जो झलक आई थी वह अभी कम न हुई थी। उसे यह जानकर बहुत लज्जा हुई कि जिस कामके लिए मैं इतने दिनों तक प्रयत्न करती रही वह पूरा नहीं हुआ। बादशाहके बीमार होते ही उसने जिस प्रकार सब बेगमों और शाहजादियोंसे अलग होकर अपनी सैकड़ों विश्वस्त तातारी बाँदियोंके पहरेमें बादशाहकी सेवा-शुश्रूषाका भार अपने ऊपर लिया था, और उसे सम्बन्धमें उसने जितनी गुप्त कारवाइयाँ की थीं, उन सबका उसे स्मरण हो आया। उसे सन्देह होने लगा कि कहीं मेरी सारी कार्य्य-पटुता, सारी कर्तव्यता और सारी बुद्धिमत्ता मुझे छोड़कर चल तो नहीं दी। औरंगजेब अच्छा होकर तख्त-ताऊस पर जा बैठेगा, दिल्लीका ऐश्वर्य भोगने लगेगा, आज्ञाओंपर आज्ञायें देने लगेगा। जो अमीर उमरा रोशनआराके इशारेपर जान देते, जो सरदार रोशनआराकी प्रसन्नताके लिए उसके चरणोंकी सेवा करते और जो राजे महाराजे रोशनआराका आज्ञापालन करनेमें अपने आपको धन्य मानते, वे सब अब फिर औरंगजेबके ध्यानमें लग जायँगे। अब मुझे फिर बेगमें और शाहजादियाँ अपने दिमाग दिखलाएँगी। क्या सुलताना बनने, ऐश्वर्यसे विभूषित होकर हुकूमत करने और सैकड़ों अमीरों और दरबारियोंके सामने तख्त-ताऊसपर बैठनेकी मेरी आशा स्वप्नवत् हो जायगी? बड़े बड़े अमीरों, सरदारों और राजाओंसे सेवा करानेकी मेरी इच्छा मनकी मनमें ही रह जायगी और मैं फिर महलमें कैदियोंकी तरह पड़ी रहूँगी? बहुत ही साधारणसे साधारण बल्कि क्षुद्र मनुष्य भी स्वतन्त्रतापूर्वक रहते हैं, स्वेच्छापूर्वक घूमते फिरते हैं, मनमाना भोगविलास

करते हैं; यहाँ तक कि जंगलमें घूमनेवाले पशु और आकाशमें उड़नेवाले पक्षी भी किसीकी अधीननामें नहीं जाते। पर बादशाहजादीके भाग्यमें यही जनाना महल, गुसलखाना और झरोखा है। इसीमें कैदियोंकी तरह रहकर अपनी स्वतंत्रता, अपने जीवन और अपने मनकी उमंगोंका नाश करना पड़ता है। हाय रे दुर्भाग्य! औरंगजेबको बीमार देखकर मैंने समझा था कि मेरी कैदके दिन अब समाप्त हो गये। औरंगजेबने आठ दस बरसतक तख्तपर बैठकर हुकूमत की; वह बेचारा धर्म्मान्ध फकीर राजविलास और राजसुख क्या जाने! जबसे वह तख्त-ताऊसपर बैठा, तबसे आजतक उसके दरबारमें एक दिन भी तवायफोंका नाच न हुआ, दीवान-ए-आममें एक दिन भी मधुर तानें सुनाई न पड़ीं, शराबका एक घूँट भी किसीके गलेके नीचे न उतरा। दिन रात भोग-विलासमें बितानेवाली रँगीली दिल्ली ऐसे अरसिक, नीरस और मनसे वृद्ध बने हुए फकीरको क्यों चाहने लगी! हमारे दादा जहाँगीरने अपनी विलासेच्छा पूर्ण करनेके लिए शेर अफगानके प्राण लिए थे और नूरजहाँपर अपना अधिकार किया था। क्या उनका सा तेज औरंगजेबमें भी है? अमीर उमरा अप्रसन्न हैं; सरदार और राजे मन-ही मन कुढ़ते हैं, दिल्लीकी रंगीली प्रजा मन मारकर बैठी हुई है; इन सब बातोंका यही कारण है। जिस दरबारमें नाच-रंग शराब-कबाब और भोग-विलासका नाम भी न हो, उस कबरिस्तानसरीखे दरबारसे लोग रोनी सूरत लेकर घर न जाँय तो और क्या करें? बिना एक दो गिलास शराब पिये कहीं दरबारके कामोंमें मन लगता है? जिन्हें शराब पिये और तवायफोंकी शक्ल देखे बरसों बीत जाते हैं, उनके मुखोंपर प्रसन्नता कहाँ? छिः, यह कोई अच्छी बात नहीं है। देहली दरबारकी यह गई हुई रौनक फिरसे वापस आनी चाहिए। गजब है, कितनी तवायफोंको अपनी शादियां कर लेनी पड़ीं। शराबके लिए जो कड़ी मनाही कर दी गई है उसे रद करना चाहिए, क्योंकि इसके बिना दरबारकी शोभा ही क्या? पर ऐसा होनेसे पहले इस अरसिक और शुष्क-हृदय औरंगजेबके जीवनका अन्त होना चाहिए। अगर मैंने यह बहुमूल्य अवसर खो दिया तो फिर मुझे जन्मभर इसी जनानेखानेके नरकमें वास करना पड़ेगा। लेकिन इस तरह केवल विचार करनेसे ही क्या लाभ? अभीतक तो औरंगजेब बेहोश है। उसके होशमें आनेसे पहले ही मुझे उसका जीवनदीप बुझा देना चाहिए। जबतक मेरे पास विपुल धन है, तबतक एक औरंग-

जेव क्या सैकड़ों औरंगजेबोंके प्राण लिये जा सकते हैं। यदि एक मूर्ख हकी-मसे मेरा काम न निकला तो कोई चिन्ता नहीं, स्वयं मेरे दरवारमें ही वीसियों हकीम हैं। मैंने वड़ी भूल की जो इसे विश्वसनीय समझा; पर तो भी मेरा भेद किसी पर प्रकट नहीं हो सकता। हाँ, इस दूसरे हकीमको भी जिससे मेरा काम निकलेगा, जीवित न रहने देना चाहिए।

इस अन्तिम विचारके कारण रोशनआराके सुन्दर पर कठोर वदन पर आसुरी मुस्कराहट आ गई। इतनी देरतक वह जिस चिन्तित अवस्थामें थी, वह दूर हो गई; अव उसका मन फिर प्रसन्न हो गया। उसने तुरन्त आवाज दी,— " विजली ! जरा यहाँ आना। "

रोशनआराकी विजली आकाशकी विजलीकी तरह चमकती हुई उसके सामने आकर खड़ी हो गई। उसके आदाव वजा लानेके उपरान्त रोशनआराने उससे कहा,—

" हम लोगोंकी आजतककी कुल कोशिशें वेकार हुईं। "

विजली—" क्या वादशाहकी जिन्दगीका खातमा न होगा ? "

रो०—" नहीं। जिस हालतमें वह इस वक्त है उसी हालतमें वह शायद एक मुद्दत तक जिन्दा रह सकता है। "

विज०—" अभी थोड़ी देर पहले जब मैं देखनेके लिए आई थी तव तो वे विलकुल मुरदेकी तरह पड़े हुए थे। उस वक्त तो मैंने समझा था कि उन्होंने खुदाके घरका रास्ता ले लिया। "

रो०—" नहीं, यह वात नहीं है। हम लोगोंको वहुत धोखा हुआ। वाद-शाहकी तवीयत दिन पर दिन अच्छी होती जाती है; सिर्फ वेहोशी कायम है।"

इसके वाद रोशनआराने उसे हकीमके सम्बन्धकी सव वातें कह सुनाईं। सुनकर विजलीने रोशनआराकी चातुरीकी प्रशंसा की और कहा,—

" वेगम साहवा ! आखिर आपने कोई तदवीर भी सोची ही होगी। "

रोश०—" तदवीर ! तदवीरोंकी तो यहाँ कोई कमी ही नहीं है। जिस रोशनआराने अपनी लियाक़तसे सारे महल पर अपना सिक्का जमाया है, जिसकी तदवीरें सुनकर वड़े वड़े वज़ीर और मशीर दंग रह जाते हैं, जिसने अपनी तदवीरोंसे औरंगजेवको देहलीके तख्तका मालिक वनाया है और जिसमें फिर

वह तख्त छीन लेनेकी ताकत है उसके लिए तदबीरोंकी क्या कमी ? इन शाही हकीमोंसे मेरा काम न निकलेगा। जिस हकीमको मैं अपना सबसे बड़ा मददगार समझती थी, वही जब मेरे काम न आया तब मैं और किसीको यह राज बतलाना नहीं चाहती। तुम शहरमें जाओ और वहाँसे किसी ऐसे हकीमको ले आओ जिसके पास दौलत तो जियादः न हो पर मेरे कामके लिए जिसके पास काफी जहर मौजूद हो। उसीकी मददसे मैं अपने रास्तेका यह काँटा दूर करूँगी। उसे दौलतका लालच देकर, बहुत बड़े ओहदेकी उम्मेद दिला कर और मान-मरातिबका सब्ज बाग दिखला कर काम निकाल लिया जायगा। हाँ, इस बातका खयाल रखना कि वह हकीम बहुत ही गरीब न हो। क्योंकि तुम जानती हो कि गरीब दौलतकी कदर नहीं जानते। उन्हें अक्सर दीन और ईमानका ही खौफ लगा रहता है। किसी ऐसे हकीमको यहाँ लाना जो दौलतको ही खुदा समझता हो। नहीं तो फिर पहलेकी तरह धोखा खाना पड़ेगा और परेशानी होगी।"

विज०—"बहुत खूब। जब तक मैं वापस न आऊँ तब तक इस कमरे पर सख्त पहरेका इन्तजाम रहना चाहिए। नहीं तो फिर वही कलवाली नौबत होगी।"

रोश०—"नहीं, तुम इसकी फिक्र न करो। आज मैंने यहाँ और भी ज्यादः तातारी पहरेवालियोंका इन्तजाम कर दिया है। सबके हाथोंमें नंगी तलवारें हैं, और मैंने हुक्म दे दिया है कि अगर मौका पड़े तो फौरन उन्हें काममें लाओ। तुम्हारे सिवा बगैर मेरी इजाजतके और कोई यहाँ नहीं पहुँच सकता। अगर कोई कमबख्तीका मारा आ भी जायगा तो जिन्दा न बचने पाएगा। कल आयशा कितनी शेखीसे बातें करती थी। वह अपने आपको वलीअहद (युवराज) की माँ और बादशाहकी चहेती बेगम समझती थी और इसी लिए वह इस कमरेमें बैठ कर बादशाहकी तीमारदारी करना चाहती थी। पर उसकी एक भी न चली और मैंने उसे यहाँसे चलता बनाया। अब मैंने ऐसा इन्तजाम कर दिया है कि अब वह इस महलमें आ ही न सकेगी। मगर यह देखो, सामने कौन आ रहा है ?"

विज०—"हुजूर, यह पहरेवालियोंकी सरदार फातिमा है।"

इतनेमें फातिमा आदाव वजा लाकर सामने खड़ी हो गई। विजलीने उसकी तरफ देखकर पूछा,—"कहो, क्या चाहती हो?"

फा०—"ख़्वाजा फौलादखाँने खवर भेजी है कि दरेदौलतपर एक हिन्दू राजा हाजिर है और वेगम साहवकी मुलाकातका शर्फ हासिल करना चाहता है।"

रोश०—(नाक भौं चढ़ाकर) "अभी इस वक्त किसीसे मुलाकात नहीं हो सकती। वह आइना इधर कर।"

फातिमाने वड़े अदवसे वह आइना सामने ला रक्खा। उसमें अपना रूप निरखती हुई रोशनआरा वोली,—"पहले अभी गुस्ल (स्नान) होगा। इसके वाद उसे शीशमहलके वगलवाले कमरेमें ले आना।"

फातिमा आदाव वजा लाकर वहाँसे चलने लगी। रोशनआराने उसे फिर वुलाकर कहा,—"तुझे मालूम है कि उस राजाका क्या नाम है और वह कहाँका राजा है?"

फा०—"हुजूर! वह ढाँड़ेरका राजा कंचुकीराय—"

रो०—"अरे, वह वुड्ढा कंचुकीराय? उसकी वातें सुनकर तो मेरे पेटमें वल पड़ जाते हैं। अच्छा जा, मैं वगलके कमरेमें जाती हूँ। उसे वहीं ले आ।"

यह कहकर रोशनआरा वड़े अन्दाजसे अठलाती हुई वगलके कमरेमें चली गई और एक वहुमूल्य कालीन पर मसनदके सहारे वैठ गई। दो वाँदियाँ आकर उसके दोनों ओर खड़ी हो गईं। थोड़ी देरमें फातिमा अपने साथ वृद्ध कंचुकीरायको लिए हुए वहीं आ पहुँची। कंचुकीरायने वड़ी ही विलक्षणतासे रोशनआराको फरशी सलाम किया। उन्हें देखकर रोशनआराको वहुत हँसी आई; पर उसने वड़ी कठिनतासे अपनी हँसी कुछ रोकी; तो भी उसका हँसना कंचुकीरायने देख ही लिया। कंचुकीरायको यह जानकर वहुत ही सन्तोष हुआ कि वेगम साहव मुझे देखकर वहुत ही प्रसन्न हुई हैं! उस समय उन्होंने अपने आपको धन्य समझा!

× × × ×

सातवाँ प्रकरण।

मृदूनि कुसुमादपि।

आजतक जिन जिन नर-रत्नोंने अपने दुर्बल और गरीब भाइयोंको दासत्वके दुर्गन्धिमय नरकसे निकालकर स्वतंत्रताके शुद्ध और पावन प्रदेशोंमें ले जानेका प्रयत्न किया है और उसमें सफलता प्राप्त की है, उनके समर-भूमिमें विचरते समय, शत्रुओंसे दो दो हाथ करते समय, स्वतन्त्रताके लिए लड़ते समय ऐसा जान पड़ता होगा कि उनके हृदय केवल पत्थरके बने हैं। शत्रुसे बातें करते समय उनकी भाषा आसुरी हो जाती होगी, आँखोंमें आसुरी तेज छा जाता होगा और वे असुरोंकी तरह ही रक्तपात करते हुए दिखलाई देते होंगे। जब तक वे अपने प्रयत्नमें यशस्वी नहीं हो जाते होंगे तब तक यही जान पड़ता होगा कि उनमें प्रेम, भक्ति, वात्सल्य आदि कोमल, मनोविकारोंका नाम भी नहीं है। यही नहीं, बल्कि स्वतन्त्रताके लिए प्रयत्न करनेवाला मनुष्य किसी निर्दय और भीषण डाकू सा भी मालूम हो सकता है। पर वास्तवमें यह बात ठीक नहीं है। ऐसा समझना प्रमाद ही है। जिस समय उनके विषयमें किसीके मनमें ऐसी कल्पनायें उठें, उस समय एक बार उनके महान् और तेजोमय उद्देश्यकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। कहाँ अपने स्वार्थ-साधन पर मरने और विषय-लालसाको शान्त करनेके लिए तरह तरहके पातक करनेवाले नीच डाकू और कहाँ भूत-दयाकी भूमि पर बन्धु-प्रेमका प्रासाद खड़ा करने और अपने गये हुए राष्ट्रीय जीवनको फिरसे लानेके लिए अपने प्राणों पर खेलनेवाले महात्मा! इन महात्माओंको भी कभी कभी अपने कर्तव्यके पालनके लिए बहुत ही कठोर बनना पड़ता है, अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिए हाथमें तलवार लेकर बहुतोंको यमराजके पास भेजना और [illegible] रक्तपात करना पड़ता है। तो भी उनकी सुन्दरता, कोमलता और म[illegible]में किसी प्रकारका अन्तर नहीं पड़ता, उलटे उनके गुणोंकी और भी वृद्धि होती है। वे अधिक सुन्दर, अधिक कोमल और अधिक सद्‌गुणी जान पड़ते हैं। निर्दय और पापी लुटेरों तथा डाकुओंको अपना कृत्य करते समय किसी प्रकारकी दया नहीं आती; उनके मनमें कभी प्रेम उत्पन्न नहीं होता,

उनका मन कभी कोमलता धारण नहीं करता, उनके अन्तःकरणमें नाम मात्रको भी दया उत्पन्न नहीं होती, लेकिन स्वतन्त्रताके लिए लड़नेवाले लोग समय समय पर बड़े उदार, दयालु और परोपकारी हो जाते हैं। जिन अवसरों पर अपने प्रशंसनीय उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उन्हें बहुत अधिक कठोर होना पड़ता है उन अवसरोंपर भी उनके अन्तःकरण फूलोंसे बढ़कर कोमल होते हैं।

युवराज छत्रसाल भी ऐसे ही महात्मा थे। विन्ध्यवासिनी देवीके मन्दिरकी रक्षा करनेवाले छत्रसाल और जयसागर सरोवरमें जल-विहार करनेवाले छत्रसाल दोनों एक ही थे। केवल आठ ही दिन पहले रणदूलहखाँ और उनके सिपाहियों पर चिनगारियाँ छोड़नेवाले उनके नेत्र आज अमृतकी वर्षा कर रहे थे। रक्त-पातके समय जरा भी विचलित न होनेवाला उनका मन आज बहुत ही कोमल बन गया था। कठोर जान पड़नेवाली उनकी मुद्रा बहुत ही शान्त और प्रसन्न दिखाई पड़ती थी। बहुत देरसे वे मानवी और दैवी सौन्दर्य देखनेमें मग्न थे। अच्छी तरह दर्शनका आनन्द लेनेके लिए उन्होंने अपनी नाव विजया और विमलदेवकी नावसे न तो बहुत ही दूर रक्खी थी और न बहुत ही पास रक्खी थी। विजयाको तो उन्होंने उसी समय पहचान लिया था, पर उसके साथ बैठी हुई दूसरी सुन्दरी बालिकाको वे न पहचान सके थे। उन्हें वे एक स्वर्गीय सुन्दरी समझ रहे थे। उस समय यदि कोई उनसे यह भी कह देता कि हीरा-देवीके पुत्र युवराज विमलदेव ही जनानी पोशाक पहन कर बैठे हुए हैं तो वे कदापि उसका विश्वास न करते।

जिस समय छत्रसाल दूरसे विजयाके मानवी और विमलदेवके दैवी सौन्दर्यका आनन्द ले रहे थे उस समय उनके मनमें आप-ही-आप यह भय उत्पन्न हुआ कि इन दोनोंका कल्याण नहीं है। कदाचित् ये दोनों डूब जाँय। इस लिए वे अपनी नाव अधिक तेजीसे खेने लगे। उसी समय उन्हें दिखलाई पड़ा कि नाव उलट गई और उनकी आशंका ठीक उतरी। वे यथासाध्य और भी जल्दी डाँड़ा चलाने लगे। थोड़ी ही देर बाद उन्हें सुनाई पड़ा—"हा! यदि यहाँ छत्रसाल होते तो—" असहाय विजयाके इन शब्दोंने छत्रसालको मानों चुम्बककी तरह खींचना आरम्भ किया। उनसे रहा न गया, वे चटपट पानीमें कूद पड़े और जल्दी जल्दी तैरते हुए विमलदेवके पास जा पहुँचे। गोते खाते हुए विमल-देवको पकड़कर उन्होंने अपनी नावकी ओर ले चलना आरम्भ किया।

उस समय विजयाके आनन्दकी सीमा न रही। वह भी जल्दी जल्दी तैरती हुई छत्रसालके पीछे पीछे उनकी नावतक पहुँची। इतनी देरमें छत्रसालने उस देवी सौन्दर्य्यको नावपर रख दिया था। विजया उस समय मन ही मन यह सोच रही थी कि जिसने ठीक समय पर पहुँचकर विमलदेवके प्राण बचाये हैं उसके उपकारका बदला मैं किस प्रकार चुकाऊँ। विजयाने इस समयतक छत्रसालको पहचाना न था। वह समझती थी कि मैं ढाँड़ेरकी राजकुमारी हूँ और विमलदेव ओड़छेके युवराज हैं, इस लिए अपने साथ उपकार करनेवालेका बदला हम लोग सहजमें ही धनसे चुका देंगे। यही सोचती हुई वह छत्रसालकी नावके पास पहुँची। उसे नावपर खींचनेके लिए छत्रसालने अपना हाथ आगे बढ़ाया। विजयाने नावपर खड़े हुए छत्रसालके तेजःपूर्ण मुखकी ओर देखा। दोनोंकी चार आँखें हुई। विजयाने समझ लिया कि इस उपकारका बदला धनसे नहीं चुकाया जा सकता। उसने क्षणभर विचार किया और तब बड़ी प्रसन्नतासे अपना हाथ बढ़ाकर युवराज छत्रसालके हाथमें दे दिया।

छत्रसाल! यह एक कुमारीका हाथ है। यह हाथ जितना सुन्दर और कोमल है, उतना ही पवित्र और मंगलमय भी है। इसे ग्रहण करनेमें तुम्हें जितना सुख मिलेगा उससे अधिक तुम पर उत्तरदायित्व आ पड़ेगा। तुम्हारी जन्मभूमि, जयसागर सरोवरका जल, अभी उदय होनेवाले आकाशीय चन्द्रमामें सूर्य्यका छिपा हुआ तेज, तुम दोनोंकी ओर सुगन्धि लेकर आनेवाला वायु और सारे विश्वको आच्छादित करनेवाला आकाश, ये पंच-महाभूत इस पाणिग्रहणके अवसर पर तुम्हारे चारों ओर मूर्तिमान् खड़े हैं। इस लिए खूब समझ बूझकर विजयाका हाथ पकड़ो।

उस समय विजयाके मुखपर लज्जाके कारण जो लाली आ गई थी, वह उसके मनका निश्चय प्रकट करती थी।

युवराज छत्रसालके मुखपर क्षणभरके लिए गम्भीरताका तेज झलकने लगा। उन्होंने विजयाका हाथ पकड़कर उसे अपनी नावपर चढ़ा लिया। उस समय विमलदेव कुछ होशमें आने लगे थे। विजयाने उनके पास जाकर कहा,—

" विमलदेव! कहो क्या हाल है? "

विमलदेवने अपनी आँखें खोलकर कहा,—

" मैं कहाँ हूँ ? विमलदेव तो जयसागर सरोवरमें डूबकर मर गया । पर मुझे लेकर तुम लोग कहाँ चल रहे हो ? उस चन्द्रमाकी ओर ? पर वहाँ विजया तो नहीं है । युवराज छत्रसाल भी नहीं हैं । तब मैं वहाँ किस प्रकार रह सकूँगा ? उसे मैं स्वर्ग किस प्रकार मान सकूँगा ? नहीं, मुझे तुम्हारा स्वर्ग नहीं चाहिए । विजया और छत्रसालके सामने मैं तुम्हारे स्वर्गके सारे सुखोंको तुच्छ समझता हूँ । मुझे वहीं ले चलो जहाँ वे दोनों हों । "

विमलदेवके स्वर्गीय सौन्दर्य्यकी ओर छत्रसाल टक लगाए देखते रहे । अंतमें उन्होंने विजयासे पूछा,—" विजया ! यह स्वर्गीय सुंदरी कौन है ? मैंने तो इसे आज पहले पहल ही देखा है; यह मुझे क्यों कर जानती है ? "

छत्रसालके प्रश्नका उत्तर विजया देना ही चाहती थी, इतनेमें विमलदेवने फिर विजया और छत्रसालकी ओर देखकर प्रलाप आरम्भ किया—

" विजया ! क्या तुम भी मेरे साथ स्वर्ग चल रही हो ? वहाँ तुम्हें क्या विशेषता जान पड़ी जिसके लिए तुमने इतनी जल्दी की ? वहाँ युवराज छत्रसाल तो हैं ही नहीं; तब हम लोगोंको आनंद किस प्रकार मिलेगा ? यह मेरी ओर प्रेमपूर्ण दृष्टिसे कौन देख रहा है ? "

छत्र०—" मैं हूँ, छत्रसाल । "

विम०—" छत्रसाल ! तुम छत्रसाल हो ? महेवाके युवराज छत्रसाल हो ? हाँ, ठीक है, वही हो । क्या तुम भी हम लोगोंके साथ चंद्रमाकी ओर चल रहे हो ? तब तो हम लोगोंको स्वर्गमें खूब आनंद मिलेगा । वहाँ न तो माँ हीरादेवी हैं और न पिता पहाड़सिंह । वहाँ किसी तरहका भी रिश्ता नाता नहीं है । द्वेष, मत्सर, क्रोध आदिका वहाँ नाम भी नहीं है । प्रेम, प्रेम और प्रेमके सिवा वहाँ कुछ है ही नहीं । तुम भी हम लोगोंके साथ चल रहे हो न ?

छत्र०—" सुन्दरी ! इस विश्वमें सम्भवतः एक भी मनुष्य ऐसा न मिलेगा जो तुम्हारे दैवी सौन्दर्य्य या विजयाके मानवी सौन्दर्य्यकी उपेक्षा या तिरस्कार करे । तथापि ऐसे अवसर पर जब कि मेरे बुंदेले भाई दासत्वके जालमें फँसे हुए हैं, दुष्काल, दरिद्रता और परसेवा आदि आपत्तियाँ उन्हें दारुण दुःख दे रही हैं, अपने आपको तुम्हारे प्रेम-जालमें फँसाकर संसारका सुख लेना बड़ा भारी स्वार्थी बनना है । इस लिए मैंने प्रण किया है कि जब तक बुन्देलखंड

परसे यह आपत्ति न टल जायगी तब तक मैं किसी प्रकारके सुखकी लालसा न करूँगा। बुन्देलखंडके स्वतंत्र हो जानेके उपरान्त यह छत्रसाल तुम्हारा है। तब चाहे इसे चन्द्र-लोकको ले चलो, चाहे स्वर्गलोकको।"

विजयाने हँसते हुए पूछा,—"छत्रसाल! तुम किसके साथ बातें कर रहे हो?"

छत्र०—"इस स्वर्गीय सुन्दरीके साथ।"

विज०—"ये तो सुन्दरी नहीं है।"

छत्र०—"सुन्दरी नहीं है, तब कौन है?"

विज०—"यह तो युवराज विमलदेव हैं।"

छत्रसालने बहुत ही चकित होकर पूछा,—"युवराज विमलदेव! भला इन्होंने स्त्रीका वेष क्यों बनाया?"

विज०—"हाँ, इसके लिए तुम्हें आश्चर्य हो सकता है। जिस समय वे जनाने कपड़े पहनकर मेरे सामने पहले पहल आये थे उस समय मैं भी बड़े भ्रममें पड़ गई थी। इन्हें स्त्री-वेष इतना सुन्दर और उपयुक्त जान पड़ता है कि इन्हें देखकर किसीको पुरुषकी कल्पना भी नहीं हो सकती। इन्हें शंकाकी दृष्टिसे न देखो, ये वास्तवमें युवराज विमलदेव हैं।"

इतनेमें युवराज विमलदेवको कुछ होश होने लगा। उन्हें होशमें आते देखकर विजयाने धीरेसे छत्रसालको समझा दिया कि जब इन्हें होश आ जाय तब इनपर किसी प्रकार यह प्रकट न हो कि तुम इनका वास्तविक स्वरूप जान गये हो; नहीं तो इन्हें बहुत संकोच होगा।

जब विमलदेवने होशमें आकर देखा तब उन्हें मालूम हुआ कि मैं डूबकर मर नहीं गया, बल्कि जयसागर सरोवरमें एक नावपर लेटा हूँ, विजया मेरे पास बैठी है, और उसके पास ही एक सुन्दर युवक बैठा हुआ नाव चला रहा है। युवक कुछ परिचित सा जान पड़ता है; कई बारका देखा हुआ है। थोड़ी देर बाद उन्होंने पहचान लिया कि वे महेवाके युवराज छत्रसाल हैं। उन्हें पहचानकर वे बहुत ही प्रसन्न हुए। उनके मनमें शुद्ध आनन्दकी लहरें उठने लगीं। पर शुद्ध आनन्दकी वे लहरें अधिक समय तक न ठहर सकीं; थोड़ी ही देर बाद उन्हें अपने वेषका ध्यान करके कुछ लज्जा और कुछ घबराहट जान पड़ने

लगी। धीरे धीरे यह लज्जा और घबराहट इतनी बढ़ गई कि प्रसन्नतासे हँसनेवाला उनका मुख संकोच और भयसे नीचा हो गया।

जयसागर सरोवरके बीचवाले द्वीपमें जानेकी इच्छा विजयाको मन ही मन दबा रखनी पड़ी। उसने छत्रसालसे नावको किनारेकी ओर उस स्थानपर ले चलनेके लिए कहा जहाँसे वह विमलदेवके साथ अपनी नाव पर पहले सवार हुई थी। नाव जल्दी जल्दी किनारेकी ओर बढ़ने लगी। उस समय जयसागर सरोवरमें चन्द्रमाकी जो छाया पड़ रही थी उसे देखनेसे मानो जान पड़ता था कि नाव और चन्द्रमामें शर्त्त लगी हुई है। विमलदेवकी वह बेहोशीवाली कल्पना अब न रह गई थी। आकाशके चन्द्रमा, वहाँके स्वर्गीय सुख और छत्रसालकी मित्रता आदिका अब उन्हें ध्यान न रह गया था। वे इस संसार, ओड़छेके राजमहल और वहाँके कष्ट, मत्सर और कपट आदिकी बातें सोच रहे थे। उनके जो नेत्र पहले स्वर्ग-सुखकी कल्पनासे चमक रहे थे, वे अब इस संसारके संकटोंका ध्यान करके निस्तेज होते जाते थे। वे सोचने लगे कि यदि मैं सदा अपने इसी कल्पनामय जगत्में रहता तो बहुत अच्छा होता। यदि यह जयसागर सरोवर मुझे प्रेम-शून्य माताके मायाजालसे बाहर निकाल देता तो बहुत ही उत्तम होता। मैं नित्य अनीति, अन्याय और द्वेष आदिसे पूर्ण घटनायें देखनेसे तो बच जाता। अब मुझे फिर अपनी माँके अधीन होना पड़ेगा, उसकी कठोर और अनुचित आज्ञायें माननी पड़ेंगी। हे ईश्वर! इन झंझटों और कष्टोंसे क्योंकर छुटकारा होगा?

ज्यों ज्यों विमलदेवकी विचार-शृंखला बढ़ने लगी त्यों त्यों जयसागरका किनारा पास आने लगा। अन्तमें नाव किनारेपर लग गई, पर विमलदेव उस समय तक अपने विचारोंमें ही मग्न थे। उन्हें ऊपर आकाशमें, नीचे जयसागरके जलमें और सामने नावपर केवल चन्द्रमा ही दिखलाई देता था। उस चन्द्रमासे बिछुड़नेका ध्यान करके वे बहुत दुःखी हुए। छत्रसालके साथ रहनेके लिए वे उस समय संसारके सारे सुखोंको लात मार सकते थे। पर सोचते सोचते उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। वे अनजानमें ही विजयाका हाथ पकड़कर नावपरसे नीचे उतर पड़े।

जब विजया और छत्रसाल नावसे उतर चुके तब छत्रसालने विजयासे कहा,—"विजया! हमारे देश बुन्देलखण्डपर भयंकर आपत्ति आई है। आज

तक दिल्लीके यवनोंने यहाँके पवित्र देवस्थानोंको तोड़नेका साहस नहीं किया था। पर अब यह स्थिति अधिक समय तक टहरती नहीं दिखलाई देती। अभी उस दिन विन्ध्यवासिनी देवीके शृंगारके समय ही रणदूलहखाँ अपने सिपाहियोंको साथ लेकर पहुँच गया था। परन्तु पूर्व-जन्मोंकी पुण्याईसे महोत्सवमें किसी प्रकारका विघ्न न पड़ा; रणदूलहखाँ कैद हो गया। पिताजी यह बात अच्छी तरह जानते थे कि रणदूलहखाँको कैद करना मानो दिल्लीपतिको युद्धका निमंत्रण देना है। पर साथ ही वे यह भी समझते थे कि उसे छोड़ दिया जायगा तो हम लोगोंके तैयार होनेसे पहले ही भारी आपत्ति आ जायगी। इसी लिए उन्होंने रणदूलहखाँको कैद कर लिया। आज नहीं तो चार दिन बाद यह खबर दिल्ली तक पहुँच ही जायगी और थोड़े ही दिनोंमें बुन्देलखण्डमें मुसलमानोंका प्रवेश और उपद्रव आरम्भ हो जायगा। ऐसे विकट अवसरपर राष्ट्रोद्धारके कार्यमें यथाशक्य सहायता देना प्रत्येक बुन्देलेका परम कर्तव्य है। बुन्देलखण्डपर मुसलमानोंकी चढ़ाई होनेके समय भी यदि हम लोग आजकी तरह परस्पर वैरभाव रक्खेंगे तो बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताकी आशा सदाके लिए नष्ट हो जायगी और देश मुसलमानोंकी अधीनतामें चला जायगा। तुम अपने हाँड़ेरके राजमहलमें चली जाओगी और विमलदेव ओड़छेके राजप्रासादमें पहुँच जायँगे; पर अपने अपने स्थानपर पहुँचकर तुम लोगोंको भोग-विलास और आनन्द-मंगलमें न फँस जाना चाहिए। बहुत बढ़िया भोजन करनेके समय जरा इस बातका भी ध्यान रखना कि तुम्हारी हजारों बहनें दाने दानेके लिए तरस रही हैं। मखमली गद्दोंपर लेटनेके समय अपनी प्रजाकी हीनावस्थाका भी विचार करना। अधिकार जतलानेके समय जरा यह भी सोच लेना कि तुम्हारी प्रजापर और स्वयं तुमपर मुसलमानोंका कितना अधिकार है। इस बातको अच्छी तरह समझ रक्खो कि जिस प्रकार बिना प्राणके शरीर व्यर्थ होता है उसी प्रकार बिना स्वतन्त्रताके राष्ट्र निरर्थक होता है। जहाँ तक हो सके आरजू करके, समझाके बुझाके, जिद करके यहाँ तक कि बिगड़के अपने माता-पिताको देशकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेके लिए उद्यत करो। अच्छा, अब जाओ। विलम्ब हो रहा है। तुम्हारा डेरा यहीं पास ही है।"

इतना कहकर छत्रसाल अपनी नाव फिर खेने लगे। विजया और विमलदेव दोनों जहाँके तहाँ पत्थरकी तरह खड़े रह गये। छत्रसाल बीचवाले द्वीपकी

ओर तेजीसे अपनी नाव ले जा रहे थे। जब वे बहुत दूर चले गये तब विमलदेव मानो अपनी विचारतन्द्रासे जाग्रत हुए। उन्होंने विजयासे कहा,—

"विजया! छत्रसालने हम लोगोंको जो काम सौंपा है, क्या वह हम लोगोंसे पूरा हो सकेगा?"

विज०—"चाहे पूरा हो और चाहे न हो, पर मैं उसके लिए अपनी शक्ति भर प्रयत्न अवश्य करूँगी। जब जब माताके मनमें स्वदेशाभिमान उत्पन्न होगा तब तब मैं उन्हें और भी बढ़ावा दूँगी। अपने यहाँके प्रधान और दूसरे सरदारोंको इस सुन्दर मार्गकी ओर प्रवृत्त करूँगी और अन्तमें पिताजीसे भी चम्पतराय और छत्रसालका अनुकरण करनेकी प्रार्थना करूँगी। यदि राष्ट्रोद्धारके कार्यमें वे किसी प्रकारका विघ्न डालेंगे अथवा उसके विरुद्ध कोई प्रयत्न करेंगे तो उन्हें ठीक मार्गपर लाना माताका, मेरा, प्रधानका और सारी प्रजाका प्रधान कर्तव्य होगा।"

विम०—"पर विजया! मैं क्या करूँ? चाहे कोई कितनी ही युक्तियाँ क्यों न लड़ावे, कितनी ही प्रार्थनायें क्यों न करे, कितनी ही धमकियाँ क्यों न दिखलावे पर मेरी माता कभी अपना हट न छोड़ेंगी, कभी अपने विचार न बदलेंगी। मुझे तो इस बातका तनिक भी विश्वास नहीं है कि जो कार्य युवराज छत्रसालने हम लोगोंको सौंपा है उसका एक अंश भी मुझसे हो सकेगा। मैं क्या करूँ?"

विज०—"तुम? तुम युवराज दलपतिरायका अनुकरण करो। जब तुम्हें यह निश्चय हो जाय कि तुम अपने प्रयत्नमें सफल न होगे तब ओड़छेके युवराज-पदका त्याग कर दो और स्वतन्त्रता देवीके झण्डे-तले जाकर राष्ट्र सेवाके लिए अपना शरीर अर्पण कर दो। ओड़छेके राजप्रासादमें भोग-विलास करनेवाला युवराज हाथमें खड्ग लेकर, माता पिताका तिरस्कार कर दे और समरभूमिमें जाकर स्वतन्त्रताके लिए लड़ने लगे। उस समय ओछड़ेकी सारी प्रजा उसीका साथ देगी। उस समय वह कभी हीरादेवीका दबाव नहीं मानेगी और तुरन्त अपने युवराज, अपने भावी राजाकी सहायता करनेके लिए सब प्रकारसे तैयार हो जायगी।"

विम०—"पर यदि स्त्री-वेष धारण किये हुए तुम्हारे सामने खड़ा होनेवाला विमलदेव युवराज न हो, वह पुरुष न हो तब?"

विजया अकचकाकर विमलदेवकी ओर देखने लगी। अन्तमें उसने कहा,—“ क्या तुम्हारा यह पुरुष-वेष दिखौआ है ? क्या ओड़छेके राजाको कोई युवराज नहीं है ? ”

विमलदेव उत्तर देनेको ही थे कि इतनेमें उन्होंने देखा कि एक नौकर उनको ढूँढ़ता हुआ उसी तरफ आ रहा है। उन्होंने तुरन्त आड़में जाकर अपना वह वेष उतार दिया और पहलेवाला पुरुष-वेष धारण कर लिया।

विजयाकी समझमें यह बात बिलकुल न आई कि यदि विमलदेव वास्तवमें पुरुष नहीं हैं तो वे पुरुषके वेषमें क्यों रहते हैं। रास्तेमें वह बार बार उनके मुँहकी ओर देखती जाती थी, पर विमलदेव उससे एक शब्द भी न बोले।

+ + + +

आठवाँ प्रकरण।
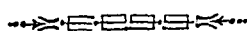
बन्धु-द्रोहका फल।

यदि धर्म्मके विचारसे देखा जाय तो परोपकारवृत्ति–जिसके अनुसार मनुष्य दूसरोंके भलेके लिए ही प्रयत्न करता है, दूसरोंको सुखी करनेके उद्योगमें लगा रहता है और अपना तन, मन और धन दूसरोंके लिए ही अर्पित कर देता है–अवश्य ही बहुत साधु-वृत्ति जान पड़ती है; पर यदि राष्ट्र–हितकी दृष्टिसे देखा जाय तो यह वृत्ति मानो स्वाभिमानकी जड़में लगनेवाला कीड़ा और मनुष्यके पौरुषको जला देनेवाली आग है। कंचुकीराय ! तुम्हारा जन्म बुंदेलखंडमें ही हुआ है न ? तुम बुन्देलोंके ही वंशज हो न ? जिन प्रतापशाली वीरोंने यह समझकर कि बुन्देलखंडकी पवित्रभूमि बुन्देलोंके लिए ही है, वहाँके अन्न और जल पर बुन्देलोंका ही अधिकार है और सर्वसत्ताधारी परमेश्वर या उसके प्रतिनिधिके अतिरिक्त और कोई उस देश पर शासन नहीं कर सकता; समरभूमिमें लहूकी नदियाँ बहाई हैं, तुम्हारा जन्म उन्हींके वंशमें हुआ है न ? तुम्हारे शरीरमें बुन्देलोंका खून दौड़ता है, तुम्हारे नेत्रोंमें बुन्देलोंका तेज झलकता है, तुम्हारे हृदयमें बुन्देलोंका मन उपस्थित है। इतना होने पर भी तुम अपने आपको गीदड़ समझ कर आज क्या काम करनेके लिए तैयार

हुए? तुमने दिल्लीके शासकों और अधिकारियोंका विलास देखा है; बुन्देलखण्डकी प्रजाकी दीन हीन अवस्था तुम्हारी आँखोंके सामने है। तुमने दिल्लीके सुल्तानोंका अधिकार देखा है, अपनी प्रजाकी अनुकम्पनीय पराधीनता तुम्हारी आँखोंके सामने है। आज दिल्लीके यवन-राजकर्मचारियों और उनके दूसरे भाइयों पर आनन्द, विलास, ऐश्वर्य और अधिकारकी मानो निरन्तर वर्षा होती है और तुम्हारी बल्कि बुन्देलखण्डकी सारी प्रजा पर दरिद्रता, दुःख और पराधीनताका पहाड़ गिर रहा है। ऐसे अवसर पर ढाँड़ेरके राजकुलमें न्यायी परमेश्वरने इस उद्देश्यसे तुम्हें जन्म दिया था कि ऐसी विपत्तिके समय तुम अपनी प्रजाकी रक्षा करोगे, उनके संकट दूर करके उनका वैभव बढ़ाओगे और उन्हें दासत्वके भयंकर जालमें न फँसने दोगे। पर इसके विपरीत तुम बड़े ही घातक निकले। प्रत्यक्ष परमेश्वरसे तुमने दगाबाजी की। तुम अपने भाई-बन्दों और प्रजाका नाश करनेके लिए तैयार हो गये। तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो। अधिकारमदसे अन्धी रोशनआराकी खूब खुशामद करो। स्वाभिमान, पौरुष आदि गुणोंको लात मार कर रोशनआरासे मनमानी झूठी सच्ची बातें कहो। चम्पतरायके स्वतन्त्रता-सम्बन्धी प्रयत्नोंमें खूब विघ्न बाधायें डालो। तुम्हारी इस धोखेबाजीके कारण बुन्देलखण्डपर संकटका जो आघात होगा, वही बुन्देलखण्डके सोये हुए क्षात्रतेजको जगावेगा और समस्त बुन्देलोंके मनमें प्रत्याघातकी इच्छा उत्पन्न हो आवेगी।

कंचुकीरायको रोशनआरा बेगम मन ही मन एक खिलौना और दिल्लगीकी चीज समझ रही थी। कंचुकीराय एक ओर घुटने टेक कर चुपचाप बैठे हुए थे और बेगमको प्रसन्न करनेके लिए तरह तरहसे नम्रताका भाव दिखलानेका प्रयत्न कर रहे थे। बेगम तो उन्हें एक तमाशा समझ कर मन ही मन प्रसन्न हो रही थी और कुछ मुस्करा भी रही थी; पर कंचुकीराय अपने मनमें यह समझकर फूले न समाते थे कि बेगम हम पर बहुत ही प्रसन्न है और इस समय हमें अपना कार्य्य सिद्ध करनेका बहुत अच्छा अवसर मिलेगा। थोड़ी देर तक कंचुकीराय केवल इसी आसरे चुपचाप बैठे रहे कि बेगम स्वयं कुछ बात चीत आरम्भ करें और मैं उनका इशारा पाकर अपनी सारी बातें उन्हें कह सुनाऊँ। उन्हें स्वयं पहले बोलनेका साहस न होता था। थोड़ी देर तक दोनों ही चुपचाप बैठे रहे। अन्तमें रोशनआराने हँसते हुए कहा,—

"राजा साहब! इस बार तो आप बहुत दिनों पर आए। इतने दिनोंमें आपकी सूरत इतनी ज्यादः बदल गई है कि आप पहचाने ही नहीं जाते।"

केतु०—"जहांपनाहका फरमाना बहुत ही बजा है। जबसे मैं यहांसे गया हूं, अकसर बीमार रहा करता हूं। इसके अलावा रियासत और रिआयाकी फिक्र भी रहा करती है। अब वह पहलेकी सी बेफिक्री नहीं रह गई। एक तो फिक्र और दूसरे बीमारीकी ज्यादती; अगर दोनोंने मेरी सूरत बदल दी हो तो हुजूर-आलिः को ताज्जुब न होना चाहिए।"

रे०—"राजासाहब! दरबार-देहलीकी सरपरस्तीमें रहकर भी आप लोगोंको रियासत और रिआयाकी फिक्र लगी ही रही! उसकी फिक्र तो शाही खान-दानको होनी चाहिए। सलतनतका सारा कारोबार और इन्तजाम तो सिर्फ आप ही लोगोंकी बहबूदियतके लिए है। आप ही लोगोंकी बेहतरी, तरक्की और हिफा-जतके लिए इतनी झंझट और परेशानी उठाई जाती है। मगर फिर भी आप लोग हमेशा फिक्रमन्द रहनेकी शिकायत किया करते हैं।"

केतु०—"बेगम-आलियःका फरमाना बहुत ही दुरुस्त है। बेशक तख्त-देहलीने मुल्कके कोने कोनेमें अमन कायम करनेमें अपनी तरफसे कोई बात उठा नहीं रक्खी। रिआयाकी हरतरहकी जरूरतें बखूबी पूरी हो चुकी हैं और बाकी पूरी हो रही हैं। राजाओंको भी अब पहलेकी सी दिक्कतें नहीं उठानी पड़तीं। डाकुओं, लुटेरों, बदमाशों और बागियोंसे शाही फौजें उनकी हिफाजत करती हैं। आपसके झगड़े बखेड़ोंके लिए उन्हें जंगकी जरूरत नहीं पड़ती; दरे-दौलतसे ही उन सबका फैसला हो जाता है। तमाम मुल्ककी रिआया भी बहुत खुशहाल है। मगर फिर भी रियासतके मुतल्लिक अकसर ऐसी छोटी मोटी बातें हुआ करती हैं जिनका इन्तजाम हम लोगोंको खुद ही करना पड़ता है। और सबसे बड़ी फिक्र जो हम लोगोंको दामनगीर रहती है वह सलतनत-देहलीकी खैरख्वाही और बेहबूदीकी है—और जिसे हम लोग अपना सबसे बड़ा फर्ज सम-झते हैं। (उपयुक्त अवसर देखकर) और इस मौकेपर भी मैं यही फर्ज बजा लानेके लिए दरे-दौलतपर हाजिर हुआ हूँ।"

रे०—"बेशक, बेशक। राजा साहब! आप लोगोंकी वफादारी, खैरख्वाही और नमक-हलालीका तख्ते-देहलीको बहुत बड़ा भरोसा है। आप लोग जिस खूबी और मुस्तैदीसे अपना फर्ज बजा लाते हैं और सलतनतकी बड़ी बड़ी

खिदमतें अंजाम देते हैं-वह काविल तारीफ है! (कुछ ठहरकर) हाँ, शायद आपने कहा था कि इस वक्त भी आप एक फर्ज अदा करनेके लिए यहाँ आये हैं?"

कंचुकीराय उस समय फूले अंगों न समाते थे। वे समझते थे कि ज्यों ही मैं चम्पतराय और छत्रसालके उपद्रवका समाचार वेगमको सुनाऊँगा त्यों ही वड़ी भारी सेना यहाँसे चलकर वुन्देलखण्ड पहुँचेगी और उनका सारा राज्य तहस-नहस कर देगी। उन लोगोंको अपने दुष्कर्मोंका पूरा पूरा दण्ड मिल जायगा और दूसरे विद्रोही राजाओंको भी इसीके साथ दण्ड मिल जायगा और तव वुन्देलखण्डमें सदाके लिए शान्तिका राज्य हो जायगा। इसके अतिरिक्त उन्हें स्वयं वहुत वड़ा खिताव या ओहदा मिलनेकी प्रवल आशा थी। इस लिए उन्होंने वड़ी प्रसन्नतासे सव समाचार वेगमको सुनानेका साहस किया!

कंचु०—"वेगम-आलियः पर यह वात वखूवी जाहिर है कि वुन्देलखण्डमें जहाँ सलतनत-देहलीके वड़े वड़े खैरख्वाह और वफादार वाजगुजार राजे हैं वहाँ कुछ थोड़ेसे सरकश और वागी जमींदार भी हैं जो कभी कभी मौका पाकर लूटपाट करते और रिआयाके अमनमें खलल डालते हैं। इधर वहुत दिनोंसे उन सरकश और वागी जमींदारोंको ठीक रास्तेपर लानेके लिए दरवार-देहलीकी तरफसे कोई इन्तजाम नहीं हुआ है। इसी वजहसे उन लोगोंके हौसले यहाँतक वढ़ गये हैं कि अव उनके हमले जहाँपनाहके खास नमकख्वारों और फौजों तक पर होने लगे हैं।"

रो०—"क्या कहा? जहाँपनाहके खास नमकख्वारों और फौजों तक पर उनके हमले होने लगे हैं? शायद नमकख्वारोंसे यहाँ आपका मतलव रणदूलहखाँसे तो नहीं है जिन्हें वुन्देलखण्ड पहुँचे अभी ज्यादः अरसा नहीं हुआ और जो वहाँके सरकशोंको दवाने और वुतखानोंको ढानेके लिए भेजे गये थे?"

कंचु०—"वेगम-आलियः का खयाल वहुत ही सही और दुरुस्त है। इस मौके पर मैं उन्हीं रणदूलहखाँ साहवके वारेमें कुछ अर्ज करनेके लिए दरे-दौलत पर हाजिर हुआ हूँ।"

रो०—(कुछ चिन्तित होकर) "हाँ हाँ कहिए, आप क्या कहना चाहते हैं?"

कंचु—" हुजूर-वालियः को ज्यादह फिक्रमन्द न होना चाहिए। यह मुआमला कुछ ऐसा काविल-तशवीश नहीं है; ऐसे वाकआत तो अक्सर हुआ ही करते हैं। और उनका खातिरख्वाह इन्तजाम भी वहुत मामूली तौर पर हो सकता है।"

रोश०—(कुछ खिझलाकर) "हाँ हाँ, आखिर मालूम भी तो हो कि क्या हुआ।"

कंचु०—(थोड़ी देर तक कुछ सोचकर) " कुछ नहीं, सिर्फ हुआ यह कि रणदूलहखाँको..........."

रोश०—(जल्दीसे) " क्या रणदूलहखाँको किसीने कैद कर लिया ?"

कंचु०—' वेगम-आलियः का खयाल वहुत ही वजा है। खाँसाहव अपने कुछ वहादुर सिपाहियोंको साथ लेकर चित्रकूटमें विन्ध्यवासिनीका मान्दिर ढानेके इरादेसे जा रहे थे। वहीं एक पहाड़ी पर वागी चम्पतरायने धोखेसे उन्हें गिरफ्तार कर लिया।"

रोश०—(कुछ क्रुद्ध होकर) " क्या कहा, इतने वहादुर और जंगजू सरदारको एक मामूली राजेने कैद कर लिया और आप लोग उसकी कुछ भी मदद न कर सके ?"

कंचु०—(घवराकर) " वेगम-आलियः, वह मौका ही ऐसा था कि खाँसाहव गिरफ्तार हो गये। वात यह हुई कि खाँ साहव अपने तीस चालीस चुने हुए सिपाहियोंको साथ लेकर मन्दिरकी तरफ जा रहे थे। रास्तेमें चम्पतरायका लड़का छत्रसाल अपने साथ दो चार वदमाशोंको लिए हुए मिल गया। वस फिर क्या था। शाही सिपाहियोंको देखकर वह उनके पाछे हो लिया और मौका पाकर पीछेसे उसके साथियोंने दो चार सिपाहियोंपर वार भी किये। लड़ाई शुरू हो गई। घंटों खूव तलवारें चलीं। खाँ साहव और उनके साथियोंने वह वह हाथ दिखलाए कि खुदाकी पनाह। घमसान मच गया। मगर आखिरमें उनके कुछ साथी मारे गये और कुछ अपने दूसरे साथियोंको वुलानेके लिए पासहीकी छावनीमें चले गये। वस, मौका पाकर छत्रसालने खाँ साहवको गिरफ्तार कर लिया।"

रोशनआरा वहुत चकराई। उसकी समझमें यह वात विलकुल न आई कि छत्रसाल और उसके दो चार वदमाश साथियोंने रणदूलहखाँके तीस-चालीस साथियोंको क्योंकर मार भगाया और उन्हें किस तरह गिरफ्तार कर लिया। उसने वड़े आश्चर्यसे कहा,—

"कैसे ताज्जुबकी बात है कि छत्रसालके दो चार बदमाश साथी तीस चालीस शाही सिपाहियों पर गालिब आए!"

अब कंचुकीरायको खाँ साहबवाली बात याद आई। उन्होंने अपनी बातकी मरम्मत करनेके लिए कहा,—

"मैं यह अर्ज करना तो बिलकुल भूल ही गया कि इसी मौके पर खुद चम्पतराय भी एक बड़ी फौज लेकर वहाँ पहुँच गया। यह सारा फसाद तो उसीका खड़ा किया हुआ है।"

पर रोशनआराने कच्ची गोलियाँ नहीं खेली थीं। वह कंचुकीरायकी घबराहटसे समझ गई थी कि दालमें कुछ काला है। जब उन्होंने अपनी बातकी मरम्मत की तब उसका सन्देह और भी बढ़ गया। उसने समझा कि कंचुकीरायकी बातें परस्पर विरोधी हैं। तो भी रोशनआराने पूछा, "तब फिर क्या हुआ?"

कंचु०—"चम्पतरायने उन्हें अपने डेरेमें ले जाकर कैद कर दिया। बड़ी दिक्कतोंसे आधी रातके वक्त भेस बदलकर मैंने खाँसाहबसे मुलाकात की। उन्होंने मुझे देहली जाकर सारा माजरा बेगम-आलियःकी खिदमतमें अर्ज करनेकी सलाह दी। चलते वक्त उन्होंने मुझे निशानीके तौर पर वह कटार भी............"

रोश०—(बात काटकर) "कटार कैसी?"

कंचु०—"वही हाथी दाँतके दस्तेवाली कटार जिस पर हुजूर-वालियः की तस्वीर बनी हुई है और जिसे मैं कई बार........."

अब कंचुकीराय बड़ी विपत्तिमें पड़े। उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। वह कटार कहाँसे दिखलाते? कटार तो छत्रसालने वहीं खेमेमें उनसे छीन ली थी। बेगमकी बातोंके रंग ढंगसे वे समझ गये थे कि उसे मेरी बातोंका विश्वास नहीं है। अब यदि कटारके विषयमें भी मैं सच्ची सच्ची बात कह दूँगा तो बेगमका अविश्वास और भी बढ़ जायगा। इस लिए वे बहुत ही चिन्तित हुए। उन्हें विपत्तिका पहाड़ सामने दिखलाई देने लगा। उन्हें चुप देखकर रोशनआराको कुछ क्रोध आया, उसने कर्कश स्वरमें कहा,—

"राजा साहब! आप कहते थे न कि रणदूलहखाँने वह कटार आपको दी थी? वह कटार कहाँ है? दिखलाइए।"

कंचु०—" जिस वक्त मैं खेमेसे निकलने लगा उस वक्त छत्रसालने आकर वह कटार मुझसे छीन ली । इसी लिए तो मैं—"

रोश०—" क्या खूब ! एक छोटासा लड़का और आपसे कटार छीन ले ! अजी हजरत ! कहीं चम्पतरायके साथ आपकी दुश्मनी तो नहीं है जिसका बदला चुकानेके लिए आप यह जाल बिछाना चाहते हैं ? "

कंचु०—" हम लोग तो दरबार-देहलीके पुराने नमकख्वार और—"

रोश०—" खैर ! ये सब बातें होती रहेंगी । फिलहाल आप दो माहतक देहलीमें ही कयाम करें। इस अरसेमें बुन्देलखंडसे सही-सही खबरें आ जायँगी।"

कंचु०—" हुजूर..."

पर रोशनआरा उस समय अधिक ठहरना न चाहती थी । उसने एक लौंडीको इशारा किया । लौंडीने उनसे कहा,—" राजा साहब ! अब आप तशरीफ ले चलें । ये सब बातें दोबारा कदम-बोसी हासिल करने पर कीजिएगा । "

लाचार कंचुकीरायको मनकी बातें मनमें ही दबा रखनी पड़ीं । उनके वहाँसे उठकर चले जानेपर रोशनआराने अपनी लौंडीको हुक्म दिया कि शाहीमहलके किसी कमरेमें कंचुकीरायके ठहरनेका इन्तजाम कर दिया जाय और दरवाजेपर सख्त पहरा बैठा दिया जाय ।

कंचुकीराय दो महीनेके लिए देहलीमें नजरबन्द हो गये ।

* * * * *

नवाँ प्रकरण ।

मृतकका शृंगार ।

सामगढ़के जिस घनघोर युद्धमें शाहजहाँ बादशाहके प्रियपुत्र दाराकी फौजके धुर्रे उड़ गये थे और जिसमें विजय प्राप्त करनेके कारण औरंगजेबके लिए दिल्लीके तख्तका मार्ग बिलकुल निष्कंटक हो गया था, उस युद्धको समाप्त हुए आज प्रायः छः वर्ष हो चुके थे । तख्तके रास्तेमें पड़नेवाले भाईरूपी काँटोंको निर्मूल करनेके उपरान्त अपना मायावी फकीरी बाना उतार-

कर आलमगीरने उसके अन्दर छिपा हुआ अपना राज-तृष्णाका रक्तवर्ण वेष दीवान-ए-आममें बैठकर लोगोंको दिखलाना आरम्भ कर दिया था। इस संसारकी असारताका उपदेश करनेवाली उनकी जीभ अब ऐहिक सारसर्वस्वके गीत गाने लगी थी। सब लोग धीरे धीरे समझने लग गये थे कि मक्के जाकर खुदाकी यादमें अपना शेष जीवन बितानेका उसका विचार केवल ढोंग और दिखौआ था। जो मुल्ला और काजी उसे भाईकी हत्या करनेवाला समझकर उसे कुरान-सम्मत बादशाह माननेके लिए तैयार न थे, उसे अभी उन सबका समाधान करना बाकी था। अपने राजसिंहासनको सदाके लिए स्थायी और दृढ़ बनानेके अभिप्रायसे अमीरों, सरदारों और राजाओं आदिपर उपाधियों और पदवियोंकी वर्षा करनेका उसका विचार अभी तक पूरा न हुआ था। जो लोग यह समझते थे कि औरंगजेबने हत्या और रक्तपात, बन्धुद्रोह और पितृद्रोह, अभिलाष और अमानुषता आदिकी सहायतासे दिल्लीके राज्यासनपर अधिकार किया है, उन लोगोंको अभी उसे अपनी मुट्ठीमें लाना और उनका मुँह बन्द करना था। दिल्लीका तख्त पानेमें चम्पतराय आदि जिन राजाओंने उसे सहायता दी थी अभी उनकी खातिर बाकी थी। विकट प्रसंगोंपर जिन लोगोंको उसने वचन दिये थे वे लोग उसकी पूर्तिका समय निकट समझ रहे थे। वह स्वयं भी लोगोंको सन्तुष्ट और वशीभूत करनेके लिए उन वचनोंकी थोड़ी बहुत पूर्ति करना चाहता था। यही नहीं बल्कि राज्य पा चुकनेपर उसने इन सब कामोंके लिए एक दिन भी निश्चित कर दिया था। सारे राज्यमें यह घोषणा हो चुकी थी कि रमजान महीनेकी पचीसवीं तारीखको देहलीमें एक बहुत बड़ा शाही दरबार होगा और उस दरबारमें उपस्थित होनेके लिए बड़े बड़े सरदारों और राजाओंके पास निमंत्रण भी पहुँच चुके थे। यह ठीक है कि स्वयं औरंगजेबको भोग-विलास या नाच-रंग बिलकुल ही पसन्द न था; पर देहली दरबारके ऐश्वर्यसे दर्शकोंकी आँखें चौंधिया देनेके लिए और अंशतः दिल्लीकी प्रजाको प्रसन्न करनेके लिए औरंगजेबने सब लोगोंपर अपनी यह इच्छा प्रकट कर दी थी कि रमजान मासके अन्तिम सप्ताहमें दिल्लीकी सारी प्रजा खूब उत्सव करे, सारे शहरमें नाच-रंग और रोशनी हो, दरबारमें आनेवाले मेहमानोंका तरह तरहसे स्वागत किया जाय और इन सब कामोंके लिए सरकारी खजानेसे खर्च लिया जाय। इस समारम्भका एक अंग और था। शहरके उत्तर ओर जमुना-किनारे बड़े मैदानमें चार

दिनोंतक जनाना मेला—मीना बाजार लगनेको था, जिसमें सारे नगरकी स्त्रियाँ एकत्र होनेको थीं। बादशाहने शाहीमहलकी बेगमों, शाहजादियों, मुगलानियों, पहरेवालियों आदि सभी स्त्रियोंको स्वच्छन्दतापूर्वक उस मेलेमें जानेकी आज्ञा दे दी थी। दिल्लीकी अमीर और गरीब सभी स्त्रियाँ बड़ी उत्कंठासे उस दिनकी प्रतीक्षा कर रही थीं। विशेषतः बड़े घरोंकी और परदेमें रहनेवाली स्त्रियाँ तो उसके लिए और भी अधिक चिन्तित थीं,—कब रमजानकी चौबीसवीं तारीख आवेगी, कब हम लोगोंको इस कैदखानेसे छुट्टी मिलेगी, कब हम लोग खुले मैदानमें घूम सकेंगी, इन पिंजरोंसे निकलकर खुली हवामें फिरनेका दिन कब आवेगा!

दिल्लीके निवासी नाचरंग और सैर तमाशेका मजा लेनेके लिए, सरदार और अमीर खिताब और सनदें पानेके लिए, वजीर और मशीर अपनी अपनी शान और मरतबा दिखलानेके लिए और शाही महलोंकी स्त्रियाँ बाहरकी हवा खानेके लिए बड़ी ही उत्कण्ठासे रमजानकी चौबीसवीं तारीखकी प्रतीक्षा कर रही थीं। स्वयं औरंगजेबको भी कई बार रमजानके उस आन्तिम सप्ताहका ध्यान हो चुका था। वह प्रायः बैठा बैठा कभी तो ध्यान करता था कि मैं अपनी सारी प्रजाकी राजनिष्ठाका पात्र हो गया हूँ, कभी समझता कि काजियों और मुल्लाओंका मैं समाधान कर चुका हूँ और वे प्रसन्न होकर मुझे दुआयें दे रहे हैं; कभी खयाल करता था कि मैं अपने दरबारमें बैठा हुआ हूँ और अमीर वजीर आपसमें धीरे धीरे एक दूसरेसे कह रहे हैं कि सचमुच आलमगीर बादशाह पैगम्बर है; कभी समझता कि मैं दीवान-ए-आममें ऊँचे तख्त-ताऊस पर बैठकर लोगोंको खिताब देता और इस प्रकार अपने राज्यकी नीव दृढ़ करता हूँ—आदि आदि अनेक प्रकारके विचार उसके मनमें उठा करते थे।

धीरे धीरे शअबानका महीना समाप्त होने लगा। दिल्लीकी उत्सव-प्रिय प्रजाकी उत्कण्ठा भी बराबर बढ़ने लगी। सब लोग समझने और कहने लगे कि पाँच दिन बाद रमजान शुरू हो जायगा। सब लोग इसी प्रतीक्षामें प्रसन्न हो रहे थे कि शीघ्र ही स्वच्छ आकाशमें रमजानका बाल-चन्द्र प्रकाशित होने लगेगा। पर बीचमें ही लोगोंको आकाशमें बादल छाते हुए दिखलाई पड़े। एकाएक सारे नगरमें यह समाचार फैल गया कि बादशाह सलामत बहुत सख्त बीमार हो गये हैं। सब लोग कहने लगे कि अब कहाँका दरबार और कहाँका नाच

तमाशा। भावी उत्सवकी आशासे सारे नगरनिवासियोंको जो आनन्द हो रहा था उसमें बड़ा भारी विघ्न आ पड़ा। शाहीमहलोंकी स्त्रियाँ यह समझकर बहुत दुखी हुई कि हम लोगोंको चार दिनोंकी जो स्वतंत्रता मिलनेको थी अब वह भी न मिलेगी। पर तो भी राजकर्मचारियोंने दरबारकी तैयारियाँ करनेमें कोई कसर नहीं की, सब काम बराबर जारी रहे।

दरबारके लिए जो दिन मुकर्रर हुआ था वह धीरे धीरे नजदीक आने लगा। रमजानके बाल-चन्द्रका भी जन्म हो गया; वह धीरे धीरे बढ़ने लगा। पर तो भी किसीको इस बातका पता न लगता था कि बादशाह सलामतकी तबीयत कैसी है; वे दिन पर दिन अच्छे हो रहे हैं या उनके दुश्मनोंका मर्ज बढ़ता जाता है। सब लोग अपना अपना अनुमान लगाने लगे और सुनी-सुनाई या अपनी अनुमित बातोंपर वादविवाद करने लगे। साधारण प्रजा तो दूर रही, स्वयं वजीरों और दरबारियोंको भी बादशाहकी तबीयतका हाल न मालूम होता था। यहाँतक कि शाही खानदानके लोगों, बेगमों, शाहजादियों और शाहजादों तकको भी कुछ पता न चलता था। तरह तरहकी अफवाहोंमें यह बात भी मिलकर फैल गई थी कि सैकड़ों सशस्त्र तातारी स्त्रियोंके पहरेमें रोशनआरा बेगम बादशाहकी सेवा-शुश्रूषामें लगी हुई हैं और नित्य ऐसे शाहीफर्मान जारी होते हैं जिनपर शाहीमोहर लगी होती है। स्वयं रोशनआरा बेगमको इस बातकी बहुत बड़ी चिन्ता थी कि कहींसे किसीको कोई बात न मालूम हो।

दिल्लीके निवासियोंको अब इस बातकी बहुत ही चिन्ता होने लगी थी कि रमजानकी पचीसवीं तारीखको दीवान-ए-आममें शाही दरबार होगा या नहीं और उससे एक दिन पहलेसे आरम्भ होनेवाले उत्सव किए जायँगे या नहीं। वजीर और दरबारी भी इस विषयमें कुछ नहीं कह सकते थे। पर हाँ, वे लोग दरबारकी सब तैयारियाँ अवश्य कर रहे थे। आनेवाले राजाओं, जागीरदारों और सरदारोंके ठहरने और मेहमानदारी आदिका सब प्रबन्ध शीघ्रतासे हो रहा था। ऐसी अवस्थामें प्रजा भी दुविधामें पड़ी रहनेपर भी, बराबर तैयारियाँ करती जाती थी; उसके लिए और कोई उपाय ही न था।

राजा जयसिंह दिल्ली-दरबारके और विशेषतः स्वयं औरंगजेबके बड़े विश्वास-नीय और प्रेमपात्र थे। यद्यपि औरंगजेब अच्छी तरह समझता था कि हिन्दू काफिर हैं, बागी हैं, दगाबाज हैं, मुल्कका इन्तजाम और हुकूमत करनेकी लिया-

कत उनमें जरा भी नहीं है, वे लोग बिलकुल नालायक होते हैं, तथापि वह राजा जयसिंहको हिन्दुओंमें अपवाद-स्वरूप समझता था और उन्हें बड़े बड़े काम सौंपता था। पर जयसिंहको भी, इस बातका निश्चय नहीं था कि दरबार होगा या नहीं।

रमजानका तेईसवाँ चाँद भी बीत गया। चन्द्रमाके अमृतमय तुषारमें नहाई हुई दिल्ली भगवान् सहस्ररश्मिके दिए हुए सुवर्णवस्त्र पहनने लगी। उसके सारे अंग आभूषणों और पुष्पमालाओंसे लद रहे थे। उसके चारों ओर हरी हरी घासके बढ़िया गालीचे बिछे रहे थे। उन्हीं गालीचों पर पड़ी पड़ी वह स्वच्छ आकाशके दर्पणमें अपना स्वरूप देखनेमें मग्न थी। उसके सौंदर्य पर मोहित होकर अमूर्तिक वायु भी उसकी खूब सेवा कर रहा था। वायुके साथ आनेवाली सुगन्धिका आनन्द लेती हुई और तरह तरहके मनोहर गीत गुनगुनाती हुई आनन्दसे वह अपना शृंगार कर रही थी। राजा जयसिंहने शाहजहाँ बादशाहके समयका दिल्लीका शृंगार देखा था। तो भी उन्हें दिल्लीका आजका शृंगार अवर्णनीय जान पड़ता था। यमुना किनारेवाले अपने सुंदर महलकी छत पर बैठकर वे दिल्लीका शृंगार देख रहे थे। दिल्लीने इतनी आनन्दपूर्ण और गंभीर वृत्ति धारण की थी पर तो भी जयसिंहके मुखपर विषाद और खिन्नता दिखलाई पड़ती थी। वे हिन्दू थे। उन्हे दिल्लीका मुसल्मानी शृंगार, मुसल्मानी आनन्द पसन्द न आता था। वे यह सोचकर दुःखी हो रहे थे कि अपने पतिके बीमार होते हुए भी, उसके जीते या मरे होनेमें शंका होने पर भी, दिल्ली तरह तरहके आभूषण पहनकर आनन्दसे बैठी हँस रही है, औरंगजेबके संकट-कालमें भी उसे यह उत्सव इतना पसन्द आ रहा है! कुलटा दिल्लीका शृंगार देखकर उन्हें आनन्द न होता था। इस लिए वे उधरसे अपनी दृष्टि हटाकर यमुनाके विमल और सुन्दर प्रवाहको देखने लगे। पर उसमें भी उन्हें, दिल्लीके संसर्गके कारण चंचलता और कुटिलता जान पड़ने लगी। अन्तमें उन्होंने उस बड़े मैदानकी ओर दृष्टि डाली जिसमें मीना बाजार लगनेको था और जो इन्द्रभुवनकी तरह सजाया गया था। उन्होंने देखा कि सारे मैदानमें हरियालीका मखमली फर्श बिछा हुआ है और उसपर बने हुए रास्ते आदि बेल बूटे और चारखानेके से जान पड़ते हैं। रास्तेके दोनों तरफ खूब सजी सजाई दूकाने लगी हैं। जगह जगह सुगन्धित फूलोंसे सजावट हो रही है;

गुलाब और केवड़ेके जलके हौज भरे हुए हैं । इन्तजाम और पहरेके लिए इधर उधर घूमनेवाली सुन्दर तुर्की स्त्रियोंके सिवा उस समय वहाँ और कोई दिखाई न पड़ता था। जगह जगह पर बहुतसे सुंदर चौक बने थे जिनके चारों ओर बढ़िया रास्ते थे। सभी रास्तों पर दूकानें लगीं थीं और दो रास्तोंके बीचके स्थानमें बढ़िया चमन लगे हुए थे। बीचमें गानेवालियोंके बैठनेके लिए चौकियाँ बनी हुई थीं। वहाँका मनोरम दृश्य देखकर राजा जयसिंह कुछ शान्त और सन्तुष्ट हुए। जिस समय वे वहाँकी शोभा देखनेमें इतने मग्न थे उसी समय एक सेवकने आकर उन्हें राजा चम्पतरायके आनेका समाचार दिया। जयसिंहने बड़ी प्रसन्नतासे उसे चम्पतरायको वहीं लानेकी आज्ञा दी। सेवकके चले जाने पर वे स्वयं उठकर खड़े हो गये और चम्पतरायकी प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी ही देरमें राजा चम्पतराय वहाँ पहुँच गये। दोनों बड़े प्रेमसे गले मिले और कुशल मंगल आदि पूछनेके उपरान्त बैठकर बातें करने लगे। राजा जयसिंह अपने जिन पहले विचारोंमें मग्न थे, उन्हींकी चर्चा भी उन्होंने आरम्भ कर दी। जब चम्पतरायको यह मालूम हुआ कि राजा जयसिंह अभी यही शोभा निरखनेमें मग्न थे तब उन्होंने कुछ दुःखी होकर कहा,—

" आपका आधेसे अधिक जन्म यही देखते देखते बीता है कि आपके देशभाइयोंका धन बलपूर्वक कर-स्वरूप अथवा दण्डके रूपमें लिया जाता है और उसी धनसे इतना भोग-विलास और आनन्द मंगल होता है; तो भी न जाने किस प्रकार आपका मन मृतकाका शृंगार, मृतककी शोभा देखनेमें लगता है। कौरव पाण्डवके समयसे लेकर पृथ्वीराज चौहानके समयतक धीरे धीरे इन्द्रप्रस्थनगरी बराबर दुर्बल ही होती गई और अन्तमें जयचन्द्र राठौरके हाथका जहरका प्याला पीकर तो मानो वह मर ही गई। उसी मरी हुई इन्द्रप्रस्थ नगरीका नाम दिल्ली रखकर यवन बादशाहोंने नए सिरेसे उसका शृंगार आरम्भ किया। रक्तपात, हिंसा, सहधर्म्मनाश और अनीति आदिके धब्बोंसे कलंकित आभूषण पहनाकर उन लोगोंने इसे विभूषित किया। पर तो भी क्या हुआ? मृतक तो मृतक ही है। "

जय०—" आपका कहना बहुत ठीक है । पर आप जानते हैं, हम लोग संख्यामें दिन पर दिन छीजते हैं, बलमें लगातार घटते जाते हैं और मानवी गुणोंसे बराबर रहित होते जाते हैं। दासत्वकी ओर हम लोगोंकी प्रवृत्ति बढ़ती

जाती है और हम लोग स्वयं अपने पैरोंमें कुल्हाड़ी मारते हैं। आप सरीखे दो चार नर-रत्न देशके उद्धारके लिए जो प्रयत्न करते हैं उसमें विघ्न बाधायें डालने और उसका विरोध करनेवालोंकी संख्या बराबर बढ़ रही है। ऐसी दशामें देशका कल्याण कहाँ! खैर, यह सब बातें तो होती ही रहेंगी, कहिए आप तो कदाचित् कलके दरबारके लिए ही यहाँ पधारे होंगे?"

चम्प०—"इधर बहुत दिनोंसे आपके दर्शन नहीं हुए थे। दरबारका निमंत्रण भी मुझे पहले ही पहुँच चुका था। इनके अतिरिक्त प्राणनाथ प्रभुका बहुत दिनोंसे आग्रह था कि कुमार छत्रसालको दिल्लीके शाहीदरबारका सब रंग ढंग दिखला दिया जाय। इन सब कारणोंसे मैंने यही निश्चय किया कि चलो दिल्ली हो आऊँ।"

जय०—"चलिए, अच्छा ही हुआ। युवराज छत्रसाल भी आपके साथ ही हैं न?"

चम्प०—"हाँ युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय दोनों मेरे साथ हैं।"

जय०—"युवराज दलपतिराय कौन?"

चम्प०—"सागरके युवराज।"

जय०—"सागरके युवराज? शुभकरणके पुत्र?"

चम्प०—"हाँ।"

जय०—"वे आपके साथ किस प्रकार आये?"

चम्प०—"अपने बन्धुद्रोहके कामोंमें किसी प्रकारकी बाधा न पड़े, इसी लिए शुभकरणने अपने पुत्रको अपने राज्यसे निकाल दिया है। दलपतिरायकी कुमार छत्रसालके साथ मित्रता है, इसी लिए वे आजकल हमारे ही यहाँ रहते हैं और हम लोगोंके साथ ही यहाँ आये हैं।"

इसके उपरान्त थोड़ी देरतक इधर उधरकी बातें होती रहीं। अन्तमें चम्पतराय और जयसिंह छतपरसे उतर कर नीचे आये। नीचे आकर जयसिंहने देखा कि उनके पुत्र रामसिंहने चम्पतराय और उनके साथ आये हुए लोगोंके आतिथ्य-सत्कार और रहने आदिका बहुत उत्तम प्रबन्ध किया है। अपने पुत्रकी कार्य्य-कुशलता देखकर जयसिंह बहुत सन्तुष्ट हुए।

× × × × ×

दसवाँ प्रकरण ।

श्मजानका चौवीसवाँ चाँद ।
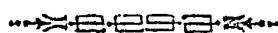
श्मजानके चौवीसवें चाँदको प्रकाशसे सहायता देनेके लिए परोपकारी भगवान् अंशुमाली पश्चिम दिशामें धीरे धीरे चमकने लगे । अपने परोपकारी पतिका श्रम दूर करनेके लिए पश्चिमा सुन्दरी विश्रान्ति गृहके द्वार पर सलज्ज खड़ी थी । पशु पक्षी आदि अपनी अपनी भाषाओंमें अपने उपकारकर्त्ता ग्रहराजका गुणानुवाद गाने और उनसे फिर जल्दी ही लौट आनेके लिए प्रार्थना करने लगे । अनेक पुरुषोंने अपने जीवनदाताको जाते हुए देखकर दुःखसे अपने शरीर भूमिपर गिरा दिये । सूर्य-विकासी कमल शोकमें मग्न जान पड़ने लगे । किसी योग्य राजाके मरनेके किनारे होने पर सारी प्रजाको अपने भावी राजाको अयोग्य देखकर जो निराशा होती है वही निराशा उस समय भी चारों ओर फैली हुई दिखाई देती थी । पर दिल्लीका उस समयका ठाठ कुछ निराला ही था । तरह तरहके लोगोंसे भरा हुआ चाँदनी चौक, वहाँके उत्सवप्रिय लोगोंकी उत्सवसम्बन्धी योजना और अनेक जातियोंके, अनेक वेषोंके और अनेक भाषा-भाषी लोगोंको देखकर यही ज्ञान होता था कि हम इस संसारका साधारण नगर नहीं वल्कि परमेश्वरकी अनन्त रचनाशक्तिका एक वहुत वड़ा उदाहरण देख रहे हैं । भगवान् अंशुमालीका वियोगकाल समीप जानकर सारा वनस्पति-कुल, समस्त पशुपक्षी-वर्ग और मनुष्यजातिका एक वहुत वड़ा भाग मानो निराशाके समुद्रमें गोते खा रहा था। इतना होने पर भी अकेली दिल्लीको उत्सव, आनन्द और सुखमें मग्न देखकर यदि उसे इस विश्वसे वाहरका नगर मान लिया जाय तो इसमें आश्चर्य या हानि ही क्या है ! वहाँके आनन्दपूर्ण उत्तेजित स्वर, हँसी-दिल्लगी और ठहाके आदि सुनकर मानो यही जान पड़ता था कि लोग अस्त होनेवाले सूर्य्यसे कह रहे थे कि तुम्हारा वियोग हम लोगोंके लिए सुखदायक ही होगा ।

पर, तुम कौन हो ! यह तुम क्या कर रही हो? जरा अपने चारों ओर देखो तो सही । इस मेलेमें इतनी स्त्रियाँ एकत्र हैं; पर इनमेंसे एक स्त्री भी तो तुम्हारे

समान निराश और दुःखी नहीं जान पड़ती। वे कैसे आनन्द और सुखमें हँस बोल रही हैं। पर वे तुम्हें दिखलाई ही क्यों पड़ने लगीं ? तुम्हारी आँखें तो आँसुओंसे भरी हुई हैं। सूर्यके भावी वियोगके कारण तो तुम्हें दुःख नहीं हो रहा है ? पर तुम तो दिल्लीमें हो। उस विश्वसे बाहर हो जिसमें लोग सूर्यके वियोगसे दुःखी होते हैं। तब फिर तुम्हें दुःख किस बातका है ? अरे, यह तो बेचारी फूट फूट कर रोने लगी। इसके रंग ढंग और कपड़ों आदिसे तो मालूम होता है कि यह शाही महलकी रहनेवाली और बहुत प्रतिष्ठित है। शाही महलोंसे भी आज क्या अद्भुत स्वरूप निकले हैं। बादशाहने अपने महलकी बेगमों आदिको चार दिनोंतक बिना रोक टोक बाहर निकल कर मीना बाजारमें जानेकी आज्ञा दे दी है। ऐसी दशामें स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करना छोड़कर तुम यह क्या करने लगीं ? स्वतन्त्रताके इन चार दिनोंके बीत जाने पर तुम्हें फिर उसी शाही महलकी दीवारोंके अन्दर शोक और दुःखमें अपना जन्म बिताना पड़ेगा। जरा चौककी तरफ चलो। वहाँ बड़े बड़े सरदारों और अमीरोंकी लड़कियाँ बड़े ठाटबाटसे अपनी अपनी दूकानें लगाकर बैठी हुई हैं। तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि उनका सौन्दर्य्य जितना अधिक है, उनकी दूकानकी चीजोंका दाम भी उतना ही बढ़ा चढ़ा है। देखो, बातकी बातमें उस सुन्दरीने चीनीका बना हुआ नकली हीरा उस युवक अमीरजादेके हाथ सवा लाख रुपयेको बेच डाला। यह सवा लाख रुपये उस नकली हीरेका दाम नहीं है बल्कि उस सुन्दरीके प्रेमका मूल्य है। पर तुम तो उस ओर ध्यान ही नहीं देतीं। अगर वह चौक तुम्हें अच्छा न जान पड़ता हो तो तुम उस बगलवाले दूसरे चौकमें चलो। वहाँ जरूर तुम्हारा मन बदल जायगा। उधर स्त्रियों और पुरुषोंके झुण्डके झुण्ड जा रहे हैं। वहाँकी शोभा अवर्णनीय है। वहाँ शाही खानदानकी बहुतसी युवतियाँ अपनी छटा दिखला रही हैं। वह सौन्दर्य्यशालिनी राजकुमारी बदरुन्निसा आज राजपूत-रमणीका वेष धारण करके बैठी है। उसके सौन्दर्य्यके सामने आसपासकी अनगिनत युवतियोंका सौन्दर्य्य फीका पड़ रहा है। क्या ऐसी स्वर्गीया सुन्दरीका दर्शन भी तुम्हारे लिए सुखदायक नहीं होता ? तुम्हारी निराशा तो और भी बढ़ती जा रही है। तुम इधर कहाँ चलीं ? इतनी चहल पहल और इतनी रौनककी जगह छोड़कर तुम यमुना-किनारेकी तरफ क्यों चलीं ? मनुष्योंसे तुम इतनी उदासीन क्यों हो गईं ? यमुनाका निर्जन तीर तो सुखाभासके पीछे पड़े

हुए योगियों और तपस्वियों अथवा लुक-छिप कर आनन्द लेनेवाली प्रणयी युगुल-जोड़ियोंके लिए है। तुम्हारा तो इन सबसे कोई मतलब नहीं जान पड़ता तुम्हारे हृदयसे प्रणयकी इच्छा तो बहुत दिनों पहले निकल चुकी है और तुम्हारे मनमें विरक्तिकी लहरें उत्पन्न होनेमें अभी बहुत समय बाकी है। तब फिर तुम यमुनाके निर्जन तीरकी ओर क्यों जा रही हो?

वह कहाँ और क्यों जा रही है, यह बात वह स्वयं भी नहीं जानती थी। वह सोचने लगी,—रातके दुःखदायी स्वप्नसे जबसे परोपकारी सहस्ररश्मिने अपने कोमल हाथोंसे मेरा छुटकारा कराया तबसे मैं बराबर सारे दिल्ली नगर और उसके आसपासके मैदानों और खण्डहरोंमें घूम रही हूँ, तब भी मुझे अपने कार्य्यके सिद्ध होनेका जरा भी लक्षण दिखाई नहीं देता। आजकी आशाका अन्तिम सूर्य्य भी अस्त हो चला। अब मुझे फिर सदाके लिए दुःख, चिन्ता, संकट और पराधीनताके घनघोर अन्धकारमें पड़ना पड़ेगा। इन विचारोंसे उसका मन मानो विदीर्ण हो गया। वह बार बार अस्त होनेवाले सूर्य्यकी ओर देखती थी और अधिकाधिक शोकाकुल होकर व्यथित हृदयसे आगे पैर रखती थी। कदम कदम पर उसे यही मालूम होता था कि मेरे आगेकी जमीन मेरे आँसुओंसे भीगी हुई है।

सूर्य्यके भावी वियोगसे व्याकुल वह प्रौढ़ा धीरे धीरे चलती हुई यमुना-किनारे पहुँची और पत्थरकी एक चट्टान पर बैठ गई। वह समझती थी कि मेरी तरह सारा संसार दुःख-सागरमें डूबा हुआ है। उसकी कल्पनाने जो चित्र उसकी आँखोंके सामने खींचा था उसमें उसने देखा,—यमुना अपनी निसर्ग-सिद्ध चंचलता छोड़कर गम्भीर हो गई है, पशु-पक्षी दुःखपूर्ण स्वरसे रो रहे हैं, वायु गहरी साँस ले रहा है और अखिल वनस्पतिकुल दुःखी होकर अपने जीवनदाताकी ओर देख रहा है। उसने समझा कि सृष्टिके आरम्भसे, मानव-जातिकी बाल्यावस्थासे, मानव-जातिकी उन्नतिके लिए सूर्य्य भगवान्ने निरन्तर प्रयत्न किया है, सब प्राणियोंसे बढ़कर अलभ्य ज्ञान मनुष्यको दिया है। तो भी लोगोंमें दिनपर दिन द्रोह, नीचता, दुष्टता और विश्वासघात आदिको बढ़ते देखकर भगवान् अंशुमाली बहुत ही सन्तप्त हुए हैं और पश्चिमी समुद्रमें कूद पड़नेके लिए तैयार हैं।

उस शोकमग्न स्त्रीने क्षितिज पर स्थिर सूर्य्यको देखकर आप ही आप कहा,—"बेचारे सूर्य्यकी अब बहुत ही थोड़ी आयु बच गई है । दो एक क्षणमें ही अब वह अस्त हो जायगा । और तब ? चारों तरफ अन्धेरा ही अन्धेरा हो जायगा।" कुछ ठहर कर उसने फिर आप ही आप कहा, "अंशुमाली ! तुम्हारी और प्राणनाथकी दशा बिलकुल एक ही सी है । दोनों ही अपने वैभव-कालमें सम्पूर्ण तेजसे प्रकाशित होते थे । उस समय किसीमें इतनी शक्ति नहीं थी कि तुम लोगोंके तेजपूर्ण मुखकी ओर देखे । पर अब दोनोंकाही तेज नष्ट हो चला है । इसी लिए जो छोटे छोटे तारे अब तक आकाशमें छिपे हुए थे वे भी तुम्हारी ओर मत्सरपूर्ण दृष्टिसे देखकर हँस रहे हैं । अन्धकारसे प्रीति गाँठनेकी इच्छा रखनेवाली पश्चिमा, तुममें नये तेजका संस्कार होनेसे पहले, स्वर्लोकसे तुम्हें बाहर निकाल देनेके लिए कितना प्रयत्न कर रही है ! पश्चिमा ! सचमुच तू रोशनआराकी तरह दुष्ट और धोखेबाज है । रोशनआराकी तरह तुझमें भी हृदय नहीं है । रोशनआराकी तरह तुझे भी अपने आरामके सिवा और कुछ दिखलाई नहीं देता । अधिकार-लालसा और विषय-पिपासाकी आगने रोशन-आराकी कोमल-मनोवृत्तियोंकी तरह तेरी कोमल मनोवृत्तियोंको भी जलाकर राख कर दिया है । प्रत्यक्ष अंशुमालीके नाशका प्रयत्न, अंशुमालीके साथ विश्वास-घात यह तेरा कितना अघोर साहस है ! और तब भी तू मुस्कराती हुई वह साहस कर रही है ! पर तेरी यह मुस्कराहट, तेरी यह हँसी—लज्जा और विन-यसे मिली हुई हँसी—रोशनआ[illegible] कभी दिखलाई नहीं देती । तब क्या तू रोशनआरा नहीं है ? [illegible] भाई बादशाहको मार डालनेके लिए विष देनेवाली रोशनआरा नहीं है [illegible] यह सूर्य बादशाहकी तरह मरनेके किनारे नहीं है ! नहीं, यह सूर्य पश्चिम समुद्रमें कूदना नहीं चाहता । दिन भर परिश्रम करनेके कारण यह थक गया है और अब अपनी प्रिय सहधर्मिणी पश्चिमा सुन्दरीके साथ अपने अन्तःपुरमें प्रवेश कर रहा है । रात भर विश्राम करनेके उपरान्त सवेरे यह फिर नई आशासे, नये तेजसे, पूर्ण क्षितिजपर चम-कने लगेगा । पर प्राणनाथ ! मुझ अभागिनीके भाग्यमें तुम्हारी किस अवस्थाको देखना बदा है ? यह सूर्य्य, आकाश-गंगामें संचार करनेवाला यह सूर्य्य, कल फिर नये तेजसे चमकने लगेगा; पर वह सूर्य्य, रोशनआराके चंगुलमें फँसी हुआ दिल्लीका सूर्य्य, कल इस संसारमें......।"

"दयामय प्रभो! आजतक मैंने तुमसे जितनी प्रार्थनायें की हैं, क्या उन सबका यही फल होगा? भगवती विन्ध्यवासिनी, मैं अनन्य भावसे तुम्हारी शरणमें आई हूँ; तो भी तुम्हें मुझपर दया नहीं आती। मैं अबतक यवनके घरमें रहकर भी जीती रही! भगवती इस अनाथ अभागिनीके पातकोंकी राशि क्या तुम्हारी दयाको अलंघ्य जान पड़ती है? शुद्ध प्रेम और पवित्र कर्तव्यका ध्यान रखकर ही मुझे यवनी बनना पड़ा था; पर क्या केवल इसी लिए मैं तुम्हारे अतर्क्य प्रेम और दयासे वंचित हो जाऊँगी? नहीं! नहीं! भगवती! इस अनाथ अबलाका परित्याग न करो।"

विन्ध्यवासिनीसे इस प्रकार करुण-स्वरमें प्रार्थना करते समय उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बराबर निकल रही थी। इस लिए बहुत देरतक उसका ध्यान उस मनुष्यकी ओर नहीं गया जिसे विन्ध्यवासिनीने कृपाकर उसकी सहायताके वास्ते भेजा था। वह फिर पहलेहींकी तरह अपने आपसे कहने लगी,—

"विन्ध्यवासिनी देवी! मैं आजतक यही समझती थी कि तुम्हारे हाथोंके आयुध जितने भीषण और क्रूरता-दर्शक हैं तुम्हारा अन्तःकरण उतना ही सरल और दयापूर्ण होगा। पर अब मुझे विश्वास हो गया कि तुम्हारा मन उन अस्त्रोंसे जरा भी कम उग्र और क्रूर नहीं है। तुम्हारी एक बालिका अपने परिवारके लोगोंसे अलग होकर, अपनी जाति और धर्मसे भ्रष्ट होकर, परायों और विधर्मियोंके हाथमें पड़ गई है; और इस समय वह तुमसे इतनी विनीत होकर प्रार्थना कर रही है। लेकिन [illegible] ट्टान पर बैठ[illegible] नहीं पसीजता। जान पड़ता है कि तुममें करुणा और [illegible] डूबा हुआ है[illegible] तुम कैसी पतित-पावनी हो!"

"शान्त हो! शान्त हो[illegible] [illegible]में उसने [illegible]न्ध्यवासिनीको दोष मत दो। अपने दोषोंका फल भोगते [illegible] देवताओं पर दोषारोपण मत करो।"

ये अपरिचित शब्द सुनते ही वह स्त्री कुछ सजग हुई। उसने बड़ी कठिनतासे अपनी आँखोंके आँसू पोंछकर सामने देखा। एक युवक शान्त और गम्भीर होकर खड़ा हुआ उसकी ओर देख रहा था।

स्त्रीने पूछा,—"तुम मुझे क्या समझते हो?

यु०—"यही कि तुम अनीति मार्गपर चलनेवाली हो।"

स्त्री०—"नहीं, कभी नहीं। तुम मुझे अनीति पथपर चलनेवाली बतलाकर मेरा ही अपमान नहीं कर रहे हो बल्कि सत्य, न्याय और धर्म्मका अपमान करते

हो। शायद तुम यह समझते होगे कि विषय-वासनामें पड़कर मैं अपनी जाति और अपने धर्म्मसे भ्रष्ट हुई हूँ; पर तुम्हारा यह समझना भूल है। तुम मुझे अनीतिके जालमें जैसी फँसी हुई समझते हो, मैं वैसी नहीं हूँ।"

यु०—"तब फिर तुम्हारा ऐसा वेष क्यों है? तुम तो जातिकी हिन्दू जान पड़ती हो। नहीं तो तुम विंध्यवासिनी देवीसे सहायताकी प्रार्थना न करतीं।"

स्त्री—"यद्यपि मैं शरीरसे यवनी हो गई हूँ तथापि मनसे अभी तक हिन्दू ही हूँ। अपने हिन्दू भाइयोंकी कल्याणकी इच्छा करने, हिन्दू धर्म्म पर आस्था रखने और हिन्दू देवताओंकी भक्ति करनेमें क्या हानि है?"

यु०—"तुम मनसे तो हिन्दू और शरीरसे यवनी हो। ऐसी विषम-दशामें नीतिकी रक्षा कैसे हो सकती है? शरीरसे यवनी बनना, दूसरेकी विषय वासनाके लिए अपना शरीर अर्पण कर देना, मानो नीति और धर्म्मके बन्धनोंको तड़ातड़ तोड़ देना है।"

स्त्री—"ऐसी दशामें जब कि अपनी अयोग्यता और अकर्मण्यता आदिके कारण अथवा अधिकार, पद और उपाधि आदि पानेकी लालसासे लोग अपनी बहनों और बेटियोंको अपनी इच्छासे, अथवा विवश होकर ही सही, शाहीमहलोंमें भेज देते हैं, तब फिर उनपर इस प्रकार क्रोध क्यों करते हैं? उन्हें इतनी घृणाकी दृष्टिसे क्यों देखते हैं? साहस करके इस अन्यायको दूर करनेका प्रयत्न छोड़कर मुझ अनाथ और अपरिचित स्त्रीपर शब्दोंकी वृथा वर्षा करनेमें ही तुम अपनी बहादुरी क्यों समझते हो? जिन्हें नीतिका इतना घमण्ड हो उन्हें पहले यह देख लेना चाहिए कि स्वयं उनमें कितनी नीति है और तब दूसरोंकी नीति परखनी चाहिए।"

यु०—(गरम होकर) "यवनसत्ताका तेज देखकर जो मनुष्य गीदड़ोंकी तरह छिप जाता हो वही नामर्द शान्त होकर तुम्हारी ऐसी बातें सुन सकता है। पर अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए समरभूमिमें अपना लहू बहानेवाला बुन्देला नीतिकी इस प्रकार हत्या होते हुए नहीं देख सकता। आँखें खोलकर जरा अच्छी तरह देखो। महेवाका कुमार छत्रसाल तुम्हारे सामने खड़ा है। तब तुम्हें मालूम होगा कि मुझे दूसरोंकी अनीति परखनेका अधिकार है या नहीं?"

अन्न जलके अभावके कारण मरते हुए दुष्कालग्रस्तके सामने अच्छे अच्छे पक्वान्नोंसे भरी हुई थालियाँ रखनेपर उसे जितना आनन्द होता है अथवा

विलकुल मुरझाई हुई लतापर पानी पड़नेसे वह जिस प्रकार हरी होने लगती है, ठीक उसी तरह उस स्त्रीका मलिन मुख भी छत्रसालकी वातें सुनकर प्रफुल्लित हो गया। अव तक उसका जो अपमान हुआ था उसे एकदम भूलकर वह स्त्री एकाग्र दृष्टिसे छत्रसालकी ओर देखती हुई वोली,—"कुमार, तुम चम्पतरायके पुत्र हो न? महेवाके कुमार हो न?"

क्षणभरमें ही उस स्त्रीमें इतना विलक्षण फेरफार देखकर छत्रसालको वड़ा ही आश्चर्य हुआ, उन्होंने सिर हिलाकर कहा,—"हाँ।"

स्त्री—"तव तो अवश्य ही मेरी प्रार्थना दिल्लीकी सीमाको पार करके भगवती विन्ध्यवासिनीके कानोंतक पहुँच गई। मातेश्वरी विन्ध्यवासिनी! इस अभागिनीने उद्वेग और आवेशके कारण तुम्हारी अवहेलना की है, उसके लिए इसे क्षमा करना। तुम पतितोंकी पावन करनेवाली हो, तुम्हारी दयाका अपात्र कोई नहीं है। इस वालिकाकी प्रार्थना पर ध्यान देकर तुमने संसारको अपनी अनन्त दयाका परिचय दिया है। भगवती! मैं समझती हूँ कि इस विकट समयमें तुमने युवराज छत्रसालको स्वयं अपना प्रतिनिधि वनाकर मेरी सहायताके लिए यहाँ भेजा है। कुमार, अपना दाहिना हाथ आगे वढ़ाओ। मैं उसमें यह राखी वाँधूँगी। मैंने सुना था कि कलवाले दरवारमें चम्पतरायजी आनेवाले हैं। उसी समय मैंने समझ लिया था कि इस विपत्तिके समय केवल वे ही मेरी सहायता कर सकेंगे। आज प्रातःकालसे मैं वरावर [illegible] ढूँढ़ने और उन्हें यह राखी वाँधनेके लिए इधर उधर मारी मारी फिर र[illegible]न्तमें निराश होकर मैं यहाँ आई। पर यहाँ भाग्यवश तुमसे भेंट हो [illegible] अव मुझे चम्पतरायजीको ढूँढ़नेकी आवश्यकता नहीं है। अव मुझे विश्वास हो गया है कि तुम मेरे सहायक वनकर इस आपत्तिसे मेरी रक्षा करोगे। इस राखीको स्वीकार करके तुम मेरे रक्षक भाई वनो।"

इतना कहकर वह स्त्री युवराज छत्रसालके हाथमें राखी वाँधनेके लिए आगे वढ़ी। पर युवराज छत्रसाल विना अपना हाथ वढ़ाये उत्तरोत्तर प्रसन्न होते जानेवाले उसके मुखकी ओर देखते हुए चुपचाप खड़े रहे। इस पर वह स्त्री कुछ दुःखी होकर वोली,—

"छत्रसाल! क्या तुम्हें मेरे भाई वननेमें कुछ अपमान या संकोच जान पड़ता है? मैं यवनी होकर यवनके महलोंमें रहने लगी, क्या इतनेसे ही तुमने

समझ लिया कि मैं नीतिपथसे हट गई ? तुम यह ध्यान छोड़ दो और मुझे अनाथ और असहाय समझ कर मेरी सहायताके लिए तैयार हो जाओ। यदि तुम यह राखी न बँधवाओगे, बन्धुत्वके इस चिह्नकी अवज्ञा करोगे और केवल एक कल्पित कारणसे मेरे सहायक न बनोगे तो आर्य स्त्रियाँ तुम्हें दया-रहित समझ कर तुम्हारा मुंह देखनेमें भी अमंगल समझेंगी। जब यह राखी तुम्हारे हाथमें बँधेगी तब तुम्हारे मनमें सच्चे बन्धुत्वका संचार होगा और जिस स्त्रीको तुम अब तक नीतिभ्रष्ट समझते रहे हो उसीको तुम अपनी बहन समझने लगोगे।"

छत्रसालने गम्भीर होकर अपना हाथ आगे किया। स्त्रीने पहले उनके वीर-श्री-युक्त मुखकमलकी ओर, फिर उनकी आगे बढ़ी हुई बलिष्ठ कलाईकी ओर और अन्तमें अपने हाथकी राखीकी ओर समाधानपूर्वक देखा। ज्यों ही वह उनके हाथमें राखी बांधना चाहती थी त्यों ही उसे उनके हाथमें कुछ दिखलाई दिया। वह मारे आनन्दके राखी बाँधना भूल गई। छत्रसाल और भी चकित होकर कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें बहुत प्रसन्न हो कर वह स्वयं ही बोल उठी,—

"बहुत ठीक, अब मेरा काम अवश्य ही पूरा हो जायगा! देवी विन्ध्य-वासिनी! तुम्हारी इस अनन्त कृपाके लिए मैं अगले वर्ष तुम्हारे वार्षिकमहोत्सवके समय हीरों और मोतियोंका थाल चढ़ाऊँगी। पर युवराज! तुम्हारा ऋण मैं किस प्रकार चुकाऊँगी?"

छत्र०—(आश्चर्यसे) "मेरा कैसा ऋण? मैंने तुम्हारा कौनसा उपकार किया है?"

स्त्री—"तुमने अभी तो मुझ पर कोई उपकार नहीं किया है; पर शीघ्र ही मुझपर उपकार करनेका तुम्हें अवसर मिलेगा।"

थोड़ी देरतक बड़े ही ध्यानसे छत्रसालके हाथकी कटारकी ओर देखते हुए उसने पूछा,—"यह कटार तुम्हें कहाँसे मिली?"

छत्र०—"यह कटार मैंने ढाँड़ेरके राजा कंचुकीरायके हाथसे छीन ली थी।"

स्त्री—"इसके दस्तेपर जो तसवीर बनी हुई है, कभी उसपर भी तुम्हारा ध्यान गया था?"

छत्र०—"हाँ, यह तसवीर मैंने कई वार देखी है। कंचुकीराय वहुत दिनों-तक दिल्लीके शाहीमहलोंमें रहे थे। मैं समझता हूँ कि वहीं कभी किसी शाह-जादीने उन्हें यह कटार इनाममें दी होगी।"

स्त्री—"कुमार! इस कटारने अपनी मालकिनके हाथमें रहकर अनेक अमानुषिक कृत्य किये हैं। पर जान पड़ता है कि तुम्हारे पुण्यशील हाथोंमें पहुँचकर यह अपनी सारी क्रूरता भूल गई है। न्याय और अन्यायका जरा भी विचार न करके चुपचाप रक्तपात करना ही इसका काम है। तथापि तुम्हारे हाथमें रहकर कल यह अपनी दयाका एक वहुत ही उज्ज्वल प्रमाण देगी।"

छत्रसालने और भी चकित होकर कहा,—"मैं तुम्हारी वातोंका मतलव नहीं समझा। तुम्हारा क्या अभिप्राय है?"

स्त्री—पहले मुझे अपने हाथमें यह राखी वाँधकर वन्धुप्रेमका वन्धन दृढ़ कर लेने दो तव मैं तुम्हें सव वातें समझा दूँगी।"

इतना कहकर पहले तो उसने वड़े प्रेमसे छत्रसालके हाथमें राखी वाँधी और तव सन्तुष्ट होकर कहा,—"छत्रसाल! आजसे तुम मेरे भाई हुए। अव मुझे सव तरहकी आपत्तियोंसे वचाना तुम्हारा काम है। मेरी रक्षा करना अव तुम्हारा परम कर्तव्य हो गया। मातापिताके रक्तसे वने हुए भाई वहनके नातेसे भी वढ़कर वन्धुत्वका यह वन्धन है; इस लिए मेरे प्रति तुम्हारे कर्त्तव्य वहुत अधिक हैं।"

छत्रसालने गम्भीर होकर कहा,—"यह सव मैं अच्छी तरह समझता हूँ। तुम्हारी रक्षाके लिए अपने प्राणोंकी भी परवा न करना अव मेरा कर्त्तव्य हो गया है। मेरे पिता अपनी वातके कितने पक्के हैं, यह तुम अच्छी तरह जानती होगी। मैं उनका पुत्र हूँ। सच्चे बुंदेले वीरके लिए उसकी वातोंका मूल्य प्राणोंसे भी अधिक होता है। अव तुम मुझे अपना काम वतलाओ। तुमपर जो आपत्ति आई हो उसका पूरा विवरण मुझे सुनाओ। इसके वाद तुम्हें मालूम होगा कि मानवी धैर्य्य, मानवी शौर्य्य और मानवी कर्तव्यकी चरम सीमा किसे कहते हैं।"

छत्रसालकी करारी वातें सुनकर वह स्त्री और भी उत्तेजित हो उठी और अधिक गम्भीर जान पड़ने लगी। यद्यपि उसके चेहरे परसे प्रसन्नताकी छटा तनिक भी कम नहीं हुई थी, तो भी उसके मनके गम्भीर विचारोंका प्रतिविंव उसके चेहरेपर विना पड़े न रहा। कुछ देर ठहरकर वह वोली,—

"छत्रसाल! तुम जानते हो कि दिल्लीके शाहंशाह इस समय कैसे घोर संकटमें पड़े हुए हैं?"

छत्र०—"हाँ, मैं यह जानता हूँ कि वे बहुत ही बीमार हैं: और अभी यह भी निश्चय नहीं है कि कल वे दरबारमें आवेंगे या नहीं?"

स्त्री—"उनकी बीमारीका हाल सुनकर बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके लिए लड़नेवाले तुम लोग तो बहुत प्रसन्न हुए होगे न? शत्रुको आप-ही-आप नष्ट होते देखकर तुम लोग आनन्द मनाओगे न?"

छत्रसालने कुछ तो चकित होकर और कुछ आवेशमें आकर कहा,—"आनन्द! हमारा शत्रु रोगी होकर मरे और हम लोग आनन्द मनावें? शत्रुके मरने पर हम लोगोंको आनन्द अवश्य होता है! पर वह कब? जब हम अपने पराक्रमसे लड़कर समर-भूमिमें स्वयं उसके प्राण लें, तब! जब रोग, दुर्घटना अथवा अन्य किसी कारणसे शत्रु मरता है तब तो हम लोगोंको उतना ही दुःख होता है जितना अपने किसी सम्बन्धीके मरनेका।"

स्त्री—"बहुत ठीक। पर यह तो बतलाओ कि यदि कल ही बादशाह नीरोग होकर उठ बैठें और बुन्देलखण्डकी बची खुची स्वतंत्रता भी नष्ट कर देनेके लिए तैयार हो जाय, तब?"

छत्र०—"तब क्या? तब तो हमें और भी अधिक आनन्द होगा। जब स्वतंत्रता प्राप्त करनेका अवसर इतना निकट आ जायगा तब तो हम लोग और भी प्रसन्न होंगे और रणभूमिमें उनसे दो दो हाथ लड़कर स्वतंत्रता प्राप्त कर लेंगे।"

स्त्री—"छत्रसाल! तुम्हारे ऐसे उदार और दृढ़ वचन सुनकर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई। मुझे आपत्तिसे बचानेके लिए देवी विन्ध्यवासिनीने अपना बहुत ही योग्य प्रतिनिधि भेजा है। सुनो, मैं तुम्हें बतलाती हूँ कि तुम्हें क्या करना होगा। दिल्लीके जो शाहंशाह हिन्दू धर्म्मका नाश करना और इस्लाम धर्म्मका प्रचार करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं, हिन्दुओं और हिन्दुस्थानकी स्वतंत्रताके जो परम शत्रु हैं, तुम्हारे उद्देश्योंकी सिद्धिके मार्गमें जो सबसे बड़े कंटक हैं, अपनी विपत्तियोंको बढ़ाने और अपना मार्ग कंटकाकीर्ण करनेके लिए तुम्हें उन्हींके प्राणोंकी रक्षा करनी होगी, उन्हें मृत्युसे बचाना होगा।"

छत्रसालने चकित होकर कहा,—"बादशाह तो बहुत बीमार हैं, मैं उनकी रक्षा किस प्रकार कर सकता हूँ? मैं कोई वैद्य या हकीम नहीं हूँ। मुझसे किसी रोगीका क्या उपकार हो सकेगा? इसके लिए तो किसी अच्छे हकीमकी जरूरत है।"

स्त्री—"नहीं, यह बात नहीं है। बादशाहको वैद्य या हकीम, बल्कि प्रत्यक्ष धन्वन्तरी भी नहीं बचा सकते। यह बात बिलकुल ही झूठ है कि अब तक वे बीमार हैं। अपना दुष्ट उद्देश्य सिद्ध करने, अपना निन्दनीय काम पूरा करनेके लिए चारों तरफ यह झूठी खबर फैलाई जाती है कि बादशाह बीमार हैं। वे जबरदस्ती, दवायें आदि देकर केवल बेहोश कर दिये गये हैं। पर उनकी वह बेहोशी बहुत ही थोड़ी देरमें दूर की जा सकती है।"

छत्र०—"तब मुझे उसमें क्या करना होगा?"

स्त्री—"कल सूर्य्योदयके दो घड़ी बाद शाहँशाहको विप दिया जायगा। सब तैयारियाँ हो चुकी हैं और यह इन्तजाम किया गया है कि भरे दरबारमें बादशाहकी मृत्युका समाचार सुनाया जाय। यदि विप पिलानेसे उनके प्राण न निकलेंगे तो उनका सिर काट लिया जायगा। उन्हें इस संकटसे बचाना ही तुम्हारा कर्तव्य है।"

छत्र०—"हे ईश्वर! नीचता, क्रूरता और अनीतिकी हद हो गई। यदि जहरसे दिल्लीपतिके प्राण न निकले तो उनका सिर काट लिया जायगा! जिसने ये सब प्रपंच रचे हैं उसके सारे अंग पत्थरके ही होंगे। ऐसे पैशाचिक कार्य्योंको रोकनेके लिए इस राखीकी क्या आवश्यकता थी? जिसके मनमें नाम मात्रको भी दया होगी वह इस बातको सुनते ही अपने प्राणोंकी परवा न करके बादशाहकी सहायताके लिए दौड़ पड़ेगा। आलमगीर बादशाह केवल बुंदेलखण्डका शत्रु नहीं है; वह हिन्दू मात्रका शत्रु है। तो भी उसे विश्वासघात और षड्यंत्रसे बचानेके लिए हिन्दुस्थानका प्रत्येक मनुष्य तैयार होगा। राष्ट्रके हित और अहितकी दृष्टिसे वह अवश्य ही हमारा शत्रु है। लेकिन उससे अपना वैर निकालनेके लिए समरक्षेत्र खुला पड़ा है। एक साधारण मनुष्यके नातेसे औरंगजेब हमारा विश्वबन्धु है। ऐसे संकटके समय उसकी सहायता करना प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य है। मुझे उस नीच, पापी और अधमका नाम बतलाओ जिसने यह षड्यंत्र रचा है। कल सूर्योदयसे पहले ही मैं उसे उसके दुष्कर्म्मोंका फल चखा

देगा। बादशाहको जहर देनेवाला अथवा उससे काम न निकलने पर उसकी गरदन काटनेवाला कौन है?"

स्त्री—"कुमार! वह एक बहुत ही कोमलांगी स्त्री है।"

छत्र०—(बहुत आश्चर्यसे) "हैं! एक स्त्री औरंगजेबकी हत्या करना चाहती है? ऐसी पिशाचिनी स्त्री कौन है?"

स्त्री—"वही जिसकी तसवीर तुम्हारी कटारके दस्ते पर बनी हुई है।"

अनेक बार देखी हुई उस तसवीरको फिर एक बार ध्यानपूर्वक देखकर छत्रसालने कहा,—"यह तो एक रूपवती यवनी युवती है।"

स्त्री—"हाँ, यही रूपवती स्त्री बादशाहके प्राण लेने पर उतारू हुई है।"

छत्र०—"आखिर यह युवती है कौन?"

स्त्री—"शाहजहाँ बादशाहकी प्यारी कन्या रोशनआरा बेगम! मुमताजके पेटसे जनमी हुई औरंगजेबकी सगी बहन!"

छत्र०—"और वह अपने भाईको ही जहर देना चाहती है?"

स्त्री—"केवल जहर ही देना नहीं चाहती, बल्कि यदि उससे काम न निकले तो उनका सिर तक कटवा लेना चाहती है।"

छत्र०—"बहनका भाईके साथ यह व्यवहार! हे ईश्वर! ऐसे नीच और पातकियोंको तू घोर नरकमें क्यों नहीं भेज देता? इस संसारमें उन्हें क्यों रहने देता है? भला यह तो बतलाओ कि रोशनआरा बेगम अपने भाईका वध क्यों करना चाहती है?"

स्त्री—"शाहजहानखाँ नामक एक सरदारकी कन्याका बादशाहसे विवाह हुआ है; उसके साथ रोशनआराका बहुत मेल है। उसका छह बरसका एक लड़का है। रोशनआरा अपने भाईके प्राण लेकर दिल्लीके सिंहासन पर उसी लड़केको बैठाना चाहती है। उस समय रोशनआराको शासन-सुख भोगने और मनमाना आनन्द करनेका अवसर मिलेगा। अपने भाईकी हत्या करनेमें बेगमका नीच हेतु यही है।"

छत्र०—"और शाहजादा मुअज्जमका वह क्या प्रबन्ध करेगी?"

स्त्री—"वह अच्छी तरह समझती है कि जब कभी आवश्यकता होगी तब तलवारके एक हाथसे उसका भी अन्त करके अपना मार्ग निष्कंटक कर लूँगी। मैंने जो काम तुम्हारे सपुर्द किया है उसमें शाहजादा मुअज्जमसे बहुत सहा-

यता मिलेगी। पर सबसे बड़ी बात तो यह है कि जब तक यह कटार तुम्हारे पास है तब तक तुम्हें किसी प्रकारकी सहायताकी आवश्यकता ही नहीं है। इसकी सहायतासे तुम सैकड़ों तातारी स्त्रियोंके पहरेमेंसे होते हुए बेखटके बादशाह सलामतके कमरेके भीतर तक पहुँच जाओगे। शाहीमहलमें यह कटार तुम्हारी प्रत्येक इच्छा और आवश्यकताकी पूर्ति कर देगी। तात्पर्य यह कि जब तक यह कटार तुम्हारे पास रहेगी तब तक महलकी सारी तातारी स्त्रियाँ तुम्हारी सब आज्ञाओंका पालन करेंगी और तुम्हारे किसी कार्य्यमें बाधक न होंगी। इस समय पहले तुम मेरे साथ शाहीमहल तक चलो। वहाँ चलकर कलके लिए कर्त्तव्य निश्चित होंगे। अब मेरा मन गवाही देने लगा है कि बादशाह सलामत दुष्टा रोशनआराके चंगुलसे बच जायँगे। कलके दरबारकी शोभा वे अवश्य बढ़ावेंगे। अब रोशनआराकी कोई कार्रवाई न चलेगी। चलो, जब तक वह कृत्या मेलेमें घूमती है तब तक हम लोग महलमें पहुँचकर अपना इन्तजाम कर लें। नहीं तो फिर हम लोगोंका एक भी उपाय न चलेगा और सवेरे शाहंशाह आलमगीरके दुश्मनोंके प्राण......।"

इसके आगे वह स्त्री और कुछ न कह सकी और जल्दी जल्दी एक ओर बढ़ने लगी। छत्रसाल भी उसके पीछे हो लिये। थोड़ी दूर चलनेके उपरान्त उन्होंने कहा,—

"पर मुझे अभी तक यह तो मालूम ही नहीं हुआ कि तुम कौन हो। बादशाहके प्राणोंकी रक्षाके लिए तुम्हारे इतने प्रयत्न करनेका क्या कारण है?"

छत्रसालके गम्भीर मुखकी ओर देखते हुए उसने कहा,—"इसका कारण यही है कि मेरे वे सर्वस्व हैं और मैं उनके चरणोंकी दासी हूँ। उन्हें मैं अपने प्राणोंसे भी बढ़कर समझती हूँ।"

छत्र०—"तुम्हारा नाम क्या है, तुम किसकी कन्या हो और शाहीमहलमें किस प्रकार पहुँची?"

स्त्री—"मैं कौन हूँ और किस प्रकार महलमें पहुँची यह तो मैं नहीं बतलाऊँगी। पर हाँ महलमें लोग मुझे आयशा बेगम कहते हैं।"

छत्र०—"तब तो तुम शाहजादा मुअज्जमकी माँ हो!"

स्त्री—"हाँ।"

× × × ×

प्रायः सभी माण्डलिक राजे और सरदार आदि आ पहुँचे थे। तख्त-ताऊसके दोनों ओर दो राजकुमार बड़ी सजधजसे खड़े थे और आगेकी ओर कुछ दूर हटकर बहुमूल्य वस्त्र और अलंकार पहने हुए दो और राजकुमार खड़े थे। राजाओंमें चम्पतराय भी थे; पर वे इस लिए कुछ चिन्तित जान पड़ते थे कि युवराज छत्रसाल थोड़ी ही देर पहले उठकर न जाने कहाँ चले गये थे। राजा जयसिंह कभी उन्हें धीरज दिलाते और कभी चिन्तित होकर इधर उधर देखते थे। अधिकांश लोग तो प्रसन्नतापूर्वक बादशाहके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। पर कुछ इने गिने बड़े बड़े वजीरों और सरदारोंके मुखपर वह प्रसन्नता नहीं थी। उनके चेहरोंपर गम्भीरता, उत्कण्ठा और जिज्ञासाकी मिश्रित छाया थी। इस छायाका एक विशेप और गूढ़ कारण था।

दरबारसे पहलेवाली रातको शाही महलके एक कमरेमें रोशनआरा बेगमने उन्हीं चुने वजीरों और सरदारोंका एक छोटासा गुप्त दरबार किया था, जिनके चेहरोंपर दरबारके समय गम्भीरता, उत्कण्ठा और जिज्ञासाकी छाया दिखलाई पड़ती थी। उस दरबारमें रोशनआराने इन लोगोंसे कहा था कि शाहंशाह आलमकी तबीयत दिन पर दिन बिगड़ती जाती है; और इस समय तो उनकी जो शोचनीय दशा हो गई है वह बड़ी ही निराशाजनक है। दरबारकी सब तैयारियाँ हो चुकी हैं; पर ईश्वर न करे कि कहीं इस खुशीके मौके पर मातमकी नौबत आवे। इस दरबारमें बेगमने अपनी सेवा-शुश्रूषा और परिश्रम आदिका वर्णन खूब लम्बे चौड़े वाक्योंमें और बहुत देरतक किया था और यह कहा था कि मैंने शाहंशाहकी चिकित्सा करनेमें कोई बात उठा नहीं रखी है। पर हाँ, ईश्वरेच्छा पर किसीका वश नहीं; और भावी बहुत बलवती है। उनमेंसे कुछ खुर्राट भीतर-ही-भीतर बेगमका वास्तविक आशय भी भली भाँति समझते थे—क्यों कि वे भी अनेक प्रकारसे बेगमके षड्यन्त्रमें सहायक थे—तथापि और लोगोंको दिखलानेके लिए वे भी बेगमकी तारीफें करते जाते और उसकी हाँमें हाँ मिलाते जाते थे। बहुत देर तक इसी तरहकी बातोंका बाजार गरम रहा। अन्तमें बेगमने सिंहासनके उत्तराधिकारका प्रश्न उठाकर अपनी राजनीतिज्ञताका परिचय देनेके लिए एक छोटा मोटा व्याख्यान दे डाला और अनेक पुरानी घटनाओंका वर्णन करके यह सिद्ध कर दिया—अथवा सिद्ध करनेका प्रयत्न किया कि शाहजहानखाँकी कन्या ही औरंगजेबकी एक मात्र विवाहिता और कुरान—

सम्मत पत्नी है, वाकी वेगमें धर-पकड़कर लाई गई हैं और यों हरमसरामें दाखिल कर ली गई हैं। अतः आवशा (नवाव वाई) या ईसाई वेगम उदे-पुरीकी सन्तानें राजसिंहासनकी उत्तराधिकारी नहीं हो सकतीं, रखेलियोंके लड़के राज्य नहीं पा सकते। तख्तका असली वारिस शाहजादा आजम ही है, दूसरा कोई नहीं। खुदानख्वारतः अगर वादशाहके दुश्मनोंकी जानको कल तक कुछ हो जाय तो कलके ही दरवारमें इस वातकी घोषणा हो जानी चाहिए कि तख्तका वारिस आजम है और जव तक शाहजादा वालिग न हो तव तक सलतनतका कुल इन्तजाम आप लोगोंकी मददसे मैं करती रहूँगी। वस इतनी ही छोटी और सीधीसी वातके लिए लोगोंको आधी रात तक तक-लीफ दी गई थी। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि किसी वजीर या सरदारने इसमें कोई आपत्ति नहीं की; क्योंकि आपत्तिकारक जीवोंकी तो उस दरवारमें रसाई भी न हो सकती थी। यही कारण था कि कुछ लोगोंके मुखोंपर गम्भी-रता, उत्कण्ठा और जिज्ञासाकी मिश्रित छाया दिखलाई पड़ती थी। हाँ, आधी रात तक जागनेके कारण उन लोगोंमेंसे कुछ कभी कभी थोड़ा वहुत ऊँघने भी लग जाते थे।

सव अमीर, उमरा, सरदार और दरवारी आदि अपने अपने स्थानपर वैठ चुके थे। दरवारका मुहूर्त्त भी आ पहुँचा था, पर तख्त-ताऊस अभी तक ज्योंका त्यों खाली पड़ा था। थोड़ी देर वाद जव लोगोंने सुना कि शाहंशाहकी सवारी महलसे चल चुकी है तव सवके मुँह कमलकी तरह खिल गये; पर उनकी उत्कंठा और भी वढ़ गई। सव लोग आँखें फाड़ फाड़ कर उस रास्तेकी ओर देखने लगे जिधरसे वादशाहकी सवारी आनेवाली थी। नगाड़ोंके दम दमके साथ नफीरियोंके मधुर स्वर सुनाई पड़ने लगे, हाथियों पर फहराते हुए झण्डे और निशान दिखलाई देने लगे। धीरे धीरे सवारी दीवान-ए-आम तक आ पहुँची। दरवारके सव लोग उठ कर खड़े हो गये। वहुतसे राजकुमारों और शाहजादोंने अर्द्धचंद्राकार-पंक्तिमें खड़े होकर तख्त-ताऊसको पीछेकी ओरसे घेर लिया। शाही खानदानके कुछ लोगों और चुने हुए सरदारोंके पीछे पीछे शाहं-शाह औरंगजेव एक हाथ शाहजादा मुअज्जमके कन्धेपर और दूसरा हाथ युव-राज छत्रसालके कन्धेपर रक्खे हुए धीरे धीरे चलकर तख्त-ताऊस पर वैठ गया। तख्त पर वैठकर वादशाहने एक ओरके आसनपर छत्रसालको और

दूसरी ओरके आसन पर मुअज्जमको बैठनेका इशारा किया। दरबारकी रस्में अदा होने लगीं। मुजरे हुए, नजरें गुजारीं, दुआयें पढ़ी गईं, आशीर्वाद दिये गये, खिताब बँटे, लोग सम्मानित हुए; मुबारकबादियोंके गीत गाये गये, इत्यादि इत्यादि अनेक कृत्य हुए। जब सब कृत्य हो चुके तब औरंगजेबने युवराज छत्रसालको खड़े होनेका इशारा किया। तदनुसार युवराज उठकर तख्तके बहुत पास आकर खड़े हो गये। समस्त दरबारियोंको सम्बोधित करके थोड़े शब्दोंमें बादशाहने छत्रसालका परिचय दिया और उनकी बहुत प्रशंसा करते हुए कहा कि हमारे प्राणोंकी रक्षा इन्हींने की है। दरबारियों, सरदारों, राजाओं और रिआयाको इन्हींका शुक्रगुजार होना चाहिए। ये सब बातें बादशाहने थोड़े शब्दोंमें कही थीं, क्योंकि वे कुछ तो कमजोर थे और कुछ कम-सखुन बन गये थे। छत्रसालकी प्रशंसा करने और उन्हें अनेक धन्यवाद देनेके उपरान्त उन्होंने राजा जयसिंहको आज्ञा दी कि वे राजा चम्पतरायको लेकर तख्त-ताऊसके समीप आ बैठें। जयसिंहने तुरन्त उनकी आज्ञाका पालन किया। जयसिंह और चम्पतरायके तख्तके पास बैठ जानेपर बादशाहने कहा,—

"आज इस मुबारक मौके पर सलतनतके अराकीन (आधारस्तम्भ) और वफादार मददगारोंकी मौजूदगीसे ईजानिबको जो खुशी हासिल हुई वह बयानसे बाहर है। मगर इससे भी ज्यादः खुशीकी बात यह है कि खुदाए-तआलाने सलतनत और रिआयाकी हिफाजत और सरपरस्ती करनेवाले तख्त व ताजके मालिक अपने बन्देको इस बातका मौका दिया है कि वह अभी और कुछ दिनों तक इस जहानमें रहकर उसके हुक्मोंकी तामील करे और पैगम्बर-अलयः-उस्सलामके दिखलाए हुए रास्ते पर पाक परवरदिगारके बन्दोंको चलनेके लिए तैयार करे। इस मौके पर आप लोगोंको उस शख्सका सबसे ज्यादः शुक्रगुजार और एहसानमन्द होना चाहिए जिसकी मददसे आज आप लोगोंको बन्दए-दरगाहकी जियारत नसीब हुई है। वह शख्स महेवाके राजा चम्पतरायका साहबजादा छत्रसाल है। जो काम बड़े बड़े नमकख्वार सरदारों, अमीरों और यहाँ तक कि खानदाने-शाहीके लोगोंसे भी न हो सकता वह काम बड़ी ही खूबीके साथ आज छत्रसालने अंजाम दिया है। छत्रसालको इजाजत दी जाती है कि वह अपनी इस कारगुजारीके सिलेमें जो कुछ माँगना चाहे, माँगे।"

छत्रसाल कुछ बोलनेके लिए एक कदम और आगे बढ़े, सब लोगोंका ध्यान उन्हींकी ओर खिंच गया। वे सोचने लगे कि इस बहुमूल्य अवसरका छत्र-

साल कैसा उपयोग करते हैं और वादशाहसे क्या माँगते हैं। स्वयं वादशाहका खयाल था कि वे कोई वड़ा खिताव या ऊँचा ओहदा ही माँगेगे; पर यह वात नहीं हुई। उन्हें निराश करते हुए छत्रसालने इस प्रकार कहना आरम्भ किया,—

"शाहंशाह-आलम! मैं वन्दः परवरका इस लिए वहुत ही शुक्रगुजार हूँ कि एक नाचीजकी छोटीसी खिदमतका हजरत सलामतने इतना खयाल फरमाया और उसे कोई मुराद माँगनेका मौका वख़्शा। मगर इस हालतमें मैं यह अर्ज कर देना चाहता हूँ कि मुझे खुद अपने लिए किसी चीजकी जरूरत नहीं है। इस वक्त मेरे पास जो कुछ मौजूद है, मैं उसीपर कनायत करता हूँ और उसीको काफी समझता हूँ। मुझे अपने उन वुन्देले भाईयोंकी वहुत ज्यादः फिक्र है जो दिन पर दिन गुलामीमें वुरी तरह जकड़े जा रहे हैं। गुलामीका कायदा है कि वह जिन लोगोंको अपने जालमें फँसाती है उन्हें गरीव, वेकस, ऐयाश और खुदपरस्त वना देती है और जिस मुल्क पर उसका सिक्का जमता है, कहतसाली और दूसरी तरह तरहकी मुसीवतें उसे अपना घर कर लेती हैं। तख्ते-देहलीकी हवा वुन्देलखंडकी आजादीका चिराग वुझाना चाहती है। वहाँके जिन गौहरोंको ताजमें जगह मिलना चाहिए थी वे अव पैरोंमें रौंदे जाने लगे हैं। इस वातकी कोशिश हो रही है कि उनकी आजादी कायम न रहने दी जाय,—उन्हें इन्सानियतके दायरेसे वाहर निकाल दिया जाय। अगर वादशाह सलामत वुन्देलखंडको हर तरहसे आजादी वख्शें और वुन्देलोंका इतमीनान फरमाएँ कि आइन्दा कभी उनकी हक-तलफी न होगी तो मैं समझ लूँगा कि मुझे मेरी खिदमतोंका पूरा सिला मिल गया।"

औरंगजेवका चेहरा कुछ उतर गया। क्या कहा जाय, यह उसकी समझमें न आया। छत्रसालकी इच्छा पूरी करना मानो उसे अभीष्ट नहीं था।

छत्रसालकी वातें सुनकर चम्पतराय वहुत प्रसन्न हुए। जव उन्होंने देखा कि वादशाह चुप हैं तो वे उठ कर खड़े हो गये और कहने लगे,—

"वादशाह सलामत! छत्रसालकी इल्तजा पर कुछ इरशाद नहीं हुआ। शायद उसकी कारगुजारीकी कीमत उतनी ज्यादः नहीं है जितनी कि उसकी दरख्वास्तके पूरे होनेकी है। अगर सिर्फ छत्रसालकी कारगुजारी इस दरख्वास्तको पूरा करनेके लिए काफी न समझी गई हो तो मैं अपनी कुछ पुरानी

कारगुजारियोंकी याद दिलाया चाहता हूँ। सोनगढ़की लड़ाईमें किसने खूनकी नदियाँ बहाकर अपनी बहादुरीसे दुश्मनोंपर फतह पाई थी? इस तख्तके पानेमें शाहंशाह आलमको सबसे ज्याद: मदद किसने दी थी? तख्ते-ताऊसके रास्तेके काँटे किसने साफ किये थे?"

औरंगजेबने कुछ शान्त होकर कहा,—"राजा साहब! आपका फरमाना बहुत ही बजा है। बेशक आपकी कारगुजारियाँ बहुत ज्याद: और बेशकीमत हैं।

चम्प०—"मैंने अपनी जिन्दगीकी जरा भी परवा न करके सोनगढ़की लड़ाईमें फतह पाई और आँजनाबके लिए तख्ते-ताऊस खाली कराया। आज छत्रसालने हजरतके दुश्मनोंकी जानका खातमा होनेसे बचाया। ऐसी हालतमें हम दोनोंकी इन कारगुजारियोंका—जो हजरतकी जिन्दगी और इकबालका सबब हैं—पूरा पूरा खयाल रक्खा जाना बहुत ही जरूरी है। छत्रसालने जो कुछ इल्तजा की है वह इन कारगुजारियोंके मुकाबलेमें कुछ भी नहीं है। उम्मीद है कि हजरतको इस मौकेपर सलतनतके एक छोटेसे हिस्सेको आजादी बख्शनेमें किसी तरहका पसोपेश न होगा।"

इतने पर भी औरंगजेबने कोई उत्तर न दिया। उसके चेहरेसे जान पड़ता था कि वह किसी गूढ़ विचारमें पड़ा हुआ है। उसे बहुत देरतक चुप देखकर छत्रसालने कहा,—

"खैर, मालूम हो गया कि मेरी इल्तजा पूरी नहीं हुई। उसका पूरा न होना ही मुनासिब और अच्छा है। इस तरह भीख माँगकर आजादीकी उम्मीद रखना भी बेवकूफी ही है। हजरत सलामत नाहक ज्याद: गौर व फिक्रमें न पड़ें। हम लोग इसके लिए यहाँ अड़े नहीं बैठे हैं। (कुछ ठहर कर) अब हम लोगोंको इजाजत मिलनी चाहिए।"

इतना कह कर छत्रसाल चलनेके लिए तैयार हुए। उनके पिता चम्पतरायजी भी कुछ कम तेजस्वी और मानी न थे। उन्होंने भी अपना आसन छोड़ दिया। उन्हें उठते देख कर औरंगजेबने कहा,—

"चम्पतरायजी! बेशक आप लोगोंकी कारगुजारीके मुकाबलेमें बुन्देलखण्डकी आजादी कोई चीज नहीं है, मगर काफिरोंको आजाद रहने देना और उन्हें खुदसर बनाना उस पाक परवरदिगारकी मरजीके खिलाफ है। पाक पैगंबरका हुक्म है कि वालिए-मुल्क कुल जहानमें इस्लामका डंका बजाएँ, अपनी

तमाम रिआयाको मुसलमान बनाएँ। पहले मुल्कों पर कब्जा करना और बादमें वहाँकी रिआयाको बगैर मुसलमान बनाये आजाद कर देना बड़ा भारी गुनाह है। इस लिए बेहतर हो कि आप लोग कोई और दरख्वास्त करें।"

चम्प०—"हम लोगोंको किसी तरहके ओहदे या खिताब वगैरहकी ख्वाहिश नहीं है और न हम लोग कोई दूसरी दरख्वास्त करना चाहते हैं। बल्कि हम अपनी पहिली दरख्वास्त भी वापस लेते हैं; क्योंकि बुन्देलखण्ड खुद बुन्देलोंका है और उसे आजाद करना भी उन्हींके हाथ है।"

इतना कह कर चम्पतराय अपने साथ छत्रसालको लेकर वहाँसे चल दिये। उन्होंने वहाँ अधिक ठहरना उचित न समझा।

+ + +

बारहवाँ प्रकरण।

उषासुन्दरी और अरुण।

स्वच्छ नीले आकाशमें उषासुन्दरी सलज्ज हँसती हुई आकाश-गंगाके किनारे खड़ी थी। अनन्त तारकाओंको सारे आकाशमें विहार करते देख उस नव बालाको बहुत आश्चर्य हो रहा था। ज्यों ज्यों तारानाथ क्षीणबल होते जाते थे त्यों त्यों तारका उन्हें छोड़कर गगन-मंडपसे निकलती जाती थीं। तारकापतिको तारकाओंके इस प्रकार चले जानेसे बहुत दुःख हो रहा था। वह मानो यह समझकर पश्चात्ताप कर रहे थे कि यदि मैं इन तारकाओंको इतनी स्वतंत्रतासे विचरनेकी आज्ञा न देता तो वे इस प्रकार मेरा परित्याग न करतीं। तारकानाथकी गृहस्थीको इस प्रकार खड़मंडल होते देखकर उषासुन्दरीको बहुत दुःख हुआ। वह सोचने लगी कि क्या पातिव्रत, शील और सद्गुणोंकी रक्षा बिना स्त्रियोंको परदेमें रक्खे नहीं हो सकती? वह स्वयं परदेमेंसे निकल-कर आकाश-गंगाके किनारे आ खड़ी हुई थी, इस लिए उसका प्रसन्न वदन कुछ गम्भीर हो गया। उस स्वर्गीय सुन्दरीको भय होने लगा कि कहीं मेरे

शील और सद्गुणोंका भी तो नाश न हो जायगा। परमेश्वरकी अगाध रचना-चातुरी और आकाश-गंगाकी अनुपम सुन्दरताको निरखना छोड़कर अपने शीलकी रक्षाके लिए वह फिर अपने परदेमें जानेके लिए तैयार हो गई। उस बेचारीको संसारका कोई अनुभव नहीं था, इस लिए एक तारानाथका उदाहरण देखकर ही वह डर गई। यदि उस अनजान उषाको यह मालूम होता कि परदेसे बाहर निकलकर चमकनेवाली चंचल चपला अपने पति मेघके साथ कितनी एकनिष्ठताका व्यवहार करती है, कभी परदेशमें न रहनेवाली प्रभा अपने पति भगवान् अंशुमालीके साथ दिन भर घूमती हुई उसका कितना सच्चा साथ देती है अथवा परदेकी जरा भी परवा न करनेवाली सन्ध्या अपने पति अन्धकारकी कितनी आज्ञाकारिणी है तो वह कभी फिर आड़में हो जानेकी इच्छा न करती। उसे इस बातका बहुत ही दुःख हुआ कि मेरा प्राण-प्रिय अरुण मुझे ढूँढ़ता हुआ आकाशमें आवेगा और मैं उसे वहाँ न मिलूँगी। कहाँ तो अरुणके साथ आकाशकी अवर्णनीय शोभा देखना, परमेश्वरकी अतर्क्य लीलाका गुण गाना और पवित्रताका सुख लूटना, और कहाँ कुछ दुष्टा स्त्रियोंकी दशासे डर कर कैदमें विरहका दुःख सहना ! एकमें मिलनेवाले स्वर्गीय सुख, अद्वितीय आनन्द और अलौकिक सन्तोष और दूसरेमें होनेवाले असह्य दुःख, चिन्ता और मनस्तापके परस्परविरोधी चित्रकी ओर उषासुन्दरी मानसचक्षुसे देखने लगी। जिस चन्द्रमाने उसे स्वर्गीय सुखसे वंचित करके दुःखी किया था, उसपर उसे बहुत क्रोध आया। अतिशय क्रोधके कारण उसका मुँह लाल हो आया। वह मन-ही-मन कुड़बुड़ाती हुई आकाशके परदेमें छिपने लगी। उस समय उसका ध्यान उस रोहिणीकी ओर गया जो चन्द्रमाके पास ही खड़ी हुई उसकी सेवा कर रही थी। उसे देखकर उषाको फिर कुछ साहस हुआ और वह परदेमेंसे फिर बाहर निकलने लगी। धीरे धीरे उसकी यह धारणा नष्ट होने लगी कि केवल परदेसे ही स्त्रियोंके शील और पातिव्रतकी रक्षा होती है। चंचल और नीतिभ्रष्ट स्त्रियोंको चाहे परदेमें छिपाकर रक्खा जाय और चाहे सातवें पातालमें ले जाकर दबा दिया जाय, पर वे अपना चरित्र प्रकट करनेमें कहीं आगा पीछा न करेंगी। लेकिन सुशील स्त्रियाँ खूब स्वतंत्रतापूर्वक विचरनेका अवसर पाकर भी अपना शील कभी नष्ट न करेंगी। यही सोचकर वह स्वर्गीय बाला फिर प्रसन्नतासे मुस्कराने लगी। उसने यह भी सोचा कि आकाश वास्तवमें परदा नहीं है, यह

तो परदेका आभास मात्र है। अव वह फिर अपने प्रिय अरुणकी प्रतीक्षा करने लगी। केवल सौन्दर्य्य और सद्‌गुणोंमें ही नहीं वल्कि आन्तरिक विचारोंमें भी आकाश-गंगाके किनारे खड़ी हुई उषाकी वरावरी करनेवाली एक मानवी उषा गंगाकी वहन यमुनाके किनारेपर खड़ी हुई मुस्करा रही थी। उषाके स्वर्गीय विचारोंका प्रतिविंव उसके हृदयपर ज्योंका त्यों पड़ता था। उषा स्वर्गीय ज्योति थी और वदरुन्निसा ऐहिक ज्योति थी। उषा अपने सौन्दर्य्यतेजसे स्वर्लोकको प्रकाशित करती थी और वदरुन्निसा अपनी लावण्यप्रभासे मृत्युलोकको दीप्त कर रही थी। उषाने आज जिस प्रकार अपना आकाशका परदा हटा दिया था, वदरुन्निसाने उसी प्रकार आज अपने पिताका शाही महल छोड़ दिया था। उषाने यह अपने लिए आकाश-गंगाका तीर पसन्द किया था और वदरुन्निसा यमुनाके किनारे खड़ी थी। वदरुन्निसा यह जाननेके लिए टक लगा कर उषाकी ओर देखने लगी कि क्या जिस उद्देश्यसे मैं यमुनाके किनारे आई हूँ, उसी उद्देश्यसे यह भी आकाश-गंगाके किनारे अपने विचारोंमें मग्न खड़ी है। उस समय वदरु-न्निसाको ऐसा जान पड़ने लगा कि उषा भी मेरी ही तरह अभिसारिकाके वेषमें है, उसका मुँह मेरी ही तरह लज्जासे लाल हो रहा है और उसके नेत्र भी मेरे ही नेत्रोंकी तरह उत्सुक हैं। क्या यह स्वर्गीय देवी भी प्रेमको पूज्य समझती है? क्या प्रेम मानवी विकार नहीं वल्कि दैवी सद्‌गुण है? क्या प्रेम इतना पवित्र है कि उसके लिए उषाके समान स्वर्गीय देवी भी सत्ताधारी ईश्वरके परदेसे वाहर निकल आवे? अवश्य ही प्रेम वहुत पवित्र होगा। अवश्य ही वह दैवी सद्‌गुण होगा। प्रेमकी पूजा स्वर्गीय देवियाँ भी करती होंगी। यदि ऐसा न होता तो मेरे समान पिताकी आज्ञाकारिणी उसके प्रपंचमें क्यों पड़ती? सचमुच प्रेममें विलक्षण माधुरी भरी हुई है, उसमें अद्‌भुत सुगन्ध है; इसी लिए वह स्वर्गीय सुख छोड़कर आकाश-गंगाके किनारे आई है। इस संसारके वहुतसे लोग उसी स्वर्गीय सुखको छोड़कर उषा आकाश-गंगा तक चली आई है, तव यदि मैंने शाही महल छोड़ दिया तो क्या वुरा किया? वदरुन्निसा उस समय यमुनाके प्रवाहमें पड़नेवाला उषाका प्रतिविम्व देखने लगी। इतनेमें उसे उषाके प्रति-विम्वके पास ही उसके प्रेमी अरुणका प्रतिविम्व दिखलाई पड़ा। वह मन-ही-मन यह सोचती हुई आकाशकी ओर देखने लगी कि अरुणका उदय कव हुआ?

उसने देखा कि अरुण प्रेमपूर्वक उषासे धीरे धीरे बातें कर रहा है। वह सोचने लगी कि क्या ऐसी ही प्रेमभरी बातें सुननेका मुझे भी अवसर मिलेगा? इतनेमें ही उसके कानोंमें स्वर्गीय मनोहर स्वर पड़ा।

"सुन्दरी! तुम वह स्वर्लोक छोड़कर यहाँ क्यों आई? तुम्हारे विना वहाँ कोलाहल मचा हुआ है। तुम्हारे विना विजली, इन्द्रधनुप और ताराओंने अपने अपने काम छोड़ दिये। तुम यहाँ क्यों आई?"

वदरुन्निसाने समझा कि आकाशमें यह बातें अरुण अपनी प्रिया उपासे कह रहा है। उपाका उत्तर सुननेके लिए वह और भी एकाग्रचित्त होकर उसकी ओर देखने लगी। इतनेमें उसे फिर वही स्वर्गीय मनोहर स्वर सुनाई पड़ा—

"सुन्दरी! तुम आसमानकी तरफ क्या देख रही हो? उसकी सारी खूबसूरती तो तुम जीत चुकी हो, अब उसकी तरफ देखनेसे क्या फायदा? अब तो आसमान तुम्हारे पैरों पर लोट रहा है; उससे जो कुछ तुमने लिया हो वह अब उसे लौटा दो।"

वदरुन्निसाने नीचेकी ओर देखा, सारे आकाशका प्रतिविम्ब यमुनाके निर्मल प्रवाहमें पड़ रहा था और उस प्रतिविम्बसहित यमुनाकी लहरें उसके पैरोंसे खेल रही थीं। उपा और अरुणको आपसमें बातचीत करनेका अवसर देकर उसने सामने देखा। जिसके दर्शनोंके लिए वह अपने महलसे निकल कर आई थी, वह युवक उसे सामने खड़ा हुआ दिखलाई पड़ा। अरुणके दर्शन करके उपाको जितना आनन्द हुआ था उस युवकके दर्शन करनेसे वदरुन्निसाको भी उतना ही आनन्द हुआ। उस आनन्दमें लज्जाके मिल जानेके कारण उसके मुखपर और भी माधुरी आ गई थी। उसी माधुरीको निरखता हुआ वह युवक कहने लगा,—

"विजली, आकाशगंगा और तारोंकी सारी खूबसूरती छीनकर भी तुम्हारा जी नहीं भरा? अब क्या तुम आसमानमें कुछ भी न रहने दोगी?"

वद०—"माफ कीजिए, शायद आपको यहाँ आए बहुत देर हुई। मैं किसी सोचमें डूबी हुई थी, मेरा ध्यान दूसरी तरफ था।"

वदरुन्निसाका कोमल और मधुर स्वर सुनकर वह युवक बहुत ही आनन्दित हुआ। उसने गद्गद होकर कहा...

" आज मैं तुम्हें नहीं, वल्कि परमेश्वरकी कारीगरीका सवसे अच्छा नमूना देख रहा हूँ । आज मैं तुम्हें देखकर अपने आपको धन्य समझता हूँ । "

वदरुन्निसाने आश्चर्यसे पूछा,—" क्या आज आप मुझे पहले पहल देख रहे हैं ? "

यु०—" इसमें क्या शक है ? जो एक वार परमेश्वरकी यह कारीगरी—रूपकी यह पुतली देख लेगा, वह इसे जिन्दगी भर न भूलेगा । "

वद०—" लेकिन आप तो दो दिनोंसे मेरी आँखोंके सामने फिर रहे हैं । "

यु०—" नहीं, यह कभी नहीं हो सकता । अगर यही वात होती तो अवसे वहुत पहले मेरा दिल टुकड़े टुकड़े हो गया होता; मेरी आँखें चौंधियाई हुई होतीं । मैंने तो आजसे पहले ऐसा रूप कभी देखा ही नहीं ! "

वद०—"वड़े ताज्जुवकी वात है । भला अगर आपने मुझे कभी नहीं देखा था, तो फिर आज आप यहाँ कैसे आये ? "

यु०—" कल राजा जयसिंहकी लड़की जयाने मुझसे कहा था कि कल तड़के यमुना किनारे कोई तुमसे मिलना चाहता है । उसीके कहने पर आज मैं यहाँ आया हूँ और तुम्हें देख रहा हूँ । "

वदरुन्निसाको उस युवककी वातें सुनकर वहुत आश्चर्य्य हुआ । उसने सोचा,—मैं इसी वेषमें मीना वाजारमें अपनी दूकान पर वैठी थी; उस वक्त इन्होंने मेरे सामने न जाने कितने फेरे लगाये थे । जिस तरह इन्होंने मेरे दिलमें जगह कर ली थी उसी तरह मैं समझती थी कि इन्हें मेरा भी कुछ ध्यान हुआ होगा । इसी लिये मैंने जयासे इन्हें सन्देशा कहलाया और आज मैं इनसे मिलनेके लिए यहाँ आई । इस अन्तिम विचारसे वदरुन्निसा कुछ लज्जित भी हो गई । टक लगाकर उसकी ओर देखनेवाले युवकको वड़ा ही आश्चर्य्य हुआ । वह सोचने लगा कि यह पहले तो वहुत प्रसन्न जान पड़ती थी, पीछे इसे कुछ आश्चर्य हुआ और अव यह कुछ दुखी हो गई है । उसने कहा,—

" मैं इतनी देर तक टक लगाकर तुम्हारी तरफ देखता रहा, इसके लिए मैं तुमसे माफी माँगता हूँ । मैंने शायद तुम्हें दुखी कर दिया है, इसका मुझे वहुत अफसोस है । पर इसमे खाली मेरा ही कुसूर नहीं है वाल्कि तुम्हारी खूवसूरतीका भी कुछ कुसूर है जो मेरी आँखोंको अवतक अपनी तरफ खींच रही है ।"

वद०—" नहीं, मुझे रंज तो किसी वातका नहीं है पर इस वातका जरूर है कि आप कहते हैं कि आपने आजसे पहले मुझे कभी देखा ही

यु०—" तो क्या अव तक तुम यही समझती हो कि मैंने पहले भ कहीं देखा है ? "

वद०—" आप दो दिनों तक वरावर मेरे सामने फेरे लगाया करते थे

युवकने वहुत चकित होकर पूछा,—कहाँ ? तुमने मुझे कव और कहाँ .

वद०—" मीना वाजारमें । "

वदरुन्निसाकी वात सुनकर उस युवकका आश्चर्य्य जाता रहा । वह हुआ वोला,—

" हाँ हाँ, तुम्हारा कहना वहुत ठीक है । कुमार रामसिंहके वहुत कहने मैंने उस वाजारमें कई चक्कर लगाये थे । उस वक्त मेरा ध्यान दूसरी तरफ था । छत्रसालका साथ छूट गया था और मुझे उन्हींकी फिक्र थी । मेरा मन किसी तरफ देखनेमें न लगता था । शायद इसी लिए मैं तुम्हें वहाँ न देख सका था। जिन लोगोंको सदा तलवारसे ही काम पड़ता हो अगर उनका ध्यान ऐसी वातोंकी तरफ कम जाय तो इसमें तुम्हें ताज्जुव न होना चाहिए । छत्रसाल तो इसी लिए जान वूझकर हम लोगोंसे अलग हो गये थे और यमुना-किनारे कहीं जा वैठे थे । पर मुझे जवरदस्ती रामसिंहके कहने पर वाजारमें घूमना पड़ा था ।"

अव वदरुन्निसाका सन्देह दूर हुआ । उसने मानो कुछ याद करके पूछा,—

" यह छत्रसाल कौन हैं ? यह वही शाहंशाह आलमकी जान वचानेवाले छत्रसाल तो नहीं हैं ? "

यु०—" हाँ, वही छत्रसाल । "

वद०—" वे आपके कौन होते हैं ? "

यु०—" मेरे पिताजीके जानी दुश्मनके लड़के—"

वद०—(वीचमें ही) " तव तो वे आपके भी भारी दुश्मन हुए न ? "

यु०—" हाँ, अगर मैंने पिताजीवाली दुश्मनीका खयाल किया होता तो जरूर मेरा उनका भारी वैर होता, पर मेरी और उनकी वह वात नहीं है । "

वद०—" तव आखिर आपका उनके साथ कैसा वरताव है ? "

यु०—" विलकुल दोस्तोंकासा, वल्कि उससे भी कुछ वढ़कर । उनके लिए मैं अपने सुखदुःखको कुछ भी नहीं समझता । यहाँ तक कि मैं अपनी जानकी

भी परवा नहीं करता। वह देखो अरुण और सूर्य्यका कैसा साथ है! तुम मुझे अरुण और छत्रसालको सूर्य्य समझो।"

बदरुन्निसाने आकाशस्थ अरुणकी ओर देखा। उस समय अरुण स्वर्गीय उषाकी ओर प्रेमपूर्वक देख रहा था। जिस प्रेमको अबतक उसने अपने हृदयमें दबा रक्खा था, वह अब उसके अंग प्रत्यंगमें नाचने लगा। प्रेमका उसपर पूरा पूरा अधिकार हो गया। उसी दशामें उसने पूछा,—

"आप अरुण हैं न?"

युवकने निष्कपट भावसे कहा,—"हाँ, छत्रसाल सरीखे सूर्य्यके सामने मैं अरुण ही हूं।"

बद०—"अब जरा उस उषाकी तरफ भी देखिए। अरुणको अपने पास देखकर वह कैसी सुखी हो रही है! कोई ऐसी स्त्री न होगी जिसे उषाको देखकर ईर्ष्या न होती हो।"

यु०—"लेकिन तुम्हारी इस खूबसूरतीके सामने उस उषाकी खूबसूरती क्या चीज है? जिसे तुम्हारे साथ होनेका सौभाग्य हो वह उस अरुणसे लाख दर्जे अच्छा है। तब फिर तुम्हें उषाको देखकर ईर्ष्या क्यों हुई?"

बद०—जिस वक्त वह आकाश-गंगाके किनारे आई थी, उसी वक्त मैं भी यमुना किनारे आई थी। उस वक्त दोनोंके मनमें एक ही विचार थे पर इस वक्त वह अकेली आनन्द कर रही है और मैं—"

बदरुन्निसासे और कुछ कहा न गया और वह टक लगाकर युवककी ओर देखने लगी।

यु०—"क्या इस उषाको भी कोई भाग्यवान् अरुण मिलनेवाला है?"

बदरुन्निसाने युवकके इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया। वह नीचे मुँह करके यमुनामें पड़नेवाली उषाकी छाया देखने लगी। युवकने फिर कहा,—

"जिस प्रकार वह उषा आकाशकी शोभा है उसी प्रकार यह उषा इस पृथ्वीकी शोभा है।"

यमुनाके तलमें पड़नेवाले युवकके प्रतिविम्बकी ओर देखते हुए बदरुन्निसाने पूछा,—

"आप यह माननेके लिए तैयार हैं न कि मैं इस पृथ्वीकी उषा हूँ?"

यु०—“ हाँ, तुम उषा हो—इस पृथ्वीकी सुन्दर शृंगार हो । ”

वद०—“ जिस तरह वह स्वर्गीय अरुण अपनी उषाको प्रेमपूर्वक स्वीकार करता है, क्या उसी प्रकार इस पृथ्वीकी उषाको भी इस पृथ्वीका अरुण स्वीकार न करेगा? क्या उस उषाकी तरह यह उषा भी धन्य होगी? ”

अब वह युवक प्रेमकी ये सारी पहेलियाँ समझ गया। पर उसे यह जाननेमें बहुत सा समय लग गया कि जो अमृतमय वचन मैंने अभी सुने हैं वे वास्तवमें सत्य हैं या स्वप्नके। अन्तमें उसने हर्ष-कम्पित स्वरमें कहा,—

“ क्या यह उषा मुझे ही अरुण समझती है? क्या मैं अपने आपको इतना भाग्यवान् समझ सकता हूँ? पर—” इतना कहते कहते वह युवक और गंभीर हो गया।—“ क्या मैं ऐसी सुन्दरीको ग्रहण करनेका पात्र हूँ? उस स्वर्गीय अरुणने प्रेमान्ध होकर जिस प्रकार उषाको अपने जालमें फँसाया है, उस प्रकार मैं इस मानवी उषाको फँसाकर उसके भावी सुखका नाश नहीं कर सकता। यह अरुण बड़ा धोखेबाज है। उसे अपना सारा जीवन सूर्य्यकी सेवामें बिताना है। वह अच्छी तरह जानता है कि जिस उषासे मैं आज प्रेमपूर्वक घुल-घुलकर बातें कर रहा हूँ, आजके बाद अपने सारे जीवनमें मुझे फिर कभी इस उषाकी ओर देखनेका भी अवसर न मिलेगा; पर तो भी वह सीधी सादी उषाको अपने जालमें खींच रहा है। यह बड़ा भारी अपराध है, बड़ा भारी अन्याय है। तुम किसी ऐसे रँगीले शाहजादे या अमीरजादेको अपना अरुण बनाओ जो अपनी सारी जिन्दगी तुम्हारे साथ सुखसे बिता सके, तुम्हें प्रेमके रंगमें अच्छी तरह रँग सके और जिसके पास बहुतसी दौलत और बहुतसी फुरसत हो। मेरे सरीखा अभागा तुम्हें कुछ भी सुख न पहुँचा सकेगा। ”

वद०—“ यह आप मेरा अपमान कर रहे हैं। आप यह जतलाकर कि मैं सम्पत्ति, सुख और सन्मानकी लालसासे प्रेम करना चाहती हूँ, मेरे विमल प्रेम-पर कलंक लगा रहे हैं। जो प्रेम, सम्पत्ति, ऐश्वर्य, मान-मर्यादा, या इसी प्रकारके किसी और पदार्थके लिए किया जाता है, वह बाजारमें बिकने और खरीदे जाने-वाले प्रेमसे तनिक भी श्रेष्ठ नहीं है। मेरी आपसे केवल यही प्रार्थना है कि आप मेरे साथ प्रेम करके मुझे धन्य करें। आपकी दौलत और इज्जतका तो मैंने नाम भी नहीं लिया था। शुद्ध और विमल प्रेम निर्व्याज होता है; उसमें किसी दूसरी चीजकी जरूरत नहीं होती। ”

युवकने अधिक गम्भीर होकर कहा,—"तुमने मेरा मतलब नहीं समझा; इसी लिए मेरी बातसे तुम्हें कुछ रंज हुआ। बात यह है कि तुमसे प्रेम-सम्बन्ध करनेपर मुझपर बहुतसी जवाबदारियाँ भी आ पड़ेंगी। पर तो भी मैंने उन जवाबदारियोंसे डरकर यह बात नहीं कही है। मुझे तुम्हारे सुखोंका—"

बदरुन्निसाने बीचमें ही बात काटकर कहा,—"आप मेरे सुखोंका ध्यान छोड़ दें। जब मैंने आपको अपने हृदयमें स्थान दिया था, तभी मैं हमेशाके लिए आपके साथ सुख और दुःख भोगनेके लिए तैयार हो गई थी। तब फिर सुखका जिक्र ही क्या? मेरे सब सुख पूरे हो गये। मैंने ऐसे ऐसे सुख भोगे हैं जो औरोंके ध्यानमें भी नहीं आ सकते। सब सुख, सब आराम मानो हमेशा मेरे सामने हाथ जोड़े खड़े रहते हैं। पर अब उन सुखोंकी तरफ मेरा मन नहीं जाता। अब तो मैं उस सुखकी भूखी हूँ जो धन-दौलतसे नहीं खरीदा जा सकता; जिसके सामने सारी दुनियाके सुख हेच हैं। (आँचल पसारकर) आपसे मैं उसी सुखकी भिक्षा माँगती हूँ।"

युवक मन ही मन सोचने लगा,—"हे ईश्वर, अब मैं इस स्त्रीको क्या उत्तर दूँ? ऐसी सुन्दरीका त्याग करके एकनिष्ठासे देशसेवाका व्रत करूँ या वह व्रत छोड़कर इस सुन्दरीके प्रेम-जालमें फँसूँ? वह अरुण जिस तरह उस उषाके प्रेममें फँसकर अपना कर्त्तव्य भूल गया है, क्या मैं भी उसीकासा हो जाऊँ? पर नहीं। थोड़ी देरमें वह अपने सब सुखोंको भूल कर प्रतापशाली सहस्ररश्मिकी सहायता करनेके लिए चल पड़ेगा और मैं नामरदोंकी तरह यहीं बैठा हुआ औरतोंसे बातें करता रहूँगा। छत्रसालके साथ धोखेबाजी! स्वतंत्रतादेवी विन्ध्यवासिनीसे छल! अपनी प्रतिज्ञाका नाश! नहीं, यह घोर पातक है। इसकी अपेक्षा अपने भावी सुखका नाश करना ही अच्छा है। जब अपने लाखों बुन्देले भाइयोंके सुखके लिए मैं अपने सुखकी आहुति दे दूँगा तब मैं धन्य हो जाऊँगा। देशसेवा और विषयसुखाभासमेंसे प्रखर तेजयुक्त देशसेवाको पसन्द करना ही अच्छा है।"

अन्तमें उसने बदरुन्निसासे कहा,—"सुन्दरी! तुम्हें पानेके लिए देवता भी स्वर्ग छोड़कर इस संसारमें रहना स्वीकार करेंगे। तुम्हारा प्रेम इतना पवित्र और पावन है कि इसके लिए अच्छे अच्छे तपस्वी अपना तप छोड़नेके लिए भी तैयार हो जायँगे। लेकिन क्या करूँ, मेरे सामने एक ऐसा कर्त्तव्य रक्खा

हुआ है जो उन देवताओं और तपस्वियोंके कर्त्तव्योंसे भी कहीं बढ़ा चढ़ा है। मेरा मन अवश्य ही सब तरहसे तुम्हारे प्रेमके वशमें हो गया है, पर तुम मुझे आज्ञा दो कि मैं उसे रोक कर अपने कर्त्तव्यकी ओर लगाऊँ।"

बदरुन्निसाने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—"आपने मुझे और मेरे प्रेमको धन्य किया। जाइए, आप खुशीसे अपना काम कीजिए। मैं इस काममें रुकावट डालना नहीं चाहती। लेकिन उस कामके पूरे हो जाने पर तो इस दासीका खयाल रहना चाहिए?"

युः—"अगर वह काम इतनी जल्दी पूरा हो जानेवाला होता तो मैं आज ही तुम्हें स्वीकार कर लेता। वह काम बहुत ही मुश्किल है; उसका जल्दी पूरा होना मुमकिन नहीं। मुझे शक है कि अगर मेरी सारी जिन्दगी खतम हो जायगी तब भी वह काम पूरा होगा या नहीं।"

बदरुन्निसाके प्रसन्न चेहरेपर फिर निराशाकी झलक आ गई। वह दुःखी होकर बोली,—

"भला वह कौनसा काम है जो सारी उमरमें भी पूरा नहीं हो सकता?"

युः—"गुलामीके गड्ढेमें पड़े हुए बुन्देलखण्डको आजाद करना।"

बदः—"मैंने आपका मतलब नहीं समझा।"

युः—"बुन्देलखण्ड आजकल शाहंशाह देहलीके कब्जेमें है, इस लिए वहाँके लोगोंकी हालत हर तरहसे बहुत ही बुरी है। वहाँकी सारी दौलत निकालकर शाही खजानेमें भरी जा रही है, लोगोंकी हर तरहसे बेइज्जती की जाती है, मन्दिर ढाए जाते हैं और लोगोंको सैकड़ों तरहकी तकलीफें पहुँचाई जाती हैं, वहाँके लोगोंको सब बातोंमें शाहंशाहका हुक्म मानना पड़ता है। अपने उन्हीं भाइयोंको इन सब तकलीफोंसे बचाने और उन्हें फिरसे आजाद करनेके लिए मुझे अपनी सारी जिन्दगी बिता देनी पड़ेगी।"

बदः—"और अगर आपका वह काम जल्दी ही पूरा हो जाय तब?"

युः—"बुन्देलखंड जिस दिन बादशाही हुकूमतसे निकलकर आजाद हो जायगा, उसी दिन मैं भी तुम्हारा हो जाऊँगा।"

बदः—"बहुत ठीक। चाहे जिस तरहसे हो, बुन्देलखण्डके आजाद हो जाने पर तो फिर आपको कुछ आगा पीछा न रह जायगा न?"

यु०—" नहीं, विलकुल नहीं। चन्द्रमामें छिपे हुए सूर्य्यके तेज, यमुनामें छिपी हुई गंगाकी पवित्रता और अपने मनमें छिपे हुए तुम्हारे सच्चे प्रेमकी सौगन्ध खाकर मैं कहता हूँ कि जिस दिन बुन्देलखंडसे बादशाही अमल उठ जायगा उसी दिन मैं अपने आपको तुम्हारी नजर कर दूँगा। सुन्दरी! मैं सागरके सत्यप्रतिज्ञ राजा शुभकरणका पुत्र हूँ। मैं अपनी बातका कितना पक्का हूँ, यह तुम्हें आगे चलकर मालूम हो जायगा। "

अब बदरुन्निसा प्रसन्नताके मारे फूली न समाती थी। जो तलवार वह अब तक छिपाये हुए थी उसे हाथमें निकालकर वह कहने लगी,—

" मैंने यह तलवार मीना बजारमें बेचनेके लिए रक्खी थी। मेरी बहुतसी सहेलियोंने अपनी बहुतेरी चीजें मेलेमें हजारों मोहरों पर बेची थीं। पर बादमें मैंने इसे ऐसे आदमीको नजर करना चाहा जो मेरे दिलपर कब्जा कर लेता। इसी लिए यह अबतक मेरे पास ही रही। अब मैं यह तलवार आपको नजर करती हूँ। "

इतना कहकर बदरुन्निसाने मुस्कराते हुए वह तलवार उस युवकको दे दी। कुछ ठहरकर उसने कहा,—"क्या मैं अपने मेहरबानका नाम जान सकती हूँ ?"

यु०—" मेरा नाम दलपतिराय है।"

बद०—" यह तलवार आपके पास उसी वक्त तक रहेगी जब तक आपका काम पूरा न हो जायगा। काम हो जानेपर इसे आपको मुझे लौटा देना होगा।"

दलपतिरायने ठण्ढी साँस लेकर कहा,—"पर वह दिन अभी बहुत दूर है।"

बद०—" अगर वह दिन दूर है तो मैं उसे पास लेआऊँगी। जो शाहंशाह आपके बुन्देलखण्ड पर हुकमत करता है, उसके दिलपर मैं हुकूमत करती हूँ। इस लिए बुन्देलखण्डके आजाद होनेमें ज्यादः देर न लगेगी। "

दलपतिरायने चकित होकर पूछा,—" आखिर तुम हो कौन, जिसकी हुकूमत शाहंशाहके दिल पर चलती है ? "

बद०—" मैं उसी शाहंशाहकी लड़की हूँ। मेरा नाम बदरुन्निसा है। बादशाह पर बदरुन्निसाका कितना जोर है, यह सब लोग जानते हैं। "

दल०—(आश्चर्यसे) " तब तो तुम मुसलमानी हो, हमारे जानी दुश्मनकी लड़की हो ! "

वदरुन्निसाने कोई उत्तर नहीं दिया।

थोड़ी देरमें अरुणको आकाश-गंगाके किनारे छोड़कर उषासुन्दरी आकाशके परदेमें चली गई। वदरुन्निसाने भी दलपतिरायको यमुना किनारे उसी आश्चर्य-चकित अवस्थामें छोड़ शाही महलोंका रास्ता लिया।

\+ + + +

तेरहवाँ प्रकरण।

गुप्त मंत्रणा।

वीरसिंह देव अवश्य ही वहुत वड़े वीर थे। उन्होंने अपने पराक्रमसे मुगल-साम्राज्यमें उपद्रव मचा रक्खा था। स्वतंत्रताके प्रेमी वुन्देले समझने लगे थे कि वे अकवरकी राजनीतिज्ञताको भी हवा वतावेंगे और अपने दादा रुद्रप्रतापकी वुन्देलखण्डको स्वतंत्र करनेकी अन्तिम इच्छा पूरी करके ही छोड़ेंगे। उनके वड़े भाई राजा रामचन्द्रशाहका उन पर वहुत अधिक प्रेम था। अगर उन दोनों भाइयोंमें वह प्रेमभाव सदा वना रहता तो देशमें मुसलमानोंका उपद्रव कहीं रहने न पाता। परन्तु वुन्देलखंडके पुराने आनुवंशिक रोगने वीर-सिंहदेवका भी पीछा न छोड़ा। उन्हें यह वात वहुत ही खटकने लगी कि मैं तो समरभूमिमें लड़ता भिड़ता और अपना पराक्रम दिखलाता फिरूँ और रामचन्द्र-शाह ओड़छेके राजसिंहासन पर वैठ कर मेरे परिश्रमका फल भोगें। गृह-कलह आरम्भ हुआ। ओड़छेका जो अलंकार—वीरसिंहदेव—स्वतन्त्रतादेवीके गलेमें सुशोभित होनेके योग्य था वह अव शाहजादा सलीमके अंगमें जा पड़ा। अवुलफजल सरीखे विद्वान्‌की निर्दयतासे हत्या करके उन्होंने शाहजादा सली-मको अपने ऊपर प्रसन्न किया और ओड़छेमें गुलामीकी नींव डाली। थोड़े ही दिनोंमें राजा रामचन्द्रशाहको गद्दीसे उतार कर वीरसिंहदेव ओड़छेके राजा वन वैठे। राज्य पानेके उपरान्त उन्होंने अपने ऊपर लगा मांडलिकताका और अपने राज्य पर लगा हुआ दासताका कलंक धो डालनेके लिए अनेक प्रयत्न किये, पर उनका कोई फल नहीं हुआ। उलटे वुन्देलखण्डके जो दो चार राजे स्वतन्त्र थे उनकी स्वतन्त्रता भी जाती रही। वीरसिंहदेवने जो विष-वृक्ष लगाया था उसके कड़ुए फल समस्त वुन्देलखण्डको चखने पड़े।

पहाड़सिंह राजा वीरसिंहदेवके इकलौते पुत्र थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि गृह-कलहके कारण ओड़छेका राजकीय वैभव धीरे धीरे किस प्रकार नष्ट होता गया और अन्तमें शाहजहाँके समय वे स्वयं ओड़छेसे किस प्रकार निकाल दिए गये थे; तथापि जिन चम्पतरायकी सहायतासे उन्हें ओड़छेका राज्य फिरसे मिला था, उन्हींके साथ द्वेष और मत्सर करना उन्हें अपना कर्त्तव्य जान पड़ने लगा। उनकी स्त्री रानी हीरादेवी भी बड़ी ही विकट स्त्री थी। यदि उसने अपनी उग्रता, दृढ़निश्चय और साहसका उपयोग न्यायमार्गमें किया होता और अपने पति राजा पहाड़सिंहको चम्पतरायके स्वतन्त्रतासम्बन्धी प्रयत्नोंमें सहायता करनेके लिए उत्साहित किया होता तो वह समस्त बुन्देलखण्डकी पूज्य हो जाती। परन्तु ओड़छेका राज्य पानेके कुछ ही दिनों बाद पहाड़सिंह और हीरादेवीको गृह-कलहके रोगने आ घेरा। शुक्ल पक्षकी चन्द्रकलाकी तरह चम्पतरायकी बढ़ती हुई कीर्ति वे लोग शीतल हृदयसे न देख सके। उन दिनों बुन्देलोंमें यह उदारता नाम-मात्रको भी न थी कि वे पराएका उत्कर्ष देख सकते; इसी लिए राजा पहाड़सिंह और हीरादेवीका पक्ष धीरे धीरे बढ़ने लगा। रानी हीरादेवी अपनी उत्कट बुद्धिमत्ताका उपयोग अपना पक्ष बढ़ानेमें करने लगी। बुन्देलखण्डके सभी छोटे बड़े राजे अपनी कायरता और ईर्ष्या आदिके कारण अथवा हीरादेवीके कपट-नाटकके कारण ओड़छेके राजमहलमें एकत्र होकर चम्पतराय और उनके प्रयत्नोंके विरुद्ध षड्यंत्र रचने और गुप्त मंत्रणायें करने लगे। तथापि हीरादेवी यह बात अच्छी तरह समझती थी कि सागरके प्रतापशाली राजा शुभकरण जबतक चम्पतरायके पक्षमें रहकर उनकी सहायता करेंगे तबतक हम लोगोंका पक्ष कमजोर ही रहेगा; इसी लिए अन्तमें हीरादेवीने शुभकरणको भी अपने जालमें फँसा लिया और उन्हें अपने पक्षमें कर लिया। तबसे चम्पतराय अकेले स्वतंत्रताके लिए लड़ने लगे। हीरादेवी और उनके पक्षके राजे चुपचाप तटस्थ रहकर चम्पतरायके नाशकी प्रतीक्षा करने लगे।

जहाँगीर बादशाहसे भेंट करनेके लिए वीरसिंहने जो सुन्दर प्रासाद बनवाकर ओड़छेकी स्वतंत्रता पर परतंत्रताका सिक्का जमाया था वह प्रासाद आज लोगोंसे खूब भरा हुआ था। रानी हीरादेवी उस प्रासादके मुख्य द्वार पर खड़ी होकर आनेवाले लोगोंका स्वागत कर रही थी। राजा पहाड़सिंह भी यह काम बहुत अच्छी तरहसे कर सकते थे; पर स्वागतके बहाने जो कार्य्य सिद्ध करना

था, हीरादेवीने उसे दूसरेको सौंपना ठीक न समझा। इस लिए वह स्वयं प्रासादके द्वारपर मुसकराती हुई खड़ी थी और प्रत्येक व्यक्तिको बड़ी ही तीव्र दृष्टिसे देख रही थी। बहुतसे निमंत्रित लोग आ गये थे; पर इस बातका उसे रह रह कर बहुत ही आश्चर्य होता था कि शुभकरण अभी तक क्यों नहीं आए। उनके पास आदमी भेजनेका वह विचार कर रही थी कि इतनेमें शुभकरण वहाँ पहुँच गये। बड़े ही आदर-सत्कारसे उनका स्वागत करके रानी हीरादेवी उन्हें दीवानखानेकी तरफ ले चली। इसके बाद ही प्रासादका मुख्य द्वार बन्द करा दिया गया और लोगोंके भीतर आनेकी मनाही हो गई।

दीवानखाना आज बहुत अच्छी तरह सजाया गया था। व्यासपीठ पर राजा पहाड़सिंह बैठे थे और उनके पासके दो आसन खाली पड़े हुए थे। बाकी सारा कमरा अनेक छोटे मोटे राजों, जागीरदारों, सरदारों, और वीरोंसे भरा हुआ था। संरक्षण, अधिकार और न्याय आदिके रूपमें प्रजाको तनिक भी प्रतिफल न देकर उनकी गाढ़ी कमाईसे बनवाए हुए बढ़िया बढ़िया अलंकार और आभूषण सब लोग पहने हुए बड़े ठाठसे बैठे हुए थे। इतना बड़ा दीवानखाना इतने आदमियोंसे भरा हुआ था पर तो भी वहाँकी शान्ति श्मशानकी शान्तिको मात करती थी। मालूम होता था कि ये लोग राजे और सरदार नहीं हैं बल्कि मिट्टीके पुतले हैं। जो लोग अपना कर्त्तव्य पालन न करते हों, जिनमें क्षात्र तेजका नाम भी न हो और जिनका चैतन्य प्रायः शून्यत्व तक पहुँच गया हो उन्हें चलते फिरते मिट्टीके पुतले कहनेमें हर्ज ही क्या है।

शुभकरण और हीरादेवीके आनेपर प्रायः सभी राजे और सरदार आदि उठकर खड़े हो गये और उनकी आव-भगतमें लग गये। थोड़ी देर बाद उन लोगोंके अपने अपने आसनोंपर बैठ जाने पर गड़बड़ी शान्त हो गई और पहलेकी तरह फिर स्तब्धता छा गई। उस समय रानी हीरादेवीने एक बार अपने पति राजा पहाड़सिंहकी ओर देखा और तब अपने स्थान पर बैठे बैठे इस प्रकार कहना आरम्भ किया,—

"राजाओ तथा सरदारो! आज इस स्थान पर हम लोग जिस प्रश्नपर विचार करनेके लिए इकट्ठे हुए हैं वह बड़े ही महत्त्वका है; इसी लिए मैंने इस बातका पूरा पूरा प्रबन्ध कर लिया है कि जो लोग हमारी इस गुप्त मंडलीमें सम्मिलित नहीं हुए हैं वे यहाँ न आने पावें। तो भी संभव है कि मुझसे कहीं

भूल हो गई हो और इतने बड़े जमावड़ेमें कोई बाहरी भी हम लोगोंका भेद लेनेके लिए किसी प्रकार यहाँ पहुँच गया हो। इस लिए आप लोग अपने आस-पासके लोगोंको अच्छी तरह देख लें, और तब उसके उपरान्त आजका कार्य्य आरम्भ किया जायगा।"

इतना कहकर हीरादेवी थोड़ी देरतक चुप रही और जब किसी तरफसे कोई आवाज न आई तब वह उन लोगोंकी ओर देखकर बहुत प्रसन्न हुई और मन-ही-मन अपने प्रबन्धकी प्रशंसा करने लगी। उसे इस बातका भी बहुत अभिमान हो रहा था कि मैंने अपनी विलक्षण चतुरता और योग्यतासे अपना पक्ष इतना प्रबल और विस्तृत कर लिया है। उसी अभिमान और आनन्दसे पुलकित होकर वह फिर कहने लगी,—

"अच्छा मालूम हो गया कि हम लोगोंमें कोई अजनबी या भेदिया नहीं है। अब आप लोग सावधान होकर मेरी बातें सुनें। आप लोगोंको इस स्थानपर एकत्र हुए प्रायः सोलह वर्ष हो गये। आजसे सोलह वर्ष पहले जिस दिन साग-रके महान् प्रतापशाली राजा शुभकरण दृढ़ प्रतिज्ञा करके हम लोगोंकी मंडलीमें सम्मिलित हुए थे उसी दिन हम सब लोग यहाँ एकत्र हुए थे। कालके प्रभा-वसे इन सोलह वर्षोंमें बहुतसे हेर फेर हो गये। कालने हम लोगोंसे बहुतेरे नररत्न छीन लिये और उनमेंसे बहुतोंके स्थानापन्न उनके पुत्र हुए। इस परि-वर्त्तनके कारण हम लोगोंको संसारका अनुभव और ज्ञान ही हुआ है, हमारी कोई हानि नहीं हुई। हमारा पक्ष पहलेकी अपेक्षा अधिक सबल और विस्तृत है। परंतु इन सोलह वर्षोंमें अनेक दृष्टियोंसे हमारे शत्रु–पक्षकी भी बहुत कुछ उन्नति और वृद्धि हुई है। उसने अपनी राजतृष्णाके स्वतंत्रता, दास्य-विमोचन और परोपकार आदि सुन्दर और मधुर नाम रखकर बुन्देलखंडमें बहुत कुछ लोकमान्यता प्राप्त की है। प्राणनाथ प्रभुने जंगलमें एकान्तवास करना छोड़कर महेवाके राजमहलमें डेरा डाला है। इससे चम्पतरायका पक्ष और भी प्रबल हो गया है। हम लोगोंकी प्रजाके मनसे यह कल्पना नष्ट होती जाती है कि हमारा राजा परमेश्वरका अवतार है; और सब लोगोंका ध्यान चम्पतराय और उनके उद्देश्यकी ओर लग गया है। हम लोगोंकी प्रजामें यह अराजक भावना उत्पन्न होने लगी है कि वह हम लोगोंकी आज्ञा क्यों माने? अब सब लोगोंकी प्रवृत्ति चम्पतरायकी आज्ञा माननेकी ओर हो रही है। यदि यही दशा और कुछ दिनों

तक वनी रही तो चम्पतरायकी राजतृष्णा पूरी करनेके लिए हम लोगोंकी प्रजा हमें राजभ्रष्ट करनेमें आगा पीछा न करेगी। अपने ऊपर आनेवाली इस भावी आपत्तिको हम लोगोंने पहले ही सोच लिया था और उसीसे वचनेके लिए हमें ऐसे ऐसे कार्योंके लिए एक गुप्त मंडली वनानी पड़ी। आप लोग अभीसे यह वात अच्छी तरह समझने लग गये होंगे कि इस मंडलीमें सम्मिलित होकर आप लोगोंने कैसी दूरदर्शिता और देशोपकारका काम किया है। उस दिन विन्ध्यवासिनी देवीके महोत्सवके समय चम्पतरायने दिल्ली दरवारके प्रतिष्ठित सरदार रणदूलहखाँको कैद कर लिया। अव जव शाही फौजके आक्रमणकी आशंका हुई तव उन्होंने अपनी सहायताके लिए वुन्देलखंडके राजाओं और सरदारोंके नाम एक प्रार्थनापत्र निकाला है। पहले आप लोग एक वार उस प्रार्थनापत्रको सुन लें।"

हीरादेवीका रुख पाकर वेचारे पहाड़सिंह उठ खड़े हुए और लोगोंको प्रार्थनापत्र पढ़कर सुनाने लगे,—

प्रार्थनापत्र।

" वुन्देलखण्डके राजाओ, सरदारो तथा सपूतो! आप सव लोग जानते हैं कि वुन्देलखंडमें मुसलमानोंका अधिकार दिन पर दिन वढ़ता जाता है और यह नहीं कहा जा सकता कि अव वह अधिकार कहाँतक वढ़ जायगा। इस लिए लोगोंको अपना वैर-भाव छोड़कर एकमें मिल जाना चाहिए और स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करना चाहिए। धर्मगुरु महाराज प्राणनाथ प्रभुने आज्ञा दी है कि सव लोग मिलकर अपने देश और धर्म्मकी रक्षा करें। विना स्वतंत्रताके देश और धर्मकी रक्षा नहीं हो सकती। इस लिए मैं वुन्देलखंडके प्रत्येक धर्म्मवीर और देशसेवीसे प्रार्थना करता हूँ कि वह युद्धके लिए तैयार होकर महेवा आनेकी कृपा करे।

सारे वुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके लिए मैं हर तरहसे प्रयत्न करनेको तैयार हूँ। ऐसे उदात्त कार्यमें सहायता करना प्रत्येक वुन्देले राजे और प्रत्येक वुन्देले वीरका कर्त्तव्य है। इस लिए समस्त वुन्देले राजाओं और सरदारोंसे प्रार्थना की जाती है कि इस प्रार्थनापत्रके पानेके एक महीनेके अन्दर सव लोग अपने अपने मित्रों, सहायकों और सैनिकों सहित महेवा पहुँच जायँ और स्वतंत्रताके झंडेके नीचे खड़े हों। जो लोग ऐसा न करेंगे वे देशद्रोही और शत्रु समझे जायँगे और उन्हें उचित दंड देना हम लोगोंका प्रधान कर्त्तव्य होगा। ह० चम्पतराय।"

पहाड़सिंह प्रार्थनापत्र सुनाकर फिर अपने स्थान पर बैठ गये।

उनके बैठ जाने पर रानी हीरादेवीने फिर कहना आरम्भ किया,—

"आप लोगोंने अपना यह अपमानकारक प्रार्थनापत्र सुन लिया। इसी प्रार्थनापत्रसे चम्पतराय मानो आप लोगोंको महेवा पहुँचनेकी आज्ञा दे रहे हैं और अगर आप लोग उनकी आज्ञा न मानेंगे तो देशद्रोही समझे जायँगे! उस दशामें चम्पतराय आपको अपना शत्रु समझेंगे और आपको राज्यसे उतार कर दण्ड देंगे! और जिस पत्रमें इतनी बातें हैं उसका नाम है प्रार्थनापत्र! शाही फरमानोंमें भी जो अभिमान नहीं झलकता, वह अभिमान इस प्रार्थनापत्रके प्रत्येक शब्दमें कूट कूट कर भरा हुआ है। अब तो आप लोगोंकी आँखें खुलीं न? अब तो आप लोगोंको होश हुआ न? स्वधर्म और स्वदेशकी रक्षा और स्वतंत्रताप्राप्ति आदिके परदेमें छिपी हुई चम्पतरायकी राक्षसी राजतृष्णाका पता अब तो आप लोगोंको लग गया न? चम्पतराय भी अच्छी तरह समझते हैं कि इस प्रार्थनापत्रवाली उनकी आज्ञा बुन्देलखण्डका कोई आत्माभिमानी राजा न मानेगा। इसी लिए वे समझे बैठे हैं कि एक महीनेमें जो राजा हमारे पक्षमें आकर न मिल जायगा उसे हम अपना शत्रु समझ लेंगे और उसका राज्य हड़पनेके उद्योगमें लग जायँगे। यदि इस समय हम सब लोग एक होकर चम्पतरायका मुकाबला करनेके लिए तैयार न हो गये तो बहुत जल्दी हम लोगोंको चम्पतरायका गुलाम हो जाना पड़ेगा। इस गुलामीसे बचनेके लिए और इस आपत्तिसे रक्षित रहनेके लिए हम लोगोंको अपनी तटस्थवृत्ति और आलस्य छोड़कर अपने हाथोंमें शस्त्र लेना चाहिए। यह बात आप लोग भूल न जाइएगा कि इस बार चम्पतरायसे मुठभेड़ होगी। साथ ही इस बातका भी ध्यान रखिएगा कि इस काममें आप लोगोंके साथ शाहंशाह देहलीकी पूरी सहानुभूति है और इसी लिए आप लोग उनसे बहुत कुछ सहायता पानेकी भी आशा रख सकते हैं। मुझे जो कुछ कहना था सो मैं कह चुकी। अब यदि आप लोगोंको इस सम्बन्धमें कुछ कहना हो तो कहें।"

हीरादेवी बड़ी ही तीव्र दृष्टिसे देखने लगी कि मेरी बातोंका सुननेवालों पर क्या प्रभाव पड़ा। इतनेमें कालिंजरके वृद्ध राजा उठ कर खड़े हुए और कहने लगे,—

"स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए चम्पतराय जो इतना प्रयत्न कर रहे हैं, मेरी समझमें नहीं आता कि उसका अर्थ क्या है ? हम लोगोंको अभी कौनसी पराधीनता है ? हम लोग स्वच्छन्दतासे खाते पीते और आनन्दसे भोग-विलास करते हैं। हमारे कामोंमें तो कोई विघ्न डालने नहीं आता। अपने राज्यका प्रवन्ध करनेमें भी हम लोगोंको पूरी स्वाधीनता है। अगर हमारे राज्यका प्रवन्ध ठीक न हो तो उसके लिए कोई हमसे कैफियत नहीं माँगता, अगर हमारी प्रजा दुःखी हो तो उसकी ओरसे कोई हमें धमकाने नहीं आता और यदि हम उसे सब तरहसे सुखी भी रक्खें तो कोई हमारी कदर नहीं करता।

शाही खजानेमें हम लोग जो खिराज भेजते हैं उसके वदलेमें शत्रुओंसे हमारी रक्षा हो जाती है, हम लोग वहुतसी झंझटोंसे वचे रहते हैं। ऐसे उत्तम अवसरको तो और भी धन्य समझना चाहिए। चम्पतरायने कभी जीवनभर राजकीय सुख तो भोगा ही नहीं; फिर वे उसकी कदर क्योंकर जान सकते हैं ? राज्यमें जहाँ इतने खर्च होते हैं वहाँ एक शाही खिराज भी सही। सिर्फ उसीके लिए शस्त्र उठाने और लड़ने-भिड़नेका विचार चम्पतरायके मनमें कहाँसे आ समाया ? खिराजके रुपये तो प्रजासे वसूल किए और शाहीखजानेमें भेज दिए, वस छुट्टी हुई। इतने वड़े साम्राज्यको छोड़ कर उलटे उससे लड़नेके लिए तैयार होना नाव परसे अथाह जलमें कूद पड़ना नहीं है तो और क्या है ? वैठे वैठाए आफतको न्योता देना कहाँकी समझदारी है ? मैंने तो उन्हें पहले ही कहला दिया कि भाई, न तो हमें तुम्हारी स्वतन्त्रता चाहिए और न हम अकारण वड़ोंसे वैर कर सकते हैं। हाँ अगर हम लोगोंमेंसे किसी पर कोई वात आवेगी, तव देखा जायगा।"

कालिंजरके वृद्ध राजासाहव अपना भाषण समाप्त करके वैठना ही चाहते थे कि इतनेमें अजयगढ़के राजा साहव उठ खड़े हुए और कहने लगे,—

"स्वतन्त्रताके सम्वन्धमें जो कुछ कहना था वह तो कालिंजरके राजासाहव कह ही चुके। पर प्राणनाथ प्रभु और उनके शिष्योंने जो यह वहाना निकाल रक्खा है कि मुसलमानोंकी सत्ताके कारण हम लोगोंके धर्म्मका ह्रास हो रहा है, उसके विषयमें भी—"

वीचमें ही शुभकरणके गगनभेदी स्वरसे सारा दीवानखाना गूँजने लगा। "यहाँ आप लोगोंकी सलाहकी जरूरत नहीं है। आप लोग शान्त होकर वैठे

रहिए। यह समय इस बातके विचारका नहीं है कि चम्पतराय स्वतंत्रताके लिए जो प्रयत्न कर रहे हैं वह प्रशसनीय है या नहीं, उनके प्रयत्नोंकी आड़में राजतृष्णा छिपी हुई है या नहीं, अथवा यवनोंकी सत्ताके कारण हमारे धर्म्मका नाश होता है या नहीं। उस समयको बीते आज सोलह वर्ष हो गये। अब तो हम लोगोंका यही कर्तव्य है कि हम लोगोंने जो प्रतिज्ञा की है उसे पूर्ण करनेका प्रयत्न करें! चाहे चम्पतरायका प्रयत्न न्याय-संगत जान पड़े और चाहे बिना उनकी सहायता किये देश और धर्म्म डूब जाय, हम लोगोंको तो अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी चाहिए। अब तक हम लोग इसी आशापर चुपचाप बैठे हुए थे कि चम्पतरायको मुगल-सम्राटके यहाँसे दण्ड मिलेगा। पर अब इसी आशापर चुपचाप तटस्थ होकर बैठे रहना मानो अपनी प्रतिज्ञामें बट्टा लगाना है। मुसलमानोंसे चाहे हमें सहायता मिले और चाहे न मिले, हम लोगोंको अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए हाथमें तलवार लेकर चम्पतरायसे भिड़ जाना चाहिए।"

शुभकरणकी ओर कृतज्ञता भरी दृष्टिसे देखकर हीरादेवी कहने लगी,—

"यह तो आप लोग अच्छी तरह समझ ही चुके हैं कि आज आप लोगोंके यहाँ एकत्र होनेका मुख्य उद्देश्य क्या है। चम्पतराय बहाना ढूंढ़कर अपनी राज-तृष्णा पूरी करना चाहते हैं। एक महीनेका समय बहुत जल्दी ही बीत जायगा और उसका वास्तविक स्वरूप सब लोगोंको आप ही दिखलाई पड़ने लगेगा। पर इससे पहले ही हम लोगोंको चम्पतरायके मुकाबलेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। अब तक तो इस सम्बन्धमें जितने काम होते थे वह सब मैं करती थी। पर अब लड़ाई-भिड़ाईका काम आरम्भ होनेवाला है, अब समरभूमिमें घोर संग्राम करना ही आप लोगोंका मुख्य कर्त्तव्य रह गया है, इस लिए मैं चाहती हूँ कि आगे इस सम्बन्धमें जो कुछ काम हो वह सब सागरके प्रतापशाली राजा शुभकरणके आज्ञानुसार हो। सब राजाओंकी सेनाके प्रधान संचालक अब वही होंगे। इस लिए आप लोग अपनी सारी सेनायें उन्हींकी अधीनतामें छोड़ दें और जहाँतक हो सके सब प्रकारसे उनकी सहायता करें। एक बात मैं आप लोगोंको और बतलाना चाहती हूँ। उसे सुनकर आप लोग अच्छी तरह समझ लेंगे कि जीत आपके ही पक्षकी ओर

अवश्य होगी। आज इस स्थान पर ढाँड़ेरके राजा कंचुकीरायको न देखकर बहुतेक लोगोंको आश्चर्य हुआ होगा। कुछ लोग शायद यह भी सन्देह करने लगे होंगे कि वह हम लोगोंकी मण्डलीसे अलग हो गये होंगे। पर हम लोग यहाँ बैठकर जितना काम कर रहे हैं, उससे भी अधिक और महत्त्वपूर्ण काम करनेके लिए वह बादशाहकी सेवामें दिल्ली गये हैं। वहाँ पहुँच कर वह बादशाहसे निवेदन करेंगे कि रणदूलहखाँको चम्पतरायने कैद कर लिया है। कंचुकीराय स्वयं चम्पतरायके खेमेमें रणदूलहखाँसे मिले थे; खाँसाहबने बादशाह सलामतके लिए उन्हें जो सन्देशा दिया था, वही सन्देशा लेकर वह दिल्ली गये हैं। आप लोगोंको यह बतलानेकी जरूरत नहीं कि बादशाहको अपनी और अपने सरदारोंकी मान-मर्य्यादाकी रक्षाका कितना ध्यान रहता है। कंचुकीरायके मुँहसे जब बादशाह सब बातें सुनेंगे तो आगबबूला हो जायँगे और आकाश पाताल एक कर डालेंगे। दिल्लीके साम्राज्यमें लगे हुए चम्पतराय-रूपी कलंकको धो डालनेके लिए शाही फौज समुद्रकी तरह महेवा तरफ चल पड़ेगी। उस समयका आनन्द देखते ही बन पड़ेगा। वह सब दशा चाहे मैं स्वयं न देख सकूँ पर तो भी उसका समाचार सुनकर ही मुझे जो आनन्द होगा उसका मैं वर्णन नहीं कर सकती। कंचुकीरायको अपना काम करके तो दो दिन पहले ही यहाँ आ जाना चाहिए था, पर न जाने क्यों वे अभी तक नहीं आए। उनके न आनेको भी मैं एक शुभ शकुन ही समझती हूँ। उन्हें शायद इसी लिए देर हुई है कि उन्होंने शाही फौजके साथ ही आना निश्चय किया होगा। अब देखना यही है कि चम्पतराय और उनके लड़के छत्रसाल अपनी कौनसी बहादुरी दिखलाते हैं।"

हीरादेवीकी बातें सुनकर सब लोग और भी प्रसन्न हुए; पर कालिंजरके राजाको जरा भी प्रसन्नता न हुई। उलटे वे कुछ घबरायेसे जान पड़ने लगे। वे बहुत साहस करके उठे और उसी घबराहटमें कहने लगे,— "अगर दिल्लीसे आनेवाली शाही फौज महेवा न जाकर हम ही लोगों पर टूट पड़ी तब?"

हीरादेवीने कुछ बिगड़ कर कहा,—"आप भी कैसी बातें करते हैं! हम पर बादशाहकी नाराजगी क्यों होने लगी?"

रा०—"हम पर अगर बादशाह न नाराज हों तो भी वह चम्पतराय पर खुश हो सकते हैं। और तब फिर वह प्रचण्ड सेना बुन्देलखण्डमें आकर क्या करेगी?"

हीरादेवीने और भी बिगड़ कर कहा,—"आप भी बड़े ही कायर जान पड़ते हैं। व्यर्थ अमंगलकी बातें न करके आप अपने मनको ही कुछ ढाढस दें तो कुछ हरज है? क्या कहूँ? कंचुकीरायका कोई सन्देशा या उनका नौकर किशुन भी अभी तक नहीं आया, नहीं तो मैं आपका पूरा पूरा सन्तोष करा देती।"

इतनेमें ही हीरादेवीकी दासी गिरिजाने वहाँ पहुँच कर अपनी मालकिनसे कहा,—"सरकार! किशुन दिल्लीसे लौट आया है, और हाजिर होना चाहता है।"

हीरा०—"अरे! किशुन लौट आया?

गि०—"हाँ सरकार!"

हीरा०—"जाओ, और उसे जल्दी यहाँ ले आओ। वह कंचुकीरायका कोई जरूरी सन्देशा लाया होगा।"

थोड़ी ही देर बाद हीरादेवीने देखा कि थका-माँदा पसीनेसे लथपथ और धूलसे भरा हुआ किशुन चला आ रहा है। उसका चेहरा भी उस समय बहुत उदास जान पड़ता था। उसके चेहरेपरकी उदासी, निराशा और निरुत्साह देखकर हीरादेवीका चेहरा भी उतर गया। वह समझ गई कि किशुन कोई बुरी खबर लाया है और शायद हम ही लोगोंपर कोई आफत आनेवाली है। किशुन कुछ देर तक चुपचाप उसके सामने खड़ा रहा; पर उसी सोच-विचारमें पड़ी रहनेके कारण हीरादेवीने उससे कुछ भी न पूछा। अन्तमें किशुनने स्वयं ही कहा,—"सरकार! वहाँ तो बहुत ही बुरा हुआ।"

हीरा०—"क्या हुआ? क्या हुआ? जल्दी कहो। (किशुनको चुप देखकर कुछ क्रोधसे) तुम वक्त बेवक्त कुछ भी नहीं समझते। जो बात हो, चटपट कहो।"

किशु०—"सरकार हम लोग चित्रकूटसे चलकर आठ दिनमें दिल्ली पहुँचे। वहाँ पहुँचते ही राजा साहब पहले रोशनआरा बेगमसे मिलनेके लिए शाही-महलमें गये। मैं दिन भर ड्योढ़ी पर बैठा बैठा उनका आसरा देखता रहा, पर वे नहीं आए। दूसरे दिन भी जब सारा दिन बीत गया और वे नहीं लौटे तो मुझे बहुत शक हुआ।"

पहाड़सिंहने बीचमें ही पूछा,—" पर वह बादशाह सलामतके दरबारमें न जाकर पहले महलमें रोशनआराके पास क्यों गये ? "

हीरा०—" बादशाह सलामत बहुत बीमार थे, इस लिए आजकल सब कारबार रोशनआरा बेगम ही करती थीं। इसी वास्ते वह पहले बेगम साहबसे मिलने गये थे। (किशुनसे) हाँ तब फिर तुमने क्या किया ? "

किशु०—" मैं दो दिनतक बराबर उनका पता लगानेके लिए इधर उधर घूमता था और सब लोगोंसे पूछता फिरता था, पर कहीं कुछ पता न—"

हीरा०—(अधीर होकर) " शायद यही खबर सुनानेके लिए तुम यहाँ आए हो ? "

किशु०—" सरकार, पहले सुनिए तो सही। तीसरे दिन, सवेरे मैं शाही-महलमें जानेका उपाय सोचने लगा, उस दिन रमजानकी पचीसवीं तारीख थी। उस दिन दीवान-ए-आममें बड़ा भारी शाही दरबार होनेको था; पर मेरा ध्यान पहरेवालोंकी तरफ लगा था। मैं यही सोच रहा था कि उन लोगोंसे किसी तरह मिल-मिलाकर महलमें जाऊँ। थोड़ी देरमें बहुतसी तातारी स्त्रियाँ भीतरसे निकलीं। मैंने उनसे राजा साहबका हाल पूछा, पर किसीने जवाब तक न दिया। अन्तमें मैंने उनमेंसे एकको कुछ अशरफि-योंका लालच दिया तब उसने मुझे सब बातें बतलाईं। उसकी बातोंसे मालूम हुआ कि रोशनआरा बेगमको उनकी बातोंका विश्वास नहीं हुआ, इस लिए वह महलमें ही नजरबन्द कर लिये गये। अब जब बेगम साहबको इस बातका पूरा पूरा विश्वास हो जायगा कि चम्पतरायने रणदूलहखाँको कैद कर लिया है और राजा साहबकी सब बातें ठीक हैं, तब उनका छुटकारा होगा। फिर और भी दो एक आदमियोंसे मुझे यही बात मालूम हुई। तब लाचार उसी दिन सन्ध्या-को मैं वहाँसे चल पड़ा और पहले यहीं आया।"

कुछ देरतक चुप रहनेके उपरान्त ही हीरादेवीने कहा,—" अगर राजा साहबकी बातोंका बेगम साहबको विश्वास नहीं हुआ तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। बेगम साहबको विश्वास दिलानेके लिए ही तो रणदूलहखाँने राजासाहबको निशानीवाली कटार दी थी, पर वह कटार तो उन्होंने छत्रसालको दे दी। नहीं तो यह नौबत क्यों आती। खैर, इसमें दुखी या निराश होनेकी कोई बात नहीं है। इससे यह न समझना चाहिए कि शाहीदरबारसे हम लोगोंको मदद

न मिलेगी। आज नहीं तो दो दिन बाद रणदूलहखाँका पूरा पूरा हाल वेगम साहबको मालूम हो जायगा। बस फिर जो कुछ होना होगा वह आप ही हो जायगा। चाहे जो हो, पर अब चम्पतराय किसी तरह बच नहीं सकते।"

हीरादेवीकी बात सुनकर किशुनको मानो कुछ याद हो आया। उसने कहा,—"सरकार! मैंने तो दिल्लीमें सुना कि राजा चम्पतराय और छत्रसालपर बादशाह बहुत खुश हैं। उन्हें उसी दिनके दरबारमें बारह-हजारी मन्सब मिला—वे शाही दरबारके अमीर बनाए गये और वहाँ उनकी खूब इज्जत खातिर हुई। उस दिन सारे शहरमें उसीका शोर था।"

हीरा०—(बड़े ही आश्चर्यसे) "किशुन तुम्हें क्या हो गया है? चम्पतरायको मन्सब क्यों मिलने लगा? तुम पागल तो नहीं हो गये हो जो ऐसी बातें कर रहे हो? कंचुकीरायकी जो खबर तुमने बताई वह भी तो इसी तरह ऊटपटाँग नहीं है? तुम्हें सब बातें अच्छी तरह याद तो हैं न?"

किशुनने खूब दृढ़ होकर कहा,—"सरकार! यह आप क्या कहती हैं? मैंने जो जो बातें वहाँ देखी सुनीं वही सब आपसे कही हैं। और फिर दो चार दिनमें चम्पतराय खूब धूम धामसे आते ही होंगे। उस वक्त आप ही मेरी बातकी सचाई खुल जायगी।"

हीरा०—"चम्पतराय यहाँसे होकर कहाँ जायँगे?"

किशु०—"वह महेवा लौट जायँगे।"

हीरा०—"तुम्हें मालूम है, वह महेवासे चले कब थे?"

किशु०—"नहीं सरकार, यह तो मुझे नहीं मालूम। पर हाँ, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि दरबारके दिन वे, युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय वहीं थे। मैंने भी उन लोगोंको दो तीन बार देखा था।"

शुभ०—"क्या चम्पतराय शाही दरबारमें हाजिर हुए थे? स्वतन्त्रताकी डींगें हाँकनेवाला चम्पतराय दरबारी बने? बारह हजारकी मन्सबदारी उन्हें स्वतन्त्रतादेवीके प्रसादसे अच्छी जान पड़ी? आजतक स्वतन्त्रताके लिए उन्होंने जो कुछ किया, वह सब क्या केवल ढोंग था? क्या हीरादेवीका कहना ही ठीक है कि उनके मनमें राजतृष्णा दबी हुई है? विन्ध्यवासिनीकी भक्ति, प्राणनाथ प्रभुकी प्रतिष्ठा और प्रजाके कल्याणकी चिन्ता दिखलाने

भरको ही थी ? किशुन ! भरे दरबारमें चम्पतरायने मन्सबदारी स्वीकार की थी न ? ”

किशु०—“ नहीं सरकार, मैंने तो सुना कि जो मन्सबदारी उन्हें दी गई थी, उसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया । उन्होंने भरे दरबारमें कह दिया था कि बादशाह बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र कर दें, और नहीं तो इसके सिवा मैं और कुछ नहीं चाहता । वहाँके लोग इस बातके लिए उनकी बहुत तारीफ करते थे कि भरे दरबारमें, हजारों राजों, महाराजों, अमीरों और सरदारोंके सामने उन्होंने बेधड़क हो कर ऐसी बात कही: और अपने आदर-सत्कारका ध्यान छोड़कर केवल अपने देशका ध्यान रक्खा । ”

शुभ०—“ तब फिर उन्होंने बारह हजारकी मन्सबदारी कैसे स्वीकार की ?”

किशु०—“ चम्पतराय दिल्लीमें राजा जयसिंहके यहाँ ठहरे थे । बादशाहने उन्हींकी मारफत चम्पतरायसे मन्सबदारी मंजूर करनेके लिए कहलाया था । राजा जयसिंहके बहुत कहने सुनने पर उन्हें उनकी बात माननी पड़ी । यह सब मैं सुनी हुई बातें कहता हूँ । पर हाँ, इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने भरे दरबारमें बादशाहके अनुग्रहका तिरस्कार किया था । पर मुझे यह नहीं मालूम कि पीछेसे उन्होंने मन्सबदारी कैसे मंजूर कर ली ।”

कुछ देरतक सोचकर और शान्त होकर शुभकरणने कहा—ठीक है, उसका मतलब तुम नहीं समझ सकते । उसकी तहमें अवश्य कोई बात है । ”

बादशाही दरबारमें चम्पतरायके आदर-सत्कारकी बात सुनकर शुभकरण जितने चकित हुए थे, हीरादेवी उतनी ही दुःखी हुई थी । किशुनकी बातोंसे शुभकरणका आश्चर्य तो दूर हो गया पर हीरादेवीका दुःख दूर न हुआ; उलटे वह और भी बढ़ गया । बादशाही दरबारमें उसके दुश्मनकी बहुत प्रतिष्ठा हुई यह बात उसे बहुत ही असह्य हुई । चम्पतरायपर तो वह बादशाहकी कोपाग्निकी वर्षा कराना चाहती थी, उलटे वह उसके कृपापात्र बन गये । यही सब सोचकर हीरादेवीको चैन न पड़ता था । उसने सोचा कि पहले शान्त होकर इस नए संकटका विचार कर लेना चाहिए और तब आगेका कर्त्तव्य निश्चित करना चाहिए । इसी लिए उसने तुरन्त उस दिनकी बैठकका काम समाप्त कर दिया । राजे और सरदार आदि और कुछ दिनों तक पहाड़सिंहके अतिथि बने रहे ।

सारी रात हीरादेवीको सोचते विचारते ही बीती। उसे नाम मात्रको भी नींद न आई। दूसरे दिन सवेरे जब गिरिजा उसके पास आई तो उसने देखा कि रानीके चेहरे पर आसुरी आनन्द छाया हुआ है। उसे कुछ भय भी मालूम हुआ। इस लिए उसके पैर कुछ ढीले पड़ गये। हीरादेवीने कुछ कड़ककर उससे कहा,—"जाओ, राजा शुभकरणजीसे कहो कि रानी साहबने उन्हें याद किया है।"

थोड़ी देर बाद शुभकरण वहाँ पहुँच गये। बड़ी प्रसन्नतासे हीरादेवीने उनके कानमें कुछ बातें कहीं। उसे सुनते ही शुभकरणका चेहरा काले ठीकरेसा हो गया। उनके मुखपरका तेज जाता रहा और उसके स्थानपर भय, पश्चात्ताप और आत्मनिन्दाके चिह्न चित्रित होने लगे। वह भयभीत दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देखते हुए वहाँसे चले गये।

थोड़ी देर बात हीरादेवीने देखा कि कुम्हलाए हुए फूलकी तरह विजया उसके पास खड़ी हुई है। जान पड़ता था कि उसके हृदयपर बड़ी भारी चोट पहुँची ह।

हीरादेवीने उससे कुछ उपेक्षा जतलाते हुए पूछा,—"तुम यहाँ कैसे आई?"

भयभीत दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देखकर उसने कहा,—"मैं यही जाननेके लिए यहाँ आई थी कि पिताजीको छुड़ानेके लिए आप लोगोंने क्या उपाय सोचा है?"

हीरादेवीने विकट रूपसे हँसते हुए कहा,—"बड़ी आई हैं पिताजीकी दुलारी! हम लोग उनके लिए क्या उपाय सोचेंगे और हम लोगोंके उपायोंसे हो ही क्या सकता है! अब महेवा और ओड़छेके राजघरानोंमें मेल होनेवाला है। राजा चम्पतराय और छत्रसाल दिल्लीसे लौटकर आते होंगे। यहाँ हम लोग उनका आदरसत्कार करेंगे और हो सकेगा तो उन्हींसे कोई उपाय भी कराया जायगा। पर अभी उनके बारेमें कुछ नहीं हो सकता।

बालिका विजया तुरन्त वहाँसे उठ खड़ी हुई। उसकी पहलेवाली बेकली अब दूर हो गई थी। उसने बड़ी ही तुच्छतापूर्ण दृष्टिसे एक बार रानी हीरादेवीकी ओर देखा और तब वह वहाँसे बड़ी ही तेजीसे, हवाकी तरह चल दी।

उसके चले जाने पर हीरादेवी फिर एक बार विकट रूपसे हँसी।

× × × ×

चौदहवाँ प्रकरण ।

हृदये तु हलाहलम् ।

प्रचण्ड ज्वालामुखीके फटनेके कारण जिस प्रकार उसके आसपासकी स्थिति बदल जाती है, भूकम्पके धक्केसे जिस प्रकार किसी लम्बे चौड़े मैदानमें सुन्दर सरोवर उत्पन्न हो जाता है, अथवा जादूकी छड़ी जिस प्रकार पलक मार-तेमें बिलकुल ही नया दृश्य सामने उपस्थित कर देती है, ओड़छेकी प्रजाने देखा कि ठीक उसी प्रकार रानी हीरादेवीके मनकी स्थिति भी बदल गई है। सिंहको अपना क्रूर स्वभाव त्याग कर दयामय बनते देखकर जितना आश्चर्य हो सकता है, चरती हुई गौओंको देखकर प्रसन्न होनेवाले बाघके देखनेसे जो आनन्द हो सकता है और साँपको अपनी दुष्टता छोड़कर सज्जनताका व्यवहार करते देखकर जो समाधान सम्भव है, ओड़छेकी प्रजाको आज वही आश्चर्य, वही आनन्द और वही समाधान हो रहा था। दीवानखानेमें बैठकर महेवाके राजकुल पर जहर उगलनेवाली नागिनको आज इतनी शान्त और निरुपद्रवी देखकर स्वयं राजा पहाड़सिंहको रह रहकर आश्चर्य होता था। आकाशमें सुन्दर और सुगंधित फूल लगनेकी बात सुनकर लोगोंको जितना आश्चर्य हो सकता, उतना ही बल्कि उससे भी कुछ अधिक आश्चर्य लोगोंको हीरादेवीके व्यवहारसे होने लगा था। ओड़छेके राजा चम्पतरायके स्वागतकी तैयारी बड़ी धामधूमसे हो रही थी। नगरके पश्चिमका बड़ा प्रवेश-द्वार तरह तरहके फूलोंकी मालाओंसे सजाया जा रहा था। जिस रास्तेमें राजा चम्पतरायकी सवारी राजप्रा-सादकी ओर जानेको थी उसके दोनों ओर वन्दनवारे और तरह तरहकी झण्डियाँ लगाई गई थीं। विशेषतः चतुर्भुजका मन्दिर और भी उत्तमतासे सजाया गया था। यदि उस मन्दिरकी सजावटको छोड़कर बाकी सजावट पर ध्यान दिया जाता तो कहा जा सकता था कि कि यह वही सजावट है जो वीरसिंहदेवके समयमें शाहजादा सलीमके आनेपर की गई थी।

नगरके पश्चिम द्वारपर युवराज विमलदेव बहुतसे सरदारोंको साथ लिये हुए घोड़े पर सवार खड़े थे। उन सरदारोंके चेहरोंसे आनन्द भी प्रकट होता था और आश्चर्य भी। उन्हें आनन्द तो नगरकी सजावट देखकर होता था और

आश्चर्य उसका कारण समझकर । यदि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंके साथ सन्धि करानेमें सफल हो जाते तो उनके चेहरे पर आनन्द, विजय और लोक-हितकी जो पवित्र प्रभा दिखलाई पड़ती, उससे कहीं अधिक प्रभा उस दिन विमलदेवके चेहरे पर दिखलाई पड़ती थी । उन्हें स्वप्नमें भी कभी इस बातका ध्यान नहीं हुआ था कि जयसागर सरोवरके किनारे युवराज छत्रसालने जो काम उन्हें सपुर्द किया था वह इतनी जल्दी और इतनी उत्तमतासे हो जायगा—ओड़छे और महेवाके राज-घरानोंमें मेल हो जायगा । पर उसी बातको जाग्रत अवस्थामें और प्रत्यक्ष देखकर विमलदेवको जो आनन्द हो रहा था, उसके कारण वह फूले अंगों न समाते थे । राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालकी अब तक उन्होंने जो तरफदारीकी थी, उसका उन्हें और भी अधिक अभिमान होने लगा । दो ही दिन पहले दीवानखानेमें हीरादेवीने जो कुछ कहा और उसके दूसरे दिन शुभकरणके कानमें उसने जो कुछ कहा था, उसकी उन्हें कल्पना भी नहीं थी । यदि उन्हें इस बातका तनिक भी सन्देह हो जाता कि उनकी माता हीरादेवीने गौका जो निरुपद्रवी रूप धारण किया है, उसके भीतर बाघिनकी क्रूर आत्मा छिपी हुई है तो न जाने भय और शोकसे उनकी क्या गति होती ।

ज्यों ज्यों स्वागतका समय पास आने लगा त्यों त्यों विमलदेवकी उत्सुकता और भी बढ़ने लगी । वह घड़ी घड़ी सूर्य्यकी ओर देखकर सोच रहे थे कि कब यह अस्त होगा और कब मुझे राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालके स्वागत करनेका अवसर मिलेगा । अन्तमें सूर्य आकाशपरसे पश्चिमी क्षितिजपर उतरा । विमलदेवको यह आशा होने लगी कि अब क्षणभरमें वह अस्त हो जायगा । सूर्य अस्त हो गया, पर तो भी उन्हें राजा और युवराजकी सवारी दिल्लीके रास्तेसे आती हुई न दिखलाई दी । थोड़ी देर बाद उन्हें पश्चिम दिशामें कुछ मेघसे जान पड़ने लगे । विमलदेवने फिर पश्चिमकी ओर देखा तो उन्हें ऐसा जान पड़ा कि सूर्य्य अभी पहलेकी तरह ही प्रकाशित हो रहा है। उन्होंने समझा कि अभी तक सूर्य्य अस्त नहीं हुआ था, वह खाली मेघोंकी आड़में छिप गया था। उनकी उत्सुकता और भी बढ़ने लगी, अब उन्हें ऐसा जान पड़ने लगा कि पश्चिम दिशामें चमकनेवाला सूर्य्य धीरे धीरे बढ़ता हुआ उन्हींकी ओर आ रहा है । वे बड़ी ही आश्चर्य्यभरी दृष्टिसे अपनी ओर आनेवाले बुन्देलखण्डके सूर्य्यकी ओर देखने लगे ।

छत्रसालके गम्भीरतापूर्ण आनन्द और विमलदेवके स्नेहांकित दर्शनमें ही स्वागतके सारे काम हो गये। चम्पतरायके इस विचारके सामने उनके और सब विचार भूल गये कि जो स्थान प्रतापशाली रुद्रप्रतापके चरणरजसे पवित्र हो चुका है; उसी स्थानपर थोड़ी देरमें मैं भी पहुँच जाऊँगा। रास्तेमें उन पर जो पुष्प-वृष्टि होती थी वह तो उन्हें दिखलाई न पड़ती थी, हाँ उसके स्थानपर उन्हें रुद्रप्रतापके प्रशंसनीय अमूर्तिक कार्य्योंके दर्शन होते थे। अपने नामकी जयध्वनि तो उन्हें सुनाई न पड़ती थी, पर रुद्रप्रतापके यशकी दुन्दुभी वह अवश्य सुनते थे। फूलों और इत्रोंकी सुगन्धि तो उन्हें कुछ भी न जान पड़ती थी लेकिन रुद्रप्रतापकी कीर्तिके परिमलसे उन्हें दसों दिशायें भरी हुई मालूम होती थीं। ओड़छेमें इस प्रकार आदर-सत्कार ग्रहण करते हुए चम्पतराय चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर बढ़ रहे थे।

जिस समय राजा पहाड़सिंहके बहुत आग्रह करने पर राजा चम्पतरायने उनका निमन्त्रण स्वीकार किया था, उस समय उन्होंने अपनी यह इच्छा भी प्रकट की थी कि मैं पहले चतुर्भुजके दर्शन करके तब राजमहलमें जाऊँगा। इसी लिए चतुर्भुजका मन्दिर बड़ी ही उत्तमतासे सजाया गया था। नगरके द्वार पर तो उनके स्वागतके लिए युवराज विमलदेव भेजे गये थे और चतुर्भुजके मन्दिरमें राजा पहाड़सिंह अपने बहुतसे सरदारोंके साथ बैठे हुए थे। राजा पहाड़सिंहको हीरादेवीने मानो इस बातकी कड़ी आज्ञा दे दी थी कि चम्पतराय, छत्रसाल या उनके किसी साथीकी ओर जरा भी तिरस्कारकी दृष्टिसे न देखना, उनके दर्शनोंसे बहुत ही आनन्द और सन्तोष प्रकट करना, उनके साथ बहुत ही प्रेम और विनयसे बात करना, अपनी बातों और कार्य्योंसे उन्हें इस बातका पूरा पूरा विश्वास दिला देना कि अब हममें मत्सर और द्वेषका नाम भी नहीं रह गया है, यहाँ तक कि उन्हें अपना परम परोपकार-कर्त्ता मानकर उनके साथ प्रेम, आदर और कृतज्ञताका व्यवहार करना। राजा पहाड़सिंहने अपनी रानीकी इस आज्ञाका पालन भी बड़ी ही सुन्दरता और दक्षतासे किया था। चम्पतरायको अपने साथियोंके साथ मन्दिरमें प्रवेश करते देखकर पहाड़सिंह अपनी मायावी कृतज्ञताके परदेमें अपना मत्सर छिपानेके लिए बड़े ही आदरसे उठकर खड़े हो गये। शिष्टाचार, आदर-सत्कार और कृतज्ञताकी जंजीरोंमें जकड़ी हुई उनकी जबान मर्य्यादित क्षेत्रमें खूब काम करने लगी। उनके चंचल नेत्रोंने द्वेषके भावको खूब अच्छी तरह दबाकर अतिशय आनन्द

प्रकट करना आरम्भ किया। अपनी स्त्रीसे पढ़े हुए पाठोंको पहाड़सिंहने इतनी उत्तमतासे राजा चम्पतरायके आगे दोहराया कि चम्पतरायको उनका वह मायावी प्रेम और कपटपूर्ण व्यवहार बिलकुल ही सत्य और वास्तविक जान पड़ने लगा। उन्होंने यह समझकर पहाड़सिंहको अपने हृदयमें स्थान दिया और उनका अपराध क्षमा किया कि इन्हें अपने पुराने अनुचित कृत्यों पर बहुत ही पश्चात्ताप हुआ है।

युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिरायको भी यह जानकर बहुत ही आनन्द और सन्तोष हुआ कि महेवा और ओड़छेके राज-घरानोंमें अब किसी प्रकारका विरोध नहीं रह गया और पूरा पूरा मेल हो गया है। इस प्रशंसनीय कार्यके लिए वे युवराज विमलदेवकी प्रशंसा करने लगे। चतुर्भुज देवालयसे चलनेके उपरान्त राजमहलके द्वार पर पहुँचने तक रास्ते भर दलपतिराय और विमलदेवको युवराज छत्रसाल यही समझाते रहे कि विमलदेवकी इस विमलकीर्ति और मेलके परिणामस्वरूप बुन्देलखण्ड किस प्रकार स्वतन्त्र हो जायगा।

राजप्रासादके सजे सजाए द्वार पर रानी हीरादेवी अपनी बहुतसी सहेलियोंको साथ लिए राजा चम्पतराय और युवराज छत्रसालकी मंगल आरती उतारनेके लिए तैयार खड़ी थी। उसका ऐसा स्वागत देखकर चम्पतरायको बहुत आनन्द हुआ। उन्होंने दो एक बार लोगोंको यह भी सुना दिया कि यह स्वागत मेरा नहीं बल्कि इस लोगोंमें संचार करनेवाली स्वतंत्रताका हो रहा है। थोड़ी देरमें चम्पतरायकी आरती उतारनेके लिए एक प्रौढ़ा हँसती हुई गजगतिसे आगे बढ़ी। चम्पतरायको ऐसा जान पड़ने लगा कि बन्धुप्रेम, पितृनिष्ठा और गुरुभक्ति मानो एक प्रतिमामें ही अवतरित होकर उनके सामने खड़ी है। वह मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए। अपना इतना आदर-सत्कार करने और आरती उतारनेवाली प्रौढ़ाकी ओर उन्होंने जब दोबारा देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि वह और कोई नहीं स्वयं पहाड़सिंहकी स्त्री रानी हीरादेवी है। पहाड़सिंहका व्यवहार देखकर जो चम्पतराय आज आश्चर्य-चकित हुए थे, हीरादेवीका व्यवहार देखकर वह और भी स्तम्भित हो गये। चम्पतराय बहुत अच्छी तरह जानते थे कि हीरादेवी बड़ी ही भयंकर राक्षसी है, वह नागिन और बाघिनसे भी बढ़ कर है। इसी लिए जब उन्होंने देखा कि आज हीरादेवी मुझे गालियाँ देना छोड़कर मेरी आरती करनेमें अपने आपको धन्य मानती है, तो उनके आश्चर्यकी सीमा न रही।

चम्पतरायने बड़े ही आश्चर्यसे कहा,—"हीरादेवी! आज पहाड़सिंहने और तुमने मिलकर अपने व्यवहारमें आकाश पातालका जो अन्तर दिखलाया है, उससे स्वयं परमेश्वरको भी बड़ा ही आश्चर्य होगा। बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके मार्गको विकट और कण्टकाकीर्ण करने तथा बुन्देलोंके स्वातंत्र्य-प्रेमके नाश करनेके लिए ही ईश्वरने तुम्हारी रचना की थी। पर स्वतंत्रताके लिए दिनरात झगड़नेवाले मेरे सरीखे आदमीकी तुम्हें इस प्रकार पूजा करते देख शायद ईश्वरको भी इस बातका दुःख होगा कि उसने तुम्हारी रचनामें बड़ी चूक की। लेकिन हमारी विन्ध्यवासिनी—हमारी स्वतंत्रता देवी—ओड़छेके रुद्रप्रतापके वंशजको अपनी भक्ति करनेका पात्र देखकर बहुत ही प्रसन्न और सन्तुष्ट हुई होगी। हीरादेवी! दिल्लीमें बादशाह तक अभी यह समाचार नहीं पहुँचा है कि मैंने रणदूलहखाँको पकड़कर कैद कर लिया है। पर हाँ, दो चार या दस दिनोंमें वह बात उनके कानों तक अवश्य पहुँच जायगी। उस समय वह कट्टर और धर्मान्ध बादशाह अपनी सारी शक्ति एकत्र करके बुन्देलखण्डको पीस डालनेका प्रयत्न करेगा। बुन्देलखण्डपर शीघ्र ही ऐसा विकट प्रसंग आनेवाला है। इस लिए पहले ही सचेत हो जानेके अभिप्रायसे मैंने इस आशयका प्रार्थनापत्र सारे बुन्देलखण्डमें बाँटा है कि समस्त वीर आकर बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके झंडे-तले एकत्र हों, बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति इकट्ठी हो जाय। आज तुम लोग इस प्रार्थनापत्रका सत्कार, स्वतंत्रताके उच्च ध्येयका आदर, कर रहे हो। ओड़छेका राजघराना रुद्रप्रतापके रक्तसे बना है। राजा पहाड़सिंहके रोमरोममें रुद्रप्रतापका तेज खेल रहा है। इसी लिए जिस प्रकार बहुत दिनों तक गीदड़की माँदमें रह चुकनेवाला शेरका बच्चा उचित अवसरपर अपना तेज दिखाए बिना नहीं रहता, उसी प्रकार राजा पहाड़सिंह भी—जो शेरके बच्चे हैं—उचित समयपर गीदड़का साथ छोड़कर स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए अपना तेज दिखला रहे हैं और योग्य मार्गका अवलम्बन कर रहे हैं। ईश्वर करे, तुम लोगोंका उद्देश्य पूर्ण और मनोरथ सफल हो।"

हीरादेवीको अब अच्छी तरह विश्वास हो गया कि मेरा उद्देश्य निर्विवाद सिद्ध हो जायगा। उस उद्देश्य और मनोरथका आसुरी प्रतिबिंब उसके हास्यमें दिखलाई पड़ने लगा। यदि उस समय चम्पतरायने उसकी ओर ध्यानपूर्वक देखा होता तो वे राजप्रासादमें कभी प्रवेश न करते। वे अपने सामने भावी स्वतंत्रताके सुन्दर और मनोरम चित्र खींचते हुए राजप्रासादकी सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे।

आधी रात बीत गई। निशापति काली निशाके सहवाससे ऊब कर थोड़ी ही देर पहले अमृत पान करनेके लिए स्वर्गकी ओर चल दिए थे। तारकासुन्दरियोंने स्वच्छन्दतापूर्वक आकाशमें नृत्य करना आरम्भ कर दिया था। बेतवा नदीका निर्मल जल ओड़छेके राजप्रासादको छूता हुआ बड़े ही शान्तभावसे बह रहा था। शान्तिदेवी चारों ओर निष्कण्टक राज्य कर रही थी। परन्तु चम्पतरायका स्वतंत्रतावाला मनोरम चित्र अब तक बराबर उनकी आँखोंके सामने खिंच रहा था। स्वतंत्रता देवीका वह चित्र खींचते समय उसमें उन्होंने बेतवाके निर्मल जलका भी उपयोग किया पर तो भी वह जैसा सुन्दर बनाना चाहिए था, वैसा न बना। स्वतंत्रतादेवीके मनमें प्रजाके कल्याणकी जो ज्योति जलती रहती है, चम्पतराय अपने चित्रमें वह ज्योति खूबीके साथ न ला सकते थे। प्रजाके कल्याणमें अनेक परस्पर विरोधी सुख-साधनों, परस्पर विरोधी अधिकारों, परस्पर विरोधी मनोभावों और परस्पर विरोधी उद्देश्योंका समावेश होनेके कारण चम्पतराय यह निश्चय न कर सकते थे कि स्वतन्त्रता सुन्दरीके चेहरे परका तेज कितना शान्त अथवा कितना उग्र हो, कितना सुन्दर अथवा कितना भयावना हो, कितना दयापूर्ण अथवा कितना कठोर हो। उन्होंने एक बार उस देवीके मुखपर प्रेमका लाल रंग दिया; उस समय उन्हें ऐसा जान पड़ने लगा कि उसमें स्वतन्त्रताके शत्रु यवनोंका कल्याण भी प्रतिबिम्बित हो रहा है और पराएके कल्याणके लिए धीरे धीरे उनके भाइयोंके कल्याणका भी बलिदान हो रहा है। यवनोंका कल्याण रोकनेके लिए जब उन्होंने उसका मुख रंग बिरंगा करना चाहा तो उनके मानसचक्षुको दिखलाई देने लगा कि इसमें उनके भाइयोंकी भी हानि हो रही है। यवनोंके ह्रास और बुन्देलोंके उदयको स्वतन्त्रता देवीके मुखपर चित्रित करनेके लिए उन्होंने मिश्र मनोभावोंकी छाया झलकानी चाही तो उन्हें इस बातका सन्देह होने लगा कि उन्नत मनोविकार यवनोंकी ओर चले जायँगे और नीच मनोविकार बुन्देलोंके हिस्सेमें रह जायँगे जिनके कारण वे गुलामीमें ही अपनेको धन्य समझेंगे। इसी लिए अब तक चम्पतराय स्वतन्त्रतादेवीका ठीक ठीक चित्र खींचनेमें समर्थ न हो सके थे। चम्पतरायको यह सोचकर कुछ दुःख हुआ कि इतना प्रयत्न करनेपर भी जिस स्वतन्त्रता देवीका चित्र हमसे खिंच नहीं सकता, उसकी प्राप्ति किस प्रकार होगी और उससे हमारा काम किस प्रकार चलेगा। वह सोचने लगे,—यदि हम लोग स्वतन्त्रता सुन्दरीको प्राप्त

नहीं कर सके हैं तो भी उस देवीके मन्दिरके मार्गमें आगे बढ़ रहे हैं, मन्दिरकी अधिष्ठात्री देवी यदि हमें स्पष्ट रूपसे नहीं दिखलाई पड़ती तो भी उस मन्दिरके ऊँचे शिखर हमें साफ दिखलाई देते हैं। आयुष्यकी क्षणभंगुरता, बुद्धिकी अल्पता अथवा मार्गदर्शकके अभावके कारण यदि हम लोगोंको स्वतन्त्रतादेवीके दर्शन न हों तो भी उसके मन्दिर तक हम अवश्य जा पहुँचेंगे। तब उस देवीके दर्शन, उस देवीकी प्राप्ति हमारे बाद युवराज छत्रसाल अवश्य कर लेंगे। यह बात विचार करके चम्पतराय सोनेके लिए अपने पलंगकी ओर जाने लगे। इतनेमें उन्हें ऐसा जान पड़ा कि जिस स्वतन्त्रता देवीकी मुझे कल्पना भी न हो सकी थी वही देवी सोए हुए छत्रसालके पास खड़ी हुई उनकी ओर प्रसन्नतापूर्वक देख रही है। उन्हें ऐसा मालूम होने लगा कि वह देवी छत्रसालके गलेमें माला डालना चाहती है। वे बहुत ही प्रसन्न होकर बोल उठे:—

"स्वतन्त्रता सुन्दरी! तुम मेरे पुत्रको धन्य करना चाहती हो। तुम्हारे कारण सारा बुन्देलखण्ड पावन होना चाहता है। बुन्देलखण्डके सुख और कल्याणका मार्ग तुम प्रकाशित करना चाहती हो।"

सुन्दरी मानो अपने सुख-स्वप्नसे अचानक जाग उठीं और चम्पतरायकी ओर देखकर बोली,—

"महाराज, मैं विजया हूँ।"

चम्प०—"तुम विजया हो? तब बिना तुम्हारे स्वतन्त्रता देवीके मन्दिरका द्वार छत्रसाल कैसे खोल सकेंगे?"

विजयाने पुनः मनोहर स्वरमें कहा,—"महाराज मैं ढाँड़ेरकी राजकुमारी विजया हूँ।"

चम्प०—"तुम कंचुकीरायकी कन्या विजया हो? तुम्हारे ही द्वारा विंध्यवासिनीने छत्रसालके गलेमें माला डलवाई थी न? तुम इतनी रातको यहाँ क्या करने आईं?"

वि०—"रानी हीरादेवीके आदर-सत्कारका वास्तविक स्वरूप आप लोगोंको समझानेके लिए मैं यहाँ आई हूँ। आप मुझे यहाँ दिखलाई न पड़े, इस लिए मैं युवराज छत्रसालको जगानेका विचार करने लगी। इतनेमें आप आ ही गये। महाराज! राजा पहाड़सिंह और रानी हीरादेवीने आप लोगोंका जैसा अच्छा आदर-सत्कार किया है उससे आप लोग बहुत सन्तुष्ट जान पड़ते हैं।"

चम्पतरायने आश्चर्यसे विजयाकी ओर देखते हुए कहा,—"भला ऐसे प्रेमपूर्ण सत्कारसे कौन सन्तुष्ट न होगा? पहाड़सिंह और हीरादेवी दोनों अभी पश्चात्तापकी अग्निमेंसे तपकर और शुद्ध होकर निकले हैं। उनके पुराने दुष्ट मनोविकार नष्ट हो गये हैं, स्वतन्त्रताका सुन्दर प्रकाश उनके मनमें फैलने लगा है; वे समझ गये हैं कि हम लोगोंपर महेवाके राजकुलका कितना उपकार है और अपनी वातोंसे उन्होंने यह झलका दिया है कि उस राजकुलको वे अपनेसे अधिक उच्च और प्रतिष्ठित स्थानपर देखना चाहते हैं। वे लोग ज्यों ही स्वतंत्रताके उचित मार्गसे हटे थे त्यों ही मैंने समझ लिया था कि वे लोग मेरे लेखे इस संसारसे उठ गये। अब वे लोग मुझे फिरसे मिले हैं। आजकी हीरादेवी वास्तवमें देवी होनेके योग्य है। ऐसे प्रिय भाई और ऐसी सद्गुणी देवीके आदर-सत्कारसे भला मैं क्यों न सन्तुष्ट होऊँ?"

विजयाने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—"महाराज! आपका वह सारा आदर-सत्कार केवल बनावटी और दिखौआ था। वह बिलकुल मृग-जल था। मृग-जलमें जिस प्रकार जलका आभास तो पूरा पूरा होता है पर जल एक बूँद भी नहीं रहता, उसी प्रकार आजका आदर-सत्कार भी बिलकुल मायावी था, उसमें सच्चा प्रेम नाममात्रको भी न था।"

चम्प०—"तुम्हारा ऐसा कहना मानो सत्यका अपमान करना है। आज तक दूसरोंकी वातोंपर विश्वास करनेके कारण ही ओड़छे और महेवाके राजघरानोंमें इतना वैर बढ़ता गया है। अब आगेसे मिलकर स्वतंत्रताकी प्राप्तिका प्रयत्न करना छोड़ तुम्हारे समान अल्पबुद्धि बालिकाकी वातोंका विश्वास करना मैं ठीक नहीं समझता। अगर तुम किसीके कहने सुननेपर मुझे बहकानेके लिए यहाँ आई हो तो मैं तुम्हारी बात नहीं मान सकता।"

वि०—"महाराज! यह आप क्यों कर समझते हैं कि मैं आपको बहकाने और आप लोगोंमें वैर करानेके लिए यहाँ आई हूँ? क्या कारण है कि रानी हीरादेवी तो आपको सत्यताकी पुतली जान पड़ती है और यह विजया असत्यताकी पुतली? आजतक हीरादेवीने आपके साथ जैसे व्यवहार किये हैं, पहले एक वार उनका ध्यान कीजिए और इस वातका विचार कीजिए कि वैसे मत्सर, वैसी नीच मनोवृत्ति और वैसे कपटपूर्ण व्यवहरोंमें सात्विक प्रेमकी उत्पत्ति किस प्रकार हो सकती है। जबसे हीरादेवीने यह सुना है कि दिल्लीमें आपको बारह हजार सवारोंकी मन्सबदारी मिली है और आप अमीर बनाए गये हैं, तभीसे

हीरादेवीने यह मायावी रूप धारण किया है। आपके प्रार्थनापत्र पर आपके विरुद्ध गुप्तमंत्रणा करनेवाली और दो ही दिन पहले दीवानखानेमें आपके विरुद्ध लोगोंके भड़कानेके लिए गरजनेवाली हीरादेवी एकाएक किस प्रकार नम्र, सीधी और सच्ची बन गई ! जो कोमल मनोविकार हीरादेवीको कभीके छोड़ चुके हैं, जो आदर-सत्कारकी भावना हीरादेवीको बरसोंसे छू नहीं गई है, जिस मेलकी कल्पनाको हीरादेवीने आजतक कभी अपने पास फटकने नहीं दिया, जिस स्वतंत्रताप्रेमकी हीरादेवीने मत्सरकी आगमें आहुति दी, क्या वह कोमल मनोविकार, वह आदर-सत्कारकी भावना, वह मेलकी कल्पना और वह स्वतंत्रता-प्रेम विना किसी प्रकारके अनुभवके अथवा विना किसी अन्य प्रवल कारणके आप-ही-आप जाग्रत हो सकता है? विना किसी भीतरी या बाहरी कारणके ही केवल दो दिनोंमें द्वेषसे प्रेम, मत्सरसे आदर, शत्रुसे मित्र और कृत्यासे देवी बनना किस प्रकार सम्भव है ! क्या इतने कारण इस बातका विश्वास करनेके लिए यथेष्ट नहीं हैं कि हीरादेवीका आजका व्यवहार बिलकुल कपटसे भरा हुआ और मायावी है?"

विजयाकी बातें सुनकर चम्पतराय बहुत ही चकराए। वे हीरादेवीके पुराने और आजके व्यवहारोंकी तुलना करने लगे।

विजयाने और अधिक आवेशमें आकर कहा,—"यदि इतने कारण यथेष्ट न हों तो हीरादेवीकी नीचताका मैं आपको एक और प्रमाण दे सकती हूँ। महेवाके राजघरानेका समूल नाश करानेके लिए उसने मेरे पिताजीको इस लिए दिल्ली भेजा था कि वह वहाँ जाकर बादशाहसे आपके रणदूहलखाँको कैद कर लेनेका सारा हाल कहें। पिताजीकी बातोंपर रोशनआरा बेगमको विश्वास नहीं हुआ, इस लिए वह जो वहाँ नजरबन्द कर लिए गये सो अलग। अगर रोशनआरा बेगमने पिताजीकी बातोंपर विश्वास कर लिया होता तो आज ही महेवाके राजकुल-पर कैसी भारी विपत्ति आ पड़ती ! महाराज ! वही हीरादेवी आपसे इतनी मित्रताका व्यवहार करती है न जो दिल्लीके बादशाहसे आपका समूल नाश करा देना चाहती थी?"

चम्प०—"हीरादेवीकी पहली बातें मुझे याद हैं लेकिन यह कैसे कहा जा सकता है कि उसका आजका व्यवहार बिलकुल मायावी है?"

वि०—"महाराज ! हीरादेवी पहले कृत्या थी और अब राक्षसी बन गई है। हीरादेवीके जो पहले व्यवहार नीच थे वह अब अघोर होते जा रहे हैं।

पहले हीरादेवीका उद्देश्य अमानुषी था, पर अब वह आसुरी होता जा रहा है। हीरादेवी बुन्देलखंडकी मायावी शूर्पणखा है। उसके पुराने और आजके व्यवहारोंमें अन्तर भले ही पड़ गया हो पर उसमें सद्गुण कभी नहीं आ सकते। व्यसनी मनुष्य एक व्यसन तो छोड़ देता है पर साथ ही पहलेवाले व्यसनसे भी भयंकर दूसरे व्यसनमें फँस जाता है। इसी प्रकार हीरादेवीने अपनी पहली नीचता तो छोड़ दी है पर साथ ही उसने नया आसुरी स्वभाव ग्रहण किया है।"

चम्प०—"यह माना जा सकता है कि हीरादेवीमें सद्गुण न आये हों; तो भी यह क्योंकर माना जा सकता है कि उसका स्वभाव आसुरी हो गया है? तुम यह क्योंकर कहती हो कि हीरादेवीका स्वागत बिलकुल मायावी है?"

विजयाके चेहरेपर झलकनेवाली सत्यतापर चम्पतरायकी दृष्टि गड़ चली थी।

वि०—"मैंने जो कुछ प्रत्यक्ष देखा या सुना है उसीके आधार पर मैं यह बात कह सकती हूँ।"

चम्प०—"तुमने क्या देखा और क्या सुना है?"

वि०—"मैंने उसके चेहरेपर ही उसके मनमें छिपे हुए आसुरी भावकी झलक देखी है। इसके सिवा मैंने स्वयं अपने कानोंसे सुना है कि आजके स्वागतका ढोंग रचकर वह कौनसा आसुरी कृत्य करना चाहती है।"

चम्पतरायने चकित होकर पूछा,—"भला बतलाओ तो, वह कौनसा आसुरी कृत्य है?"

वि०—"महाराज! हीरादेवीके उस निन्दनीय कार्य, उस नीच उद्देश्यको मुँहसे कहना भी पातक जान पड़ता है। उस बातको कहनेसे घंटे दो घंटे पहले ही हीरादेवीका मुख बड़ा ही भयावना हो गया था, उसे सुनकर शुभकरण सरीखे आपके कट्टर शत्रु भी भयभीत हो गये थे और मुझे तो वह बात सुनकर मानो प्राणान्तक कष्ट हुआ था। वही बात मुझे इस समय कहनी पड़ेगी लेकिन बिना उसके कहे बनेगा भी नहीं। महाराज! हीरादेवी कलके भोजनमें विष मिलाकर आपके प्राण लेना चाहती है।"

चम्प०—"क्या हीरादेवी मुझे जहर देना चाहती है? नहीं नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। तुम झूठ बोलती हो।"

वि०—"नहीं महाराज, मैं कभी झूठ नहीं बोलती। आप विश्वास कीजिए, मैं आपसे सत्य कहती हूँ। विन्ध्यवासिनी देवीको साक्षी करके कहती हूँ कि मैं झूठ बोलना जानती ही नहीं!"

चम्प०—" तो क्या यह वात विलकुल सच है कि हीरादेवी मुझे जहर देना चाहती है ? "

वि०—हाँ महाराज ! विलकुल सच है। विजया सदा सच ही बोलती है। आप चाहे मेरा विश्वास करें और चाहे न करें, पर मैं एक वार फिर आपसे कहे देती हूँ कि कलके भोजनमें विप मिलाया जायगा। यदि आप पहलेसे ही कोई उपाय न सोच लेंगे तो आपको पछताना पड़ेगा। आपसरीखे रत्नके उठ जानेसे बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रता-प्रेमी आत्मायें शोकमग्न हो जायँगी और यह अभागी विजया अपने आपको ही दोपी समझकर पश्चात्तापसे जल मरेगी। महाराज ! आप मेरी वातोंका अविश्वास करके हीरादेवीके जालमें न फँसें और वैठे वैठाये अपने नाशके कारण न वनें। "

चम्प०—" विजया ! तुम्हारा कहना सच हो सकता है, पर मुझे अभी तक उसपर विश्वास नहीं हो रहा है। तुम्हारी वातोंपर विश्वास करके यदि कोई काम कर वैठा और पीछेसे तुम्हारी वात ठीक न निकली तो व्यर्थ जगमें मेरा उपहास होगा। "

चम्पतरायकी वात सुनकर विजयाको वहुत ही दुःख हुआ। उसने एक वार सोचा कि अव मैं विना उनके कुछ कहे सुने यहाँसे चल दूँ; जव वे मेरी वातों पर विश्वास ही नहीं करते, तव फिर जो कुछ होना होगा सो हुआ करेगा। पर ज्यों ही उसे यह ध्यान हुआ कि यह विचार मैं किसके लिए कर रही हूँ— अपने प्राणप्रिय छत्रसालके पिताके लिए कर रही हूँ—तो उसने यह विचार छोड़ दिया। सव तरहका अपमान सहकर भी यथासाध्य प्रयत्न करके चम्पतरायको विष-प्रयोगसे वचाना उसने अपना प्रधान कर्तव्य समझ लिया। वह वहुत ही नम्रतासे वोली,—" महाराज ! मैं कौनसा उपाय करूँ जिसके कारण आपको मेरी वात पर विश्वास हो ! मेरी वातोंकी सत्यता आप पर किस प्रकार प्रमाणित हो सकती है ! "

चम्प०—" यदि तुम अपनी वातकी सत्यताका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण दो तो मुझे विश्वास हो सकता है। "

उसी समय चम्पतरायको एक भव्य मूर्ति गम्भीरतापूर्वक अपनी ओर आती हुई दिखलाई दी। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें वह मूर्ति स्वयं वोल उठी,—" चम्पतराय ! तुमने मुझे पहचाना ! "

चम्प०—"हाँ।"

मू०—"तुम यह बात अच्छी तरह जानते हो न कि झूठसे मुझे बड़ी भारी चिढ़ है?"

चम्प०—"हाँ।"

मू०—"मेरी बातका तुम्हें अब भी विश्वास होगा?"

बहुत देर तक सोच विचारकर चम्पतरायने फिर वही पहलेवाला उत्तर दिया। उसे सुनकर वह भव्य-मूर्ति प्रसन्न होकर कहने लगी,—

"चम्पतराय इस लड़कीकी बातका अविश्वास न करो। यह सत्यताकी पुतली है। इसने जो कुछ तुमसे कहा है, वह सब सच है।"

चम्पतराय कुछ भी न बोले।

मू०—"हीरादेवीके व्यवहारोंकी टीका करनेका मुझे अधिकार नहीं है। तो भी तुमसे बदला लेनेके लिए उसने जो उपाय सोचा है वह मुझे पसन्द नहीं है। तुमसे बदला लेनेके लिए, तुम्हारे प्राण लेनेके लिए मैं हीरादेवीसे अधिक उत्सुक हूँ; तुम्हें इस संसारसे उठा देनेकी ही मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है। पर तो भी मैं हीरादेवीके आसुरी मार्गका अवलंबन नहीं कर सकता। चम्पतराय! यदि तुम समरक्षेत्रमें मुझसे दो दो हाथ लड़ कर मरना चाहते हो तो विजयाकी बातोंपर पूरा पूरा विश्वास करो और कलके संकटसे अपनी रक्षाका उपाय करो। अपनी प्रतिज्ञाका ध्यान रखते हुए मैं यह सहन नहीं कर सकता कि मेरा शत्रु किसी दूसरेके हाथसे, और वह भी इतनी बुरी तरहसे, मारा जाय।"

चम्पतराय बहुत ही क्षुब्ध हुए। वे अपनी तलवारकी मूठपर हाथ रखकर सामनेवाले व्यक्तिकी ओर देखने लगे। उस समय उसने फिर बड़े शान्त भावसे कहा,—

"नहीं, शस्त्र चलानेका यह समय नहीं है। अपनी कोमल मनोवृत्तिकी प्रेरणासे अभी मैं तुम्हें केवल हीरादेवीके अघोर कृत्यसे बचाना चाहता हूँ। तुम्हारे ऊपर आनेवाले संकटसे मैंने तुम्हें पहले ही सूचित करनेका प्रयत्न किया, इससे शायद तुम्हारा मन भी कुछ पसीज गया होगा। ऐसे अवसरपर हम लोगोंके शस्त्र पूरा पूरा काम न करेंगे। हम लोगोंके शस्त्र ऐसे अवसरपर चलने चाहिए जब कि सूर्य्य इस पृथ्वीको खूब तपा रहा हो और वैराग्नि भड़कानेवाले हम लोगोंके मस्तकोंको भी खूब सन्तप्त कर रहा हो, सामने लाशोंके ढेर पड़े हों, खूनकी

नदियाँ बहती हों और उसी खूनमें हम और तुम दोनों लथपथ हों। ऐसी प्रशान्त रातमें शयनागारमें कभी किसी वीरकी मरने या मारनेकी इच्छा नहीं हो सकती।"

चम्पतरायको उसकी बात पसन्द आई। उन्होंने तलवार परसे अपना हाथ हटा लिया।

मू०—"चम्पतराय! विजयाने मेरा काम कर दिया है। अब मैं जाता हूँ। तुम इसकी बात पर विश्वास रक्खोगे न?"

चम्प०—"हाँ।"

थोड़ी ही देरमें वह भव्य-मूर्ति अदृश्य हो गई।

विजयाने पूछा,—"महाराज! अब तो आपको मेरी बातका विश्वास हुआ न?"

चम्प०—"भला शुभकरणकी बातका कौन विश्वास न करेगा? शुभकरण मेरे शत्रु हैं, स्वतन्त्रताके शत्रु हैं और अनेक सद्गुणोंके शत्रु हैं; पर मैं स्वप्नमें भी यह बात नहीं मान सकता कि वे कभी सत्यसे हटेंगे। विजया! अब मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया कि हीरादेवीका आदर-सन्मान बिलकुल मायावी है। वह चाहती है कि मैं उसके भुलावेमें पड़कर कल मारा जाऊँ। अब तुम्हीं मुझे यह भी बतलाओ कि कल उससे बचनेके लिए कौनसा उपाय किया जाय?"

विजयाने बहुत प्रसन्न होकर कहा,—"महाराज! आपने बड़ी कृपा की जो मेरी बात मान ली और मुझे अपने प्रयत्नमें सफल होनेका अवसर दिया। कल भोजनके समय आपके सामने जो थाल आवे, कृपया उसे स्वीकार न करें और कोई दोष निकाल कर उसे हटा दें। इसके अतिरिक्त जिस चीजके लिए हीरादेवी विशेष आग्रह करे उसे आप कदापि न खायँ। बस, फिर हीरादेवीकी कोई कला न लगेगी। कल सवेरे मैं पहले गिरिजासे मिलूँगी और सब हालचाल पूछूँगी। अगर कोई विशेष बात मालूम हुई तो मैं तुरन्त आपसे मिलकर कह दूँगी। पर यदि भोजनके समय तक मैं आपसे न मिलूँ तो जैसा मैंने अभी बतलाया है, आप वैसा ही कीजिएगा।"

चम्पतरायने शान्त भावसे कहा,—"ठीक है, मैं सब समझ गया। जैसा तुमने कहा है मैं वैसा ही करूँगा। पर तुम्हें हीरादेवीके सम्बन्धकी बातें बतलानेवाली यह गिरिजा कौन है?"

वि०—“ वह हीरादेवीकी एक दासी है जिसपर उसका वहुत विश्वास है। पर गिरिजा उसके कठोर और अनुचित व्यवहारोंसे वहुत दुःखी रहती है। उस दीवानखानेकी गुप्त मंत्रणाका समाचार उसीने मुझसे कहा था।”

चम्प०—“ इस समय यहाँ जितने राजे और सरदार हैं, क्या उस दिनकी मंत्रणामें ये सव सम्मिलित थे ?”

वि०—“ जी हाँ, और तभीसे ये सव लोग यहाँ ठहरे हुए हैं।”

चम्प०—“ मेरे प्रार्थनापत्रका अपमान करने, उसके विरुद्ध लोगोंको भड़काने, स्वतंत्रताके प्रयत्नोंमें वाधा डालने और मुझे विपत्तिमें डालनेके लिए ही उस दिन मंत्रणा हुई थी न ? स्वधर्मका नाश करने, वुन्देलोंका वुन्देलापन नष्ट करने और देशको पराधीन वनानेके लिए ही उस दिन ये सव लोग एकत्र हुए थे न ? वुन्देलखंडकी संघशक्ति और एकताका नाश करना ही इन लोगोंका मुख्य उद्देश्य था न ? हे परमेश्वर ! ऐसे नीच कर्म तुझसे कैसे देखे जाते हैं ? ऐसे हृदय-शून्य पिशाच तेरे न्यायी राज्यमें मनुष्योंके साथ मिल जुलकर कैसे रहने पाते हैं ? चलो, वह भी हो गया; वुन्देलखंडके राजे-रजवाड़ोंसे मैंने अपने प्रार्थनापत्रका उत्तर पा लिया। अव मैं समझ गया कि वुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके झंडेके नीचे आकर एक भी राजा खड़ा न होगा। अव उन लोगोंकी मित्रता और शत्रुताका निर्णय हो गया। इस लिए पहले घरके इन भेदियोंका ही नाश करना चाहिए। अच्छा विजया, अव तुम जाओ। जव तुम ढाँड़ेर पहुँचो तव अपनी माता सुफलादेवीसे मेरा एक सन्देशा कह देना। मेरी तरफसे तुम उनसे कहना कि महेवाके चम्पतराय तुम्हारी कन्याके अमूल्य सद्‌गुणोंको देखकर वहुत ही सन्तुष्ट हुए हैं। यदि वुन्देलखंडमें सुफलादेवी सरीखी ही मातायें हों तो उसकी उन्नति और स्वतंत्रतामें तनिक भी विलम्व न समझना चाहिए। उनसे यह वात कह कर मेरी ओरसे यह भी प्रार्थना कर देना कि जहाँ तक हो सके वह कंचुकीरायको ठीक मार्गपर लानेका प्रयत्न करें।”

वि०—(कुछ दुःखी होकर) “ महाराज अभी पिताजीको ठीक मार्गपर लानेका प्रयत्न कहाँ ! अभी तो वे दिल्लीमें नजरवन्द हैं।”

चम्प०—“ हाँ मुझे उनका पूरा पूरा हाल नहीं मालूम हुआ। तुम जो कुछ जानती हो सो कहो।”

इस पर विजयाने कंचुकीरायके हीरादेवीसे मिलने, गुप्त परामर्श करने, तद-नुसार दिल्ली जाने और वहाँ जाकर नजरबन्द होनेका पूरा पूरा हाल उन्हें कह सुनाया। उसे सुनकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा,–"अब रोशनआराके दिन भी पूरे हो चुके हैं; तथापि वह बड़ी ही दुष्ट और क्रूर है। कंचुकीरायको अपने यहाँ नजरबन्द रखकर वह जो न करे सो थोड़ा है। इस लिए, मैं बहुत जल्दी रणदूलहखाँको अपने यहाँसे छोड़ दूँगा। क्योंकि बिना उसे छोड़े कंचुकी-रायका छुटकारा न होगा। (कुछ देर ठहर और सोचकर) यदि दूसरा कोई जाकर रोशनआरासे रणदूलहखाँके कैद हो जानेका हाल कहेगा तो भी उसे विश्वास न होगा। इस लिए जब स्वयं रणदूलहखाँ वहाँ पहुँचकर अपनी दुर्दशाका हाल सुनावेगा तब स्वयं रोशनआरा उन्हें आदरपूर्वक छोड़ देगी।"

वि०—"लेकिन तब तो आपपर बड़ी भारी आपत्ति आ जायगी न! जब बादशाहको यह मालूम होगा कि आपने रणदूलहखाँको कैद कर रक्खा था तब उसकी फौज आपके राज्यपर चढ़ आवेगी। लेकिन यह तो आप अच्छी तरह समझते होंगे कि अभी बादशाहसे वैर करनेका समय नहीं है।"

चम्प०—"आखिर किसी न किसी तरह तो बादशाहको यह मालूम ही हो जायगा कि मैंने रणदूलहखाँको कैद किया है। ऐसी दशामें इससे पहले ही रण-दूलहखाँको छोड़ देना मेरी समझमें बहुत अच्छा है। दिल्लीमें दरबारके समय बादशाहने हम लोगोंके साथ जैसा अच्छा बरताव किया था उसका बदला चुका-नेके लिए रणदूलहखाँको छोड़ देना बहुत अच्छा है। इससे यदि और कुछ न होगा तो कमसे कम इतना तो अवश्य होगा कि लोकलाजके कारण ही बादशाह कुछ समय तक उपद्रव न कर सकेगा। उसी समयमें मैं घरके इन भेदियोंका नाश कर डालूँगा। जिस गूढ़ नीतिसे मैंने दरबारकी अमीरी और मन्सबदारी स्वीकार की है, रणदूलहखाँको कैदमें रक्खे रहनेसे उसका कोई फल न होगा। राजा जयसिंहकी यह सम्मति बहुत ही ठीक है कि जब तक सारा बुन्देलखंड अच्छी तरहसे तैयार न हो जाय और यहाँके देशद्रोही अच्छी तरह नष्ट न हो जायँ, तब तक बादशाहसे खुलेआम वैर न करना चाहिए और उसे धोखेमें रखना चाहिए। इस बीचमें उससे द्वेष करना बुन्देलखंडके लिए हानिकारक है। रणदूलहखाँको छोड़ देनेसे मेरी कोई हानि न होगी। तुमने मुझपर जो उपकार किया है, यद्यपि उसका पूरा पूरा बदला किसी प्रकार नहीं चुकाया जा सकता

तो भी मैं तुम्हारे पिताको अवश्य और बहुत शीघ्र मुक्त करा दूँगा। कल सबेरे ही मैं किसीको महेवा भेज दूँगा जो रणदूलहखाँको जाकर दिल्ली पहुँचा आवेगा। अब तुम जाओ और किसी बातका भय या चिन्ता न करो। तुम्हारे पिता बहुत जल्दी छूटकर आ जायँगे।"

विजया वहाँसे चलने लगी। उस समय उसकी आँखोंमें कृतज्ञताके आँसू भर आये थे। चलते समय उसने रुद्ध कण्ठसे कहा,—"महाराज ! आपने हम लोगों पर बड़ा ही उपकार किया। ढाँड़ेरका राजकुल इसके लिए सदा आपका कृतज्ञ रहेगा। यदि ईश्वर चाहेगा तो स्वतंत्रता प्राप्त करनेमें आपको सबसे पहले ढँड़ेरसे ही सहायता मिलेगी।"

चम्पतरायके शयनागारसे निकल कर विजया चली गई।

× × × × ×

दूसरे दिन सबेरेसे ही भोजनकी तैयारियाँ खूब ठाठबाटसे होने लगीं। शुभकरणके अतिरिक्त बुन्देलखंडके प्रायः और सभी राजे उस दिनके भोजनमें सम्मिलित थे। राजा पहाड़सिंहका आसन राजा चम्पतरायके बहुत ही पास, बिलकुल बगलमें था और वे उन्हें सब प्रकारसे प्रसन्न करनेके लिए बीच बीचमें बहुत सत्कारका व्यवहार करते जाते थे। रानी हीरादेवी बड़ी ही तत्परतासे परोसने आदिका प्रबन्ध करा रही थी। छत्रसाल यह देखकर मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हो रहे थे कि इतने राजे मिलकर एक हो गये हैं और ये सब स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए युद्ध करेंगे। अपने पिता राजा चम्पतरायको कुछ गूढ़ विचारोंमें मग्न देखकर उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। हीरादेवी समझती थी कि अब मेरे सब मनोरथ सफल हुआ चाहते हैं। भोजनकी सब तैयारियाँ हो गईं। हीरादेवीके मनमें प्रसन्नताकी लहरें उठने लगीं। वह इस डरसे थोड़ी देरके लिए वहाँसे हट गई कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे चेहरेसे ही लोगोंको मेरे आन्तरिक भावोंका पता लग जाय। जब भोजन आरम्भ करनेका समय हुआ तब चम्पतराय विचारतन्द्रासे एकदम जाग्रत हो उठे। पकवानोंसे भरे और अपने सामने रक्खे हुए सोनेके थालको देखकर उन्होंने कहा,—

"मैं सोनेके थालमें भोजन नहीं करता, इस लिए कृपा कर मेरे लिए दूसरा थाल मँगवाइये।"

राजा पहाड़सिंह समझते थे कि रानी हीरादेवी, आज जैसे हो चम्पतरायको खूब प्रसन्न करना चाहती है। उसकी उसी इच्छाको पूरा करनेके लिए उन्होंने हँसते हुए कहा,—

"नहीं, दूसरे थालकी कोई जरूरत नहीं है। मेरा थाल चाँदीका है। आइए, आज हमारा और आपका थाल बदल जाय, जिसमें यह प्रेमपूर्ण व्यवहार हम लोगोंको सदा स्मरण रहे।"

पास ही खड़े हुए रसोइयेने पहाड़सिंहकी आज्ञाका तुरन्त पालन किया। जब पहाड़सिंह बड़े आनन्दसे उस सोनेवाले थालमेंके पदार्थ खाने लगे तब चम्पतरायको एक बार फिर सन्देह हुआ कि विजयाने जो कहा था वह ठीक नहीं था। इतनेमें हीरादेवी फिर वहाँ पहुँच गई। थालोंको बदला हुआ देखकर वह बड़े ही व्यथित हृदयसे बोली,—

"यह क्या हुआ? थाल किसने बदल दिये? अब क्या होगा? यह तो इसमेंसे आधे पदार्थ खा भी चुके!"

हीरादेवीकी घबराहट देखकर पहाड़सिंहने हँसते हुए कहा,—"लोग मित्रता दृढ़ करनेके लिए आपसमें पगड़ियाँ बदला करते हैं; हम लोगोंने अपने थाल बदले हैं। इसमें आश्चर्य करने या घबरानेकी कौनसी बात है?"

उस समय चम्पतराय तीव्र पर गम्भीर दृष्टिसे हीरादेवीकी ओर देख रहे थे। उसे अपना भवितव्य स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगा था। वह समझ गई कि अब मेरा सौभाग्य घण्टे दो घण्टेसे अधिक नहीं ठहर सकता। यह देखकर उसे बहुत ही अधिक दुःख हुआ कि शत्रुके नाशके लिए जो उपाय किया गया था उससे स्वयं अपना ही नाश हो गया। उसी दुःखमें वह बिना कुछ कहे सुने अपने शयनागारकी ओर चली गई।

चम्पतराय इतनी देरतक गम्भीरतापूर्वक हीरादेवीके मन और भावोंकी परीक्षा कर रहे थे। उसके जाते ही उन्होंने पहाड़सिंहका हाथ पकड़कर कहा,—"इस सोनेके थालवाले पदार्थोंमें जहर मिला हुआ है। आप इसमेंसे एक कौर भी न खायँ।"

यद्यपि चम्पतरायने पहाड़सिंहको आधे भोजन परसे ही उठा दिया था, पर तो भी उसका कोई फल न हुआ। उसके घण्टे भर बाद ही उनपर विषका प्रभाव होने लगा। तरह तरहकी दवायें दी गईं, ओड़छेके बड़े बड़े राजवैद्योंने

अनेक उपाय किये, पर हीरादेवीका मिलाया हुआ जहर इतना तेज था कि उसका प्रभाव किसी चीजसे भी कम न हो सका। पहाड़सिंहकी तबीयत बराबर बिगड़ती ही गई। राजवैद्योंने जवाब दे दिया; कहा, अब महाराज घड़ी दो घड़ीके ही मेहमान हैं। सब उपस्थित राजे आदि बहुत ही निराश और दुःखी हुए। विमलदेवका रोना तो और भी बढ़ने लगा। अन्तमें पहाड़सिंहने बड़े कष्टसे कहा, "मेरे लिए कोई शोक न करे, कोई दुःख न करे। मैंने अपने जीवनमें कोई ऐसा अच्छा काम नहीं किया है जिसका स्मरण करके लोग मेरे लिए दुःखी हों। बेटा विमल ! आज मैं तुम्हें मानो बन्धनोंसे मुक्त कर देता हूँ। अब तुम उस पापिनी हीरादेवीके साथ न रहना। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।"

पहाड़सिंह बहुत कुछ कहना चाहते थे, पर उनकी वेदना बराबर चढ़ती ही जाती थी; इससे वे कुछ भी न बोल सके। कुछ देर तक ठहर कर उन्होंने फिर धीरे धीरे कहा,—

"चम्पतरायजी, आज तक मैंने आपके साथ जो अनुचित और निन्दनीय व्यवहार किया है उसके लिए मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ। आप कहिये कि आपने मुझे क्षमा कर दिया।"

चम्पतरायने रुद्धकण्ठसे कहा—"यह आप किस प्रकार समझ सकते हैं कि मैंने आपको क्षमा किया या नहीं ? यदि आप किसी प्रकार ईश्वरकी कृपासे इस विपत्तिसे बच जाते तो अवश्य आपको मालूम हो जाता कि मैंने कहाँतक आपको क्षमा किया।"

पहा०—"अब मेरे बचनेकी आशा करना बिलकुल व्यर्थ है। आज तक मैंने जितने निन्दनीय कार्य किये हैं उनके कारण मुझे जो नरक-यातना भोगनी पड़ेगी वह तो पड़ेगी ही, पर उसका बहुत कुछ आभास मुझे इसी विषकी वेदनासे होने लग गया है। अब मेरे बचनेकी आशा करना व्यर्थ है, मृत्यु मुझे बहुत ही समीप दिखाई पड़ती है।"

इसके बाद पहाड़सिंह सुस्तानेके लिए थोड़ी देर ठहर गये। कुछ ठहर कर बड़े ही क्षीण स्वरसे वे फिर बोले—

"वह कुल्टा तो यहाँ नहीं है न ?"

जब उन्हें मालूम हो गया कि हीरादेवी यहाँ नहीं है, तब वे फिर उसी क्षीण होते हुए स्वरमें बोले,—

"चलो अच्छा हुआ, यह भी बड़े भाग्यकी बात है कि अन्त समयमें मुझे उस पापिनी स्त्रीके दर्शन नहीं हो रहे हैं। चम्पतरायजी! जरा और पास आ जाइए। जबतक मेरा जी हलका न होगा तबतक मैं सुखसे न मर सकूँगा। इस समय यहाँ जितने राजे एकत्र हैं उन सबको साक्षी करके मैं ओड़छेका राज्य आपको देता हूँ। आप यहाँके राज-सिंहासनपर युवराज छत्रसालको बैठाइएगा।"

चम्प०—"नहीं, मैं आपकी यह इच्छा पूरी न कर सकूँगा। ओड़छेके राज-सिंहासनके उत्तराधिकारी युवराज विमलदेव ही हैं, इस लिए छत्रसाल कभी उसे स्पर्श भी न करेंगे। हाँ, युवराज विमलदेवको सिंहासनपर बैठाकर उनपर देख-रेख करना मेरा कर्त्तव्य होगा।"

पहाड़सिंहने मानो बड़े ही आश्चर्यसे कहा,—"क्या विमलदेव सिंहासनपर बैठेगा? चम्पतरायजी! विमलदेव राज-सिंहासनपर बैठनेके कदापि योग्य नहीं है। वह न तो पुत्र है और न शास्त्रानुसार मेरा उत्तराधिकारी। मेरे वास्तविक उत्तराधिकारी आप ही हैं। इसी लिए मैं ओड़छेका राज्य आपको देता हूँ। मैं चाहता हूँ कि ओड़छेके सिंहासनपर छत्रसाल बैठें और विमल उनके साथ रहकर सुखसे अपना समय बितावे। विन्ध्यवासिनीने भी महोत्सवके समय अपनी यही इच्छा प्रकट की थी। विमल! तुम मुझे यह बतला दो कि तुम कौन हो; तब मैं भयानक नरकको जानेके लिए तैयार हो जाऊँगा।"

उसी समय हीरादेवी बड़े ही कर्कश स्वरसे चिल्लाती हुई उस कमरेमें घुस आई। उसने कहा,—"चाहे नरकमें जाओ चाहे घोर नरकमें जाओ, पर विमलके सम्बन्धमें एक शब्द भी न बोलना। तुम बेहोशीमें बड़बड़ाते होगे। इस लिए मैं तुमसे और यहाँके सब राजाओंसे कहे देती हूँ कि विमलदेव ही ओड़छेका युव-राज है और उसीको सिंहासन मिलेगा। इसके विरुद्ध किसी दूसरेको सिंहासनपर बैठानेका कोई प्रयत्न न करे।"

यह सुनकर पहाड़सिंहको बहुत अधिक क्रोध चढ़ आया। लोगोंको भय होने लगा कि कहीं इस क्रोधके कारण ही इनकी मृत्यु और पहले न हो जाय। वे उठ कर खड़े होनेके लिए तड़फड़ाने लगे। जब वे खड़े न हो सके तब उन्होंने उठ-कर बैठनेका ही प्रयत्न किया। जब वे बैठ भी न सके तब उन्होंने बड़े ही क्रोधसे हीरादेवीकी ओर देखना आरम्भ किया।

इतनेमें हीरादेवी उनके पास आकर खड़ी हो गई और अपने सौभाग्यके अलंकारोंको उतारकर फेंकती और माथेका तिलक पोंछती हुई बोली,—" हीरा-देवी तुम्हारी स्त्री नहीं है। ओड़छेकी राजमातापर क्रोध दिखलानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।"

पहाड़सिंहका क्रोध चरम सीमाको पहुँच गया; अपने शरीरकी सारी शेष शक्ति एकत्र करके उन्होंने कहा,—

" चल हट! कृत्या, चाण्डालिनी, पातकिनी, हत्यारी, अधमा—"

उस समय उनमें अधिक बोलनेकी शक्ति नहीं रह गई थी। आँखें फाड़ फाड़कर बड़े ही क्रोधसे हीरादेवीकी ओर देखते हुए उन्होंने प्राण छोड़ दिये।

\+ \+ \+

पन्द्रहवाँ प्रकरण।

कार्य-सिद्धिमें विघ्न।

वनराज केसरी चाहे पशु-मात्रका भयंकर काल क्यों न हो, पर अपने बच्चेपर उसका अत्यधिक प्रेम रहता है। भगवान् सहस्ररश्मि अपने तेजसे भले ही विश्वको तपा डालते हों पर आकाशोद्यानमें खेलनेवाली अपनी अल्हड़ कन्या (राशि) की ओर वे शीतल दृष्टिसे देखना ही पसन्द करते हैं। चन्द्र और सूर्य्य सरीखे तेजस्वी वीरोंको लुप्त-प्राय करके गर्वसे गरजने और सारे आकाशमें धमाचौ-कड़ी मचा देनेवाला मेघ पृथ्वीवर अपनी सन्तानोंपर बड़े ही आनन्दसे अपनी कृपाकी वर्षा करता है। उसी प्रकार दिल्लीका जो धर्मान्ध बादशाह तख्त-ताऊस पर बैठकर लोगोंपर तरह तरहके अत्याचार करता था, शाही महलमें पहुँचकर वह भी बहुधा सन्ततिसुखमें मग्न हो जाता था। उस समय धर्मान्धता, राजतृष्णा, अधिकार-मद और इसी प्रकारके दूसरे दुर्गुणोंसे मुक्त होकर वह अपत्य-प्रेमका मानों पुतला बन जाता था। वह बहुत दिनोंसे यह बात अच्छी तरह जानता था कि नमाज पढ़नेमें मनको जो शान्ति नहीं मिलती, मुल्लाओंसे धर्मचर्चा कर-नेमें जो सुख नहीं मिलता और कुरान पढ़नेमें जो आनन्द नहीं होता, वह शान्ति, वह सुख और वह आनन्द अपनी प्यारी कन्या बदरुन्निसाको देखनेसे सहजमें ही होता है। औरंगजेबको सदा यह भयप्रद आशंका बनी रहती थी कि शाह-

जादोंमें स्वयं ही मेरी तरह उच्चाकांक्षायें होंगी और उनकी सिद्धिके लिए वे मुझे राज्य-भ्रष्ट करनेमें आगा पीछा न करेंगे; इसी लिए वह जहाँतक हो सकता था, सब शाहजादोंसे दूर रहा करता था। शाहजादी जेबुन्निसा शाही महलकी दूसरी बेगमोंकी तरह अपनी सखियों सहेलियोंके साथ रहती और महलके आवश्यक कार्योंकी देखरेखमें ही लगी रहती थी, इस लिए उसकी ओर भी बादशाहका विशेष ध्यान नहीं जाता था। लेकिन बदरुन्निसा एक तो हँसमुख-निष्कपट, सरल और बुद्धिमती थी और दूसरे बाल्यावस्थासे ही बहुधा उसपर उसके पिता औरंगजेबका बहुत प्रेम था। जब जब राजकीय उलझनोंसे उसका जी घबराता था, तब तब वह दीवान-ए-खाससे बाहर निकलते ही शाहजादी बदरुन्निसाके महलकी तरफ चल पड़ता था।

आज दीवान-ए-खासमें बहुत देरतक देवगढ़के किलेका मामला पेश था, इस लिए बादशाहकी तबीयत कुछ घबरा गई थी। बहादुरखाँ कोका बहुत दिनोंसे देवगढ़का किला घेर कर बैठा हुआ था, पर तो भी वह किले पर अधिकार न कर सका था। देवगढ़से बहादुरखाँका इस आशयका एक पत्र भी आया था कि यदि शीघ्र ही सहायताके लिए भारी सेना न पहुँची तो घेरा उठा लिया जायगा। उसी पत्र पर विचार करनेके लिए आज दीवान-ए-खासमें बहुत देर तक बादशाहको अपने चुने हुए मुसाहिबोंके साथ बैठना पड़ा था। अन्तमें राजा जयसिंहने कहा कि साम्राज्यमें इधर उधर बिखरी हुई सेनामेंसे कुछ सेना मैं एक मासमें बुलवा लूँगा और उसे देवगढ़ भेज दूँगा। यही निश्चय करके बादशाह दीवान-ए-खाससे निकला था। तथापि उसका मन शान्त नहीं हुआ था; इस लिए उसे बदरुन्निसाके महलकी ओर जानेकी आवश्यकता पड़ी थी।

बादशाहकी परम प्रिय और प्रधान पत्नी आयेशा बेगमके महलके पास ही शाहजादी बदरुन्निसाका स्वर्ग-तुल्य निवास-स्थान था। उसके पिछवाड़ेकी तरफ यमुनाकी पवित्र धारा बहती थी। सामनेकी ओर बहुत बढ़िया नजरबाग था, जिसमें फौवारे छूट रहे थे। बाईं ओर उसकी माता आयेशाबेगमका और दाहिनी ओर उसके भाई युवराज मुअज्जमका निवासस्थान था। इस प्रकारकी पवित्रताओंसे परिवेष्टित वह स्थान बदरुन्निसाके स्वर्गीय सौन्दर्यसे प्रकाशमान रहता था।

बहुतसे महलोंको पार करता हुआ और विलासके अनेक स्थानों, आसपासके सुन्दर दृश्यों और महलोंमें सुनाई पड़नेवाले मधुर संगीतोंकी ओर बिलकुल

ध्यान न देता हुआ बादशाह आलमगीर बदरुन्निसाके निवास-स्थान तक पहुँचा। उस समय बदरुन्निसा यमुना नदीके प्रवाहकी ओर देखती हुई सचिन्त बैठी थी। पिताके आनेका समाचार सुनते ही वह स्वागतके लिए बाहर निकल आई। यद्यपि बादशाहने उसे बहुत ही प्रसन्नवदन पाया था पर बहुत देरसे वह जिस चिन्तामें मग्न बैठी थी, उसके कारण उसके मुखपर गम्भीरता और स्तब्धताकी कुछ झलक अवश्य दिखाई पड़ती थी। तो भी वह अपनी स्वाभाविक सरलताके कारण स्वर्गकी देवी जान पड़ती थी। उसे देखते ही औरंगजेबको अतीव आनन्द और सन्तोष हुआ और वह अपनी सारी चिन्तायें भूल गया। बदरुन्निसा उसे अपने साथ लेकर बीचवाले बड़े कमरेमें आई। बादशाहके बैठ चुकने पर पहले तो इधर उधरकी बातें आरम्भ हुईं, पर जब उसकी पहलीवाली चिन्ताने उसको कुछ कुछ गम्भीर बनाये रक्खा और पूर्ण रूपसे प्रसन्न न होने दिया तब बादशाहको उसके चिन्तित होनेका कारण पूछना पड़ा। बादशाहको प्रसन्न देखकर उसने उस अवसरको अपने कार्यकी सिद्धिके लिए बहुत ही उपयुक्त समझा और अपनी भूमिका इस प्रकार आरम्भ कर दी,—

"किवलए आलम! आसमानके ये तारे बराबर इसी तरह खेला करते हैं, पर अपने इस खेलसे उनका कभी जी नहीं घबड़ाता। जमनाकी धार दिनरात बराबर बहती ही रहती है, पर उसका जी कभी अपने इस कामसे नहीं ऊबता। कमल हमेशः पैदा होते, खिलते और कुम्हलाते या तोड़ लिये जाते हैं, पर तो भी वे हमेशः खुश ही रहते हैं। उन्हें कभी तकलीफ या रंजसे कोई मतलब ही नहीं रहता। लेकिन आदमीकी हालतपर गौर फरमाइये। उसके ऐश-आरामके लिए इतने सामान मौजूद रहते हैं पर तो भी वह अकसर रंजीदः ही रहता है, खुशीके मौके उसके लिए बहुत ही कम होते हैं। जिस तरह चिड़ियाँ जब उड़ती उड़ती थक जाती हैं, तब दम लेनेके लिए वे कभी इस पेड़पर और कभी उस पेड़पर जा बैठती हैं, उसी तरह आदमी भी जब अपने कामोंसे थक जाता है तब तरह तरहके आरामोंकी तरफ दौड़ता फिरता है। लेकिन इस तरह खूब दौड़नेपर भी उसे कहीं पूरा पूरा आराम नहीं मिलता। मैं अभी यहाँ बैठी बैठी यही सोच रही थी कि आरामके इतने ज्यादः सामान मौजूद रहते हुए भी इन्सान हमेशः रंज और तकलीफमें क्यों रहता है?"

अपनी कन्याके गम्भीर मुखकी ओर देखते हुए औरंगजेबने बहुत ही गम्भीरतासे कहना आरम्भ किया,—"बेटी! शायद तुम्हें यह मालूम नहीं है कि

इन्सानका खयाल हमेशः आगेकी तरफ ही दौड़ा करता है। उसका यह कायदा है कि जो चीज उसे मिल जाती है, उस परसे आहिस्तः आहिस्तः उसकी तबीयत हटती जाती है और उसकी नजर किसी ऐसी दूसरी चीजपर जा जमती है जिसका मिलना उसके लिए बहुत ही मुश्किल होता है। उसके रंज और तकलीफकी वजह यही होती है। लेकिन अगर दूसरे पहलूसे इसे देखा जाय तो इसमें इन्सानकी बहुत कुछ बेहतरी भी होती है। इससे उसके खयालात ऊँचे होते हैं और उसे अपनी तरक्कीका बहुत अच्छा मौका मिलता है। एक मामूली सिपाही सरदार बननेकी कोशिश करता है, मामूली सरदार वजीर होनेका इरादा रखता है और वजीर तख्त पानेका ख्वाहिशमन्द होता है। इसी तरह हर एक शख्स ऊँचे मरतबे और दरजेकी ताकमें रहता है जिसका नतीजा यह होता है कि एक मामूली सिपाही भी मौका पाकर तख्त और ताजका मालिक बन बैठता है। एक मुल्क पर कब्जा करनेके बाद आसपासके मुल्कों पर उसकी निगाह दौड़ना बहुत ही मामूली बात है। उसके पास ऐश-आरामका जितना सामान मौजूद होता है उसे वह काफी नहीं समझता और इसी लिए उसके दिलमें दूसरेकी चीजों पर कब्जा करनेकी हवस पैदा होती है। इसी हवसने बाबरको समरकन्दकी छोटीसी रियासतमें चुपचाप न बैठने दिया और उसने आकर हिन्दोस्तान पर कब्जा कर लिया। अकबरने तख्त पर बैठनेके वक्त जितना मुल्क पाया था उतनेसे उसकी तसल्ली न हुई और उसने अपनी सारी जिन्दगी हिन्दोस्तानके मुखतलिफ सूबोंको फतह करनेमें बिता दी। बंगाल और बिहारको वह अपने कब्जेमें ले आया, राजपूतानेकी बहुतसी रियासतोंको उसने अपनी सलतनतमें शामिल कर लिया, गुजरात पर अपना सिक्का जमाया और बुन्देलखंडकी आजादीका खातमा कर दिया। अगरचे हिन्दोस्तानके एक बहुत बड़े हिस्से पर मुगलोंका कब्जा हो चुका था पर उसका जनूबी (दक्षिण) हिस्सा अभी तक सल्तनतमें शामिल नहीं हुआ था। उसे कब्जेमें लानेके लिए मेरी कोशिशें हो रही हैं और ये सब बातें इन्सानकी उसी बुलन्द-खयाली या हौसलामन्दीका नतीजा है।”

बद०—“लेकिन जिन लोगोंने अपनी बुलन्दखयालीकी वजहसे सिर्फ अपने और अपनी औलादके आरामके लिए इतनी बड़ी सलतनत खड़ी की है क्या उन्होंने कभी यह समझनेकी भी कोशिश की है कि हमारी यह बुलन्दखयाली

और हवस कितने इन्सानोंकी आरजूओंका खून करती है, कितनोंको हद्से ज्याद: तकलीफ पहुँचाती है और कितनोंको दाने दानेके लिए मुहताज कर देती है? इस कद्र दौलत जमा करनेमें कितने आदमी मुफलिस बनाये गये हैं, ऐशआरामका इतना सामान मुहैया करनेमें कितनोंको अपना आराम खोना पड़ा है और मुल्कोंको फतह करनेमें कितनी औरतें बेवा हुई हैं और कितने बच्चे यतीम हुए हैं? इतनी बड़ी सलतनत कायम करनेमें कितने बेगुनाहोंके खून हुए हैं? खुदावंद मुझे मुआफ फरमावें, क्या अल्लाह-तआला ऐसे जुल्मोंको कभी पसन्द करता है? आखिर वे बेचारे भी तो उसी खुदाके बन्दे हैं।"

औरंगजेबने कुछ ओजसे कहा,—"उस परवर्दिगारकी मरजी सब लोग नहीं समझ सकते, उसके कानून जानना आसान काम नहीं है। पर इसमें शक नहीं कि उसकी निगाहमें सारा आलम बराबर है।"

बद०—"जो खुदा सारे आलमको एक निगाहसे देखता और कुल इन्सानोंको अपना बन्द: समझता है वह ऐसी जबरदस्तियाँ क्योंकर पसन्द कर सकता है? किसी एक शख्सके ऐश-आरामके लिए लाखों आदमियोंका मरना और करोड़ोंका मुफलिस होना उसे क्योंकर पसन्द आता है?"

बादशाहको अपनी कन्याकी आजकी बातोंपर बहुत आश्चर्य हुआ। उसने पूछा,—"बेटी बदरुन्निसा! आज तुम्हें क्या हो गया है जो तुम ऐसी बहकी बहकी बातें कर रही हो? तुम्हारे खानदानका इतनी बड़ी सलतनतपर कब्जा है, क्या इसे तुम उसे खुदाका फजल नहीं समझतीं? जिसने तुम्हें इस मरतब: पर पहुँचाया है, उसकी शुक्रगुजार नहीं होतीं? इसके अलावा हमारी ये सब बातें खुदाको पसन्द न होतीं तो क्या काजी और मुल्ला इन्हें रसूल और पैगम्बरके हुक्मके खिलाफ न बतलाते?"

बद०—"खुदाका फजल उसी हालतमें समझना चाहिए कि जब हमारी वजहसे उसके किसी बन्देको तकलीफ न हो। रही शुक्रगुजार होनेकी बात, सो खुदा अपने बन्देको जिस हालतमें रक्खे, उसी हालतमें उसे उसका शुक्रगुजार होना चाहिए। मुल्लाओं और काजियोंका तो जिक्र ही क्या? उन्हें दरे-दौलतसे अपने गुजारेके लिए काफी वजीफा मिलता है। अगर मजलूम रिआया भी किसी काजी या मुल्लाको अपनी तरफ मिला ले और उसे सजा पानेका खौफ न रह जाय तो वह उसके बरखिलाफ भी फतवा दे सकता है। ऐसी हालतमें हर

शख्सको खुद यह सोचना चाहिए कि मेरा कौनसा काम खुदाकी मर्जीके मुताबिक और कौनसा उसके खिलाफ है। खुदाकी कुदरत हमें खुद बतला सकती है कि हमें क्या करना चाहिए।"

और०—"खुदाकी कुदरत! उसे देखना और समझना तो हमारी ताकतके बाहर है।"

बद०—"खुदावन्दे आलम! उसकी कुदरत तो ऐसी खूबियोंसे भरी हुई है कि उसके समझनेमें एक मामूली इन्सानको भी कोई दिक्कत नहीं होती। कभी जहाँपनाह आसमानकी तरफ गौर फरमायें। वहाँ अलग अलग लाखों तारे, हजारों सैयारे नजर आयेंगे। मगर उनमेंसे कभी कोई अपनी हदसे बाहर निकलनेकी कोशिश नहीं करता। अपनी रोशनी बढ़ानेके लिए कभी कोई तारा किसी दूसरे तारेकी रोशनी पर कब्जा करनेकी कोशिश नहीं करता। कानून कुदरतने उसे जिस हालतमें रक्खा है वह हमेशा उसीमें खुश रहता है। वह जो फर्ज अदा करनेके लिए बनाया गया है उसीको वह पूरा करता रहता है। उसमें कोई नई हवस पैदा नहीं होती और इसलिए वह कभी कोई गैरवाजिब या नामुनासिब काम नहीं करता। ये तारे भी तो उसी खुदाकी कुदरत हैं न? उनका अपने अपने दायरेमें घूमना और अपनी अपनी रोशनीसे चमकना खुदाकी ही मर्जीसे ही होता है न? ऐसी हालतमें हमें सबसे पहले उन्हींके कामोंसे नतीजा निकालना चाहिए। सब लोग अपने अपने मुल्क पर ही कनायत क्यों न करें और बेवजह दूसरोंके मुल्कोंपर क्यों कब्जा करें? समरकन्दके मुगलोंको इस बातका क्या हक हासिल है कि वे हिन्दोस्तानको अपने कब्जेमें लाएँ और हिन्दुओंकी आजादी छीन कर उन्हें अपना गुलाम बनाएँ?"

और०—"बेटी! अभी तुम नादान हो। तुम्हें अभी दुनियाका पूरा पूरा तजरुबा नहीं है। कानूने कुदरत हमें यह भी सिखलाता है कि जो ज्यादः ताकतवर या अक्लमन्द होता है वह हमेशा दूसरोंकी कमजोरी और बेवकूफीसे फायदा उठाता है। अगर इन तारोंमें इतनी ताकत या लियाकत होती तो तुम देखती कि ये भी हमेशा जंग-जदल किया करते।"

बद०—"किबलए-आलम! ये सब बातें जालिम अक्लमन्दोंने सिर्फ अपने बचावके लिए बना रक्खी हैं। वरना पाक परवरदिगारकी कभी यह मरजी नहीं है कि हर एक ताकतवर अपनेसे कमजोरको जिन्दः न रहने दे। इसमें

शक नहीं कि अक्सर जानवरों और चिड़ियों वगैरहमें यह बात देखी जाती है कि वे अपनेसे कमजोर पर हमला करके उसकी जिन्दगीका खातमा कर देते हैं; लेकिन कोई वजह नहीं है कि इन्सान जो अपने आपको " अशरफ-उल-मखलूकात " (प्राणियोंमें सर्वश्रेष्ठ) कहता है अपनी जालिमाना हरकतोंको वजा बतलानेके लिए इस तरहके उज्र पेश करे । खुदाने इन्सानको अक्ल दी है, उसके दिलमें मुहब्बत और हमदरदी पैदा की है, उसे नेक और बदकी पहचाननेकी ताकत दी है; ऐसी हालतमें हर एक शख्सका फर्ज है कि वह दूसरोंको आराम पहुँचाए और उनकी बेहतरी और तरक्कीमें मदद दे । बुन्देलखंडके सिपाहियों और लड़ाकोंकी तादाद शाही फौजके मुकाबलेमें बहुत ही कम है, लेकिन सिर्फ यही इस बातके लिए काफी वजह नहीं है कि वह फौज बुन्देलखंडमें जाकर वहाँकी रिआयाको तबाह कर दे, उसपर तरह तरहके जुल्म करे और उसे मुफलिस और गुलाम बनाए । "

ठीक उसी समय बादशाहके आनेका समाचार पाकर बदरुन्निसाकी माता और औरंगजेबकी चहेती बेगम आयशा भी वहाँ आ पहुँची थी और बड़े ही अदब कायदेसे एक स्थानपर बैठ चुकी थी । उसने इस अवसरको और भी अधिक उपयुक्त समझा । अपनी कन्या बदरुन्निसाका पक्ष लेकर उसने कहा,—" खुदाबन्देआलम ! बुन्देलखंडकी हालत तो जरूर ऐसी है कि उसके साथ पूरा पूरा इन्साफ फरमाया जाय । छत्रसालने जिस तरह इन्सानी हमदरदीके खयालसे उस दिन इतना बड़ा काम कर दिखलाया था, उसका पूरा पूरा बदला तभी हो सकता था जब कि उनकी दरख्वास्त कबूल फरमाई जाती । इसके अलावा खुद शाहंशाह आलमने ही उन्हें कोई मुराद माँगनेकी इजाजत दी थी । इस बन्दीको और किसी बातका खयाल नहीं है । खयाल सिर्फ इसी बातका है कि जो इल्तजा हजरत सलामतकी मरजीसे की गई हो, वह इल्तजा जरूर पूरी होनी चाहिए । "

और०—" ये सलतनतकी बातें इतनी पेचीद: हुआ करती हैं कि आम तौर पर इन्हें सब लोग नहीं समझ सकते । छत्रसालको मुराद माँगनेकी इजाजत दी गई और वह मुराद पूरी नहीं की गई, इसमें भी मसलहत थी । मुमकिन है कि लोग इसे वाद:खिलाफी समझ बैठें, मगर जिन लोगोंको सलतनतके काम चलाने पड़ते हैं वे इस तरहकी वाद:खिलाफीको कोई चीज नहीं समझते ।

मुनासिव मौका देखकर वादे किए जाते हैं और जरूरत पड़ने पर उनके खिलाफ काम भी होते हैं। अगर ऐसा न किया जाय तो मुल्कमें कभी अमन-अमान कायम नहीं रह सकता। आज ही अगर बुन्देलोंसे कुछ शर्तें कर ली जायँ और उनका मुल्क आजाद कर दिया जाय तो कल ही वे उन शर्तोंका खयाल छोड़कर तरह तरहकी वदमाशियाँ करने लगेंगे। उसकी आजादी सल्तनत-देहलीके लिए खतरेका वाइस (कारण) होगी। फँसे हुए शेरको पिंजड़ेसे निकाल कर खुद खतरेमें पड़ना और अपनी हिफाजतकी तदवीरें सोचते फिरना अक्लमन्दी नहीं है।"

वादशाहकी इन वातोंसे आयशा वेगमको कुछ भी आश्चर्य नहीं हुआ। वह जानती थी कि औरंगजेवने वचन-भंग कर करके ही इतना वड़ा साम्राज्य स्थापित किया है। जिसने मुराद और शुजाको दिए हुए वचनोंका ध्यान छोड़ दिया, जिसने मीर जुमला सरीखे स्वामिनिष्ठ सेवकको दिए हुए वचनोंकी परवा न की और यहाँ तक कि जिसने एक वार अपना सारा जीवन ईश्वराराधनमें वितानेका दृढ़ संकल्प करके भी उसका ध्यान छोड़ दिया, वह एक साधारण राजकुमारके सामने अपना वचन पूरा करनेकी क्या आवश्यकता समझ सकता था? लेकिन बुन्देलोंकी सत्यतापर वादशाहने जो आक्षेप किया था, वह आयशाको सह्य नहीं हुआ। उसने नम्रतापूर्वक कहा,—

"खुदावन्दे-आलम! ये हिन्दू कभी वाद:खिलाफी करना जानते ही नहीं। तवारीखें इस वातकी गवाह हैं कि दूसरोंके धोखेमें आकर यह खुद वरवाद हो गये, मगर किसीको वरवाद करनेके लिए इन्होंने कभी धोखा नहीं दिया; वे अपने कौलकी कीमत अपनी जानसे भी ज्याद: समझते हैं। उनसे कभी यह उम्मीद न रखनी चाहिए कि जिन शर्तों पर वे आजादी हासिल करेंगे उन्हीं शर्त्तोंको मौका पाकर तोड़ देंगे और मुल्कके इन्तजाममें किसी तरहका खलल डालेंगे।"

औरं०—"खैर! इस वक्त इन सव वातोंको जाने दो। इसके वारेमें किसी वक्त वजीरों और मशीरोंसे मशविरा होगा।"

इसके वाद कुछ देरतक इधर उधरकी वातें होती रहीं। थोड़ी देर वाद औरंगजेव वहाँसे उठकर रोशनआरा वेगमके महलकी तरफ चल दिया। उस दिन आयशा और वदरुन्निसाको इस वातकी आशा हो गई थी कि बुन्देलखण्डको अब स्वतंत्रता मिल जायगी।

रोशनआरा वेगमके महलमें पहुँचने पर भी औरंगजेवकी वैसी ही आवभगत हुई जैसी वदरुन्निसाके महलमें हुई थी। वहाँ पहुँचकर रोशनआराके पूछने पर औरंगजेवने संक्षेपमें उसे वे सब वातें कह सुनाईं जो थोड़ी देर पहले वदरुन्निसाके महलमें हुई थीं। उन्हें सुनकर वह मन-ही-मन वहुत कुढ़ी। वातों ही वातोंमें जब उसे मालूम हो गया कि आयशा और वदरुन्निसाने वादशाह पर वुन्देलखण्डको स्वतन्त्र कर देनेके लिए वहुत दवाव डाला है, और वादशाहकी मरजी उसे स्वतन्त्र करनेकी नहीं है तव उसने वादशाहके कान भरनेके लिए यह अवसर और भी अधिक उपयुक्त समझा। उस समय तक चम्पतरायकी कैदसे छूटकर रणदूलहखाँ दिल्ली पहुँच चुके थे। चम्पतरायके आदमी आकर उन्हें दिल्ली तक पहुँचा गये थे। रणदूलहखाँ उसी दिन सवेरे दिल्ली आए थे और सवसे पहले उन्होंने रोशनआरा वेगमसे मिलकर उन्हें अपना सारा हाल सुना दिया था और चम्पतरायकी खूब शिकायत की थी। उस अवसर पर रोशनआरा वेगमने वे सव वातें संक्षेपमें, पर अपनी तरफसे भी कुछ नमक मिर्च लगाकर, वादशाहसे कह दीं। वादशाह पर यह वात उसने भली भाँति प्रमाणित कर दी कि चम्पतराय वड़ा ही सरकश, वागी और सलतनत देहलीका कट्टर दुश्मन है और वह इस वक्त वुन्देलोंको भी शाहंशाहके खिलाफ उभाड़ रहा है। सव वुन्देले भीतर-ही-भीतर चम्पतरायसे मिल गये हैं और स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए उन्हींको अपना पथदर्शक मान चुके हैं। ऐसी दशामें उन्हें स्वतन्त्रता देना मानो इन्द्रके हाथमें वज्र देना है। इस लिए वैठे वैठाए आफत मोल लेना ठीक नहीं। वल्कि मुनासिव तो यह है कि देवगढ़का किला फतह होते ही तुरन्त सारी सेना वुन्देलखण्डपर आक्रमण करनेके लिए भेज दी जाय, क्यों कि चम्पतरायने इतने दिनों-तक रणदूलहखाँको अपने यहाँ कैदमें रखकर शाहंशाहका वहुत वड़ा अपमान किया है। और जव वुन्देलखण्डमें शाही फौजका मुकावला करनेकी कुछ तैयारियाँ हो चुकी हैं, तव रणदूलहखाँ वहाँसे छोड़े गये हैं।

दूसरे दिन रोशनआरा वेगमकी कृपासे रणदूलहखाँ और राजा कंचुकीराय दीवान-ए-खासमें औरंगजेवके सामने पेश किए गये। दोनों ही चम्पतरायसे जले भुने तो थे ही, उनकी शिकायतमें उन लोगोंसे जो कुछ कहते वना वह सव उन्होंने कह डाला। औरंगजेवके कान पहले ही रोशनआरा वेगमने भर दिए थे। रणदूलहखाँ और कंचुकीरायकी वातें सुनकर वह और भी आगववूला हो

गया। उसी समय उसने आज्ञा दी, कि बुन्देलखण्डको और विशेषतः महेवाको तहस-नहस करनेके लिए जहाँतक जल्दी हो सके, बड़ी भारी सेना भेजी जाय।

थोड़ी देर बाद खूब मुस्कराते हुए कंचुकीराय दीवान-ए-खाससे धीरे धीरे बाहर निकलते हुए दिखलाई दिये। उस समय उनके आनन्दकी सीमा न रह गई थी। अपनी कारगुजारी पर वे मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हो रहे थे और रानी हीरादेवी, शुभकरण तथा पहाड़सिंहसे कहनेके लिए तरह तरहकी डींग भरी बातें सोच रहे थे। मारे खुशीके जमीनपर उनके पैर न पड़ते थे। क्योंकि उन्होंने अपनी तरफसे बाजी मार ली थी। अब उनके यशस्वी होनेमें कोई सन्देह न रह गया था। उसी दिन उन्होंने वहाँसे बुन्देलखण्डकी ओर प्रस्थान किया।

इन सब बातोंकी खबर आयशा बेगम और बदरुन्निसाको भी उसी दिन लग गई। वे दोनों मन-ही-मन बहुत दुःखी हुई। आयशा बहुत देरतक बदरुन्निसाको समझाती और ढारस देती रही, पर उसका कुछ फल न हुआ। बदरुन्निसाका दुःख ज्योंका त्यों बना रहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल सारे महलमें पुकार मच गई कि बदरुन्निसा अपने महलसे गायब हो गई।

\+ \+ \+ \+

सोलहवाँ प्रकरण।

भ्रम-निवारण।

राजा पहाड़सिंहने मरनेके समय जो जो बातें कहीं थीं, उन्हें रानी हीरादेवीने बेहोशी और पागलपनकी बकवाद बतलाया और युवराज विमलदेवसे उनकी सब अन्त्येष्टि-क्रिया कराई। पहाड़सिंहके मृत-शरीरका जब अग्निसंस्कार हो चुका, तब राजा चम्पतरायने युवराज छत्रसाल, युवराज दलपतिराय और अपने नौकर चाकरोंको साथ लेकर वहाँसे महेवाकी ओर प्रस्थान कर दिया। विमलदेवके राज्यारोहणके अवसर पर आनेका वचन देकर और सब

राजे आदि भी अपने अपने स्थान पर चले गये। भोजनवाले दिन ही शुभकरण जो गायब हुए सो फिर वे कभी हीरादेवीको दिखाई न दिये। वे वहाँसे चलकर सीधे सागरके किलेमें पहुँचे और ओड़छेसे आनेवाले समाचारकी प्रतीक्षा करने लगे। वहीं उन्हें यह बात मालूम हुई कि भोजनमें मिलाये हुए विषके कारण राजा पहाड़सिंहकी मृत्यु हुई। उस समय उन्हें यह आशा होने लगी कि इस आपत्तिके कारण हीरादेवी अब अपना पुराना नीच व्यवहार छोड़ देगी और अच्छे मार्गपर आ जायगी। लेकिन उसी अवसर पर उन्होंने यह भी सुना कि इस कुसमयमें भी वह चम्पतरायका अच्छी तरह नाश करनेके लिए बड़ी तत्परतासे सेना एकत्र कर रही है। इतनेमें उनके पास हीरादेवीका इस आशयका निमंत्रण आ पहुँचा कि उस दिन दीवानखानेकी गुप्त-मंत्रणामें जितने राजे सम्मिलिए हुए थे, उन सबकी सेनायें आ पहुँची हैं; आप आकर उनकी नायकता स्वीकार कीजिए। प्रतिज्ञारूपी पिशाचके वशमें पड़े हुए बेचारे शुभकरण तुरन्त ओड़छेकी ओर चल पड़े।

ओड़छेके राजमहलमें पहुँचने पर सबसे पहले कंचुकीरायसे उनकी भेट हुई। कंचुकीरायने उनके सामने अपनी बहादुरीकी खूब डींगें हाँकीं और कहा कि मैंने बेगमको यों समझाया और बादशाहको यों बुझाया। उनकी बातें सुनकर चम्पतरायपर बादशाह जितने नाराज हुए थे उसका वर्णन करते हुए उन्होंने कहा,—

“शुभकरणजी! रोशनआरा बेगमकी बुद्धिमत्ता और योग्यताकी जितनी प्रशंसा की जाय वह सब थोड़ी है। सब बातोंमें वह रानी हीरादेवीसे ही मिलती जुलती है। रणदूलहखाँके वहाँ पहुँचनेपर अगर बेगमसाहब जरा देर करतीं तो शायद दिल्लीके बादशाहकी छत्र-छायासे ही बुन्देलखण्ड निकाल दिया जाता। न जाने किसने बादशाहपर इस बातका बहुत ही जोर दिया था कि बुन्देलखण्ड स्वतंत्र कर दिया जाय। पर यह कहिए कि आप लोगोंके भाग्य अच्छे थे जो मुझे उसी समय सूझ गई और मैंने बेगमसे जाकर कह दिया कि अब जरा भी देर न होनी चाहिए। मैं खाली बेगमसे ही कहकर चुप नहीं बैठ रहा। उधर तो मैंने बेगमसे बादशाहके कान भरवाये और इधर खुद बादशाहके दरबारमें पहुँचा। बस फिर क्या था? महेवाको तहस नहस करनेकी आज्ञा दिलवा कर ही वहाँसे हटा। चलते समय बादशाहने मुझे भी साम्राज्य-निष्ठाकी एक सनद दी है।”

कंचुकीरायकी ओर तिरस्कारभरी दृष्टिसे देखते हुए शुभकरण उनकी सब बातें सुनते रहे। वे कुछ उत्तर देना ही चाहते थे कि इतनेमें रानी हीरादेवी वहाँ पहुँच गई। उस समय उसके चेहरेपर कुछ तो दिखौआ दुःख और कुछ वास्तविक आनन्दकी मिली जुली झलक दिखाई पड़ रही थी। शुभकरणको देखकर उसका आनन्द कुछ और बढ़ गया था। उस समय आनन्दको छिपाना भी उसने उचित न समझा। उसने प्रसन्नतासे कहा,—

"अहा! आप आगये! अपने तो सुना होगा कि शाहंशाहने आपको चम्पतरायका राज्य विध्वंस करनेके लिए नियुक्त किया है। दिल्लीसे इस आशयका शाही-फरमान निकला है कि आप बुन्देलखण्डके सब माण्डलिक राज्योंकी सेनायें एकत्र करके महेवापर आक्रमण करें। इसके अतिरिक्त आपकी सहायताके लिए दिल्लीसे भी बड़ी भारी सेना आ रही है और यदि हो सका तो बादशाह सलामत स्वयं भी आवेंगे। उस दिन दीवानखानेमें हम लोगोंने जो विचार किया था, जान पड़ता है कि वह शीघ्र ही पूरा उतरेगा। कंचुकीरायजीने अपना काम बड़ी ही उत्तमतासे किया है। बुन्देलखण्डके अधिकांश राज्योंकी सेनायें महेवाके रास्तेपर आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। परसों महेवाकी ओर कूच करनेका मुहूर्त्त निकला है। उस दिन अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए और शाही आज्ञाका पालन करनेके लिए आपको उस सेनाका अधिपत्य ग्रहण करना पड़ेगा।"

शुभकरणने बड़े ही व्यथित अन्तःकरणसे महेवापर आक्रमण करनेवाला सेनाका आधिपत्य स्वीकार किया। उनका मन मानो उनसे कहने लगा कि हम महेवापर आक्रमण करनेके लिए नहीं बल्कि बुन्देलखंडकी भावी सुखाशाका नाश करनेके लिए जा रहे हैं। हम चम्पतरायका नाश करनेके लिए नहीं निकले हैं बल्कि स्वतन्त्रतादेवीको विध्वंस करनेके लिए निकले हैं। हम समरदेवताकी सेवा करनेके लिए नहीं निकले हैं, बल्कि अनुचित रूपसे छल-कपट और हत्या करनेके लिए निकले हैं। सेनाकी सलामी लेते समय, अपने घोड़ेपर सवार होते समय, कूच करनेकी आज्ञा देते समय और सबके अन्तमें अपने घोड़ेको पुचकारते और एड़ लगाते समय उनके चेहरेपर एकसा निरुत्साह दिखलाई पड़ता था। परन्तु शुभकरण ज्यों ज्यों महेवाकी ओर बढ़ने लगे, त्यों त्यों प्रतिज्ञाका पिशाच उनके मनपर अधिकार करने लगा। उनके मुखपरके जाज्वल्य क्षात्र-तेजमें आसुरी तेजका पुट पड़ने लगा। उनकी बातोंके करारेपनमें आसुरी निष्ठुरता

मिलने लगी। ठीक दोपहरका सूर्य अपने प्रखर तापके कारण जिस प्रकार संतापकारक जान पड़ता है, ठीक उसी प्रकार शुभकरण भी भयप्रद जान पड़ने लगे। उनकी अधीनतामें काम करनेवाले अच्छे अच्छे सरदारोंको भी उनके सामने जानेमें भय लगने लगा। सैनिकोंने अपने सेनापतिके मुँहकी ओर देखना छोड़ दिया। शुभकरण विना एक क्षण भी खोए हुए महेवाकी ओर बराबर बढ़ने लगे।

जबसे विजयाकी जबानी चम्पतरायने यह सुना था कि बुन्देलखंडके सब राजाओं और सरदारोंने उनके प्रार्थना-पत्रका इस प्रकार अपमान किया था, तबसे उनके सिरसे पैर तक मानो आग सी लग गई थी। वे अच्छी तरह समझते थे कि स्वतंत्रताके लिए सब लोगोंका मिलकर प्रयत्न करना ईश्वर-विहित कर्त्तव्य है; उस कर्त्तव्यमें सहायता न देना, उसकी अवज्ञा करना अथवा उसके विरुद्ध प्रयत्न करना देश-हितकी दृष्टिसे, प्रजाके कल्याणकी दृष्टिसे, भूत-दयाकी दृष्टिसे और समताके उदार तत्त्वकी दृष्टिसे बड़ा भारी अपराध है। इसी लिए उन्होंने यह निश्चय किया था कि सबसे पहले घरके इन भेदियोंका ही नाश करना चाहिए। महेवा पहुँचकर उन्होंने लड़ाईकी भरपूर तैयारी की। नित्य सवेरेसे महेवाके राजप्रासादके सामने शस्त्रोंके ढेरके ढेर लगने लगते थे और सन्ध्यातक सब शस्त्र बँट जाते थे। यह सिलसिला बराबर पन्द्रह दिनोंतक जारी रहा। छत्रसाल यह सोचकर बहुत ही दुःखी होते थे कि इतने शस्त्रोंका उपयोग अपने ही भाइयोंका नाश करनेमें होगा! अगर हमने अपने ही भाइयोंको देशद्रोही पाकर उनका नाश कर डाला तो फिर हम शाही फौजसे किसके भरोसे लड़ेंगे? स्वतंत्रता फिर किनके लिए प्राप्त की जायगी? शुभकरण सरीखे वीर पुरुषके मनमें वैरकी जो गाँठ पड़ गई है यदि प्रयत्न करके, हारके अथवा अन्तमें क्षमा प्रार्थना करके वह खोली जा सके, बुन्देलखंडके राजाओंको अपना शत्रु समझकर उन पर शस्त्र चलानेकी अपेक्षा उनके कलंकित विचारोंको दूर करके उन्हें स्वतंत्रता-प्राप्तिके लिए लड़नेपर तैयार किया जाय तो स्वतंत्रताकी ओर जानेका मार्ग कितना सुलभ हो जाय? आपसकी कलह छोड़कर बुन्देलखण्डकी बची-खुची शक्ति नष्ट करनेकी अपेक्षा बुन्देलोंकी सारी शक्तिको एक ही सूत्रमें बाँधकर एकत्र किया जाय तो वह कितना बलाढ्य, अजेय और अभेद्य होगा! ये और इसी प्रकारके और दूसरे बहुतसे विचार छत्रसालके मनमें उत्पन्न होते थे; पर उनके पिता चम्पतराय स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहे

थे उनकी ओर देखते हुए उनके वे सब विचार मनके मनमें ही रह जाते थे। वे स्वयं यह सोचकर उन विचारोंको मन-ही-मन दबा रखते थे कि जो पिताजी स्वतंत्रताका उदात्त ध्येय सामने रखकर अनेक वर्षोंसे निरन्तर प्रयत्न कर रहे हैं वे कभी बुन्देलखंडके अहितका कोई काम न करेंगे। धीरे धीरे कई दिन बीत गये। अन्तमें संग्रामका अवसर अचानक ही आ गया। चम्पतरायकी सेना अभी महेवासे निकली भी न थी कि इतनेमें ही शुभकरणकी प्रबल सेना महेवाकी पंचक्रोशीमें आ पहुँची। चम्पतराय उसे देखकर बहुत ही अधिक क्रुद्ध हुए। छत्रसालको एक बड़ी सेनाका आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा। कुमार दलपतिराय भी अपने पिताके साथ युद्ध करनेके लिए तैयार हुए। चम्पतरायका चपल घोड़ा महेवाकी सेनाके आगे दौड़ने लगा। कूचकी सूचना देनेवाले रणवाद्य कर्कश ध्वनि उत्पन्न करने लगे। महेवाके देवता बुन्देलखण्डके दानवोंके साथ संग्राम करनेके लिए जल्दी आगे बढ़ने लगे।

संग्रामकी सब तैयारियाँ करके शुभकरण महेवाकी सेनाके आनेका रास्ता देखने लगे। उसी समय चम्पतरायका मुँहसे निकला हुआ विन्ध्यवासिनीदेवीका प्रचण्ड जयजयकार उन्हें स्पष्ट सुनाई पड़ा। उस जयजयकारकी प्रतिध्वनि उत्पन्न होनेसे पहले ही शुभकरणने अपनी सेनाको महेवाकी सेना पर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। तुरन्त ही सेनापतिकी आज्ञाका पालन हुआ। भालेवालोंने भाले निकाल लिये और बरछीवालोंने बरछियाँ खींच लीं। तोपें दगने लगीं। बन्दूकें छूटने लगीं। बिजलीकी तरह तलवारें चमकने लगीं। घोड़सवार और पैदल, भालेबरदार और बन्दूकची, वीर और योद्धा एकदमसे चम्पतरायकी सेना पर टूट पड़े।

चम्पतरायकी सेनाने इस आक्रमणका बहुत ही योग्य उत्तर दिया। भालेबरदारोंने भाले-बरदारोंको रोका, बरछीवाले बरछीवालोंसे भिड़ गये और बन्दूकचियोंकी बन्दूकचियोंसे मुठभेड़ हो गई। तलवारोंसे युद्ध करनेवाले वीर तलवारोंसे लड़नेवाले योद्धाओंसे जूझने लगे। परन्तु युद्ध अधिक समय तक न हुआ। थोड़ी ही देरमें सारी व्यवस्था मिट गई और रणक्षेत्रमें गड़बड़ी मच गई। दोनों ओरकी सेनायें गुथ कर लड़ने लगीं। उस समय मित्र और शत्रुकी पहचान न रह गई। उस समय अपनी समान श्रेणी, समान आयुध, समान वाहन और समान वयका प्रतिस्पर्धी योद्धा ढूँढ़ निकालना बहुत ही कठिन हो गया। उस समय धर्म्मयुद्ध

करना असम्भव हो गया। भालेवाले वरछीवालों पर और वरछीवाले बन्दूकचियों पर टूट पड़े और येनकेन प्रकारेण अपनी रक्षा करते हुए अपने सामने पड़नेवाले शत्रुके प्राण लेने लगे।

संग्रामके पहले दिन चम्पतरायकी जीत हुई। दलपतिरायके अतुल पराक्रमके कारण शुभकरणकी सेना एक कोस पीछे हट गई। उस दिन पिता और पुत्रमें बड़ा ही भयंकर संग्राम हुआ। युवराज छत्रसालने म्यानसे तलवार भी वाहर न निकाली। वे दिन भर पिता और पुत्रका युद्ध ही देखते रहे। वे सोचने लगे कि यदि इतने वीर आपसमें लड़ना झगड़ना छोड़कर बुन्देलखण्डके वास्तविक शत्रुओंसे लड़ने लगें तो वातकी वातमें बुन्देलखण्ड स्वतन्त्र हो जाय। अपने भाइयोंपर ही हथियार उठाना उन्हें बड़ा भारी अपराध और अन्याय जान पड़ता था; लेकिन दलपतिरायके मनमें लड़ने भिड़नेके सिवा और कोई विचार उत्पन्न ही नहीं हुआ। उनका दृढ़ विश्वास था कि चम्पतराय जो कुछ करते हैं वह सब बुन्देलखण्डके हितके लिए ही करते हैं; इसी लिए उस दिन वे अपने प्राणोंकी भी परवा न करके कठोर कालकी तरह लड़ते रहे। शुभकरणने तीन वार वहुत ही जोरोंसे चम्पतरायकी सेनापर आक्रमण किया। लेकिन दलपतिरायकी समर-पटुताके कारण तीनों वार उन्हें पीछे हट जाना पड़ा। इतना ही नहीं, शुभकरणके तीसरे आक्रमणका उत्तर दलपतिरायने इतने जोश और इतनी वीरतासे दिया कि शुभकरणकी सेनाको एक कोस पीछे हट जाना पड़ा। चम्पतरायने दलपतिरायकी वीरताकी वहुत ही प्रशंसा की। सन्ध्या समय दलपतिरायकी वीरताकी प्रशंसा करते हुए चम्पतरायके सैनिक अपनी छावनीकी ओर लौटने लगे।

शुभकरण भी कुछ ऐसे वैसे वीर न थे। एक वार कुछ हारकर वे पीछे हटनेवाले नहीं थे। दूसरे दिन सूर्य्योदय होते ही युद्धकी तैयारियाँ होने लगीं। थोड़ी ही देर वाद युद्ध आरम्भ हुआ। उस दिन खाने पीनेकी किसीको चिन्ता नहीं हुई, सूर्य्यास्त तक लगातार युद्ध होता रहा। शुभकरणकी सेनापर चम्पतरायकी सेना जोरोंसे आक्रमण करने लगी। पर शुभकरणकी सेनाकी पंक्तिको वह भेद न सकी। वड़े वड़े वीर आपसमें लड़कर मरने और कटने लगे। लाशोंके ढेर लग गये और खूनकी नदियाँ वहने लग गईं। समर-क्षेत्रका वह भयानक दृश्य, अपने भाइयोंके खूनकी नदियाँ, अपने भाइयोंकी लाशोंके ढेर देखकर

छत्रसाल बहुत ही दुःखी हुए। अपने भाइयोंका वह अमानुषी वध उनसे देखा न जाता था। उस दिन भी वे नहीं लड़े। उस दिन भी उन्होंने अपनी तलवार म्यानसे बाहर न निकाली, वे खाली युद्ध देखते रहे।

दूसरे दिन भयंकर युद्ध आरम्भ होनेसे पहले छत्रसाल अपने पिताके पास गये। चम्पतराय अपने सरदारोंको यह समझा रहे थे कि आज किस प्रकार आक्रमण और युद्ध करना चाहिए। वीरश्री-युक्त कुमार दलपतिराय एकाग्रचित्तसे चम्पतरायकी बातें सुन रहे थे। चारण और कड़खैत इस बातकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि चम्पतरायकी बातें समाप्त हों और हम लोग वीरोंके मनमें उत्साह उत्पन्न करनेके लिए कवितायें और कड़खे आरम्भ करें। इतनेमें युवराज छत्रसालने आगे बढ़कर चम्पतरायसे कहा,—

"पिताजी! यह युद्ध बड़ी ही निर्दयताका हो रहा है। इस आपसके युद्धसे बुन्देलखण्डको क्या लाभ होगा? बुन्देलखण्डकी प्रजाके वधसे बुन्देलोंका कौनसा हित होगा? यदि आपसके इस वैर-भाव और लड़ाई-झगड़ेमें ही बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति नष्ट हो गई, उसका अप्रतिम क्षात्र-तेज जाता रहा, उसी कलहाग्निमें यदि इतने वीरोंकी आहुति पड़ गई तो बुन्देलखण्डको किस प्रकार स्वतंत्रता मिलेगी? मेरी समझमें तो इस युद्धसे बुन्देलखण्डका कुछ भी हित न होगा।"

चम्पतरायने बहुत ही चकित होकर कहा,—"छत्रसाल! तुम ऐसी बातें कहते हो? मैं अच्छी तरह समझता हूँ कि बुन्देलोंका हित किसमें है। जिसने स्वतन्त्रतादेवीकी भक्तिमें ही अपना अधिकांश जीवन बिता दिया उसे तुम्हारा कुछ समझाना बुझाना धृष्टता ही है। तुम्हारी ऐसी कायरताभरी बातें सुनकर मुझे बहुत ही दुःख हुआ, अगर फिर कभी तुम इस तरहकी बातें करोगे तो—" चम्पतरायने अपना क्रोध मनमें ही दबा लिया। चारणोंने ऊँचे स्वरसे बुन्देलोंकी वीरताके गीत गाने आरम्भ किये। चम्पतराय, दलपतिराय तथा अन्य वीरोंमें उत्साह और तेज संचार करने लगा, रण-वाद्य जोर जोरसे बजने लगे। विंध्यवासिनीदेवीका गगन-भेदी जयजयकार हुआ। रणक्षेत्रमें पहुँचकर योद्धा रणदेवताको प्रसन्न करनेका प्रयत्न करने लगे। पर छत्रसाल उस दिन भी न लड़े। उनकी तलवार उस दिन भी म्यानसे बाहर न निकली।

बुन्देलखंडमें परस्परका यह युद्ध वहुत दिनोंतक होता रहा पर निर्णय नहीं हुआ। तो भी इतने दिनोंमें चम्पतराय कभी अपयश लेकर नहीं लौटे थे। पर हाँ उन्हें इस वातकी अवश्य आशंका होने लगी थी कि यदि और कुछ दिनोंतक यही क्रम रहा तो दशा दिनपर दिन विगड़ती जायगी और योद्धा वरावर छीजते जायँगे। शुभकरणके भी कुछ कम सैनिक काम न आए थे। लेकिन हीरादेवी वरावर नए नए सैनिक भेजकर उनके स्थानकी पूर्त्ति करती थी, इस लिए शुभकरणकी सेना अभीतक मुकावले पर ठहरी हुई थी।

यद्यपि शुभकरण और चम्पतरायकी सेनाओंमें वरावर खूव घनघोर युद्ध हुए थे पर तो भी चम्पतरायका पक्ष ही प्रवल रहा और शुभकरणके वहुतसे सैनिक मारे गये। जव औरंगजेवको यह वात मालूम हुई तव उसने चम्पतरायको परास्त करनेकी तयारी शुरू की। यह जानकर भी कि औरंगजेवकी प्रचण्ड सेना हमपर आक्रमण करनेके लिए आ रही है, चम्पतरायका धैर्य्य न छूटा और वे दृढतापूर्वक उसका सामना करनेके लिए तैयार हो गये। शाही सेनाको अकस्मात् आते देखकर उन्हें तनिक भी चिन्ता नहीं हुई। छत्रसाल इतने दिनोंतक दूरसे ही रणक्षेत्रका तमाशा देखा करते थे; पर अव वे भी उसमें उतर पड़े। उन्होंने भी अपनी तलवार म्यानसे वाहर निकाली। उनका अद्वितीय उत्साह देखकर चम्पतरायके वचे हुए सैनिकोंमें भी नई आशा और नए उत्साहका संचार हो आया। शुभकरण और औरंगजेवके मिश्र सैनिकोंको वे लोग यमराज सरीखे जान पड़ने लगे।

औरंगजेव वड़ा भारी कूटनीतिज्ञ और दूरदर्शी था। उसने शुभकरणकी सहायतासे चम्पतरायकी सेना पर आक्रमण करनेके लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ निकाला और उसी स्थानसे उसने आक्रमण करना आरम्भ किया। दोनों ओरसे भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। शुभकरण और औरंगजेवकी सेना यद्यपि संख्यामें वहुत अधिक थी, वादशाहको यद्यपि घरके भेदी शुभकरणकी सहायता मिल रही थी तथापि उनके आक्रमणको कुछ भी न गिनते हुए चम्पतरायके अनेक वीरोंने अच्छा पराक्रम दिखलाया और वहुत ही वीरतापूर्वक लड़कर शत्रुओंके प्राण लिये और अपने प्राण दिये।

ज्यों ज्यों चम्पतरायके वीर कटने लगे त्यों त्यों उनका पक्ष निर्वल होने लगा। प्रायः आधे योद्धा तो शुभकरणके साथ युद्ध करनेमें काम आ चुके थे

और जो आधे बच रहे थे वे भी बहुत थके हुए थे और ऐसे अवसर पर उन्हें दिल्लीकी प्रचण्ड सेनाका सामना करना पड़ा। चम्पतरायने देखा कि हम जिन बुन्देलेंके लिए लड़ते हैं वही हमारे शत्रु हैं और अवसर पड़ने पर जिन लोगोंका विश्वास करना चाहिए था वे विश्वास-घातक निकले। अब उन्हें किसी पर विश्वास न होता था। वे यह भी समझने लगे कि अब महेवाका संरक्षण न हो सकेगा। वे अपनी आँखोंके सामने यह नहीं देख सकते थे कि शाही सेना महेवाको विध्वंस करे, इस लिए बहुत ही शोकाकुल अन्तःकरणसे उन्होंने महेवा छोड़ा। बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके लिए इतना प्रयत्न करनेवाले वीरोंने अन्तमें वनवास स्वीकार किया। जो युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय अपने अतुल पराक्रमसे शत्रुओंका नाश कर रहे थे वे भी चम्पतरायके साथ जंगलकी ओर निकल गये। छत्रसालकी माता सरलादेवी भी उन्हीं लोगोंके साथ हो ली। अब चम्पतरायके साथ केवल पचास चुने हुए वीर रह गये थे। पर तो भी हीरादेवी उधर सेना संग्रह करती ही जाती थी।

महेवा पर शाही झण्डे फहराने लगे। हीरादेवीके आनन्दका पारावार न रह गया। अब वह केवल इतना ही चाहती थी कि जिस तरह चम्पतराय अपनी स्त्री और पुत्रके साथ महेवासे चले गये हैं उसी तरह वे अब इस संसारसे भी चले जायँ। जिस चम्पतरायने उसे और उसके पति पहाड़सिंहको राज्य और ऐश्वर्य दिलवाया था, उन्हीं चम्पतरायको उस राक्षसीने वन वन फिरनेके लिए विवश किया!

हीरादेवीसे जहाँतक हो सकता वह बुन्देलखण्डकी सारी शक्ति एकत्र करके चम्पतरायके विरुद्ध बादशाहको सहायता देती थी; और रोज कहीं न कहीं शाही सेनाके साथ चम्पतरायकी मुठभेड़ हो ही जाती थी। उस समय छत्रसाल और दलपतिराय अपने प्राणोंकी परवा न करके पराकाष्ठाकी वीरता दिखलाते थे, पर तो भी उनके साथी सैनिक बराबर कटते ही जाते थे।

अन्तमें बड़े शोकका दिन आया! सौभाग्यसिंह एक दिन जंगलमें इधर उधर शत्रुकी टोह लेनेके लिये गये थे। चम्पतरायको इधर उधर घूमते फिरते एक झाड़ीके नीचे उनका मृतशरीर दिखलाई पड़ा। उसकी अन्त्येष्टि-क्रिया करके चिन्ताकुल चम्पतराय पत्थरकी एक चटानपर पड़े हुए थे। युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय गम्भीर भावसे पास ही बैठे हुए थे। सरलादेवी

शोकदग्ध अंतःकरणसे अपने पति और पुत्रकी वह हीनावस्था देख रही थी। उनके वाकीके सब साथी मारे जा चुके थे। बहुत देरतक विचारोंमें मग्न रहनेके उपरान्त चम्पतरायने वह स्मशानतुल्य शान्ति इस प्रकार भंग की,—

" बड़ा ही विकट प्रसंग आ पड़ा है। या तो लड़ भिड़कर प्राण दे दें और या निर्लज्जतासे शत्रुके हाथ आत्मसमर्पण कर दें; इसके सिवा और कोई गति नहीं है। अब तो यही निश्चय करना है कि जीते रहें या मर जायँ; चलकर शत्रुके हाथ आत्मसमर्पण कर दें और निर्लज्जतासे अपना जीवन व्यतीत करें; या शत्रुसे दो दो हाथ करके पहर दो पहरमें निष्कलंक रूपसे वीर-गतिको प्राप्त हों। मरना तो सहज है पर मरनेके समय अपने देशकी आपत्तिका जो चित्र आँखोंके सामने खिंचा रहेगा उसे देखनेमें ही असह्य वेदना होगी। तब क्या जीते रहें? जीते रहकर उस वचनभ्रष्ट औरंगजेबके गुलाम बनें! छिः! इस प्रकार जीना तो नरक-निवासके समान है। मरने पर स्वर्ग पहुँचकर देवताओंको बुन्देलोंकी दासताकी कहानी तो सुना सकेंगे। यहाँ गुलाम बनकर क्या करेंगे? चलो मैंने तो निश्चय कर लिया। देवताओंके कान खोलनेके लिए, स्वर्ग-सुखमें मग्न देवताओंका ध्यान बुन्देलोंकी दुर्दशाकी ओर आकृष्ट करनेके लिए, जहाँ तक शीघ्र हो सकेगा, मैं उनके चरणोंमें जाऊँगा। अब शत्रुके सैनिकोंकी जो टोली पहले दिखलाई पड़ेगी, उसीपर आक्रमण करूँगा। मेरे सांसारिक कर्त्तव्य पूरे हो गये, मैंने बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करनेके लिए सभी उपाय कर डाले, अब मैं देवताओंके पास जाकर उनसे बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करानेकी प्रार्थना करूँगा। (अपनी स्त्रीकी ओर देखकर) तुम व्यर्थ शोक न करो। छत्रसाल और दलपति! तुम लोग भी दुःखी मत हो। मैं अब पहर दो पहरका ही पाहुना हूँ, इतना समय हम लोगोंको सुखसे बिताना चाहिए। आओ, हम लोग प्रेमसे गले मिल लें! अपने जीवनके अन्तिम अनुभव-सर्वस्वका आनन्द ले लें! अब मैं तुम लोगोंसे सदाके लिए अलग होऊँगा।"

सरलादेवी अब तक सिसक सिसककर रो रही थीं; पर वे अब फूट फूटकर रोने लगीं। उनकी ओर देखते हुए चम्पतरायने कहा,—

" क्या तुम पागल हो गई हो? जंगलमें चारों ओर शत्रुके सैनिक घूम रहे हैं। न जानें वे कब आकर हम लोगोंपर आक्रमण कर बैठें। उनके आ जानेपर परस्पर एक दूसरेसे मिलने, एक दूसरेको देखने और आपसमें बातचीत कर-

नेकी इच्छा भी मनमें ही रह जायगी और कदाचित् इसी लिए शत्रुओंपर हाथ भी अच्छी तरहसे न चल सकेगा। इस लिए इस समय अपनी सब इच्छायें पूरी कर लो।"

सरला अपने स्वामीके चरणोंपर रोती हुई गिर पड़ी। छत्रसाल आँखोंमें आँसू भरकर माता पिताकी ओर देखते रहे। पर जब उन्हें इस बातका ध्यान हुआ कि यदि पिताजी मुझे रोता हुआ देखेंगे तो उन्हें बहुत ही दुःख होगा, बड़ी कठिनतासे वे शान्त हुए। चम्पतरायने अपनी स्त्रीको पैरों परसे उठाकर कहा,—

"अब हम लोगोंकी भेट स्वर्गमें होगी। मैं पहले स्वर्गमें चलकर सब प्रबन्ध कर रखूँगा, तब तक तुम अपना शेष कर्त्तव्य करते रहना। युवराज छत्रसाल अभी बालक है। उसे शान्त रखने और धैर्य देनेके लिए मातृ-प्रेमकी आवश्यकता है। उसके सयाने हो जाने पर तुम भी मेरे पास स्वर्गमें आ जाना। छत्रसाल! अपने जीवनका एक बहुत महत्त्वपूर्ण अनुभव मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूँ। उसे सावधान होकर सुन लो और सदा इस बातका ध्यान रखना कि जो प्रमाद मुझसे हुआ है वही कहीं तुमसे भी न हो जाय।"

युवराज छत्रसाल हाथ जोड़कर सिर नीचा किये हुए अपने पिताके सामने खड़े थे। दलपतिराय भी उसे रूपमें उनके पास ही खड़े थे। दोनों एकाग्र-चित्त होकर चम्पतरायकी बातें सुनने लगे।

चम्पतराय अपने पिछले जीवनका सिंहावलोकन करके कहने लगे,—
"छत्रसाल! युद्ध छिड़ जाने पर एक बार तुमने मुझसे कहा था कि व्यर्थ आपसमें रक्तपात न होना चाहिए। तुम्हारी इस बातका मूल्य मैंने बहुत देरमें समझा। मैंने स्वतंत्रताके लिए पराकाष्ठाका प्रयत्न किया। सुखविलास आदिको लात मारकर मैं दिन रात स्वतंत्रताके लिए परिश्रम करता रहा। मेरा लक्ष्य सदा स्वतंत्रता पर ही रहा। महेवाके प्रासादमें राजसिंहासन पर बैठनेके समय, अन्तःपुरमें विश्राम करनेके समय, देवीके मन्दिरमें उपासना करनेके समय, सदा मुझे स्वतंत्रताकी ही चिन्ता बनी रहती थी। मुझे कभी स्वतंत्रताके सिवा और कुछ दिखलाई ही न देता था। पहले मैंने सोमगढ़के युद्धमें औरंगजेबकी सहायता की थी; आज मैंने औरंगजेब पर ही शस्त्र उठाया है। पहले मैं और शुभकरण दोनों साथ साथ मिलकर युद्ध करते थे; आज हम दोनों परस्पर

एक दूसरेसे लड़ते हैं। पहले मुझे हीरादेवीको ओड़छेके राजसिंहासनपर बैठाना उचित जान पड़ा था, आज मैं उसके सैनिकोंसे लड़ना आवश्यक समझता हूँ। लेकिन परस्पर विरुद्ध जान पड़नेवाले इन सभी कामोंमें मुझे स्वतन्त्रताकी दिव्य ज्योति सदा दिखलाई पड़ती थी। इतना होने पर भी मुझे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमें सफलता नहीं हुई—मेरा ध्येय मुझे प्राप्त न हुआ। मैंने इस विषयपर बहुत कुछ विचार किया कि मेरे इस विफल-मनोरथ होनेका मुख्य कारण क्या है और मेरे प्रयत्नोंमें कौनसा दोष है। अब जाकर मुझे अपना दोष, अपना प्रमाद और अपनी विफलताका कारण जान पड़ा है।"

युवराज छत्रसाल और युवराज दलपतिराय बड़े ही ध्यानसे चम्पतरायकी बातें सुन रहे थे। वे दोनों चम्पतरायकी बातों, उनके चेहरेपर झलकनेवाले मनोविकारों बल्कि उनकी प्रतिमाहीमें मानो लीन हो रहे थे।

चम्पतरायने आगे कहा,—"छत्रसाल! मैंने स्वतन्त्रताका भव्य प्रासाद बनानेका प्रयत्न किया था। पर उसे आरम्भ करनेके पहले मैंने यह अच्छी तरह न देख लिया कि उसकी नींव दृढ़ है या नहीं। स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए मैं रण-क्षेत्रमें लड़ा, लेकिन जिन लोगोंको मैं स्वतन्त्रता दिलवाना चाहता था उनके मनकी परीक्षा मैंने पहले नहीं की। मैंने इस बातका विचार नहीं किया कि बुन्देलोंके मनमें दासताकी भावनाने कितना अधिक घर कर लिया है, दासताके आनुषंगिक दोषोंके कारण बुन्देलोंके सद्गुणोंका कहाँ तक नाश हो गया है, अपने शत्रुका उत्कर्ष सहन न करनेवाली बुन्देलोंकी मनःस्थिति कितनी आकुंचित होकर मत्सरके रूपमें कहाँतक परिवर्तित हो गई है। इसी लिए मैं अपने विरोधियोंको स्वतन्त्रताका शत्रु समझने लगा। ऐसे लोगोंका मन स्वतन्त्रताकी ओर आकर्षित करनेके बदले, उन्हें स्वतन्त्रताका आनन्द दिलानेके बदले, मैं उन्हें यवनोंकी तरह पराया समझने लगा। मैं समझने लगा कि स्वतन्त्रताके लिए यवनोंके साथ युद्ध करना जितना आवश्यक है उसकी अपेक्षा इन लोगोंका नाश करना अधिक आवश्यक और उपयोगी है। मुझे इन लोगोंके मनसे मत्सर निकालना चाहिए था, पर मैंने वैसा न करके बिना दृढ़ नींवके ही भारी प्रासाद खड़ा करनेका प्रयत्न किया था। शुभकरण मेरे वैरी हैं, हीरादेवीसे भी मेरा वैर है, इनके अतिरिक्त बुन्देलखण्डके प्रायः और सभी राजाओंसे मेरी शत्रुता ही है, लेकिन उस वैरका नाश करने अथवा उसका कारण ढूँढ़ निकालनेका मैंने कभी प्रयत्न

नहीं किया। उनसे मेल करनेकी भावना कभी मेरे मनमें उत्पन्न ही नहीं हुई। मैं सदा उन्हें अपना शत्रु समझकर उनसे लड़ता रहा—यही मेरी बड़ी भारी भूल हुई। स्वतन्त्रता सरीखा पवित्र काम हाथमें लेकर मैंने अपना हित और अहित न समझनेवाले अज्ञानी भाइयोंको उपदेश देकर ठीक मार्ग पर लानेका कभी कोई प्रयत्न नहीं किया। मेरे मनमें यह भ्रम-पूर्ण कल्पना दृढ़ हो गई कि विना उनका नाश किये स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। जिन लोगोंसे मुझे प्रार्थना करनी चाहिए थी, उनके साथ मैं वैर और द्वेष करने लगा। इन्हीं सब दोषोंके कारण स्वतन्त्रताके लिए मेरा यह भगीरथ-प्रयत्न व्यर्थ हो गया। छत्रसाल! युद्ध आरम्भ होनेके समय तुमने मुझसे व्यर्थ आपसमें रक्तपात न करनेके लिए कहा था, पर उसका मूल्य मैंने बहुत देरमें समझा। खैर, अब जो कुछ होना था सो हो चुका। तुम्हें जो कुछ मैं कहना चाहता था वह भी कह चुका। जिस समय आपसका मत्सर और वैरभाव छोड़कर बुन्देले शाही सेनासे लड़ेंगे उसी समय बुन्देलखण्ड स्वतन्त्र होगा। बिना नीव दृढ़ किए इमारत खड़ी करनेका प्रयत्न करना बड़ी भारी मूर्खता है।"

छत्रसालने बहुत गम्भीरतापूर्वक कहा,—"पिताजी! आपके उपदेशके अनुसार चलना ही मेरा सर्वश्रेष्ठ कर्त्तव्य है। मैंने निश्चय कर लिया है कि इस आपत्तिसे बचनेके उपरान्त मैं आपके ढंग पर ही कार्य्य करूँगा।"

चम्प०—"नहीं, मेरे ढंगपर काम करनेकी आवश्यकता नहीं। मेरे ढंगमें बहुतसे गुण होने पर भी वह बिलकुल निर्दोष नहीं कहा जा सकता। इस लिए मैं यह बात तुम्हें अच्छी तरह समझा देना चाहता हूँ। छत्रसाल! मैं तुम्हारा गुरु होनेके योग्य नहीं हूँ। तुम्हारे गुरु होनेकी योग्यता सारे भारतमें केवल एक ही मनुष्यमें है।"

दलपतिरायने पूछा,—"प्राणनाथप्रभुमें न?"

चम्प०—"नहीं, प्राणनाथप्रभु यद्यपि हम लोगोंको स्वतन्त्रतासम्बन्धी प्रयत्नोंमें इतनी सहायता देते हैं तथापि राजनीतिकी बातोंमें उनका इतना अधिक मन नहीं लगता। लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि यदि वे मनपर लावें तो बुन्देलखण्ड बहुत ही थोड़े समयमें स्वतन्त्र हो जाय। छत्रसाल! यदि स्वतन्त्रताके सम्बन्धमें तुम गुरु-मन्त्र लेना चाहो तो उसके लिए तुम्हें दक्षिणकी ओर जाना पड़ेगा। वहाँ शिवाजी नामक एक महात्मा महाराष्ट्र देशको स्वतन्त्र कर रहे हैं।

तुम उनकी सेवामें जाओ और उन्हें अपना गुरु बनाओ। वे जिस प्रकार तुम्हें मंत्र दें उसी प्रकार तुम बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेका प्रयत्न करो। उस समय तुम अवश्य ही यशस्वी होगे। बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेकी मेरी इच्छा यदि तुम पूरी कर दोगे तो मेरी आत्माको स्वर्ग-सुखसे भी बढ़कर सुख मिलेगा। देखो वह सामनेसे कुछ यवन सैनिक हम लोगोंपर आक्रमण करनेके लिए इधर आ रहे हैं। युवराज! अब तुम शीघ्र अपनी माताकी रक्षाका प्रबन्ध करो और मैं अब अन्तिम घोर संग्राम करूँगा। अच्छा, अब मैं जाता हूँ; ईश्वर तुम लोगोंका कल्याण करे।"

इतना कहकर चम्पतराय सामनेसे आनेवाले यवन सैनिकोंकी ओर बड़े आवेशसे बढ़ने लगे। पर छत्रसालने उन्हें बीचमें ही रोककर कहा,—

"पिताजी! अभी तो आप अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकते हैं। जान बूझकर व्यर्थ आगमें कूदनेकी क्या आवश्यकता है?"

चम्प०—"छत्रसाल! तुम नहीं जानते कि मेरे जीवित रहनेकी अपेक्षा मर जानेमें ही बुन्देलखण्डका अधिक लाभ है। बुन्देलोंके मनमें इस समय मत्सरकी जो आग जल रही है वह मेरे मर जानेसे बुझ जायगी। बहुतसे बुन्देले यही समझते हैं कि चम्पतराय और स्वातंत्र्य दोनों एक ही हैं। इसी लिए जो लोग चम्पतरायसे द्वेष रखते हैं वे स्वतंत्रताके भी द्रोही और शत्रु बन गये हैं। मेरे मर जानेसे उस द्रोहका आप-ही-आप नाश हो जायगा और बुन्देलोंके मनमें स्वतंत्रताके लिए निर्व्याज प्रेम उत्पन्न होगा। इसी लिए इस अवसरपर मुझे मर ही जाना चाहिए। दासत्वकी काली घटासे घिरे हुए बुन्देलखंडमें नरकतुल्य जीवन बितानेकी अपेक्षा समरभूमिमें लड़कर वीरोंकी मृत्यु मरना कहीं अच्छा है। तुम जाओ और अपनी माताकी रक्षा करो।"

इतना कहकर चम्पतराय आगे बढ़े और उन मुसलमान सैनिकोंपर टूट पड़े। उस समय दलपतिराय बहुत वीरतापूर्वक उनकी सहायता करने लगे और छत्रसाल अपनी माताकी रक्षाके प्रयत्नमें लग गये।

उस दिन युद्धमें चम्पतरायने अपूर्व और अवर्णनीय शूरता दिखलाई। उन्हें चारों ओरसे घेरकर बहुतसे यवन सैनिक उनपर शस्त्र चला रहे थे। शस्त्रोंके अनेक प्रहारोंके कारण चम्पतरायके शरीरसे कई स्थानोंसे लहूकी धारें बह रही थीं, पर तो भी उनकी तलवार बराबर काट करती ही रही। प्रायः एक पहर तक

चम्पतराय उसी तरह लड़ते रहे; इस बीचमें उन्होंने कई यवनोंको यमपुर पहुँ-चाया। जान पड़ता था कि उनका अतुल पराक्रम देखकर स्वयं युद्ध-देवताने उनके शरीरमें संचार किया है। उन्हें स्वयं भी इस बातके कारण संतोष हो गया कि आजका अन्तिम युद्ध मैंने बहुत अच्छी तरह किया।

शरीरमेंसे बहुतसा रक्त बहते जानेके कारण चम्पतराय धीरे धीरे निःशक्त होने लगे। उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जब तक शरीरमें तनिक भी बल रहेगा तब तक मैं बराबर युद्ध करता रहूँगा। लेकिन उनके सारे शरीरमें इतने घाव हो गये थे कि थोड़ी ही देरमें उनमें बहुत अधिक शिथिलता आ गई। उस समय चार सैनिक बड़े आवेशसे अपनी तलवारें लेकर उन पर टूट पड़े। चम्पतरायने उसी अवस्थामें उनमेंसे तीनका काम तो तमाम कर दिया पर चौथेपर वे वार न कर सके। उस समय वे मरणोन्मुख होकर वीरोचित शय्यापर पड़ गये। उस समय कई सैनिक जोरसे चिल्ला उठे कि महेवाके राजा चम्पतराय मारे गये। कुमार दलपतिराय वहाँसे कुछ दूरी पर कई यवनोंके साथ लड़ रहे थे। यह चिल्लाहट सुनकर वे तुरन्त उस स्थानपर पहुँच गये जहाँ चम्पतराय गिरे थे। उन्होंने देखा कि चम्पतराय खूनसे सराबोर जमीन पर पड़े हुए हैं और उनके पास ही पिता शुभकरण हाथमें तलवार लिये खड़े हैं। उन्होंने समझ लिया कि हमारे पिताने ही चम्पतरायके प्राण लिये हैं। बिना कुछ आगा-पीछा सोचे वे बड़े आवेशसे अपने पितापर वार करनेके लिए टूटे; पर इतनेमें ही उन्हें चम्पतरायका क्षीण स्वर सुनाई दिया,—

"दलपतिराय, बस हाथ रोको। व्यर्थ पितृ-वध करके नरकके भागी न बनो। मैंने अभी तुम लोगोंको जो उपदेश दिया था, वह क्या तुम इतनी जल्दी भूल गये? आगे अपने घरके लोगोंसे कभी लड़ाई न करना।"

ऊपर उठाई तलवार ज्योंकी त्यों रखकर दलपतिरायने बड़े ही दुःखसे पूछा,—"इन्होंने ही आपपर शस्त्र चलाया था न?"

शुभकरण बीचमें ही कुछ दुःखित होकर बोल उठे,—"नहीं, शुभकरण इतने भाग्यवान् नहीं हैं। शुभकरणका इतना भाग्य कहाँ कि समरभूमिमें चम्पतरायको मारकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करें। मैं यह सुनते ही कि चम्पतराय इसी जंगलमें हैं, अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिए बड़ी आशासे दौड़ा हुआ यहाँ आया था;

पर यहाँ आते ही मैंने देखा कि चम्पतराय इस दशामें पड़े हुए हैं। अब मैं इनकी यह अन्तकालीन वेदना देखकर ही सन्तोष करता हूँ।"

चम्पतरायने बड़े कष्टसे कहा,—"दलपतिराय! शुभकरण जो कुछ कह रहे हैं वह बहुत ही ठीक है। उन्होंने मुझपर शस्त्र नहीं चलाया। तुम व्यर्थ पितृ-वध न करो।"

दलपतिरायने अपनी तलवार नीचे कर ली और जमीनपर बैठकर उनका सिर अपनी गोदमें ले लिया और उनके चेहरेपर हवा करना आरम्भ किया। इससे चम्पतरायकी वेदना कुछ कम होतीसी जान पड़ने लगी।

यवन सैनिक धीरे धीरे वहाँसे खिसकने लगे। उनमेंसे कई पहले ही दौड़कर बादशाहको यह समाचार सुनानेके लिए जा चुके थे कि राजा चम्पतराय मारे गये। उस समय छत्रसालको अवसर मिला और वे अपनी माताको साथ लेकर बहुतसे यवनोंकी लाशोंपर पैर रखते हुए उस स्थानपर पहुँचे जहाँ चम्पतराय पड़े हुए थे।

सरलादेवी और छत्रसालके मनके धैर्य्यकी परीक्षा करनेवाला यही अवसर था। चम्पतरायका अन्त समयका तड़फना देखकर उनके अन्तःकरण शोकसे दग्ध हो गये, पर उन्होंने अपनी आँखोंसे एक बूँद भी आँसू न निकलने दिया! उनके मुँहसे दुःखका एक शब्द भी न निकला!

चम्पतरायकी वह शोचनीय अवस्था देखकर शुभकरण भी थोड़ी देरके लिए अपनी प्रतिज्ञा भूल गये। उन्हें अपनी बाल्यावस्थावाली चम्पतरायकी मैत्रीका ध्यान हो आया। चम्पतरायके स्वभावकी मृदुलता और मिलनसारीका चित्र उनकी आँखोंके सामने खिंच गया। उन्हें ऐसा जान पड़ने लगा कि बीचमें हम लोगोंको कुछ दिनोंके लिए परस्पर जो वैर हो गया था वह एक दुष्ट स्वप्न था। उस समय वे चम्पतरायको अपना वही पुराना मित्र समझने लगे। उन्होंने पहले जो कहा था कि,—"अब मैं इनकी यह अन्तकालीन वेदना देखकर सन्तोष करता हूँ" उसका ध्यान करके उन्हें बहुत दुःख हुआ। यह देखकर उनका हृदय बहुत व्यथित हुआ कि हमारा पुराना मित्र और साथी हमें छोड़कर सदाके लिए जा रहा है। वे चम्पतरायके लिए शोक करने लगे।

शुभकरणकी आँखोंसे बहनेवाले आँसुओंकी दो बूँदें चम्पतरायके मुँह पर भी पड़ीं। उस समय उन्होंने बड़ी ही धीमी आवाजसे कहा,—

" छत्रसाल ! मैंने तो तुम लोगोंको मना कर दिया था, तब तुम लोग मेरे लिए क्यों रो रहे हो ? " इतना कहकर चम्पतरायने जब बड़े कष्टसे देखा कि छत्रसाल या उनकी माता नहीं, बल्कि शुभकरण रो रहे हैं तब उनके चेहरेपर आश्चर्यकी कुछ छाया जान पड़ने लगी । उन्होंने बहुत ही धीमे और अस्पष्ट स्वरमें पूछा,—

" शुभकरण ! क्या तुम मेरे लिए शोक कर रहे हो ? क्या तुम्हें मेरे मरनेका दुःख हो रहा है ? "

रणधीर शुभकरणसे कुछ बोला न गया; वे फूट फूटकर रोने लगे ।

चम्प०—" शुभकरण ! शोक न करो । मैं इतनेसे ही सन्तुष्ट हूँ कि मेरे अन्त समय तुम्हारा मन साफ हो गया । "

अपना शोक रोककर शुभकरणने बड़ी कठिनतासे कहा,—" चम्पतराय ! मैं झूठ नहीं बोलता । मेरा मन अभीतक तुम्हारी तरफसे साफ नहीं हुआ । मुझे केवल बाल्यावस्थाकी बातोंका ध्यान करके ही दुःख हो आया । "

चम्प०—" शुभकरण ! भला मैंने तुम्हारा ऐसा कौनसा अपराध किया था जिसके कारण तुम्हारा मन अभी तक साफ नहीं हुआ ? "

शुभ०—" इस अन्त समयमें तुम्हें उस अघोर पातकका स्मरण करा देना चाहिए । सोलह वर्षका समय बीत जानेके कारण और स्वतंत्रताके उच्च ध्येयके पीछे पड़े रहनेके कारण शायद तुम्हें वह बात भूल गई होगी । उस पातकके स्मरण और उसके पश्चात्तापसे ही किसी तरह इस समय तुम्हारा अंतःकरण डोले तो सही । शायद उस पश्चात्तापके कारण तुम्हारी आत्मा शुद्ध हो जाय और तुम सहजमें अपने प्राण त्याग कर सको । क्या तुम्हें याद है कि सोलह वर्ष पहले तुमने बलात् किसी कुमारीका कौमार्य्य नष्ट किया था ?

चम्प०—" नहीं, अपनी स्त्रीको छोड़कर किसीके साथ आजतक मेरा कभी सम्बन्ध नहीं हुआ । "

शुभ०—" शायद तुम यह बात भूल गये हो कि तुमने एक कुमारीका कौमार्य्य नष्ट किया था और उसी कारण उस कुमारीने आत्म-हत्या कर ली थी ।"

चम्प०—(कुछ क्रोधसे) " यदि इस समय मुझमें शक्ति होती तो मैं तुम्हें ऐसे घृणित और मिथ्या कलंक लगानेका मजा चखा देता । मेरे आचार पर किसी प्रकारका कलंक लगाना मेरा भयंकर अपमान करना है । "

शुभ०—"चम्पतराय! इस समय तुम्हारा अन्त-काल बहुत समीप है, तुम्हारी सारी शक्तियाँ क्षीण होती जा रही हैं। शायद इसी लिए तुम्हारी स्मरण-शक्तिने भी जवाब दे दिया है। नहीं तो तुम इस तरह इनकार न करते। सागरकी ललिता नामकी राजकन्याका तुम्हें स्मरण है न?"

चम्प०—"हाँ, मुझे अच्छी तरह स्मरण है।"

शुभ०—"वह आत्महत्या करके मर गई थी, यह भी तुम्हें याद है न?"

चम्पतरायके चेहरेपर आश्चर्य और दुःखकी मिली हुई छाया दिखाई पड़ने लगी। उन्होंने शुभकरणके प्रश्नका कोई उत्तर न दिया।

शुभकरणने फिर कहा,—"तुमने उसका कौमार्य्य नष्ट किया था, इसी लिए उसने आत्महत्या की थी।"

यद्यपि उस समय तक चम्पतरायकी बहुत कुछ शक्ति क्षीण हो गई थी तो भी उन्होंने बहुत प्रयत्न करके आवेशमें कहा,—

"मेरा उसके साथ भाई-बहनका सा सम्बन्ध और व्यवहार था। मैं उसे बहनकी तरह जानता था। अपनी बहन और अपने मित्रके सम्बन्धमें ऐसा घृणित और नीच सन्देह करनेवालेको धिक्कार है!"

शुभकरण मानो घोर दुःख और विचारमें पड़कर सन्दिग्ध दृष्टिसे चम्पतरायकी ओर देखने लगे।

उन्हें इस दशामें देखकर चम्पतरायने फिर कहा,—

"शुभकरण! सन्देहमें पड़कर तुमने खूब देशद्रोह किया। भला अब तो सावधान हो जाओ।"

शुभकरणकी आँखोंसे आँसू निकल आये। उन्होंने कहा,—"यदि यही बात मुझे पहले मालूम होती तो—"

चम्पतरायकी आत्मा शरीर छोड़कर चली, उन्होंने अन्तिम बार अपनी स्त्री, अपने पुत्र, अपने मित्र और कर्तव्य-दक्ष दलपतिरायकी ओर देखा और स्वर्गकी ओर प्रयाण किया।

सरलादेवी और छत्रसालने फूट फूटकर रोना आरम्भ किया। शुभकरण भी उन्हीं लोगोंके साथ मिलकर बालकोंकी तरह रोने लगे।

बुन्देलखण्डका स्वातन्त्र्य-दीप बुझ गया।

\+ + +

सत्रहवाँ प्रकरण ।

ढाँड़ेरका राजमहल ।

जन्म, जरा और मरण इन तीन अवस्थाओंके अधीन सारा विश्व है; इसी लिए जब वृद्धावस्थामें अपना बहुतसा समय बिताकर अन्तमें भगवान् अंशुमालीने पश्चिम क्षितिजपर अपना शरीर छोड़ा तब सुफलादेवीको जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। उसे आश्चर्य केवल अंशुमालीके उत्तराधिकारी कार्य्योंपर हुआ। सूर्य्यकी उज्ज्वल प्रभासे वैर करनेवाला उनका उत्तराधिकारी अन्धकार अबतक न जाने किस कन्दरामें छिपा हुआ था। सूर्य्यका अस्तित्व नष्ट होते ही सारी पृथ्वीपर अपना अधिकार फैलाने लगा। भगवान् अंशुमालीने प्रजाके हित और रंजनके लिए जो जो कार्य किये थे उन सबको नष्ट करके मानो सारे संसारमें कृष्णसाम्राज्य स्थापित करना ही उसने अपना परम कर्त्तव्य समझ लिया था। जाही-जुहीके फूलोंका सफेद रंग, गुलाबका गुलाबी रंग, चम्पेका चम्पई रंग और केवड़ेका केवड़ई रंग उसे तनिक भी अच्छा न लगा और उसने उन सबपर कालिख पोतना आरम्भ किया। थोड़ी ही देरमें नीले आकाशसे लेकर हरित वर्णकी भूमि तक, सारे विश्वमें अन्धकारका साम्राज्य हो गया। उल्लुओं और दुष्ट निशाचरोंने अन्धकारका जयजयकार करना आरम्भ कर दिया। तो भी सुफलादेवी और विजया अपने बागमें स्तब्ध होकर बैठी हुई थीं।

अन्तमें जब विजयाकी लगाई हुई लताके सुन्दर फूल भी न दिखलाई पड़ने लगे तब उसने कहा,—

"अभी सूर्य्यको अस्त हुए थोड़ी देर भी नहीं हुई, और अन्धकारने इन सुन्दर फूलोंकी यह दशा कर दी।"

सुफलादेवीने मधुर स्वरसे कहा,—"यह अन्धकार सूर्य्यका उत्तराधिकारी है। किसी प्रतापशाली व्यक्तिके न रहनेपर उसके दुष्ट उत्तराधिकारी ऐसा ही किया करते हैं।"

वि०—"अंशुमालीके अस्त होते ही जिस प्रकार अन्धकारने चारों ओर उपद्रव आरम्भ कर दिया है, उसी प्रकार बुन्देलखण्डके स्वातन्त्र्य-रवि चम्पतरायके अस्त होते ही औरंगजेब भी सारे बुन्देलखंडमें धमाचौकड़ी मचा रहा है।"

ठंडी साँस लेकर सुफलादेवीने कहा,—"यही तो सबसे अधिक दुःखकी बात है। चम्पतरायके स्वर्गवासी होते ही सारे बुन्देलखण्डमें अन्धकारकी तरह यवन-सेना छागई है। इस अन्धकारमें हीरादेवीसरीखी भूतनियाँ और शुभकरणसरीखे पिशाच धमाचौकड़ी मचावेंगे और प्रजाके सुखका नाश करेंगे। चम्पतरायने अब तक जो पवित्र और शुभ कृत्य किये थे वे सब इस अन्धकारमें इन फूलोंकी तरह लोप हो जायँगे।"

वि०—"लेकिन एक बात है। अन्धकारके कारण यद्यपि ये फूल नहीं दिखलाई देते तो भी इनकी मनोहर सुगन्धि अभीतक ज्योंका त्यों बनी हुई है। इसी प्रकार चम्पतरायकी कृतियाँ यद्यपि अदृश्य हो गई हैं तथापि उनका कीर्ति-परिमल दसों दिशाओंमें फैला रहेगा और प्रातःकाल इन फूलोंका सौन्दर्य जिस प्रकार फिर हम लोगोंको दिखाई पड़ने लगेगा उसी प्रकार बुन्देलखण्डकी दास-ताकी रात बीत जानेपर चम्पतरायकी कृतियाँ भी फिर हमें दर्शन देकर प्रसन्न करने लगेंगी।"

सुफलादेवीने बड़े ही दुःखसे कहा,—"बुन्देलखण्डकी दासताकी रात! यह घोर काली रात कब बीतेगी और बुन्देलखण्डकी प्रजाको स्वातंत्र्यसूर्य्य कब दि-खलाई पड़ेगा? बुन्देलखंडके मस्तकपर चम्पतराय स्वातंत्र्य-तेजसे प्रकाशित होने लगे थे। कुछ दुष्ट मेघोंने उनके प्रकाशकी सुन्दर किरणें प्रजातक नहीं पहुँचने दीं। इसी लिए इस स्वातंत्र्य-सूर्य्यके प्रकाशसे यथेष्ट लाभ न हो सका। अब मेघोंमें छुपा हुआ वह चम्पतरायरूपी प्रकाश भी न रह गया। बुन्देलखंडका अन्तरिक्ष काले मेघोंसे भर गया है। सर्वत्र यवन-सत्ताका अन्धकार फैला हुआ है। बुन्देल-खण्डका भाग्योदय फिर कब होगा? उसके अन्तरिक्षसे ये मेघ कब हटेंगे? बुन्देलखंडमें स्वातंत्र्य-सूर्य्यका प्रकाश फिर कब पड़ेगा?"

वि०—"चम्पतरायके पुण्यशील पुत्र छत्रसालको तुमने अभीतक नहीं देखा है, इसीसे तुम्हें बुन्देलखंडकी दासताकी यह रात बहुत बड़ी जान पड़ती है। सच पूछो तो चम्पतराय स्वातंत्र्य-सूर्य्य नहीं थे बल्कि वे उस सूर्य्यका मार्ग सुगम करनेवाले अरुण थे। बुन्देलखण्डके स्वातंत्र्य सूर्यके शुभागमनकी सूचना देनेवाला अरुण अभी अस्त हुआ है। अरुणके अस्त होनेपर थोड़ी देरके लिए बुन्देलखंडमें यह अन्धकार फैल गया है। पर यह थोड़ी ही देरमें नष्ट हो जायगा और बुंदेलखंडका भाग्यरवि छत्रसाल स्वातंत्र्य-तेजसे चमकने लगेगा।"

विजयाकी वात सुफलादेवीको ठीक मालूम हुई। वह कुछ कहना ही चाहती थी कि इतनेमें उन दोनोंने अपना एक परिचित स्वर सुना। कोई कह रहा था,-“ईश्वर करे, तुम्हारी वात सच हो। चम्पतरायका वाकी वचा हुआ काम छत्रसालके हाथसे पूरा हो।”

उस पवित्र स्वरको पहचानते ही सुफलादेवी और विजया दोनों उठ खड़ी हुई और चार कदम आगे वढ़कर वहुत ही नम्रता-पूर्वक मस्तक झुकाते हुए उन लोगोंने महाराज प्राणनाथप्रभुको नमस्कार किया।

प्राणनाथप्रभुने दोनोंको आशीर्वाद देकर कहा,—“सुफलादेवी! तुम मुझे यहीं मिल गई, यह वहुत अच्छा हुआ। इस समय मेरे साथ और भी तीन आदमी हैं। हम लोग एकान्तमें तुमसे कुछ आवश्यक वातें करना चाहते हैं।”

सुफ०—“महाराज! आप आनन्दसे उन लोगोंको साथ लेकर अन्तःपुरमें पधारिए। वहाँ अच्छी तरह वातें हो सकेंगी।”

थोड़ी देर वाद सुफलादेवी प्राणनाथप्रभु और उन तीनों अपरिचित व्यक्तियोंको लेकर अन्तःपुरमें पहुँच गई। विजयाने फुरतीसे वहाँकी सव दासियों आदिको हटा दिया और अन्तमें वह स्वयं भी वहाँसे चलने लगी। इसपर प्राणनाथप्रभुने कहा,—

“विजया! तुम्हारे यहाँ रहनेसे कोई हानि नहीं है। तुमसे हम लोग कोई वात छिपाना नहीं चाहते।”

विजयाने वैठ जाने पर प्राणनाथप्रभुने सुफलादेवीसे कहा,—

“सुफलादेवी! तुम इस प्रकार चकित होकर क्यों देख रही हो? यह सरलादेवी तो तुम्हारी वाल्यावस्थाकी सहेली है। क्या तुमने इसे अभी तक नहीं पहचाना? (अपने वाकी दोनों साथियोंसे) छत्रसाल और दलपतिराय! यद्यपि यह महल राजा कंचुकीरायका है तथापि यहाँ सारा अधिकार सुफलादेवीका ही है। तुम लोग किसी प्रकारका संकोच या संशय न करो और सुफलादेवीका आदर-सत्कार स्वीकृत करो।”

सुफलादेवी उन लोगोंको पहचान कर वहुत ही प्रसन्न हुई। सरलादेवीको वड़े ही आदरसे वैठाते हुए उसने कहा,—

“हम लोगोंका यह वड़ा भारी भाग्य है कि ऐसे पुण्यशीलोंके चरण यहाँ पड़े। आप लोगोंके आनेको इस वातका शुभ शकुन ही समझना चाहिए कि-

ढाँड़ेरका राजकुल अपना पुराना दूषित मार्ग छोड़कर भविष्यमें शुभ मार्गपर चलेगा। बहन सरला! लड़कपनमें हम लोगोंने बहुतसा समय एक साथ ही बिताया है। पर उस समयकी अपेक्षा आज तुम बहुत ही शान्त, पवित्र और पूज्य दिखलाई पड़ती हो। छत्रसाल सरीखे प्रतापशाली पुत्रको जन्म देनेवाली ऐसी पुण्यवती माताके चरण प्रत्येक स्त्री और पुरुषको छूने चाहिए।"

इतना कहकर सुफलादेवीने सरलादेवीके चरण छू लिये। पर सरलादेवीने तुरन्त ही उसे रोककर कहा,—"नहीं बहन, तुम इस अभागिनीके पैर मत छूओ।"

सुफ०—"देवी! तुम्हें तो बुन्देलखण्डके ऐसे सर्व-श्रेष्ठ नररत्नकी पत्नी होनेका सौभाग्य प्राप्त है, जो यद्यपि इस समय इस संसारमें नहीं हैं तथापि जिनकी विमल कीर्ति अनन्त कालतक बनी रहेगी। चाहे इस समय वे इस संसारमें न हों पर केवल इसी कारण तुम अभागिनी नहीं हो सकतीं। तुम तो वीर-पत्नी भी हो और वीर-माता भी, ऐसी दशामें व्यर्थ अपने भाग्यको क्यों दोष देती हो? बहन! मैं तो इस पराई थाती (अपनी कन्या) के कारण ही अपने आपको भाग्यशाली समझती हूँ।"

इतना कहकर सुफलादेवी कुछ देरके लिए चुप हो गई। वह मन-ही-मन सरलादेवीकी स्थितिके साथ अपनी स्थितिकी तुलना कर रही थी। उसने सोचा कि सरलादेवी एक स्वाभिमानी और स्वतंत्रता-प्रेमी देश-सेवक महात्माकी पत्नी हैं और मैं एक पराधीन...। पर इसके आगे उसका विचार न जा सका। कुछ भी हो उसके पति उसके आराध्य देवता थे। इस लिए उसने निश्चय किया कि सरलादेवीके स्वामीकी अपेक्षा मेरे स्वामी किसी बातमें कम नहीं हैं और मेरी स्थिति सरलादेवीकी स्थितिसे बुरी नहीं है। इसके उपरान्त उसका ध्यान छत्रसालकी ओर गया। उनका अतुल पराक्रम वह पहले ही सुन चुकी थी। उनका क्षात्रतेज उसे अपने सामने दिखाई पड़ रहा था। छत्रसालके उग्र पर प्रेमपूर्ण और तेजस्वी पर सरल मुखकी ओर देखकर सुफलादेवीको थोड़ी देर-तक इस बातका कुछ दुःख हुआ कि सरलादेवी एक बड़े ही पराक्रमी, स्वदेशा-भिमानी, स्वधर्म्मरत, परम सुन्दर पुत्रकी माता हैं, पर मैं पुत्रहीना हूँ, मेरे आगे कोई पगला-बावला लड़का भी नहीं है। पर शीघ्र ही उसके मनमें यह विचार उत्पन्न हो आया कि वे केवल सरलादेवीके पुत्र नहीं हैं। पुत्रकी भाँति

उनसे सेवा करानेका अधिकार सारे बुन्देलखण्डको है। पर तो भी इस अप्र-त्यक्ष सम्बन्धके कारण उसे आनन्द न हो सका। तब वह सरलादेवीके पुत्रके गुणोंकी अपनी कन्याके गुणोंके साथ तुलना करने लगी। उस समय उसे जान पड़ने लगा कि सद्गुण और सौन्दर्य्यमें छत्रसाल और विजया दोनों ही बराबर हैं। दोनोंकी जोड़ी उसे बहुत ही अच्छी जान पड़ी। उसने सोचा कि यदि इन दोनोंका विवाह हो जाय तो सहजमें ही मुझे छत्रसाल पुत्ररूपमें मिल जायँगे और सरलादेवीको विजया सरीखी कन्या प्राप्त हो जायगी। इस अन्तिम विचारसे वह बहुत ही प्रसन्न हुई। उसने वात्सल्य-भावसे छत्रसालकी ओर देखा और विजयाकी ओर दृष्टि फेरी। उस समय उसे ऐसा जान पड़ा कि मेरे विचारोंका प्रतिबिंब विजयाके मुखपर पड़ रहा है।

सुफलादेवी अपने मनमें यह सोच ही रही थी कि इन अतिथियोंके भोजन और ठहरने आदिका प्रबन्ध होना चाहिए और वह विजयासे कुछ कहना ही चाहती थी, इतनेमें प्राणनाथप्रभुने उनसे कहा,—

" सरलादेवी ! छत्रसाल और दलपतिराय बहुत दूरसे थके हुए आ रहे हैं। कल रातसे इन लोगोंने अन्न-जल ग्रहण नहीं किया है। इनका आतिथ्य बहुत आवश्यक है। पर इनका यह प्रण है कि जबतक इनका उद्देश्य सिद्ध न हो जायगा तबतक ये विश्राम न करेंगे और न अन्न-जल ग्रहण करेंगे। "

सुफलादेवीने हाथ जोड़कर कहा,—" प्रभु ! मेरे योग्य जो कुछ सेवा हो आप उसके लिए आज्ञा दें। मुझे इनका उद्देश्य मालूम हो जाय तो मैं उसे पूरा करके इन्हें संतुष्ट करनेका प्रयत्न करूँ। "

सुफलादेवीके आशयोंकी उच्चता देखकर प्राणनाथप्रभुने बड़े आनन्दसे कहा,—" राजा चम्पतरायके स्वर्गवासी होनेके कारण महेवाका राजकुल जैसी विकट स्थितिमें पड़ गया है, उसे बुन्देलखंड जानता है। पहले जिस स्थानपर चम्प-तरायका स्वतंत्रताका झण्डा फहराता था, वहाँ अब दिल्लीपतिका निशान उड़ रहा है। चम्पतरायका शरीरान्त हो गया और उनके पुत्र छत्रसालको जंगल जंगल भटकना पड़ा। पर दुष्ट और कृतघ्न हीरादेवी इतनेहीसे सन्तुष्ट न हुई, उसकी आँखोंमें कुमार छत्रसाल भी काँटेकी तरह खटक रहे हैं। वह चाहती है कि या तो इन्हें कैद कर लें और या इनके प्राण ले लें। सरलादेवीसे भी वह बहुत ही द्वेष करती है। कुमार छत्रसाल और सरलादेवीका पता लगानेवाले

पातकीको वह बहुतसा पुरस्कार देगी; इस लिए उसके बहुतसे नौकर चाकर इन लोगोंका पता लगानेके लिए चारों तरफ छूटे हैं। हम लोगोंको इस बातका भय होने लगा कि न जाने कब इन लोगों पर कैसा संकट आ पड़े। आश्रय पानेके लिए ये लोग अपने अनेक सम्बन्धियों और मित्रोंके पास गये, पर किसीने हीरा-देवीके भयके कारण और किसीने दिल्लीपतिसे डरकर इन्हें अपने यहाँ स्थान नहीं दिया। इस लिए ये लोग आश्रय पानेकी इच्छासे तुम्हारे पास आये हैं।"

सुफ०—"महेवाके स्वर्गवासी महाराजने सारे बुन्देलखंड पर बहुत कुछ उपकार किया है और उस उपकारका कुछ अंश मुझे भी मिला है। लेकिन रण-दूलहखाँको छोड़कर उन्होंने हम लोगोंपर जो उपकार किया था, हम लोगोंके लिए वह सबसे बढ़ कर है और उससे हम लोग कभी उऋण नहीं हो सकते। ऐसे परोपकारी महात्माकी स्त्री और पुत्रकी सेवाके लिए ढाँड़ेरका सारा राज्य उपस्थित है। यहाँकी धन सम्पत्ति, दास-दासी, किले, प्रासाद, सेना बल्कि प्रत्येक वस्तु आप ही लोगोंकी है। आप लोग जिस प्रकार चाहें, इसका उपयोग करें। आप लोग इसे महेवाका राज-प्रासाद समझकर जबतक चाहें, बड़े आन-न्दसे रहें। आप लोगोंकी सेवा करके हम लोग अपने आपको धन्य समझेंगे।"

प्राणनाथप्रभुने गद्गद स्वरसे कहा,—"सुफलादेवी, तुम धन्य हो! तुमने आज बुन्देलखंडकी लाज रख ली। जिन लोगोंके हितके लिए चम्पतरायने इतने कष्ट सहकर अनेक प्रयत्न किये और अन्तमें अपने प्राण तक दे दिये उनमेंसे एकने भी चम्पतरायकी स्त्री और पुत्रको अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया। इससे बढ़कर बुन्देलोंकी कृतघ्नता और नामरदी और क्या हो सकती है? लेकिन इस समय तुमने इतना साहस करके बुन्देलखंडकी लाज रख ली। अकेली सरला-देवी तुम्हारे पास रहेंगी। मैं कल सूर्य्योदय होनेसे पहले ही छत्रसाल और दल-पतिरायको अपने साथ लेकर यहाँसे चला जाऊँगा।"

सुफलादेवीने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—"महाराज! यदि हम लोगोंको कुछ दिनों तक आपकी तथा इन दोनों युवराजोंकी सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त होता तो हम लोग अपने आपको कृतकृत्य समझते।"

प्राण०—"नहीं, अभी हम लोग यहाँ अधिक समय तक नहीं रह सकते। बुन्देलखंडकी पराधीनता दिन पर दिन बढ़ती ही जाती है और जिन लोगोंका कर्त्तव्य उसका उद्धार करना हो, उन लोगोंका क्षण भर विश्राम करना भी बहुत

ही घातक है; इस समय एक क्षणका विलम्ब भी प्रजाके लिए अनेक दुःख, अनेक अपमान और अनेक आपत्तियाँ खड़ी कर देगा।"

सुफ०—"महाराज! यदि ऐसी बात हो तो आप ढाँड़ेरकी सेना और किलेसे काम ले सकते हैं। स्वतंत्रताका जो झण्डा पहले महेवाके किलेपर फहराता था, अब आप उसे ढाँड़ेरके किलेपर गाड़ें। यदि ढाँड़ेरकी सेना सारे बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके लिए रणक्षेत्रमें उतर पड़े तो हम लोगोंके अभिमानके लिए इससे बढ़कर और कौनसी बात हो सकती है?"

छत्र०—यह तो और भी उत्तम बात है। यदि हम लोगोंको ढाँड़ेरका किला मिल जाय तो बुन्देलखंडकी पराधीनता बातकी बातमें दूर हो सकती है। पर अभी यवनोंसे लड़नेका समय नहीं है। जिससे पहलेकी तरह इस बार भी प्रयत्न व्यर्थ न हो जाय, इस लिए इस बार सारे बुन्देलखंडमें तैयारी होनी चाहिए। इससे पहले हम लोग कभी तलवार न उठावेंगे। इस लिए अभी ढाँड़ेरके किले पर स्वतंत्रताका झण्डा न गाड़ना चाहिए। हाँ, आगे चलकर तो हम लोगोंको ऐसा करना ही पड़ेगा।"

सुफ०—"जब तक अनुकूल समय न आवे तब तक आप लोग यहीं क्यों नहीं ठहरते?"

छत्रसालने आवेशमें आकर कहा,—"जो लोग केवल डींगें हाँकना ही जानते हैं पर जिनमें उदात्त कर्त्तव्य करनेकी शक्ति नहीं होती वही लोग अनुकूल समयकी प्रतीक्षा करते हैं। ऐसे ऐसे कामोंके लिए जो लोग अनुकूल समयका बहाना करते हैं उन्हें बिलकुल ही अयोग्य समझना चाहिए। अपने घरमें लगी हुई आग बुझानेके लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षा कैसी? भयंकर व्याधिसे ग्रस्त अपना शरीर नीरोग करनेके लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षाका क्या अर्थ? अपने वैभवको लुटने और अधिकारोंको नष्ट होनेसे बचानेके लिए कभी समय नष्ट न करना चाहिए। इस समय हम लोग पराधीनताके नरकमें अपना जीवन बिता रहे हैं। इस नरकसे बच निकलनेके लिए यही समय सबसे अधिक अनुकूल है। जिस प्रकार बुन्देलखंडके अन्य राजे अपनी अकर्मण्यताके कारण समयकी अनुकूलताका बहाना करते हैं उसी प्रकार यदि हम भी बहाना करके चुपचाप बैठे रहें तो यह आग सारे बुन्देलखंडको भस्म कर देगी, यह व्याधि बुन्देलखंडको खा जायगी, उसका सारा वैभव नष्ट हो जायगा; और तब भी हम

लोगोंको अनुकूल समय न मिलेगा। जो लोग अपना कर्त्तव्यपालन करना चाहते हैं, उनके लिए समय कभी प्रतिकूल नहीं होता। कर्म्मण्य स्वयं समयके पीछे न पड़कर उसे अपना अनुगामी बनाते हैं। यदि समय अनुकूल न हो तो उसे अनुकूल बना लेनेमें क्या हानि है? समय स्वयं जैसे अनिष्ट कार्य्य कर लेता है वैसे उत्तम कार्य वह कभी विना मनुष्यकी सहायताके नहीं कर सकता। इस लिए अनुकूल समयकी प्रतीक्षा करना ठीक नहीं। पिताजीके देहान्तके उपरान्त अवतक सारा समय हम लोगोंने आलसमें ही विता दिया। प्रति दिन अस्त होनेवाला सूर्य हम लोगोंके समाचार पिताजी तक पहुँचाता है; इस लिए अव हम लोगोंको व्यर्थ समय नष्ट न करना चाहिए। जिस समय सूर्यसे पिताजीको यह मालूम होगा कि महाराज प्राणनाथप्रभु अपना भगवद्भजन छोड़कर बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके प्रयत्नमें लगे हैं उस समय उन्हें कितना आनन्द होगा!"

सुफ०—"क्या महाराज प्राणनाथ हम लोगोंकी यह पराधीनता छुड़ानेके लिए प्रयत्न करेंगे? यदि ऐसा हो तव समझना चाहिए कि स्वयं स्वतंत्रता देवी विंध्यवासिनी हाथमें खड्ग लेकर हम लोगोंकी सहायता करेंगी।"

प्राण०—"हाँ, मैं यथासाध्य तुम लोगोंके लिए अवश्य प्रयत्न करूँगा। जंगलमें रहकर ईश्वराराधन करनेकी अपेक्षा जनपदमें रहकर दीनों और अनाथोंकी सहायता करना मैं अधिक उत्तम समझता हूँ।"

सुफ०—"धन्य महाराज! तव तो इसे बुन्देलखंडका बड़ा भारी सौभाग्य समझना चाहिए। बुन्देलखंडके सुदिन अव बहुत ही निकट हैं, इसी लिए आपके मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए हैं। महेवाके स्वर्गीय महाराजको वरावर समय पर आपसे परामर्श आदिके रूपमें सहायता मिला ही करती थी और आप उनके अभीष्टकी सिद्धिके हृदयसे इच्छुक थे; पर उस समय आप स्वयं अपने ऊपर इस प्रकार प्रत्यक्ष रूपमें कोई कार्य या उत्तरदायित्व नहीं लेते थे। इस समय आप अपनी इच्छासे यह कार्य्य अपने ऊपर लेनेके लिए तैयार हुए हैं। अतः अव छत्रसालके यशस्वी होनेमें तनिक भी सन्देह नहीं रह गया। बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके लिए महाराज कौनसा प्रयत्न करेंगे?"

छत्र०—"पिताजीने अपना अन्तिम काल समीप देखकर हम लोगोंको कुछ उपदेश दिया था और यह वतलाया था कि हमारे यशस्वी न होनेके कारण क्या हैं। उन्हीं कारणोंको दूर करनेका भार महाराजने अपने ऊपर लिया है।

आप स्वयं जानती हैं कि महाराजकी वातोंका सारे बुन्देलखंडमें कितना आदर है और उनकी आज्ञा लोग किस प्रकार शिरोधार्य्य करते हैं। कल सूर्य्योदयके उपरान्तसे प्रभुकी अविकार-युक्त वाणी सारे बुन्देलखंडमें स्वतंत्रताके उपदेशामृतकी वर्षा करने लगेगी।"

सुफ०—"अब बुन्देलखंडके भाग्योदयमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं रह गया। भला यह तो वतलाओ कि कल प्रातःकाल तुम लोग महाराजके साथ कहाँ जाओगे?"

छत्र०—"मैं औरंगजेबके सरदार राजा जयसिंहकी सेनाके साथ दक्षिण जाऊँगा।"

सुफ०—(आश्चर्यसे) "क्या तुमने उनके यहाँ नौकरी कर ली है?"

छत्र०—(गम्भीरतासे) "स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए मुझे कुछ समयतक यह निकृष्ट और अप्रिय कार्य भी करना पड़ेगा।"

सुफ०—"राजा जयसिंह किस कामके लिए दक्षिणकी ओर भेजे जा रहे हैं?"

छत्र०—"वादशाहका वहादुरखाँ कोका नामक एक सेनापति वहुत दिनोंसे देवगढ़में घेरा डाले वैठा है। वादशाहकी आज्ञासे राजा जयसिंह उसीकी सहायता करनेके लिए जा रहे हैं।"

सुफ०—"तव क्या तुम वादशाहकी ओरसे लड़ोगे?"

छत्र०—"हाँ, यदि अवसर पड़ा तो मुझे युद्ध भी करना पड़ेगा।"

सुफ०—"जो दिल्लीके साम्राज्यकी जड़ खोदना चाहता है वह उसकी सेवा और सहायता क्योंकर करेगा?"

छत्र०—"राजकीय कारणोंसे समय समय पर प्रिय और अप्रिय सभी काम करने पड़ते हैं। दक्षिण जानेके लिए मुझे राजा जयसिंहका साथ वहुत अच्छा मालूम हुआ, इसी लिए मैंने उनके साथ वहाँ जाना निश्चित किया था। वादशाही सेनामें सम्मिलित होनेका विचार पीछेसे हुआ था।"

सुफ०—(आश्चर्यसे) "लेकिन तुम्हें ऐसे अवसर पर दक्षिणका कठिन प्रवास करने और औरंगजेवकी सेनामें सम्मिलित होनेकी क्या आवश्यकता पड़ी?"

प्राण०—" दक्षिणमें शिवाजी नामक एक महाराष्ट्र महात्मा अपने देशको स्वतन्त्र करनेके प्रयत्नमें लगे हुए हैं। वे बहुत ही योग्य राजनीतिज्ञ हैं। उनसे गुरुमंत्र और शिक्षा लेनेके लिए ही छत्रसाल दक्षिणकी ओर जा रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए हम लोगोंको अन्तमें बादशाही सेनाके साथ घनघोर युद्ध करना पड़ेगा; इस लिए पहलेसे ही उसकी भीतरी व्यवस्था अच्छी तरह जान लेना बहुत ही आवश्यक है। बादशाही सेनाके लड़नेके दाँवपेंच आदि क्या हैं, सैनिकों और अधिकारियों आदिका पारस्परिक व्यवहार कैसा है, आदि आदि अनेक उपयोगी बातोंका ज्ञान प्राप्त करनेका इन्हें यही सबसे अच्छा अवसर जान पड़ा; इसी लिए इन्होंने बादशाही सेनामें सम्मिलित होनेका विचार किया।"

प्राणनाथ प्रभुकी बातें सुनकर सुफलादेवीका आश्चर्य जाता रहा और समाधान हो गया। उसने पूछा,—" मुझे तो केवल सरलादेवीकी ही सेवा करनी पड़ेगी न? अथवा इसके अतिरिक्त मेरे लिए प्रभुकी और भी कोई आज्ञा है?"

प्राण०—" जबतक बुन्देलखंडमें और सब तैयारियाँ न हो जायँ तबतक तुम्हारे लिए इतना ही काम यथेष्ट है। राजा जयसिंह हमारे चम्पतरायजीके पुराने मित्र थे, इस लिए छत्रसालके सम्बन्धमें मुझे तनिक भी चिन्ता न थी। पर मैं यही सोच रहा था कि सरलादेवीको कहाँ रक्खूँ; और जब तक तुमसे इस सम्बन्धमें बातें नहीं हुई थीं, तब तक मुझे बहुत ही चिन्ता थी। अब हम लोग सब तरहसे निश्चिन्त हो गये हैं और बेखटके अपना अपना काम करेंगे। पर सुफलादेवी! एक बात मैं तुम्हें बतला देना चाहता हूँ। इस बातका बहुत ध्यान रखना कि सरलादेवीका यहाँ रहना किसीको मालूम न हो। राजा कंचुकीरायको पूरी तरहसे हीरादेवीकी मुट्ठीमें ही समझना चाहिए, इस लिए न जाने सरलादेवी पर कब कौन विपत्ति आ जाय। तुम्हें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिसमें किसीको यह न मालूम हो कि चम्पतरायकी रानी—छत्रसालकी माता यहाँ हैं।"

सुफ०—" महाराज! आप इस बातकी तनिक भी चिन्ता न करें। मैं सारी व्यवस्था कर लूँगी।"

दलपतिरायने प्राणनाथ प्रभुकी ओर देखते हुए पूछा,—" राजा कंचुकीराय आजकल कहाँ हैं?"

इस पर विजया बोल उठी,—"विन्ध्यवासिनीके महोत्सवके उपरान्त पिताजी इधर नहीं आये। दिल्लीसे तो उनके लौटनेका समाचार आ गया है, पर अभी तक वे यहाँ नहीं पहुँचे हैं। शायद वे आजकल ओड़छेमें ही हैं?"

सुफलादेवीने प्राणनाथ प्रभुसे पूछा,—"ये कौन सज्जन हैं?"

प्राण०—"ये सागरके राजा शुभकरणके पुत्र हैं। इनका नाम दलपतिराय है।"

सुफ०—"इन्हें तो हीरादेवीकी मण्डलीमें रहना चाहिए था। आप लोगोंके साथ ये कैसे हो लिये?"

प्राण०—"ये राजा चम्पतरायके बड़े भक्त और छत्रसालके बड़े मित्र हैं। राजा शुभकरणने न जाने क्यों इन्हें अपने राज्यसे निकाल दिया है। इधर बहुत दिनोंसे ये छत्रसालके साथ ही रहते हैं। बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेके लिए ये निरन्तर उपाय सोचते और प्रयत्न करते रहते हैं। अभी हालमें चम्पतरायने जो अन्तिम युद्ध किये थे, उनमें इन्होंने उनकी बहुत सहायता की थी और अपूर्व वीरता दिखलाई थी। अब ये सारे बुन्देलखंडमें भ्रमण करेंगे और इस बातका पता लगावेंगे कि देशमें कितने स्वतंत्रताप्रेमी युवक हैं और आवश्यकता पड़ने पर हम लोगोंको कहाँसे कितनी सहायता मिल सकती है।"

सुफ०—"इनकी ये सभी बातें बहुत प्रशंसनीय हैं।"

थोड़ी देरमें भोजन आरम्भ हुआ। चम्पतरायके देहान्तके उपरान्त छत्रसाल और दलपतिरायको आजका ही भोजन कुछ अच्छा लगा था। पर पतिके अभाव और पुत्रके भावी वियोगके विचारसे सरलादेवीसे कुछ भी न खाया गया।

भोजनके उपरान्त सब लोगोंने विश्राम किया। पहर रात बाकी रहते ही प्राणनाथ प्रभु, छत्रसाल और दलपतिराय उठकर ढाँड़ेरके राजप्रासादसे चलने लगे। सरलादेवी और सुफलादेवीसे आशीर्वाद लेकर छत्रसाल विजयाकी ओर बढ़े।

सुफलादेवीको आनन्द भी हुआ और आश्चर्य भी।

छत्र०—"विजया! जयसागर सरोवर पर मैंने तुमसे और विमलदेवसे जो प्रार्थना की थी, वह तुम्हें याद होगी। विमलदेव तो उस सम्बन्धमें कुछ भी न कर सके; पर हाँ, तुमने जो कुछ और जितनी उत्तमतासे किया है उसके लिए मुझे बहुत ही अभिमान है।"

वि०—"विमलदेव जिस प्रकार युवराज जान पड़ते हैं, वे वास्तवमें वैसे नहीं हैं। उन्हें व्यर्थ दोष मत दीजिए।"

विजया अभी छत्रसालसे और छत्रसाल विजयासे बहुतसी बातें करना चाहते थे, पर दोनोंने ही अपने अपने हृदयके भाव प्रकट करनेके लिए वह अवसर उपयुक्त न समझा। दोनों ही चुप रह गये।

प्राणनाथ प्रभु अपने दोनों शिष्योंको साथ लेकर बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके उपाय करनेके लिए ढँड़ेरके राजप्रासादसे निकलकर चल खड़े हुए।

× × × × ×

अठारहवाँ प्रकरण।

ललिताकी प्रेतात्मा।

कुम्भकरणको सारा भूमंडल बहुत ही भयावना जान पड़ने लगा। उनके मनकी निराशा उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। वे अत्यधिक उत्साह-हीन हो गये। वे मन बहलानेके लिए शिकार खेलने जाते थे और बिना एक पशु भी मारे हुए जंगलसे लौट आते थे। शिकारमें जब कभी किसी पशुको मारनेका अवसर पड़ता था तब वे यही समझ कर उसके मारनेका विचार छोड़ देते थे कि मनुष्योंकी अपेक्षा जंगली जानवर कम क्रूर और हिंसक होते हैं। कुछ देरके लिए अपने मनकी चिन्ता दूर करनेकी इच्छासे वे किसी बागमें टहलनेके लिए चले जाते थे और पहरों इधर उधर भटका करते थे; उस समय उन्हें जान पड़ता था कि सब फूल मुझे चिढ़ानेके लिए हँस रहे हैं। वे जब बागसे लौटने लगते थे तब उनकी निराशा पहलेकी अपेक्षा और भी बढ़ जाती थी। वे इस कल्पनाके कारण दिनके समय कभी आकाशकी ओर न देखते थे कि सूर्य्यमंडलमें बैठे हुए राजा चम्पतराय बहुत ही क्रुद्ध होकर मेरी ओर देख रहे हैं और रातके समय आकाशकी ओर देखनेमें उन्हें यह समझकर लज्जा आती थी कि बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके लिए लड़कर मरनेवाले वीर आकाशमें तारे बनकर बैठे हैं और मेरी ओर टक लगा कर देख रहे हैं।

हीरादेवीने जब सुना कि शुभकरण विजयी होकर ओड़छेकी ओर लौट रहे हैं तब उसने उनके स्वागतकी लम्बी चौड़ी तैयारियाँ कीं। उनके पहुँचनेपर हीरादेवी बहुत ही प्रसन्न होकर इस आशासे उनसे मिलने चली कि विजयी शुभकरण बड़ी प्रसन्नतासे मुझसे मिलेंगे। पर बीचमें ही शुभकरणने उससे कहला दिया कि मुझसे रास्तेमें मिलनेकी आवश्यकता नहीं; ओड़छे पहुँचनेपर महलमें ही भेंट होगी। बेचारी हीरादेवीको अपनासा मुँह लेकर लौट आना पड़ा।

हीरादेवी अपने महलके एक कमरेमें बैठी हुई कंचुकीरायसे कुछ गुप्तमंत्रणा कर रही थी। रजनीनाथ अपने स्वर्गीय तेजसे उन दोनोंके आन्तरिक दुष्ट भावोंको उनके चेहरों पर प्रकट कर रहे थे। इतनेमें एक भव्य मूर्ति द्वार खोल कर हीरादेवीके पास आकर खड़ी हो गई।

हीरादेवी और कंचुकीराय दोनों उठकर खड़े हो गये।

हीरा०—"आइए, आइए। हम लोग आपका ही रास्ता देख रहे थे। आपने आनेमें बहुत देर कर दी। लेकिन यह क्या? आप तो बिलकुल पहचाने ही नहीं जाते। इतने दिनोंतक समर-भूमिमें रहनेके कारण तो आपका चेहरा बिलकुल ही बदल गया है।"

शुभकरणने बहुत ही गम्भीर होकर कहा,—जो मनुष्य परले सिरेका निर्दय होकर अपने भाइयोंका वध करता है, जो चोरोंको सहायता देकर अपना घर लुटवाता है और अपने राष्ट्र-देवताका अपमान करनेके लिए दूसरोंको उत्तेजित करता है, वह हत्यारा और पापी किस प्रकार प्रसन्न रह सकता है? मैंने असंख्य हत्यायें की हैं और अनगनित डाके डाले हैं। मैंने बुन्देलखंडके राष्ट्र-देवताको मुसल्मान बादशाहके अधीन कर दिया है। तब भला मैं किस प्रकार प्रसन्न रह सकता हूँ? मेरा चेहरा उतरा हुआ न हो तो और कैसा हो?"

इतना कहकर शुभकरण थोड़ी देरतक चुपचाप खड़े रहे। वे अपनी स्मरण शक्तिसे अन्तिम संग्रामका कृष्ण-चित्र बना कर अपने मानसिक चक्षुओंसे देख रहे थे। थोड़ी ही देरमें उन्हें खूनसे लथपथ चम्पतरायका शरीर दिखाई पड़ने लगा। चम्पतरायकी अन्तिम बातोंका भी उन्हें ध्यान हो आया। वे बड़े ही दुःखी होकर हीरादेवीकी ओर देखते हुए बोले,—

"हीरादेवी! ललिताके सम्बन्धमें तुमने जो कुछ मुझसे कहा था वह सब झूठ था। तुमने मुझे यह पट्टी पढ़ा कर चम्पतरायका नाश करनेके लिए तैयार

किया था कि उन्होंने ललिताका कौमार्य नष्ट किया था! स्वतंत्रताके पवित्र कार्यसे तुमने मुझे हटा दिया! बुन्देलखंडका सत्तानाश करनेके लिए तुमने मुझे उत्साहित किया! तुम्हें इस भारी अपराधका दण्ड देनेके लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। बतलाओ, तुम किस मार्गसे नरकमें जाना चाहती हो?"

शुभकरणका यह अनपेक्षित और विलक्षण प्रश्न सुनकर हीरादेवीके देवता कूच कर गये। वह जितना चकराई, उतना ही डरी भी। हीरादेवीको पहले स्वप्नमें भी इस बातका ध्यान न था कि ललितावाली बात इतने वर्षोंके उपरान्त और वह भी उसका उद्देश्य सिद्ध हो जाने पर, इस रूपमें उठेगी। अब ललिता प्रायः सभी लोगोंके ध्यानसे उतर चुकी थी। उसके अप्रतिम सौन्दर्य्य, विनय आदि अनेक गुणों और आकस्मिक देह-त्यागकी बहुतसी बातें गढ़ी गई थीं। सोलह वर्ष बीत गये थे, पर इस बीचमें कभी कोई ऐसी बात नहीं हुई थी जिससे हीरादेवी यह समझती कि शुभकरणको ललिताकी बातें याद हैं। ललिताके सम्बन्धमें शुभकरणके मनमें हीरादेवीने इतनी घृणा उत्पन्न कर दी थी कि वे उसको स्मरण करना भी पातक समझने लगे थे। और हीरादेवी सदा यही चाहती भी थी कि शुभकरणके मनमें ललिताका ध्यान न आने पावे, नहीं तो न जाने कैसी आफतका सामना करना पड़ेगा। लेकिन हीरादेवी यह जानकर आश्चर्य और भयसे बहुत ही घबराई कि शुभकरणको अभीतक ललिताका स्मरण है; केवल यही नहीं बल्कि उन्हें यह भी मालूम हो गया है कि मैंने उनसे जो कुछ कहा था वह सब झूठ और बनावटी था। घबराहटके कारण उसके मुँहसे शब्द भी न निकल सकता था। अन्तमें शुभकरणने फिर कहा,—

"जान पड़ता है कि नरकमें जानेके लिए तुम स्वयं कोई मार्ग नहीं बतलाना चाहती। मैंने इस बात पर बहुत देरतक विचार किया कि बुन्देलखण्डको पराधीनताके पंकमें फँसाकर, मेरी बुद्धि भ्रष्ट करके, मुझसे अनेक पैशाचिक कृत्य कराके, चम्पतराय तथा बुन्देलखंडके अन्य अनेक वीरोंकी हत्या कराके और अपने पतिकी मृत्युका कारण बनकर तुमने जो घोर और अक्षम्य अपराध किये हैं, उनके बदलेमें मैं तुम्हें कौनसा दण्ड दूँ। मगर तुम्हारे पातक मनुष्यकी कल्पनाके बाहर थे, इसलिए मैं उनके लिए उचित और अनुरूप दण्ड न सोच सका; अतः मैं तुम्हींसे पूछता हूँ कि तुम्हें कौनसा दण्ड दिया जाय। पर शायद तुम स्वयं वह बतलाना नहीं चाहतीं, इस वास्ते तुम्हारे लिए मुझको ही दण्ड स्थिर करना चाहिए।"

इतना कहकर शुभकरण विचार करने लगे। वे अच्छी तरह समझते थे कि किसी मनुष्यकी हत्या करनेवालेका सिर काट लेना चाहिए, राष्ट्र-द्रोह करनेवालेके लिए प्राणदण्ड यथेष्ट है और देश-प्रेम, धर्म्म-प्रेम तथा बन्धु-प्रेमसे लोगोंका मन हटानेवालेको वध-स्तम्भ पर लटकाना ही न्याय है; पर वे उस दण्डकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे जो अत्यन्त भयंकरतासे यह सब अपराध करनेवाले एक ही व्यक्तिको मिलना चाहिए। उन्होंने भयसे काँपते हुए कंचुकीरायकी ओर देखा। उन्हें आशा हुई कि शायद हीरादेवीके लिए यह कोइ उपयुक्त दण्ड बतला सकेंगे; इस लिए उन्होंने कंचुकीरायसे पूछा,—

"कहिए साहब! आप तो दिल्लीके शाही महलोंमें बरसों रहे हैं। हीरादेवीने आजतक जो जो गहन अपराध किये हैं वे सभी आप अच्छी तरह जानते हैं। आप ही बतलाइए कि उन सब अपराधोंके लिए कौनसा दण्ड होना चाहिए और इसे किस प्रकार यमपुर भेजना चाहिए। मैं यह नहीं चाहता कि इसे कम दण्ड देनेका दोषी बनूँ।"

इतनी देरमें हीरादेवीने अपने मनको बहुत कुछ सँभाल लिया था और भयके चिह्न बनावटी हँसीके नीचे छिपा लिये थे। अब वह बातकी तह तक पहुँचनेके लिए तैयार हो गई थी। उसने अपने चेहरेपरसे आश्चर्यकी छटा जरा भी कम न होने दी और बहुत ही कोमल स्वरसे कहा,—

"महाराज! पहले आप जरा शान्त होइए। यदि सचमुच मेरा कोई अपराध हो तो उसके लिए आप जो दण्ड मुझे देना चाहेंगे उसे मैं बड़ी प्रसन्नतासे स्वीकृत कर लूँगी। पर मेरे लिए दण्ड निश्चित करनेसे पहले आप थोड़ी देरतक विचार कर लें। आप यही कहते हैं न कि सागरकी सती-साध्वी ललिता पर मैंने झूठा कलंक लगाया है?"

शुभकरणने उसकी ओर तिरस्कारसे देखते हुए उत्तर दिया,—"हाँ।"

ही०—"आपको इस बातका विश्वास हो गया है न कि चम्पतरायने उसका कौमार्य नष्ट नहीं किया था?"

हीरादेवीकी धृष्टता देखकर शुभकरणको खेद भी हुआ और आश्चर्य भी। उन्होंने कहा,—"हीरादेवी! यह तुम्हें याद है न कि ललिता मेरी कौन थी? अब तुम उसके विषयमें जो कुछ कहो वह इस बातका ध्यान रखकर कहो कि

वह मेरी वहन थी। उसका कौमार्य्य नष्ट नहीं हुआ था। यह मानना बड़ी भारी अधमता है कि अपने भाइयों और वहनोंके हितके लिए प्राण देनेवाले चम्पतराय सरीखे सदाचारी महात्मा एक सुशील कुमारीपर हाथ छोड़नेके लिए तैयार होंगे। उन दोनोंका प्रेम और सम्वन्ध शुद्ध और पाप-रहित था। अव मुझे इस वातका पूरा पूरा विश्वास हो गया कि ललिताको चम्पतराय अपनी वहनके वरावर मानते थे।"

हीरादेवीके चेहरेका तेज जाता रहा। तथापि उसने वनावटी धैर्य्यसे कहा,—

"जान पड़ता है कि मानो आप अभी सोकर उठे हैं। नहीं तो स्वप्नमें देखे हुए, कल्पित और झूठे दृश्यपर आपका इतना विश्वास न होता। अपने स्वप्नमें आपने चम्पतराय और ललिताका जो पाप-रहित आचरण देखा उसीके आधारपर आप मेरी वातोंको झूठ वतलाते हैं न?"

शुभ०—"वाह री तेरी आसुरी धृष्टता! ज्यों ही मुझे इस वातका विश्वास हुआ कि ललिता और चम्पतरायका व्यवहार शुद्ध और निष्पाप था त्यों ही मैंने मनमें भ्रांतिमूलक कल्पना-तरंग उत्पन्न करनेवाली निद्रा त्याग दी। तभीसे मैंने समझ लिया कि वड़ी ही निन्दनीय प्रतिज्ञा करके मैं व्यर्थ देशभक्तिसे विमुख हुआ। उसी समय मेरे चेहरे पर लज्जा, पश्चात्ताप और शोककी जो छाया पड़ी थी वह अभीतक ज्योंकी त्यों वनी है। इसीसे तुम्हें मेरा चेहरा ऐसा उतरा हुआ और काले ठीकरेसा दिखाई पड़ता है। मेरा चेहरा देख कर तुम्हें मालूम हो जायगा कि चम्पतरायका आचरण विलकुल निष्कलंक था और मैं अवतक घोर प्रमादके अधीन था।"

हीरादेवीने और भी ढीठ होकर पूछा,—"लेकिन आपको इस वातका विश्वास क्योंकर हुआ कि ललिताने चम्पतरायके पातकी अत्याचारके कारण आत्महत्या नहीं की?"

शुभ०—"मुझे इस वातका दृढ़ प्रमाण मिल गया है कि ललिताके मरनेतक चम्पतरायका उसके साथ भाईका सा व्यवहार था।"

हीरादेवी विकट रूपसे हँसती हुई वोलीं,—"दृढ़ प्रमाण! आपको इस वातके दृढ़ प्रमाणकी तो कोई आवश्यकता नहीं कि चम्पतरायको ललिता अपने भाईके समान समझती थी। पर ललिताके सम्वन्धमें चम्पतरायका मन अन्त तक शुद्ध

और पाप-रहित था, इसका दृढ़ प्रमाण आपको कैसे मिला? चम्पतरायके मनकी बात आपको किसने बतलाई?"

शुभ०—"स्वयं चम्पतरायने।"

हीरादेवीने भयभीत स्वरसे पूछा,—"स्वयं चम्पतरायने? मनुष्यकोटिके चम्पतरायने या पिशाच-कोटिके चम्पतरायने? ललिताके सम्बन्धमें आपका समाधान किसने किया?"

शुभ०—"हीरादेवी! तुम्हारे सरीखे हृदयशून्य दुष्टोंके लिए या मेरे सरीखे विचारशून्य नराधमोंके लिए असह्य दुःख देनेवाली पिशाच-कोटि होती है। चम्पतरायसरीखे श्रेष्ठ महात्मा तो दिव्य सूर्यलोकमें जाते हैं। सुनो, मैं तुम्हें बतलाता हूँ कि मुझे इस बातका विश्वास किस प्रकार हुआ कि चम्पतरायने ललिताका कौमार्य नष्ट नहीं किया। जिस समय राजा चम्पतरायके प्राण निकल रहे थे, उस समय मैं उनके पास ही खड़ा हुआ था। चम्पतराय अन्तिम समय लहूसे लथपथ वीरोचित शय्यापर पड़े हुए थे। उनके ऐहिक विचार नष्ट होते जा रहे थे और वे स्वर्लोकके पवित्र वातावरणमें पहुँच रहे थे। उसी समय मैंने ललिताकी याद दिलाई थी।"

हीरादेवीके मनपर मानो भारी चोट लगी। वह बीचमें ही बोल उठी,—"क्या उस समय चम्पतराय होशमें थे? क्या उनमें सोच-समझकर बातें करनेकी शक्ति थी?"

शुभ०—"हाँ, वे मरते दमतक होशमें थे। उन्हें मुझसे यह सुनते ही बहुत दुःख हुआ कि ललिता आत्म-हत्या करके मरी। यह जान कर उन्हें और भी आश्चर्य तथा दुःख हुआ कि अपना कौमार्य नष्ट होनेके कारण उसने आत्महत्या की थी। और जब उन्होंने सुना कि उसका कौमार्य्य नष्ट करनेका अपराध मैं उन्हीं पर लगाता हूँ तब उन्होंने बहुत ही दुःखी होकर मुझे धिक्कारा और स्पष्ट रूपसे कह दिया कि मैं सदा ललिताको अपनी बहनकी तरह मानता था। हीरादेवी! अब तो तुम समझ गईं न कि मेरा यह समाधान किस प्रकार हुआ? अब तो तुम यह बात स्वीकार करती हो न कि तुमने व्यर्थ ललिता और चम्पतरायपर कलंक लगाकर मुझे चम्पतरायका वैरी बनाया और बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके प्रयत्नमें विघ्न डाला?"

शुभकरणकी बातें सुनकर मायाचारी हीरादेवी हँसने लगी । वह हँसती हुई बोली,—"आप भी बड़े ही भोले हैं । समर-भूमिमें तलवार चलानेवाला योद्धा संसारके साधारण व्यवहारमें इतना भोला हो, यह बड़े ही आश्चर्यकी बात है । जो चम्पराय मरते दम तक आपके साथ इतना वैर रखते थे, उन्हें अन्त समयमें आपने इतना सीधा और सच्चा कैसे समझ लिया ? उनकी बातों पर आपको चटपट कैसे विश्वास हो गया ?"

शुभ०—"इसी लिए कि वे तुम्हारे सरीखे झूठे नहीं थे, वे सत्यताके मूर्तिमान अवतार थे । जो सारे जीवनमें झूठ बोलनेको बहुत ही निन्दनीय और घृणित समझता हो वह मरनेके समय क्यों झूठ बोलने लगा ?"

हीरादेवीके होठोंपर अभी तक मायावी हँसी बनी हुई थी । उसने हँसते हुए कहा,—"इसीको भोलापन कहते हैं ! जब उन्होंने देखा होगा कि शुभकरण और हीरादेवीका नाश करनेमें मैं सब प्रकारसे असमर्थ हो गया हूँ तब उन्होंने यह युक्ति निकाली होगी । (कंचुकीरायकी ओर देखकर) क्यों साहब ! आपकी समझमें भी यह बात आती है न ?"

बुढ़ापे और डरसे काँपते हुए कंचुकीरायने कहा,—"भला तुम्हारी बात आज तक कभी झूठ हुई है ? दिल्लीकी रोशनआरा और बुन्देलखण्डकी हीरादेवीकी बात कभी कोई काट ही नहीं सकता ।"

कंचुकीरायकी बात सुनकर शुभकरणका क्रोध और भी बढ़ गया । उन्होंने डपटकर कहा,—"चुप रहो, व्यर्थ बातें न बनाओ । तुम दोनों मिलकर मुझे बनाना चाहते हो । अब शुभकरण पहलेकी तरह भोले नहीं रह गये । अब तक हीरादेवीकी बातोंपर विश्वास करके मैंने अपने कर्त्तव्योंपर चौका लगा दिया, पर अब मेरी आँखें खुल गई हैं; मैं अब तुम लोगोंकी बातोंमें नहीं आनेका । हीरादेवी ! अब तुम अपने अपराधोंका दण्ड भोगनेके लिए तैयार हो जाओ । मैंने तुम्हें प्राणदण्ड देना निश्चित किया है । आज तक मैंने अनेक बुन्देलोंके प्राण लिये हैं; पर उन सब हत्याओंका प्रायश्चित्त केवल तुम्हारे वधसे हो जायगा । जब तक तुम जीती रहोगी तबतक बुन्देलखण्ड कभी स्वतंत्र न होगा । इसलिए बुन्देलखण्डके स्वातंत्र्यदेवताके सामने मैं तुम्हें बलि चढ़ाऊँगा । हीरादेवी ! अब तुम मरनेके लिए तैयार हो जाओ । मैं तुम्हारी बातोंका मूल्य चम्पतरायकी बेहोशीकी बड़-बड़के बराबर भी नहीं समझता । अब तुम यही बतलाओ कि मैं

तुम्हारे प्राण किस प्रकार लूँ ? गला दबाकर, मुक्का मारकर, या लातोंका प्रहार करके ? लेकिन इनमेंसे किसी मार्गका अवलंबन करनेसे मुझे तुम्हारा अपवित्र अंग छूना पड़ेगा और उसे छूनेके कारण मुझे जो पातक लगेगा उसके प्राय-श्चित्तके लिए मुझे कंचुकीराय सरीखे देश-द्रोहीका वध करना पड़ेगा। इस लिए कंचुकीरायको तुमपर ढकेलकर एक साथ ही तुम दोनोंके प्राण ले लेना अधिक उत्तम है।”

अपने प्राणोंपर ऐसा विकट संकट आते देखकर कंचुकीरायसे न रहा गया। वे चटपट बोल उठे,—“शुभकरणजी! आप ऐसा अन्याय न कीजिए। पहली बात तो यह है कि मैं बिलकुल निरपराध हूँ। यदि आप मेरी हत्या करेंगे तो मेरी सती साध्वी स्त्री विधवा हो जायगी और मेरी भोली भोली कन्या अनाथ बन जायगी। दूसरी बात यह है कि आप वीर हैं; आपको हीरादेवी सरीखी कोमलांगी स्त्रीपर भी हाथ न उठाना चाहिए। आगे जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा कीजिए, पर जो कुछ कीजिए, वह समझ बूझकर कीजिए।”

शुभकरणने कुछ शान्त होकर कहा,—“आपका कहना ठीक है। आपकी साध्वी स्त्री और देवी कन्याके विचारसे ही मैं आपको छोड़ देता हूँ; पर अब आप यहाँसे चटपट चले जाइए, क्षण भर भी यहाँ न ठहरिए। पर हीरादेवीको मैं बिना मारे न छोड़ूँगा। दोष तो स्त्रियोंकी हत्या करनेमें है। ऐसी राक्षसि-योंके प्राण लेनेसे, जिनसे संसारके अनिष्टकी ही सम्भावना हो, बहुत ही पुण्य होता है।”

कंचुकीरायने सोचा,—जान बची, लाखों पाए। वे सिर पर पाँव रखकर वहाँसे चलते बने। चलते समय उन्होंने हीरादेवीकी ओर देखनेकी भी आवश्य-कता न समझी।

कंचुकीरायके चले जाने पर शुभकरणने हीरादेवीसे कहा,—“हीरादेवी! तुम्हारे प्राण लेना मैंने दृढ रूपसे निश्चित कर लिया है। अब तुम्हारा जीवन दो ही चार क्षण और है। तुम्हारा अन्तिम समय बहुत ही पास आ गया है। भला अब भी एक बात सच कहो। मुझे ठीक बतला दो कि ललिताने आत्म-क्यों की?”

हीरा०—“राजा साहब! मैं राजकीय कारणोंसे झूठ बोली होऊँगी, दूसरोंके साथ मैंने दाँवपेच किये होंगे, पर आपसे मैंने एक शब्द भी मिथ्या नहीं कहा;

होगा। ललिताका मेरे साथ बहनापा था और हम दोनोंमें परस्पर बहुत ही प्रेम था। भला उसके विषयमें मैं आपसे इतनी घृणित झूठी बात क्यों कहने लगी? बेतवा-नदींमेंसे उसका जो फूला हुआ मृत शरीर निकला था वह आपने देखा था न? उसके शरीर परके गहनों और कपड़ोंको आपने ही पहचाना था न? उस समय आपको विश्वास हो गया था न कि ललिताने आत्म-हत्या कर ली?"

शुभ०—"हाँ, यह तो मैं अब भी मानता हूँ कि ललिताने आत्म-हत्या कर ली थी।"

हीरा—"ललिता सदा बहुत ही प्रसन्न-चित्त रहती थी। उसे संसारके किसी पदार्थकी आवश्यकता न थी। उसकी सुख-पूर्ण स्थिति देखकर और लोग उससे इर्ष्या करते थे। ऐसी दशामें उसने आत्महत्या सरीखा भयंकर कृत्य क्यों किया? संसारमें किसीको अपना मुँह न दिखलानेकी उसकी इच्छा क्यों हुई? उसने अपने प्राण क्यों दिये?"

शुभकरणने बहुत ही गम्भीरतासे कहा,—"यही तो प्रश्न है।"

हीरा०—"यदि चम्पतरायने ललिताका कौमार्य नष्ट न किया होता तो—"

शुभकरण फिर बहुत ही दुःखी हो गये। उन्होंने बात काटकर कहा,—"फिर वही चम्पतरायका नाम! फिर वही ललिताके कौमार्य-भंगकी बात! हीरादेवी शायद तुम यह बात अच्छी तरह नहीं जानतीं कि चम्पतरायके साथ बहुत दिनोंतक मेरी गहरी दोस्ती रही है। उनमें जितने सद्‌गुण थे उन सबका मुझे बहुत अच्छा परिचय है। मैं यह भी जानता हूँ कि उनमें कभी कोई दुर्गुण नाममात्रको भी न था। तुम्हारी बातोंमें पड़कर जब मैंने उनके साथ दुश्मनी कर ली थी उसके बाद भी मैं समय समय पर उस महात्माके गुण देख कर मन ही मन उन पर मुग्ध हो जाया करता था। मुझे इस बातका दृढ़ विश्वास है कि चम्पतरायके मुँहसे सारे जीवनमें कभी एक शब्द भी झूठ नहीं निकला। वे कभी किसी दशामें झूठ बोलनेवाले नहीं थे। तुम्हारी सरीखी झूठीकी कौन कहे यदि प्रत्यक्ष आकाशवाणी भी चम्पतरायको असत्यवादी बतलावे तो मैं उसपर विश्वास नहीं कर सकता। चम्पतरायने जो कुछ कहा है उसे असत्य माननेके लिए मैं कभी तैयार नहीं हूँ। और तो और, यदि स्वयं ललिता भी इस समय आकर मेरे सामने खड़ी हो जाय और मुझसे कहे कि चम्पतरायने मेरा कौमार्य नष्ट किया है तो चम्पतरायकी बातके सामने मैं उसपर विश्वास

नहीं कर सकता ! मेरे मनमें जो कुछ सन्देह था वह चम्पतरायकी अन्त समय-वाली वातोंसे बिलकुल निर्मूल हो गया। अब मेरे मनमें फिरसे वह सन्देह बैठाना स्वयं ईश्वरके लिए भी सम्भव नहीं है। हीरादेवी ! अब तुम चम्पतरायके सम्बन्धमें फिरसे मेरा मन कलुषित करनेका वृथा प्रयत्न न करो। तुम मुझे ललिताकी आत्म-हत्याका ठीक ठीक कारण वतला दो और शान्तिपूर्वक अपने किये हुए अपराधोंका दण्ड भोगनेके लिए तैयार हो जाओ।"

हीरा०—"उस सम्बन्धमें मैं जो कुछ जानती थी वह मैं पहले भी आपको वतला चुकी हूँ और अब फिर वतलाती हूँ। सोलह वर्ष पहले इसी स्थान पर ललिताने मुझसे कहा था कि मैंने आत्म-हत्या करना निश्चित किया है। आत्म-हत्या करनेका ठीक ठीक कारण भी उसने मुझे वतला दिया था। उस समय भी रातका यही समय था, चन्द्रमा इसी प्रकार आकाशमें चमक रहा था; वेतवा नदीके जलसे स्पर्श करके आनेवाली ठंढी हवा ललिताके क्षुब्ध मनको शान्त करनेका प्रयत्न कर रही थी। यदि उन सबमें वोलनेकी शक्ति होती तो वे वतला देते कि हीरादेवीका कहना सच है या झूठ। लेकिन, जरा ठहरिए।" हीरादेवी अपने स्थान परसे उठ खड़ी हुई और अपने कमरेके एक ओरके दरवाजेकी ओर देखती हुई कुछ शान्त होकर वोली,—"आप जानते हैं, जो लोग आत्म-हत्या करते हैं उन्हें कभी सद्गति प्राप्त नहीं होती। उनकी आत्मा अनन्त काल तक पिशाच वनकर उसी स्थान पर घूमा करती है। इसके सिवा उसकी और कोई गति ही नहीं होती। ललिताने उसी सामनेवाली टेकरीपरसे वेतवा नदीमें कूद कर अपने प्राण दिये थे।"

शुभकरण खिड़कीमेंसे उस टेकरीकी ओर देखने लगे।

हीरादेवी धीरे धीरे पैर उठाती हुई आगे वढ़ने लगी। कुछ दूर आगे वढ़ कर उसने कहा,—जिस समय उसने अपने प्राण दिये थे, उस समय वह पन्द्रह वर्षकी सुकुमार कुमारी थी। उसका चेहरा चन्द्रमाकी तरह चमकता था और उसकी आँखोंमें तारोंका-सा तेज था। उसे सफेद कपड़े वहुत पसन्द थे। वह जब चाँदनी रातमें इधर उधर घूमा करती थी तव वहुधा इसी कारण वह दूरसे दिखलाई न पड़ती थी।"

शुभकरण अच्छी तरह दृष्टि गड़ाकर उसी चट्टानकी ओर देख रहे थे।

हीरादेवी और दो कदम आगे बढ़ी और उसी टेकरीकी ओर उँगली उठाकर कहने लगी,—

" जिस समय ललिता उस चट्टान परसे नदीमें कूदी थी, उस समय भी वह सफेद साड़ी पहने हुए थी। तभीसे सुनती हूँ, उसकी प्रेतात्मा कभी कभी रातके समय उस चट्टान पर चाँदनी रातमें इधर उधर घूमा करती है। आप थोड़ी देरतक ध्यानपूर्वक उधर ही देखते रहिए, यदि उसे मेरी मित्रता और सत्यताका कुछ भी ध्यान होगा तो वह अवश्य इस समय भी हम लोगोंको दिखाई देगी और मेरी ओरसे गवाही देगी। "

उसकी बातोंपर विश्वास करके शुभकरण बड़े ही ध्यानसे उस चट्टानकी ओर देख रहे थे। पर हीरादेवीकी निगाह दूसरे दरवाजेकी तरफ थी। वह चाहती थी कि शुभकरणको बातोंमें लगाकर और उनका ध्यान बँटाकर स्वयं वहाँसे भाग जाय। उसी चट्टानकी ओर उँगलीसे दिखलाकर हीरादेवीने कहा,—

" अभी थोड़ी देरमें आपको ललिताकी प्रेतात्मा वहाँ घूमती हुई दिखाई पड़ेगी। आप उसीसे पूछिएगा कि ललिताने आत्म-हत्या क्यों की। वह आपको उसका ठीक ठीक कारण बतला देगी। "

शुभकरण उसी चट्टानकी ओर दृष्टि गड़ाकर देख रहे थे। उस तरफ देखते ही देखते उन्होंने हीरादेवीसे पूछा,—" क्या सचमुच वहाँ उसकी प्रेतात्मा दिखाई देगी ! और यदि वह दिखाई भी पड़ी तो क्या पूछनेपर वह मेरे प्रश्नका उत्तर देगी ? "

शुभकरणके हाथसे निकल भागनेवाली हीरादेवीको यह बहुत ही अच्छा अवसर मिला। वह वहाँसे भागना तो चाहती थी पर उसके पैर न उठते थे। तो भी बहुत साहस करके वह धीरे धीरे वहाँसे पीछे हटने लगी और अन्तमें उस कमरेसे बाहर निकल गई। शुभकरण उस समय चट्टानकी ओर इतने ध्यानसे देख रहे थे कि उन्हें हीरादेवीके वहाँसे चले जानेकी खबर भी न हुई। थोड़ी देर बाद उन्हें उसी चट्टानपर पन्द्रह वर्षकी एक सुन्दर बाला सफेद साड़ी पहने हुए दिखाई पड़ी। उन्हें विश्वास हो गया कि यह ललिताकी ही प्रेतात्मा है। उन्होंने बहुत ही आतुर होकर कहा,—" ललिता, ललिता ! तुम किस रूपमें हो और इस समय यहाँ कैसे आई ! मैं तुमसे केवल एक बात पूछना चाहता

हूँ। तुम क्षणभर मेरे लिए खड़ी रहो। मैं अभी तुम्हारे पास आता हूँ। मेरे वहाँ पहुँचने तक तुम अदृश्य न हो जाना।"

इतना कहकर शुभकरण बरामदेमेंसे ही नदीमें कूद पड़े। कमरेसे बाहर निकलकर सीधे रास्तेसे नदी किनारे तक पहुँचने अथवा हीरादेवीकी ओर देखनेकी भी उन्हें सुध न रही। वे तेजीसे नदीका पानी चीरते हुए सीधे उस चटानकी ओर बढ़ने लगे। उनकी दृष्टि उसी प्रेतात्मापर गड़ी हुई थी। वे ज्यों ज्यों आगे बढ़ रहे थे त्यों त्यों उनके मनकी आतुरता भी बढ़ती जाती थी। उन्हें कुछ भय भी हो रहा था। पर उन्हें भय इस बातका नहीं था कि अभी प्रेतात्मासे बातें करनी पड़ेंगी; बल्कि इस बातका भय था कि कहीं वह प्रेतात्मा अदृश्य न हो जाय और उससे भेंट करनेका अवसर हाथसे जाता न रहे। बेतवा-नदीके जल-प्रवाहमें आकाश-मंडलका ठीक ठीक प्रतिबिंब पड़ रहा था। उस प्रतिबिम्बके कारण ऐसा जान पड़ता था कि बेतवा नदी कोई अभिसारिका है जो बहुतसे अच्छे अच्छे अलंकार पहनकर गजगतिसे अपने पतिसे मिलनेके लिए जा रही है। वायुके बारबार होनेवाले स्पर्शके कारण उस अभिसारिकाके मुख पर लज्जाकी क्षणिक लहरें उत्पन्न होती थीं। उस नायिकाकी ओर देखती हुई एक परम सुन्दरी बाला सफेद कपड़े पहने हुए चाँदनीमें खड़ी हुई मुस्करा रही थी। वह जानती थी कि बेतवा-सुन्दरीका पति कौन है और वह किससे मिलनेके लिए जा रही है। बेतवा-सुन्दरीका शृंगार देखनेमें वह इतना मग्न थी कि उसे इस बातका पता भी न लगा कि कोई मेरी ओर बढ़ता हुआ चला आ रहा है। इतनेमें उसे जान पड़ा कि किसीने जाकर उसका हाथ पकड़ लिया। उसने भयभीत होकर दृष्टि उठाई तो उसे दिखाई पड़ा कि एक हट्टाकट्टा आदमी उसका हाथ पकड़े हुए सदय मुद्रासे उसकी ओर देख रहा है। इतनेमें उस आदमीने उससे कहा,—"सुकुमार प्रेतात्मा! पहले तुम मेरे प्रश्नका उत्तर दे दो तब अदृश्य होना।"

वह बाला उसकी विलक्षण बात न समझ सकी, बड़ी कठिनतासे उसने अपने आपको सँभाला और पूछा,—"तुम कौन हो? तुम मुझे प्रेतात्मा क्यों कहते हो? तुमने मेरा हाथ क्यों पकड़ लिया? तुम्हारा प्रश्न क्या है?"

शुभ०—(प्रसन्नतासे) "मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि तुम इस प्रेत-योनिमें किस प्रकार पहुँचीं?"

बा०—"तुम्हें क्या हो गया है? तुम पागल तो नहीं हो गये हो? मैं प्रेत-योनिमें कहाँ हूँ? मैं तो अच्छी खासी मनुष्य-योनिमें हूँ।"

शुभ०—"नहीं, तुम मुझे धोखा नहीं दे सकतीं। तुम स्त्री नहीं हो बल्कि मेरी मृत बहन ललिताकी प्रेतात्मा हो। मुझे ठीक ठीक बतलाओ कि तुम इस अवस्थामें किस प्रकार पहुँची।"

बा०—"तुम अच्छी तरह होशमें आकर मुझे देखो। मैं प्रेत नहीं बल्कि स्त्री हूँ।"

शुभ०—"यदि तुम स्त्री हो तो इतनी रातके समय इस निर्जन स्थानमें क्यों घूम रही हो?"

बा०—"मैं पहले पहल इस देशमें आई हूँ। यहाँ मेरा कोई परिचित नहीं है। मैं केवल दिल बहलानेके लिए इस समय यहाँ आ गई हूँ।"

शुभ०—"तुम कहाँकी रहनेवाली हो?"

बा०—"मैं दिल्लीकी रहनेवाली हूँ।"

शुभ०—"तुम्हारा नाम क्या है?"

बा०—(कुछ सोचकर) "मुझे लोग बदरुन्निसा कहते हैं।"

शुभ०—(आश्चर्यसे) "बदरुन्निसा! तब क्या तुम मुसलमानी हो?"

बा०—"हाँ।"

शुभ०—"तब तुमने हिन्दू स्त्रियोंकेसे कपड़े क्यों पहन रक्खे हैं?"

बा०—"मुझे ऐसे ही कपड़े पसन्द हैं, इस लिए मैं प्रायः इसी वेषमें रहती हूँ।"

शुभ०—"तुम दिल्लीमें कहाँ रहती हो और तुम्हारे यहाँ क्या कारबार होता है?"

बा०—"मैं दिल्लीके शाहंशाह औरंगजेबकी कन्या हूँ।"

शुभ०—(बहुत चकित होकर) "तुम बादशाहकी कन्या हो? भला यहाँ तुम्हारा क्या काम?"

बा०—"मैं सागरके महाराज शुभकरणके पुत्र दलपतिरायकी खोजमें यहाँ आई हूँ। क्या तुम कृपा कर मुझे उनका पता बतला सकते हो?"

शुभ०—"सागरका राजा शुभकरण तो मैं ही हूं और दलपतिराय मेरा ही पुत्र है, पर मुझे यह नहीं मालूम कि आजकल वह कहाँ है। राजा चम्पतरायने बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेका जो प्रयत्न आरम्भ किया था वह निष्फल हुआ। चम्पतराय मारे गये। उनके जो साथी आजकल जंगलोंमें अज्ञातवास कर रहे हैं, उन्हींके साथ दलपति भी है।"

वदरुन्निसाका चेहरा उतर गया। उसने वहुत दुःखी होकर पूछा,—"क्या बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताका प्रयत्न निष्फल हुआ? क्या मुझे किसी प्रकार कुमार दलपतिरायका पता नहीं मिल सकता?"

वदरुन्निसाके दोनों प्रश्नोंके उत्तरमें शुभकरणने केवल "नहीं" कहा और वे लौटकर हीरादेवीके महलकी तरफ चले। महलमें पहुँचकर उन्होंने हीरादेवीको वहुत ढूँढ़ा, पर कहीं उसका पता न लगा। यह जानकर उनका क्रोध और भी वढ़ गया कि हीरादेवीने मुझे झूठमूठ वहकाया और धोखा दिया। उन्होंने अच्छी तरह समझ लिया कि हीरादेवी विलकुल झूठी है, इस लिए उन्होंने उसे दण्ड देनेका अपना निश्चय और भी दृढ़ कर लिया। इसके वाद उन्हें अपने पुत्र दलपतिराय और उन्हें ढूँढ़नेवाली वदरुन्निसाका ध्यान आया। वे तुरन्त फिर उसी स्थानपर पहुँचे जहाँ थोड़ी देर पहले वदरुन्निसासे उनकी भेंट हुई थी; पर इस वार वदरुन्निसा उन्हें वहाँ न मिली। वे वहुत ही दुःखी होकर सामनेके घने जंगलमें जाकर अदृश्य हो गये।

उन्नीसवाँ प्रकरण।

नई आपत्तिका निदान।

ओड़छेके नागरिक आज तरह तरहके तर्क वितर्क करते हुए भयभीत दृष्टिसे दीवानखानेकी ओर देख रहे थे। अपनी जंगलकी स्वतंत्रतामें बाधा डालनेवाले शेरकी माँदकी तरफ जिस तिरस्कारपूर्ण और सभय दृष्टिसे जंगली जानवर देखा करते हैं उसी तिरस्कारपूर्ण और सभय दृष्टिसे ओछड़ा-निवासी वीरसिंह देवके वनवाये हुए उस दीवानखानेकी ओर देख रहे थे। सभी लोग किसी

न किसी रूपमें यह बात कह रहे थे कि शीघ्र ही कोई भारी नई आपत्ति आनेवाली है। राजा वीरसिंहदेवने यह दीवानखाना बनवाकर उसमें शाहजादा सलीमसे मुलाकात की थी और उसके थोड़े ही दिनों बाद ओड़छेकी स्वतंत्रता नष्ट हो गई थी। राजा पहाड़सिंहने उसी दीवानखानेमें शाहजहाँ बादशाहका आदरातिथ्य किया था और उसके थोड़े ही दिनों बाद पहाड़सिंहको राज्य छोड़कर जंगलकी ओर निकल जाना पड़ा था। उसके बाद हीरादेवीने वह दीवानखाना खुलवाया था और उसमें बुन्देलखण्डके सब राजाओंका दरबार किया था। उस दरबारके बाद तुरन्त ही राजा पहाड़सिंहकी मृत्यु हुई, आपसमें भयंकर संग्राम हुआ, व्यर्थ हजारों आदमियोंके प्राण गये और ओड़छेपर तरह तरहकी आपत्तियाँ आईं। इस प्रकार उस दीवानखानेका इतिहास संकटोंसे ही भरा हुआ था। जब जब वह दीवानखाना खुलता था, तब तब ओड़छेके नागरिक समझ लेते थे कि शीघ्र ही हम लोगोंपर कोई भारी आपत्ति आनेवाली है।

मुलाकाती दीवानखानेकी सजावट और रोशनी देखकर आज फिर लोगोंमें तरह तरहके तर्क होने लगे। पर सबके तर्कोंका मुख्य अभिप्राय यही था कि शीघ्र ही हम लोगोंपर कोई भारी संकट आनेवाला है। एक तर्कचूड़ामणिने कहा कि खुद शाहंशाह औरंगजेब अपने बहुतसे अमीरोंको साथ लेकर ओड़छे आया है और यह तैयारियाँ उसीके स्वागतकी हैं। इस पर दूसरे तर्कालंकार महाशयने मुफ्तमें लोगोंको बादशाहके आनेका कारण समझाना आरम्भ कर दिया। उन्हें देखकर एक तीसरे तर्करत्नसे न रहा गया; उन्होंने पहले तो लोगोंको अग्निसे धूम-निष्पत्तिका पुराना सिद्धान्त समझाया और तदुपरान्त बेधड़क होकर कह डाला कि दीवानखानेके प्रकाशसे धूम-निष्पत्ति होगी; यह प्रकाश शाहंशाह औरंगजेबको निमित्तकारण बनाकर ओड़छा नगर जलाकर राख कर देगा। राजकर्मचारियोंने अनुमान किया कि राज्यपर आपत्ति आवेगी और व्यापारियोंने समझा कि व्यापारपर संकट आवेगा। इस प्रकार सब लोग भयभीत होकर भावी संकटके सम्बन्धमें आपसमें तरह तरहकी बातें करने लगे।

खूब बने ठने और बढ़िया कपड़े पहने राजा कंचुकीराय बड़े ही गर्वसे लोगोंकी ओर देखते हुए कई सरदारोंके साथ दीवानखानेकी ओर जा रहे थे। उन्हें देखकर एक वृद्ध सज्जनने, जो यही समझते थे कि उमर बढ़नेके साथ ही साथ अक्ल भी बढ़ती है, आगे बढ़कर बड़े अदब-कायदेसे राजा कंचुकीरायके

सलाम किया और पूछा,—" महाराज ! मैंने सुना है कि शाहंशाह औरंगजेबको आदमियोंके गरमागरम खूनसे नहाना वहुत अच्छा लगता है, इस लिए बुन्देलोंको कोल्हूमें पेरकर उनका खून निकाला जायगा। क्या यह वात ठीक है ?"

कंचुकीरायने इस प्रश्नका कुछ भी उत्तर न दिया। वे तिरस्कार-पूर्ण दृष्टिसे उस वृद्धकी ओर देखते हुए आगे वढ़ गये।

वे चार कदम भी आगे न वढ़े होंगे कि उन्हें सफेद वालोंवाली एक विधवा बुड्ढी मिली। उस बुढ़ियाने वड़ी ही चिन्ता प्रकट करते हुए पूछा,—" मैंने सुना है कि कल वादशाहके हुक्मसे लोगोंकी गरदनें मारी जायँगी। क्या मेरी सरीखी राँड़ बुड्ढियाँ भी न वचने पावेंगी ?"

कंचुकीरायने उस बुड्ढीके प्रश्नका भी कोई उत्तर न दिया। वे मोछोंपर ताव देते हुए बढ़ते ही चले गये। थोड़ी दूरपर उन्हें देवीके वहुतसे भक्त दिखलाई पड़े। वे सव भी राजा साहवको घेरकर खड़े हो गये और पूछने लगे,— "सुना है कि कल वादशाह हुक्म देंगे कि सब बुन्देले हाथ हाथ भरकी दाढ़ी रक्खें। क्या अव माईके भक्तोंको भी दाढ़ी रखनी पड़ेगी ?"

कंचुकीराय वड़ी कठिनतासे उन लोगोंकी भीड़मेंसे निकलकर आगे वढ़े। इतनेमें एक कृपण वनियेने उन्हें रोककर पूछा,—" सुनते हैं, अब मुसलमानी कायदेसे लोगोंका जनेऊ हुआ करेगा। मैं अपने खर्चसे पुराने तरीकेसे लड़केका जनेऊ करा लूँ या आगे चलकर वादशाहकी तरफसे जनेऊ कराया जायगा ?"

कंचुकीरायने इस प्रश्नका भी कोई उत्तर न दिया। वे चार कदम भी आगे न बढ़े थे कि इतनेमें उन्हें एक पढ़े लिखे भले आदमी मिल गये। वे राजासाहवको रोककर कहने लगे,–" सुना है कि सव दफ्तरोंमें फारसी जारी होगी। हम यह तो जानते हैं कि फारसी उलटी लिखी जाती है पर हम लोगोंको यह नहीं मालूम है कि फारसी लिखनेमें दावात सीधी रक्खी जाती है या उलटी, कलम सीधी पकड़ी जाती है या उलटी, और लिखा सीधी तरहसे जाता है या उलटे टँगकर। अगर सरकार यह वात वतला देते तो वड़ी मेहरवानी होती।"

इसी तरहके वीसियों प्रश्न सुनते सुनते राजा कंचुकीराय तंग आ गये। जहाँ तक जल्दी हो सका, वे पैर वढ़ाते हुए दीवानखानेके सदर फाटक तक पहुँचे। वहाँ पहुँचनेपर उन्हें यह जानकर वहुत ही दुःख हुआ कि अभी अभीष्ट-सिद्धिमें देर है और कुछ समय तक हमें यहीं ठहरना पड़ेगा।

दीवानखाना आज बहुत अच्छी तरह सजाया गया था। उसमें जगह जगह पर खूब बढ़िया मोमी शमादान जल रहे थे और उनका उज्ज्वल तथा सुगन्धित प्रकाश चारों ओर फैल रहा था। एक स्थानपर वह प्रकाश अकेले बैठे हुए एक विचारमग्न, पर प्रसन्नवदन यवन युवकके चेहरेपर पड़ रहा था। उस युवकके चेहरेपर न तो औरंगजेबके चेहरेकी-सी गम्भीरता ही थी और न प्रौढ़ता ही। उस युवकके मनकी अस्थिरता, चंचलता और अहंमन्यता आदि देखकर एक साधारण मनुष्य भी समझ सकता था कि ओड़छेके जो निवासी यह समझते हैं कि आज दीवानखानेमें औरंगजेबका दरबार होगा, वे बड़ी भूल करते हैं।

समस्त बुन्देलखंडपर अपना अधिकार करके और बुन्देलोंकी गुलामीकी जंजीर मजबूत करके औरंगजेब कभीका दिल्ली चला गया था। उसने बुन्देलखंडका सत्त्व हरण किया था। ऐसी दशामें वह उस सत्त्वहीन बुन्देलखंडमें क्यों रहने लगा? उस समय तो वह किसी दूसरे देशपर अधिकार करनेकी चिन्तामें लगा होगा। जिस प्रकार बड़े बड़े धीमानोंके भोजन कर चुकनेपर कँगले उनकी जूठनपर टूटते हैं, अथवा शेरके शिकारकी बची हुई हड्डी-पसली चिचोड़नेके लिए कौवे-कुत्ते आ जाते हैं, उसी प्रकार सत्त्वहीन बने हुए बुन्देलोंकी लाशोंपर हाथ साफ करनेवाला यह युवक औरंगजेबका कोई प्यारा कुत्ता होगा। यदि भिन्न भिन्न मनोविकारोंसे रंजित इसकी मुख-प्रभा अपनी स्वाभाविक स्थितिपर आ जाती तो यह सहजमें ही पहचाना जा सकता।

विचारमग्न अवस्थामें बहुत देर तक भावी सुखका मनोराज्य करनेके उपरान्त उस यवन युवकको मानो अचानक किसी बातका स्मरण हो आया। अब तक तो उसके मुखपर काल्पनिक विलासकी छटा दिखाई पड़ती थी, कल्पित अधिकारोंसे वह मदान्ध जान पड़ता था, पर अब उसका वह मुख स्वाभाविक रूपमें दिखाई पड़ने लगा। अब मालूम हो गया कि वह हम लोगोंका पुराना परिचित सरदार रणदूलहखाँ है।

रणदूलहखाँ बड़े ठाठसे मसनद पर बैठा हुआ अपने सुख और अधिकारका ध्यान करके फूले अंगों न समाता था। उसे अपनी उस पुरानी अवस्थाका स्मरण हो आया जब कि वह समरकन्दकी गलियोंमें भीख माँगा करता था और बुरी तरहसे उसके दिन बीतते थे। आगे चलकर उसे उच्चाकांक्षाओंने

पागल बनाया; पर अपने देशके वैभवपर अधिकार करनेमें वह नितान्त असमर्थ था, इसलिए पराभूत देशमें जाकर अपने जाति-भाइयोंकी सहायतासे उसने अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका विचार किया था। फिर उसे अपनी उस दुर्दशाका ध्यान आया जो उसे दिल्ली पहुँचनेके समय महीनों रास्तेमें भोगनी पड़ी थीं। दिल्ली पहुँचकर उसके नसीबने कैसा पलटा खाया, वह रंकसे किस प्रकार राव बन गया, थोड़े ही दिन पहले समरकन्दकी गलियोंमें लोगोंके सामने हाथ पसारनेवाला भिखमंगा कितनी जल्दी औरंगजेबके दरबारका भारी सरदार बन गया और हजारों आदमियोंके मुजरे लेने लगा, आदि बातोंका विचार करके मन-हीं-मन वह अपने आपको धन्य समझने लगा। कुछ समय तक स्वाभाविक स्वरूपमें दिखलाई पड़नेवाला उसका मुखमंडल फिर भिन्न भिन्न विकारोंसे आक्रमित होने लगा। वैभवशिखरपर चढ़नेमें राजा चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसालने बाधा डाल कर उसका जो भारी अपमान किया था, उसने उसका जैसा व्याजसहित बदला लिया था, औरंगजेबको उसने अपने ऊपर जिस तरह खुश किया था और आखिरमें उसने अपनी समझसे जो इतनी बहादुरी और मरदानगीका काम किया था, उन सब बातोंका स्मरण करता हुआ—एक एक करके वैभवगिरिकी सीढ़ियोंका दर्शन करता हुआ—विचारमग्न रणदूलहखाँ वैभवगिरिके उत्तुंग शिखर पर जा पहुँचा था। उसने अपनी कल्पनाकी सहायतासे अपनी उच्चाकांक्षाओंके ध्येयका जो चित्र बनाया था, उसमें वह देख रहा था कि मैं बुन्देलखंडके किसी नामर्द राजाको पदभ्रष्ट करके उसके सिंहासनपर अधिकार कर बैठा हूँ, बुन्देलखंडके सब माण्डलिक राजे सिर झुकाकर नम्रतापूर्वक मेरे सामने खड़े हैं और मेरा मुँह जोह रहे हैं। उन्हींमें मिला हुआ वह पद-भ्रष्ट राजा भी चुपचाप खड़ा है और एक साधारण पद पाकर ही सन्तुष्ट और प्रसन्न है। इस प्रकार सारे बुन्देलखंडकी दृश्य और अदृश्य, सजीव और निर्जीव कुल सम्पत्ति मेरे अधिकारमें आ गई है और मैं उसका मनमाना उपभोग कर रहा हूँ। इतनेमें उसे कंचुकीरायका ध्यान हो आया और उनके अभीतक दरबारमें हाजिर न होनेके कारण उसे आश्चर्य हुआ। पूछनेपर उसे मालूम हुआ कि कंचुकीराय बहुत देरसे नीचे आये हुए हैं और दरबारमें हाजिर होनेकी इजाजत चाहते हैं। उस समय उसे वैसा ही आनन्द हुआ जैसा किसी चिड़ीमारको अपने जालमें अच्छा शिकार फँसनेपर होता है।

ज्यों ही राजा कंचुकीरायको मालूम हुआ कि सरदार रणदूलहखाँ साहबने मुझे याद फरमाया है, त्यों ही वे झपटे हुए उनके पास बड़े कमरेमें पहुँचे और अदवसे झुककर सलाम करके एक कोनेमें खड़े हो गये। खाँसाहवने जब उन्हें अपने पास बैठनेका इशारा किया तब वे बड़े कायदेसे सरक कर उस जगहपर जा बैठे और बोले,—

"जनाबने इस वक्त मुझे याद फरमाया, इसे मैं अपनी बड़ी खुश-किस्मती समझता हूँ। फरमाइए, क्या इरशाद है?"

रण०—"राजा साहब! मैंने इस वक्त एक बहुत ही जरूरी काममें मशविरा करनेके लिए आपको बुलवाया है। आप सल्तनत-देहलीके बहुत बड़े खैरख्वाह और बहुत ही समझदार राजा हैं। मुझे उम्मीद है कि आप मुझे सिर्फ उम्दः राय ही न देंगे बल्कि जहाँ तक हो सकेगा, मेरा इरादा पूरा करनेमें मदद भी देंगे।"

कंचु०—"जरूर जरूर। मैं हर तरहसे आप लोगोंकी खिदमत बजा लानेके लिए तैयार हूँ। अगर आप मेरा सारा राज-पाट और यहाँ तक कि जान भी माँगेंगे तो मुझे देनेमें कभी कोई उज्र न होगा।"

रण०—"बस बस राजा साहब! मुझे आप पर पूरा पूरा इतमीनान है और इसी लिए मैंने ऐसे मौकेपर आपको याद किया है। अब मैं अपना मतलब बयान करता हूँ, आप गौरसे सुनें।"

कंचु०—"हाँ हाँ, फरमाइए। मेरा खयाल बिलकुल आपकी ही तरफ है।"

रण०—"सबसे पहली बात तो यह है कि आपकी लड़कीकी वजहसे मुझे सख्त नदामत और परेशानी उठानी पड़ी है और महीनों चम्पतरायकी कैदमें रहना पड़ा है। मैं उसे कोई माकूल सजा देनेका इरादा रखता हूँ। आप मेरे इस खयालको कहाँतक पसन्द करते हैं?"

कंचु०—"जनाब आली! मैं क्या अर्ज करूँ, मैं तो खुद उस लड़कीसे सख्त परेशान रहता हूँ। वह सलतनत देहली और उसके खैरख्वाहोंकी ऐसी जानी दुश्मन है कि पनाह ही भली। क्या मैं सुन सकता हूँ कि जनाबने उसके लिए क्या सजा तजवीज फरमाई है?"

रण०—"हाँ हाँ, शौकसे सुनिए; और इन्हीं सब बातोंके लिए तो मैंने आपको बुलवाया ही है। मैं यह चाहता हूँ कि या तो आप उसे अपने राजसे एक-

दम निकाल ही दें और या ज्याद:से ज्याद: उसकी शादी किसी वहुत ही गरीव शख्ससे करके उसे अलग कर दें, ताकि आपकी रियासतपर उसका कोई हक न रह जाय। वह नावकार कभी इस काविल नहीं है कि इतनी वड़ी रियासतकी मलिका वनाई जाय।"

कंचु०—"आपकी यह तजवीज तो वेशक वहुत ही उम्द: और काविल तारीफ है। मैं भी वहुत दिनोंसे उसके लिए कोई ऐसा ही इन्तजाम सोच रहा था और वहुत दिनोंसे मेरा यह इरादा भी था कि मैं अपनी रियासत शाहंशाह देहलीकी नजर कर दूँ। मुझे कोई लड़का तो है ही नहीं और ऐसी नालायक़ लड़कीको मैं अपनी वारिसा नहीं वनाना चाहता।"

रण०—"राजा साहव! आपकी लियाकतकी जिस कदर तारीफ की जाय, सव वजा है। मैं भी आपके इस खयालसे पूरा पूरा इत्तफाक करता हूँ; मगर मेरी समझमें आप अपने इस इरादेमें थोड़ीसी तवदीली कर दें तो और भी वेहतर हो।"

कंचु०—"हाँ हाँ, फरमाइए। मैं हर तरहसे तैयार हूँ। मुझे किसी वातमें उज्र नहीं है।"

रण०—"आप जानते हैं, इस वक्त हिन्दुओं और मुसलमानोंमें मेलजोल वढ़ानेके लिए किस कदर कोशिशकी जरूरत है। वादशाह सलामतका खयाल है कि अगर हिन्दुस्तानके मुख्तलिफ सूवोंमें कुछ मुसलमानी रियासतें कायम हो जायँ तो उनसे दोनों कौमोंका इत्तिफाक वढ़ाने और दीने इस्लाम फैलानेमें वहुत कुछ मदद मिल सकती है। हालाँ कि इस वक्त करीव करीव हिन्दू रियासतें शाहंशाह देहलीकी ही वाजगुजार हैं और तमाम हिन्दुस्तानपर हमारा ही कब्जा है, ताहम अगर कुछ छोटी छोटी रियासतें भी दरवार-देहलीके अच्छे अच्छे सरदारोंको मिल जायँ तो आइन्द: वहुत कुछ वेहतरीकी उम्मीद हो सकती है। इसी खयालसे वादशाह सलामत खुद अपने सरदारोंको वड़ी वड़ी जागीरें देकर उन्हें राजा वनाना चाहते हैं। खुदाके फज्लसे अव वुन्देलखण्डपर मुसलमानोंका पूरा पूरा कब्जा हो गया है और इस मौकेपर यह मुनासिव मालूम होता है कि यहाँ भी एक छोटी मुसलमानी रियासत कायम हो जाय। अगर आप अपनी रियासत शाहंशाह-देहलीकी नजर कर देंगे तो मुझे उम्मीद है कि वादशाह सलामत वह रियासत मुझको ही वख्श देंगे, क्यों कि वे वखूवी जानते हैं कि मुझे

ढाँड़ेर और उनके आसपासकी सरजमीन किस कदर पसन्द है । लेकिन उसमें आपको किसी कदर तवालत होगी । ऐसी हालतमें मेरी रायमें अगर आप खुद ही अपनी रियासतका कुछ हिस्सा मुझे दे दें तो सब काम भी वन जायगा और हम और आप दोनों मिलकर सलतनत-देहलीकी वड़ी वड़ी खिदमतें भी अंजाम दे सकेंगे। लड़कीको आप अलग ही कर देंगे । और कोई आपका वारिस है ही नहीं; जब तक आप जिन्द: रहें—और खुदा करे आप वहुत दिनों तक जिन्द: रहें—आप वदस्तूर अपनी रियासतके मालिक वने रहें । मेरे रहनेके लिए एक मामूली मकान ही काफी होगा । वाद अजाँ जैसा कि आपका इरादा है, वैसा ही—"

रणदूलहखाँ 'वैसा ही' कहकर रुक गया । उसकी समझमें ही न आया कि आगे क्या कहूँ । कंचुकीरायने यद्यपि पहले स्वयं ही अपना सारा राज्य शाहंशाह-देहलीकी नजर कर देनेके लिए तत्परता दिखलाई थी, पर रणदूलहखाँके प्रस्तावने उन्हें कुछ चिन्तित कर दिया । जो इच्छा उन्होंने केवल रणदूलहखाँको प्रसन्न करनेके लिए प्रकट की थी उसकी पूर्तिके लिए अपने ऊपर इस प्रकार दवाव पड़ता देखकर वे मन ही मन कुछ दुखी हुए । पर उस समय रणदूलहखाँकी इच्छाके विरुद्ध कुछ कहनेका साहस भी उनमें नहीं था । वे वड़ी ही असमंजसमें पड़े । वड़ी कठिनतासे अपनी घवराहट दवाकर उन्होंने कहा,— "वहुत वेहतर! मुझे किसी वातमें उज्र नहीं है । मैं ढाँड़ेर पहुँचते ही अपने सरदारोंसे भी इस वारेमें वहुत जल्द मशविरा कर लूँगा और तव फौरन् जनावको खवर दूँगा ।"

इसके वाद कुछ देरतक इधर उधरकी वातें होती रहीं । खाँ साहव इस विचारसे वहुत ही प्रसन्न थे कि मेरा चक्र चल गया और अच्छा शिकार हाथ लगा । कंचुकीरायने सोचा, आगे जैसा होगा वैसा देखा जायगा; चलो इस समय तो पीछा छुड़ावें । थोड़ी देर वाद कंचुकीरायने खाँ साहवसे इजाजत लेकर अपना रास्ता लिया । रास्तेमें वे सोचते जाते थे,—"जान वची, लाखों पाये ।"

× × × ×

बीसवाँ प्रकरण।
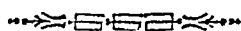
कुमार छत्रसाल और राजा जयसिंह।

विजयप्राप्तिका वास्तविक आनन्द केवल वही वीर जानते हैं जो समर-भूमिमें अपना समरतेज दिखला कर विजयी होते हैं; और लोग उस आनन्दकी कल्पना भी नहीं कर सकते। देवगढ़का किला जीतकर शाही सेना विजयोत्सव मनानेमें मग्न थी। लश्करमें जगह जगह गाना-बजाना हो रहा था। कहीं मुगल सिपाही शराब पीकर बेहोश पड़े थे और कहीं तरह तरहके ऊधम मचा रहे थे। उस वक्त उनके पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे, उनके दिमाग सातवें आसमानपर थे। घड़ी घड़ी "तानारीरी" और "किट-किट ताँय-ताँय" पर "वाह-वाह" और "सुबहान् अल्ला" की बौछारें हो रही थीं। लश्करमें सभी छोटे बड़े आनन्द-सागरमें मग्न दिखाई पड़ते थे।

आधी रात बीत गई। चन्द्रमा बढ़ता बढ़ता आकाशके मध्यमें पहुँच गया। जगत् निद्रादेवीकी आराधना करने लगा। देवगढ़के चारों ओर जहाँ तहाँ छावनी डाले पड़े हुए सिपाहियोंका विजयोत्सव और भी नया रंग लाने लगा। राजा जयसिंह साँड़नी-सवारोंके हाथ विजयका समाचार दिल्ली भेजकर अभी खाली हुए थे और अपने खेमेसे बाहर निकलकर मनोहर चाँदनीमें टहल रहे थे। विजय-प्राप्तिका समाचार सुनकर बादशाह बहुत ही प्रसन्न और सन्तुष्ट होंगे, इतने सहजमें देवगढ़के किलेको फतह हुआ सुनकर मुझपर उनकी कृपा बहुत बढ़ जायगी, वे मेरे प्रति बहुत कुछ कृतज्ञता प्रकट करेंगे, आदि विचार उस शूर और स्वामि-भक्त राजपूतके मनमें उत्पन्न हो रहे थे। उनके चेहरेसे विजय-प्राप्तिका सच्चा आनन्द झलक रहा था। उन्होंने अपने चारों ओर देखा। सैनिकों और सरदारोंको अपनी अपनी इच्छा और योग्यताके अनुसार तरह तरहसे आनन्द मनाते देखकर वे मन-ही-मन बहुत प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए। उसी समय कुमार छत्रसालका स्मरण करके उनका हृदय प्रेमांकित और गद्गद हो गया जिनके अतुल पराक्रमके कारण देवगढ़का किला जीता गया था। जबसे राजा चम्पतराय मरे और महेवाकी जागीर शाहंशाह-देहलीने जब्त कर ली तबसे अनाथ युवक छत्रसाल राजा जयसिंहके ही पास रहते थे। जयसिंह भी

उनपर अपने पुत्रकी तरह प्रेम करने लग गये थे । इसी लिए उस समय उनका मन पुत्रप्रेमसे मानो विह्वल हो उठा था । कार्य्यकी अधिकताके कारण उन्हें अभीतक कुमार छत्रसालकी अप्रतिम शूरताकी उचित प्रशंसा करने और उनके प्रति कृतज्ञता स्वीकार करनेका भी अवसर न मिला था । अब अवसर पाकर वे धीरे धीरे कुमार छत्रसालके डेरेकी तरफ बढ़ने लगे । रास्तेमें वे सोचते जाते थे कि छत्रसालने आज जो वीरता दिखलाई है उससे प्रसन्न होकर बादशाह उनके पिताकी जागीर उन्हें फिर लौटा देंगे । यह विचार स्वयं उनके लिए बहुत ही आनन्ददायक था ।

जब वे कुमार छत्रसालके डेरेके पास पहुँचे तब उन्होंने देखा कि चांदनीमें एक युवक पत्थरपर बैठा हुआ है और चिन्तित होकर कुछ सोच रहा है । थोड़ी देरतक उस युवककी ओर देखकर जयसिंहने पूछा,—

" कौन ? कुमार छत्रसाल ? किस चिन्तामें पड़े हो ? " लेकिन उनके प्रश्नका कुछ भी उत्तर न मिला । छत्रसालके कन्धेपर हाथ रखकर वे आश्चर्य और प्रेमसे फिर पूछने लगे,—

" कुमार ! तुम क्या सोच रहे हो ? तुम्हारी इस चिन्ताका क्या कारण है ? आज तुम्हारे चेहरेपर विजयके आनन्दकी छटा दिखाई पड़नी चाहिए थी । तुम ऐसे निराश और उदास क्यों हो रहे हो ? तुम्हारे ही पराक्रम और वीरताके कारण आज शाही सेनाको इतना आनन्द मनानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है; पर बड़े आश्चर्यकी बात है कि स्वयं तुम्हीं इतने खिन्न हो ।"

छत्रसालकी विचार-तन्द्रा टूट गई । वे झट उठकर खड़े हो गये और बड़ी नम्रतासे सिर झुकाकर बोले,—" चाचाजी ! यह समय तो आपके आरामका था । इस समय आपने यहाँतक आनेका क्यों कष्ट किया ? कहिए, क्या आज्ञा है ? मैं इस समय आपकी कौन-सी सेवा कर सकता हूँ ?"

राजा जयसिंह समझ गये कि छत्रसाल अपने विचारोंमें मग्न रहनेके कारण हमारी बातें नहीं सुन सके थे । इस लिए उन्होंने फिर कहा,—" कुमार ! आज तुमने जो विजय प्राप्त की है उसका आनन्द तुम क्यों अनुभव नहीं कर रहे हो ? मैं तुम्हारी आजकी वीरताका अभिनन्दन करनेके लिए इस समय यहाँ आया था, पर तुम्हारे मनकी स्थिति मुझे बिलकुल ही विपरीत दिखलाई पड़ी । क्या तुम्हें इस विजय-प्राप्तिका कुछ भी आनन्द नहीं हो रहा है ?"

छत्रसालने उद्वेगसे कहा,—" विजय प्राप्त हो किसी दूसरेको और आनन्द मनावे कोई और ? आज तो दिल्ली-पतिकी जीत हुई है, उसके लिए मैं क्यों आनन्द मनाने लगा ? मैंने तो केवल अपना कटु कर्तव्य समझकर युद्ध किया था। देवगढ़ पहले भी पराधीन ही था और अब भी पराधीन ही है। उसपर आदिल-शाही अधिकार रहा तो क्या और औरंगजेबका अधिकार रहा तो क्या ? उसपर शीया मुसलमानोंका झंडा फहराया तो क्या और सुन्नी मुसलमानोंका निशान गड़ा तो क्या ? छत्रसालके लिए दोनों ही बराबर हैं। लेकिन आजतक मैं आपके आश्रयमें था और भविष्यमें मुझे अपना उद्देश्य सिद्ध करनेमें आपसे बहुत कुछ सहायता मिलनेकी आशा है; अतः मैं आपको ही सन्तुष्ट और प्रसन्न करनेके लिए जी खोलकर लड़ा था। मैं जानता था कि यदि देवगढ़का किला जीत लिया गया तो चाचाजी प्रसन्न होंगे, इसी लिए आज मैंने इस कटु कर्त्तव्यका पालन किया। तब फिर उसके लिए मुझे आनन्द क्यों होने लगा ?"

राजा जयसिंहने हाथसे सामनेकी ओर इशारा करके कहा,—" अपने आस-पास चारों ओर आँखें उठाकर देखो, यहाँ जितने सैनिक विजयोत्सवमें मग्न हैं, क्या वे सभी यवन हैं ? उनमें आधेसे अधिक तो हिन्दू ही हैं। तब फिर आज वे क्यों विजयोत्सव कर रहे हैं ? बादशाहकी जीत होनेके कारण वे क्यों आनन्द मना रहे हैं ?"

छत्र०—" यही बात तो मेरी समझमें नहीं आ रही है। जिन लोगोंने इतनी वीरतासे लड़कर स्वयं अपना ही देश औरंगजेबके अधीन कर दिया है वे क्यों आनन्दमें मग्न हैं ? चाचाजी ! क्या आप मुझे भी इन्हीं अज्ञानियोंकी श्रेणीमें रखना चाहते हैं ? पेटका गढ़ा भरनेके लिए देशद्रोह करनेवाले सैनिकोंके साथ आप मेरी तुलना क्यों करना चाहते हैं ? इन सैनिकोंको आनन्द करते देख तो मुझे और भी दुःख होता है। उनका आनन्द ही मेरे दुःखका कारण है और जो बात मेरे आनन्दका कारण होगी वही इनके लिए दुःखदायक होगी। अपने देशका दुर्भाग्य आप इसीसे अच्छी तरह समझ सकते हैं।"

जय०—" मैं समझता था कि स्वतंत्रताका विचार राजा चम्पतरायके साथ ही साथ नष्ट हो गया। लेकिन अब मुझे मालूम हुआ कि तुम भी उन्हींके रँगमें रँगे हुए हो। कुमार ! कमसे कम अपने पिताकी दशा देखकर तो तुम्हारी आँखें खुलनी थीं। बुन्देलखंडका भयंकर रक्तपात देखकर तो तुमने समझा होता

कि देशके कल्याणके लिए हमने जो मार्ग ग्रहण किया है वह भ्रमपूर्ण है। जान पड़ता है कि अभी बुन्देलखण्डके बुरे दिन पूरे नहीं हुए। छत्रसाल! निर्जल मेघ कभी नहीं बरसते, वे सूर्य और चन्द्रमाके प्रकाशको केवल रोकते हैं, उनसे और कोई लाभ नहीं होता।"

छत्रसालने अधिक आवेशमें आकर कहा,—"चाचाजी! स्पष्ट कहनेके लिए मुझे क्षमा कीजिएगा। आप पिताजीके तथा मेरे प्रयत्नोंकी उपमा निर्जल मेघोंसे देते हैं और अपने आपको चन्द्र-सूर्य्य मानकर हम लोगोंको अपने तेज और प्रकाशका बाधक मात्र बतलाते हैं। आप इतने दिनोंसे अपनी जन्मभूमि छोड़कर सारे भारतवर्षपर प्रकाश डालनेके लिए बादशाहके दरबारमें रहते हैं, पर अब-तक देशपर कितना प्रकाश पड़ा है?"

राजा जयसिंहने कुछ गम्भीर होकर कहा,—"छत्रसाल! मुझे तुम्हारी बातोंसे जरा भी क्रोध नहीं आता। तुमने मुझपर जो यह दोष लगाया है कि बादशाहके दरबारमें रहकर मुझसे प्रजाका कुछ भी लाभ नहीं हुआ सो यह दोष अकेले मुझपर ही नहीं लग सकता। लेकिन मेरा यह सिद्धान्त है कि दूसरोंको दोषोंकी ओर ध्यान न देकर धीरे धीरे बराबर अपने कर्तव्योंका पालन करते रहना चाहिए। यद्यपि दरबारमें रहकर मैंने अपने देशभाइयोंका बहुत अधिक उपकार नहीं किया है, तो भी शायद तुम यह अच्छी तरह जानते होगे कि मैंने अबतक कितने ही अनुचित और अन्याय-पूर्ण कर उठवा दिये हैं।"

छत्र०—"आपने बहुतसे पुराने कर तो अवश्य उठवा दिये हैं पर उसके साथ ही साथ बादशाहने और भी तो अनेक नये कर लगाये हैं। आप स्वयं जानते हैं कि एक अधिकार देकर उतने ही महत्त्वके दूसरे दो अधिकार छीन लेना, दो कर माफ करके उसकी कमी पूरी करनेके लिए तीसरा कर खूब बढ़ा देना, आदि आदि बातें राजनीतिके दाँव-पेच हैं। इस विषयमें मैं आपको और अधिक क्या बतला सकता हूँ? आप यदि विचार करेंगे तो आपको मालूम हो जायगा कि आपके प्रयत्नोंकी अपेक्षा महाराणा राजसिंहकी तलवार जिस उदात्त भावनासे म्यानके बाहर निकली है, महात्मा शिवाजीकी तलवार जिस पवित्र कर्त्तव्यके लिए दक्षिणमें चल रही है, उसी मंगलमय उद्देश्यसे अन्ततक पिताजी भी लड़ते रहे। उदयपुरके भाग्य अच्छे थे, दक्षिणका सितारा तेज था, इस लिए महाराणा राजसिंह और महात्मा शिवाजीके प्रयत्न सफल हुए। लेकिन

बुन्देलखण्डका नसीब अभीतक सोता है, इस लिए पिताजीका प्रयत्न निष्फल हुआ। लेकिन केवल इसी कारण निर्जल मेघोंसे उनकी उपमा न दें। जो मेघ अभी प्रजाकी सहानुभूतिके अभावके कारण निर्जल जान पड़ते हैं, बहुत शीघ्र वही मेघ बुन्देलखण्डपर स्वतंत्रतारूपी अमृतकी वर्षा करने लगेंगे।"

जय०—"बुन्देलखण्डका भाग्योदय चाहे जब हो, पर मैं चाहता हूँ कि तब तक तुम इस हीन अवस्थामें अपना समय व्यर्थ नष्ट न करो और इस विजयसे लाभ उठाकर अपने प्राचीन वैभवके पुनः अधिकारी बनो। कल यहाँसे शाही सेना कूच करेगी। तुम भी मेरे साथ ही दिल्ली चलो। तुम्हारी आजकी अप्रतिम वीरताका समाचार सुनकर बादशाह बहुत खुश होंगे और तुम्हारा सब ऐश्वर्य तुम्हें लौटा देंगे। छत्रसाल! तुम मेरी बातोंकी अवज्ञा मत करो। मैं वहाँ चलकर तुम्हें महेवाका राज्य दिलवा दूँगा।"

छत्र०—"मुझे महेवाका राज्य मिल जाना ही बुन्देलखण्डको स्वातंत्र्य मिल जाना नहीं है। चाचाजी! भूखे शेरकी भूख कुत्ते या गीदड़से नहीं मिट सकती। चातक कभी गड़हीके जलसे अपनी प्यास नहीं बुझाता। इस लिए बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेकी इच्छा केवल महेवाके राज्य या बादशाही दरबारकी अमीरीसे पूरी नहीं हो सकती।"

जय०—"छत्रसाल! यदि तुम बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके इतने अभिलाषी हो तो तुम दिल्ली चलो और बादशाहसे प्रार्थना करो कि बुन्देलखण्डपर अनुचित और अन्यायपूर्ण कर न लादे जायँ, वहाँ किसी प्रकारका अन्याय न हो, बुन्देलोंके अधिकारोंकी अच्छी तरह रक्षा हो, लोगोंको धार्मिक स्वतंत्रता मिले और वहाँका शासन सुव्यवस्थित रूपसे हो। यदि बादशाहने तुम्हारी ये बातें मान लीं और इनके सम्बन्धमें तुम्हें अभिवचन दिया तब तो तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायगी न?"

छत्र०—"चाचाजी! हमें स्वतंत्रता चाहिए, अभिवचन नहीं। अकबर बादशाहकी शासन–प्रणाली बहुत ही अच्छी थी, उससे सब सुखी रहते थे। तो भी वीरवर महाराणा प्रतापने चित्तौरके वैभवको लात मारकर दिल्लीकी प्रबल सत्ताका विरोध करनेमें अपना जीवन क्यों बिताया?"

राजा जयसिंहने प्रेमपूर्ण दृष्टिसे छत्रसालकी ओर देखते हुए कहा,—"कुमार! तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। बादशाही दरबारकी अमीरी स्वीकृत

करते समय चम्पतरायने भी यही कहा था। लेकिन बुद्धिमानोंको उचित है कि वे समय देखकर काम करें। तुम हमारे साथ दिल्ली चलो। वहाँ चलकर तुम बादशाहको अपने समस्त उपकारोंका स्मरण कराओ। यदि बुन्देलखंडके सौभाग्यसे उसे स्वतन्त्रता मिल गई तो ठीक ही है, नहीं तुम फिर अपने इच्छानुसार कार्य करना। पर मुझे विश्वास है कि बादशाह तुम्हारी बात मान लेंगे। तुम्हारी आजकी वीरताके कारण बादशाहको जितना प्रदेश मिला है, बुन्देलखंड शायद उससे आधा भी न होगा। यदि उन्होंने शान्त मनसे तुम्हारी प्रार्थना पर विचार किया तो वह अवश्य स्वीकृत होगी और उसमें बादशाहकी लेशमात्र हानि भी न होगी।"

छत्र०—"चाचाजी! दीवान-ए-आममें दरबारके समय बादशाहने जो जो बातें कही थीं, क्या आप उन्हें भूल गये? क्या आपको याद नहीं है कि उस समय बादशाहने हमारी प्रार्थनाका कितने अनुचित रूपसे तिरस्कार किया था? बारबार 'भिक्षां देहि' करनेसे क्या होगा? जब एक बार हमें अच्छी तरह मालूम हो गया कि भीखमें स्वतंत्रता नहीं मिलती तब घड़ी घड़ी हाथ पसारनेसे क्या लाभ?"

राजा जयसिंहने आग्रहपूर्वक कहा,—"चाहे लाभ हो और चाहे न हो, तुम्हें कमसे कम मेरी बात माननी चाहिए और मेरे साथ दिल्ली चलना चाहिए। मैं तुम्हें ऐसी असहाय और दीन स्थितिमें बुन्देलखंडमें नहीं छोड़ सकता। हीरादेवीके गुप्तचर सारे बुन्देलखंडमें तुम्हें ढूँढ़ रहे हैं, ऐसी दशामें तुम्हें अकेले बुन्देलखंडमें छोड़ना ठीक नहीं। तुम्हारे पिता मेरे मित्र थे; मित्र ही क्यों भाईके समान थे। मैं नहीं चाहता कि तुम किसी प्रकार हीरादेवी सरीखी दुष्टाके फेरमें पड़कर अपनी भारी हानि कर बैठो। तुम्हें मेरे साथ दिल्ली चलना पड़ेगा।"

छत्रसालने गद्गद स्वरसे कहा,—"चाचाजी! आपकी इस कृपाके लिए मैं आपका बहुत ही ऋणी और अनुगृहीत हूँ। लेकिन मेरे सम्बन्धमें आपको इतना अधिक भय करनेकी आवश्यकता नहीं। हीरादेवी भले ही मेरी जानकी गाहक हो जाय, मुझे उसकी चिन्ता नहीं है। प्राणनाथ प्रभुके प्रयत्नसे शीघ्र ही बुन्देलखंडकी प्रजा स्वतंत्रतावादी बन जायगी और मुझे अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय समझने लगेगी। चाचाजी! आप मेरे सम्बन्धमें किसी प्रकारकी चिन्ता न करें। महेवाका कोट भले ही मेरे प्राणोंकी रक्षा न कर सके, पर पिताजीसे मुझे

धैर्यका जो अभेद्य दुर्ग मिला है वह अवश्य ही मेरी रक्षा करेगा। पिताजीका प्रेम यदि मेरी रखवाली न करेगा तो विन्ध्यवासिनी देवीकी दया अपने भक्तकी रखवाली अवश्य करेगी। मेरे मनमें स्वतंत्रताकी दिव्य ज्योति जल रही है, धैर्य्य मेरी रक्षा कर रहा है, देश-हितके पवित्र कर्त्तव्यपर मेरा लक्ष्य है, प्राणनाथ प्रभु तथा आप सरीखे महात्माओंके मुझे आशीर्वाद मिल रहे हैं, तव फिर मैं हीरादेवीसे क्यों डरूँ? चाचाजी! मुझसे दिल्ली चलनेके लिए आग्रह न कीजिए। इस प्रान्तमें मुझे अभी बहुतसे महत्त्वपूर्ण काम करने हैं। मैं अभी इतनी जल्दी दक्षिण नहीं छोड़ सकता।"

राजा जयसिंहने चकित होकर पूछा,—"क्या तुम हम लोगोंके साथ लौटकर बुन्देलखंड भी न चलोगे?"

छत्र०—"नहीं, मुझे दक्षिणमें ही अभी और कुछ दिनोंतक रहना पड़ेगा।"

जय०—"तुम यहाँ रहकर क्या करोगे?"

छत्र०—"मैं अपने गुरुके दर्शन करूँगा।"

जय०—"क्या प्राणनाथप्रभु आजकल दक्षिणमें ही हैं?"

छत्र०—"नहीं, वे तो बुन्देलखण्डमें ही अपना काम कर रहे हैं।"

जय०—"तव फिर दक्षिणमें तुम्हारे कौन गुरु हैं जिनके दर्शनोंके लिए तुम यहाँ ठहरोगे?"

छत्र०—"महात्मा शिवाजी।"

थोड़ी देर तक विचार करनेके उपरान्त जयसिंहने बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक कहा,—"तव तो तुम बहुत ही उत्तम, प्रशंसनीय और योग्य कार्य्य करोगे। तुम बड़े आनन्दसे उन महात्माके पास जाओ और उनसे गुरुमंत्र लो। वे सब प्रकारसे तुम्हारे गुरु होनेके योग्य हैं। लेकिन साथ ही तुम मुझे इस बातका वचन दो कि अपना काम पूरा करके मेरे पास दिल्ली आओगे। आज तुमने इस युद्धमें जो काम किया है, वह व्यर्थ न जाना चाहिए। दिल्ली आकर तुम उससे कुछ लाभ उठाओ।"

छत्र०—"मैं इस विषयमें उन्हींसे सम्मति लूँगा। बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके सम्बन्धमें मैं उन्हींके उपदेशके अनुसार प्रयत्न करूँगा। पिताजीने भी

अन्तिम समय मुझे ऐसा ही करनेको कहा था । यदि उन्होंने मुझे दिल्ली जानेकी आज्ञा दी तो मैं आपके दिल्ली पहुँचनेसे पहले ही आपकी सेवामें पहुँच जाऊँगा । ”

थोड़ी देर तक इधर उधरकी बातें करनेके उपरान्त राजा जयसिंह वहाँसे चले गये । उस समय उनकी आँखें प्रेमाश्रुओंसे भर गई थीं । रास्तेमें लोग स्थान स्थानपर विजयोत्सवमें मग्न थे, पर जयसिंहको कुछ भी दिखाई न पड़ता था ।

दूसरे दिन बहादुरखाँ कोका और राजा जयसिंहकी सम्मिलित सेनाने दिल्लीकी ओर प्रस्थान किया ।

कुमार छत्रसाल उनके साथ नहीं गये ।

\+ \+ \+

इक्कीसवाँ प्रकरण ।

बेचारे कंचुकीराय ।

प्रधान सज्जनराय यथार्थनामा थे । राजा कंचुकीराय तो अपना सारा समय बादशाह औरंगजेब और हीरादेवीकी आराधना तथा उपासनामें बिताते थे; राज्यके पेचीदे और उत्तरदायित्व पूर्ण कार्योंके लिए उन्हें समय ही न मिलता था । आज शाही दरबारके उस अमीरका स्वागत करो, कल दरबारके उस अमीरकी दावत करो, परसों उस सरदारको नजरें भेजो और चौथे दिन हीरा-देवीके बुलानेपर ओड़छे चलनेकी तैयारी करो, बस इसी प्रकारके कामोंमें नित्य उनका समय बीता करता था । जबसे वे ढाँड़ेरके राजसिंहासनपर बैठे, तबसे इन्हीं सब कामोंमें फँसे रहनेके कारण अभी तक उन्हें राज-कार्य्य देखनेकी फुरसत ही न मिली थी । लेकिन ऐसी अवस्थामें भी ढाँड़ेर-राज्यकी व्यवस्था बहुत ही उत्तम थी । वहाँ न तो प्रजापर अनावश्यक कर लादे जाते थे और न प्रजाके साथ किसी और प्रकारका अन्याय होता था । प्रजाका दुखड़ा बहुत ही सहजमें सुन लिया जाता था और उसके साथ पूरा पूरा न्याय होता था । इसी लिए ढाँड़ेर राज्यकी बहुत कुछ कीर्ति भी फैल गई थी । उसकी इस कीर्तिके मुख्य कारण प्रधान सज्जनराय ही थे जो रानी सुफलादेवीकी सम्मति और आज्ञाके अनुसार बहुत ही दक्षतासे राज्यकी व्यवस्था और प्रबन्ध करते थे ।

आज राजा कंचुकीराय खूब वढ़िया वढ़िया अलंकार और वस्त्र पहने हुए वड़े ठाठसे ढाँड़ेरके राज-सिंहासन पर वैठे हुए थे और सरदारों तथा नागरिकोंसे मुजरे ले रहे थे। प्रजाको भी आज वहुत दिनोंके वाद अपने राजाके दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसी लिए सारा दरवार सरदारों और नागरिकोंसे भरा हुआ था। प्रधान सज्जनराय कुछ आश्चर्य और कुछ चिन्तासे सोच रहे थे कि आज राजा साहवने किस उद्देश्यसे इतना वड़ा दरवार किया है और आजके दरवारमें वे क्या कहना चाहते हैं। राजा कुंचुकीरायके वहुत आग्रह करनेपर उनकी वातें सुननेके लिए एक ओर परदेकी आड़में विजयाको साथ लेकर रानी सुफलादेवी भी आ वैठी थीं।

जव कुंचुकीरायको सज्जनरायसे मालूम हुआ कि प्रायः सभी निमंत्रित लोग आ चुके हैं तव उन्होंने अपना वक्तव्य इस प्रकार आरम्भ किया,—

"आप लोगोंकी राजनिष्ठा देखकर हमें इस समय जो अभिमान हो रहा है, उसका वर्णन नहीं हो सकता। आप लोग यह वात अच्छी तरह जानते हैं कि हम वरावर ढाँड़ेर राज्यकी प्रतिष्ठा वढ़ानेका प्रयत्न करते रहते हैं। पर साथ ही यह वात भूल न जानी चाहिए कि ढाँड़ेर राज्य चाहे कितना ही वड़ा क्यों न हो, पर मुगल-सामाज्यसे यदि उसकी तुलना की जाय तो वह विन्दु मात्र ही ठहरेगा। हम लोगोंको इतने वड़े साम्राज्यका आश्रय मिला है, इसे हमें अपना सौभाग्य ही समझना चाहिए। आप लोगोंको यह सूचित करनेमें हमें वहुत ही आनन्द होता है कि शीघ्र ही हमारे राज्यका मुगल-साम्राज्यके साथ वहुत ही घनिष्ठ सम्वन्ध हो जायगा। संयोगसे हमें अभीतक कोई पुत्र नहीं हुआ है और न भविष्यमें ही होनेकी सम्भावना है। हमारी अवस्था भी अव वरावर दिनपर दिन ढलती ही जाती है, इस लिए हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम इस समय ऐसी व्यवस्था कर दें जिसमें हमारे उपरान्त आपको ऐसा ही राजा मिले जो आप लोगोंके कल्याणकी हमारी ही तरह चिन्ता करे। हमें कोई पुत्र नहीं हुआ, यह भी एक प्रकारसे अच्छा ही हुआ, क्योंकि आजकलके छोकरे प्रायः साम्राज्यके द्रोही निकलते हैं, उनके दिमाग फिरे हुए होते हैं और उनकी दृष्टि स्वराज्य और स्वतंत्रतापर होती है। सागरके राजा शुभकरण कितना पुत्रसुख भोगते हैं, यह आप लोग अच्छी तरह जानते हैं। पिता साम्राज्यकी तरफसे लड़ते हैं और पुत्र राजाद्रोहियों और वलवाइयोंमें मिला हुआ

है । इन वलवाइयों और राजद्रोहियोंका अगुआ छत्रसाल कितना दुष्ट, मूर्ख और अत्याचारी है, उसके कारण वुन्देलखंडमें कितना रक्तपात हो रहा है, उसके कुकर्मोंके कारण उसके पिता चम्पतरायके प्राण किस प्रकार गये और अपने सारे राज्य और ऐश्वर्य्यसे हाथ धोकर वह आजकल किस प्रकार अज्ञातवास कर रहा है, यह आप सव लोगोंको अच्छी तरह मालूम ही है। छत्रसाल या दलपतिराय सरीखे पुत्रोंकी अपेक्षा पुत्रका न होना ही वहुत अच्छा है । अतः आप लोगोंको इस वातका दुःख न होना चाहिए कि आप लोगोंके युवराज नहीं है । यदि हमें कोई पुत्र होता और वह अयोग्य भी होता तो भी आप सरीखे साम्राज्य-भक्तोंको विवश होकर उसे अपना राजा मानना ही पड़ता। हमारी इच्छा थी कि हमारा उत्तराधिकारी कोई ऐसा व्यक्ति हो जो सम्राट् औरंगजेवका वहुत वड़ा कृपापात्र और उनके साम्राज्यका अनन्य भक्त हो, जिसमें उसके कारण आप लोगोंपर किसी प्रकारकी विपत्ति आनेकी सम्भावना न हो । सौभाग्यवश हमें एक ऐसा व्यक्ति इस समय मिल भी गया है । आजका दरवार इसी लिए हुआ है कि आप लोगोंको यह वतला दिया जाय कि आपका भावी राजा कौन होगा ।" इतना कहकर राजा कंचुकीराय यह जाननेके लिए कुछ देरतक चुप हो रहे कि श्रोताओंपर हमारी वातोंका क्या और कैसा प्रभाव पड़ता है ।

उस समय सव लोगोंने समझा था कि राजा साहव या तो किसी साम्राज्य-भक्त सरदार या राजाके पुत्रको दत्तक लेंगे और या किसी वैसे ही सरदार या राजाके पुत्रसे अपनी कन्याका विवाह करके उसे अपना उत्तराधिकारी वनावेंगे । इसी लिए लोगोंमें किसी प्रकारकी उत्तेजना न फैली और सव लोग राजा साहवकी आगेकी वातें सुननेके लिए चुपचाप ज्योंके त्यों वैठे रहे ।

कंचुकीरायने फिर अपना भाषण आरम्भ किया,—" हम आप लोगोंसे यह तो अभी कह ही चुके हैं कि आप लोग युवराज न होनेके कारण दुखी न हों, पर इससे आप लोग यह न समझें कि सन्तति-हीन होना ही सवसे अच्छा है । सन्ततिमें पुत्र भी होता है और कन्या भी । आजकलके जमानेमें पुत्र न होना ही अच्छा है, क्योंकि प्रायः वह अनेक संकटों और दोषोंका कारण होता है । हम लोग प्रायः देखते हैं कि पुत्र अपने पितासे लड़ जाता है और उसकी अपमृत्युका कारण होता है । इस लिए व्यर्थ पुत्रकी चिन्ता करना ठीक नहीं ।"

राजा कंचुकीरायकी बातें सुन सुनकर प्रधान सज्जनराय बहुत ही चकित हो रहे थे। साथ ही उनके मनमें दारुण चिन्ता भी उत्पन्न हो रही थी। उनकी समझमें न आता था कि राजा साहबकी ये सब बातें किस प्रकार बन्द करें और न वे यही समझ सकते थे कि इन बातोंका परिणाम क्या निकलेगा।

पर राजा कंचुकीरायकी बातें खतम होना जानती ही न थीं। वे बहुत देरतक इसी प्रकारकी ऊट-पटाँग बातें कहते रहे। अन्तमें वे अपने मतलब पर आये। उन्होंने कहा,—"हमने अपने राज्यकी दृढ़ता और सुप्रबन्ध आदिका बहुत अच्छा आयोजन किया है। राजकुमारीका विवाह शीघ्र ही किसी साधारण जागीरदार या सरदारके पुत्रके साथ हो जायगा। उसके लिए उपयुक्त वर ढूँढ़ा जा रहा है। विवाहके उपरान्त वह अपने घर चली जायगी। सज्जनरायजी अब बहुत वृद्ध हो गये हैं। अब इनका शरीर नहीं चलता। अवस्था तो हमारी भी अधिक हो गई है पर हम अभी और कुछ दिनों तक टेर ले चलेंगे। हमारा विचार है कि रणदूलहखाँ साहब अब यहीं आ रहें और राजकीय कामोंकी देख-भाल आरम्भ कर दें। प्रबन्ध और शासन-सम्बन्धी कामोंमें वे बहुत ही योग्य हैं और शाहंशाह औरंगजेबकी उनपर विशेष कृपा है। हमारे जीवनकालमें वे हमें राजकार्य्यमें बराबर सहायता दिया करेंगे और हमारे उपरान्त राज्यके उत्तराधिकारी भी वही होंगे। आप लोगोंको न तो घबराना चाहिए और न किसी प्रकारकी चिन्ता करनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंके द्वेषके दिन अब गये; अब तो दोनोंमें सुहृद-भाव स्थापित होनेका समय आ गया है और उस भावका सूत्रपात इसी प्रकार होना चाहिए। आप लोग विश्वास रक्खें कि आपके साथ किसी प्रकारका अन्याय या अत्याचार न होगा। रणदूलहखाँ एक तो स्वयं बहुत समझदार आदमी हैं; दूसरे मैं भी उन्हें अच्छी तरह समझा बुझा दूँगा। आप लोग सब प्रकारसे निश्चिन्त रहें।"

राजा कंचुकीरायकी बातें समाप्त होनेसे पहले ही सारे दरबारमें खलबलीसी मच गई थी—लोग आपसमें काना-फूसी करने लग गये थे। कई नागरिक और सरदार उठकर कुछ कहना चाहते थे, पर सज्जनरायका मुँह देखकर सब चुप हो रहते थे। कई आदमियोंको तो स्वयं सज्जनरायने कई बार शान्त रहनेका संकेत किया था। कंचुकीरायकी बातें समाप्त होते ही सारे दरबारमें शोर मच गया। इसपर कंचुकीरायने जरा बिगड़कर कहा,—"प्रधानजी! यह क्या बात

है ? आप इन लोगोंको तुरन्त शान्त कराइए, दिल्लीमें दिन दिन भर शाही-दरबार हुआ करते हैं, पर उनमें हमने कभी ऐसी गड़बड़ी नहीं देखी। हमने कोई ऐसी नामुनासिब बात नहीं कही। हमारी आज्ञा है कि आप इन लोगोंको शान्त करें और जो लोग उपद्रव मचावें उन्हें यथोचित दण्ड दिया जाय।"

प्रधान सज्जनराय उठकर खड़े हुए और दोनों हाथोंसे लोगोंको शान्त होनेका इशारा करने लगे। बड़ी कठिनतासे लोगोंको चुप कराकर उन्होंने कहा,—"आप लोग अभी इतने उद्विग्न न हों। महाराज साहबका ऐसा प्रस्ताव है। अभी उस सम्बन्धमें कोई कारवाई नहीं की गई है। अभी इस बातका समय है कि आप लोग उसपर विचार करें और अपनी सम्मति भी दें। महाराज साहब बहुत विचारशील हैं। वे बिना आप लोगोंकी सम्मतिके अथवा बिना अच्छी तरह विचार किये कोई काम न करेंगे। सम्भव है कि सोच समझकर यह विचार छोड़ भी दिया जाय। मैं भी समय पाकर महाराज साहबको इस सम्बन्धमें समझाऊँगा और आशा है कि महाराज हम लोगोंकी प्रार्थना अस्वीकृत न करेंगे।"

पर सज्जनरायकी ये बातें कंचुकीरायको पसन्द न आईं। यद्यपि जिस समय रणदूलहखाँने ओड़छेके दीवानखानेमें कंचुकीरायसे यह प्रस्ताव किया था उस समय उसे सुनकर वे कुछ चिन्तित और दुःखी हो गये थे और खाँसाहबके प्रस्तावसे सहमत न थे तथापि जब हीरादेवीने उन्हें बहुत कुछ ऊँच-नीच समझाया तब वे अपना राज्य रणदूलहखाँको देनेके लिए तैयार हो गये थे। हीरादेवीने इसी लिए उनसे एक और बात भी जड़ दी थी कि कहीं वे आगे चलकर अपने विचारसे डिग न जायँ। उसने उनसे कह दिया था कि आपकी कन्या जबतक मेरे यहाँ रही वह बराबर छत्रसाल और उनके कार्य्योंकी प्रशंसा ही करती रही, वह उनपर कुछ अनुरक्त भी जान पड़ती है। यदि आगे चलकर कहीं छत्रसाल और विजयाका विवाह-सम्बन्ध हो गया तो बहुत ही बुरा होगा,—सारा किया धरा नष्ट हो जायगा, छत्रसाल ओड़छेके राजा बन बैठेंगे और बुन्देलखण्डमें फिर उपद्रव आरम्भ कर देंगे। यह अन्तिम बात कंचुकीरायके मनमें अच्छी तरह जम गई थी और इसी लिए वे खाँसाहबको अपना सारा राज्य देनेके लिए तैयार हो गये थे। ऐसी दशामें यदि प्रजा और सज्जनरायकी बातें कंचुकीरायको पसन्द न आईं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

बहुत दुखी होकर राजा कंचुकीरायने कहा,—"प्रधानजी! यह आप क्या कह रहे हैं? आप जानते हैं कि हम जो कुछ कहते या करते हैं उसपर पहले बहुत अच्छी तरह विचार कर लेते हैं। तब व्यर्थ इस तरहकी बातें करनेसे क्या लाभ? हमने जो कुछ कहा है वह बहुत ठीक है, उसमें कोई परिवर्त्तन नहीं हो सकता। हम इस विषयमें और कुछ सुनना भी नहीं चाहते।"

सज्जन०—"पृथ्वीनाथ! यह सब कुछ ठीक है; पर एक हिन्दू राज्यका इस प्रकार मुसलमानके अधिकारमें चला जाना लोगोंको सह्य नहीं हो सकता। श्रीमान् स्वयं देखते हैं कि जिन जिन स्थानोंपर मुसलमान स्वयं अधिकार करते हैं, वहाँसे भी प्रजा उन्हें निकाल बाहर करनेकी चिन्तामें लगी रहती है। ऐसी दशामें जान-बूझकर राज्यमें कोई नया उपद्रव खड़ा करना कहाँ तक न्याय-संगत है, इसका विचार स्वयं श्रीमान् कर सकते हैं। देशमें मुसलमानोंका दिन पर दिन जो अत्याचार बढ़ता जाता है उसे देखते हुए इतना बड़ा राज्य एक मुसलमानके हाथमें दे देना वैसा ही है जैसा कि गौको बाघकी रक्षामें देना। युवराजके अभावमें सर्वथा यही उचित है कि राजकुमारीका विवाह किसी योग्य राजकुमारके साथ किया जाय और वही राजकुमार राज्यका उत्तराधिकारी हो। शास्त्रके अनुसार भी और नैतिक दृष्टिसे भी यही सबसे उत्तम है कि बुन्देलखंडका राज्य बुन्देलोंके हाथमें रहे।"

कंचु०—"प्रधानजी! आप व्यर्थ इस विषयमें आग्रह करके हमारे कोपभाजन न बनें, हम शास्त्रकी मर्यादा भी अच्छी तरह जानते हैं और नीतिके तत्त्व भी हमसे छिपे नहीं हैं। हमने इस विषयपर बहुत गूढ़ विचार किया है और बहुत दूरतक भविष्य सोचा है। आप लोग अभी वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। और फिर यह राज्य हमारा है। हमें अधिकार है, हम चाहे जिसे दे दें। इसमें कि-सीको आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इस विषयमें हमारा जो विरोध करेगा वह राजद्रोही समझा जायगा।"

इसपर बहुतसे लोग शोर मचाने लगे। कोई कहता था—"ऐसा कदापि न होना चाहिए।" कोई कहता था,—"भाई, अब तो हम यहाँ न रहेंगे।" और कोई कहता था,—"अब हम लोगोंके विनाशके दिन आ गये।" तरह तरहकी बातें और बहुतसा हो-हुल्लड़ सुनकर राजा कंचुकीराय दुखी भी हुए और घबरा भी गये। अन्तमें उन्होंने दरबार बरखास्त करनेकी आज्ञा दी और

वे स्वयं दरबार छोड़कर उठ गये। उनके चले जानेपर सज्जनरायने सब सरदारों और नगरनिवासियोंको बहुत कुछ आश्वासन दिया और कहा कि सम्भवतः राजा साहबकी इच्छा पूरी न होने पावेगी, आप लोग निश्चिन्त और शान्त रहें। तब कहीं जाकर लोगोंके जीमें जी आया और सब लोग अपने अपने घर गये। उस दिन बहुतोंने अपने मनमें समझ लिया कि राजा कुंचुकीराय पागल हो गये हैं।

भगवान् भास्कर संसारका परित्याग करके चले गये। धीरे धीरे काली रात बढ़ने लगी। वह अपने पति चन्द्रदेवके आनेकी प्रतीक्षा कर रही थी। पतिके आनेमें विलम्ब होता देखकर वह कुछ उद्विग्न हुई; उसके कृष्ण वदनपर चिन्ताकी छाया दिखाई पड़ने लगी। इस प्रकार दो घड़ियाँ बीत गईं, इतनेमें उसने देखा कि मेरे पति-देव स्वर्गीय अमृतमें स्नान करके मुझे आलिंगन करनेके लिए हाथ बढ़ाए हुए आ रहे हैं। वह भी जल्दी जल्दी बढ़कर रजनीनाथके पास पहुँच गई और उनकी ज्योत्स्नाके शुभ्र समुद्रमें आनन्दसे तैरने लगी।

उस समय रानी सुफलादेवीने अपनी एक विश्वस्त दासीको प्रधान सज्जनरायको बुला लानेके लिए भेजा। थोड़ी देरमें वृद्ध सज्जनराय वहाँ आ पहुँचे। आते ही उन्होंने सुफलादेवीका अभिवादन किया और कहा,—"कहिए, इतनी रातके समय श्रीमतीने इस दासको क्यों स्मरण किया? मैं इस समय किस सेवाके लिए बुलाया गया हूँ?"

सुफला—"प्रधानजी! आज दरबारमें जो कुछ हुआ वह तो अपने देखा ही। अब बतलाइए कि इसके प्रतिकारके लिए आपने कौनसा उपाय सोचा है?"

सज्ज०—"श्रीमती! जहाँतक मैं समझता हूँ, कदाचित् महाराजको कुछ मति-भ्रम हो गया है। महाराज बराबर अनेक प्रकारके कृत्य किया करते थे पर आजकेसे विचार उनके और कभी सुननेमें नहीं आये थे। मैं तो यही उचित समझता हूँ कि अभी दो चार दस दिन हम लोग शान्त रहें और तब समय देखकर महाराजको कुछ समझावें बुझावें।"

सुफ०—"नहीं, प्रधानजी, इस प्रकार काम न चलेगा। ढाँड़ेरके राज्य और राजवंशकी रक्षाके लिए हम लोगोंको इस समय एक कपट-प्रबन्ध करना पड़ेगा और उसीमें सहायता देनेके लिए मैंने आपको इस समय बुलाया है।"

सज्ज०—"अच्छी बात है। मुझे श्रीमती जो आज्ञा देंगी वह मैं करनेके लिए सदा तैयार हूँ।"

सुफ०—“ प्रधानजी ! आप इसी समय विजयाको अपने साथ लेकर ओड़छे चले जायँ । बाहर आप दोनोंके लिए दो घोड़े खड़े हैं । उन्हींपर सवार होकर आप दोनों तुरन्त ओड़छेका रास्ता लें । ”

सज्ज०—“ क्या श्रीमतीकी यह इच्छा है कि मैं राजकुमारीको ले जाकर ओड़छेमें रानी हीरादेवीके आश्रयमें रख आऊँ ? लेकिन इस युक्तिसे भी तो काम न चलेगा; क्योंकि रानी हीरादेवी—”

सुफ०—“ प्रधानजी, पहले आप मेरी बात पूरी तरहसे सुन लें । आप विजयाको लेकर हीरादेवीके पास जायँ । वे आपको पहचानती ही हैं । आप जाते ही उनसे एकान्तमें मिलिएगा और कहिएगा कि रानी सुफलादेवीकी इच्छा थी कि विजयाका विवाह छत्रसालके साथ कर दिया जाय और ढाँड़ेरका सारा राज्य उन्हींको दे दिया जाय । इसी लिए महाराजने मुझे विजयाके साथ आपके पास भेजा है और कहा है कि यदि गुप्त रीतिसे विजयाका विवाह छत्रसालके साथ हो जायगा तो वही ढाँड़ेर-राज्यके उत्तराधिकारी हो जायँगे । इसलिए महाराज चाहते हैं कि विजयाका विवाह युवराज विमलदेवके साथ हो जाय । विजया और विमलदेवकी जोड़ी बहुत अच्छी है । यदि अभी इन दोनोंका विवाह हो जायगा तो ढाँड़ेर राज्य परसे यह आपत्ति टल जायगी और छत्रसालको ढाँड़ेरका राज्य न मिल सकेगा । आप उससे यह भी कह दीजिएगा कि महाराजने मुझे विमलदेवके साथ विजयाका विवाह कर देनेका पूरा अधिकार देकर भेजा है । उस दशामें वह तुरन्त ही विवाहका सब प्रबन्ध करके विजयाका पाणिग्रहण करा देगी । जहाँ तक हो सके, आप उसे इस बातकी आशंका कराके विवाह शीघ्र करा दीजिएगा कि कहीं छत्रसाल आकर इस विवाहमें बाधा न डाल दे । बस इतनेसे ही सब काम हो जायगा । ”

सज्जनरायकी समझमें रानी सुफलादेवीकी एक बात न आई । वे हक्केबक्केसे खड़े सब सुनते रहे । सुफलादेवीकी बात समाप्त होनेके बहुत देर बाद तक भी जब वे कुछ न बोले तब सुफलादेवीने फिर कहा,—

“ प्रधानजी ! क्या मेरी युक्ति आपको पसन्द नहीं आई ? अथवा आप इतने बड़े राज्य और अपने स्वामीके कल्याणके लिए थोड़ासा झूठ बोलनेके लिए तैयार नहीं हैं ? यदि आप मेरा बतलाया हुआ इतना काम कर देंगे तो विश्वास रखिए कि ढाँड़ेरका राज्य कभी यवनोंके हाथमें न जायगा । ”

सज्ज०—" श्रीमती ! मीठे फल पानेके लिए बड़े बड़े कँटीले पेड़ों तक जाना पड़ता है । आरोग्यता प्राप्त करनेके लिए विषके समान कड़वी दवाइयाँ खानी पड़ती हैं । उसी प्रकार अत्यन्त न्याय्य, पवित्र और सत्यपक्षको विजयी करनेके लिए भी कभी कभी असत्य या अन्यायकी सहायता लेनी पड़ती है । इस समय भी वैसा ही प्रसंग है । मैं आपका आज्ञापालन करनेके लिए हर तरहसे तैयार हूँ । लेकिन इस बातको आप सोच लें कि राजकुमारीका विवाह विमलदेवके साथ होना भी ठीक न होगा । उस समय सारा ढाँड़ेर हीरादेवीके चंगुलमें फँस जायगा और यह भी कुछ कम बुरा न होगा । "

सुफ०—" नहीं, आप इस बातकी चिन्ता न करें । वास्तवमें विजयाका विवाह छत्रसालके साथ ही होगा । मैं अपने राज्यको कभी हीरादेवीके चंगुलमें न जाने दूँगी । "

सज्जनरायका आश्चर्य और भी बढ़ गया । उन्होंने चकित होकर पूछा, "भला, जब एक बार विजयाका विवाह विमलदेवके साथ हो जायगा तब फिर छत्रसालके साथ उसका विवाह क्योंकर हो सकेगा ? "

सुफ०—" प्रधानजी ! इसमें एक भारी भेद है, जो मैं आपको बतलाए देती हूँ । ओड़छेके राजा विमलदेव पुरुष नहीं बल्कि वास्तवमें स्त्री हैं । पुत्रके अभावके कारण कहीं अपना राज्य महेवाके राजाओंके अधिकारमें न चला जाय, इस आशंकासे हीरादेवीने अपनी कन्या विमलाको पुत्र विमलदेवके रूपमें रक्खा है । हीरादेवीको दृढ विश्वास है कि उसका यह छल कोई नहीं जानता । शीघ्र ही वह बहुत ठाठ बाटसे विमलदेवका राज्याभिषेक करनेवाली है । इससे पहले ही विजया और विमलदेवका विवाह हो जाना चाहिए । इस विवाहसे विजयाका कौमार्य्य भंग न होगा । दो कुमारियोंका परस्पर विवाह वास्तवमें विवाह ही नहीं है । जब छत्रसाल बुन्देलखंडमें स्वतंत्रता स्थापित करके रणदूलहखाँको मार भगावेंगे तब विजयाका विवाह उनके साथ कर दिया जायगा । अब तो आप सब बातें अच्छी तरहसे समझ गये न ? "

प्रधान सज्जनरायका अब अच्छी तरह समाधान हो गया और वे बहुत प्रसन्न दिखाई पड़ने लगे । वे विजयाको अपने साथ लेकर ओड़छेकी ओर चल पड़े । मार्गमें उन्हें विजयासे मालूम हो गया कि विमलदेवके स्त्री होनेका समाचार उसीने सुफलादेवीको दिया था ।

थोड़ी देर बाद रानी सुफलादेवीने एक पत्र अपने एक विश्वसनीय नौकरको दिया और उसे प्राणनाथ प्रभुको ढूँढ़कर देनेके लिए कहा । वह भी पत्र लेकर प्राणनाथ प्रभुकी तलाशमें चल पड़ा ।

\+ \+ \+ \+

बाईसवाँ प्रकरण ।
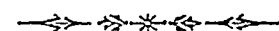
शापादपि शरादपि ।

अनन्त विश्वके मध्य भागमें जिस प्रकार भगवान् अंशुमाली सुशोभित होते हैं, अनन्त तारकाओंमें जिस प्रकार रजनीनाथ तेजस्वी जान पड़ते हैं अथवा तेतीस करोड़ देवताओंके समुदायमें जिस प्रकार भगवान् चतुर्भुज ही ओड़छेके नागरिकोंको सबसे अधिक पूज्य जान पड़ते हैं, उसी प्रकार असंख्य मनुष्योंके समुदायमें प्राणनाथ प्रभु आज अलौकिक तेजसे सुशोभित हो रहे थे । ओड़छेके दीवानखानेमें बैठकर रणदूलहखाँने हुक्म दिया था कि आज तीसरे पहर चतुर्भुजविष्णुकी मूर्ति तोड़ डाली जाय, कल तक उनका मन्दिर बिलकुल ढा दिया जाय और जहाँतक शीघ्र हो सके उसी स्थानपर एक बढ़िया मसजिद तैयार की जाय ! यह सुनते ही ओड़छेके नागरिक बहुत दुःखी और सन्तप्त हुए, चिढ़ गये और अन्तमें अत्याचारी यवन अधिकारियोंपर गालियाँ और शापोंकी वर्षा करने लगे; लेकिन उन्हें प्रतिकारका कोई मार्ग दिखाई न पड़ता था । ओड़छा नगरके बाकी सभी छोटे बड़े मन्दिर ढा दिये गये थे; तथापि सब लोगोंको इस बातका दृढ़ विश्वास था कि चतुर्भुजके मन्दिरकी यह दशा न की जायगी । पर अन्तमें जब उन्हें यह मालूम हुआ था कि वह मन्दिर भी गिरा दिया जायगा तब उन्हें असह्य दुःख हुआ । उन्हें कुछ भी न सूझ पड़ता था कि इस समय क्या करें और क्या न करें । रानी हीरादेवी अपने पुत्र विमलदेवके विवाहके प्रबन्धमें लगी हुई थी । उसे इस बातकी चिन्ता ही नहीं थी कि मेरी राजधानीमें कैसा अनर्थ हो रहा है । इसलिए बड़ी कठिनतासे नगरके कई प्रतिष्ठित निवासी रानी हीरादेवीके पास गये और उससे प्रार्थना करने लगे कि जिस प्रकार हो सके रणदूलहखाँकी आज्ञाका पालन न होने दिया

जाय और भगवान् चतुर्भुजका मन्दिर नष्ट होनेसे बचा लिया जाय । लेकिन हीरादेवीने उन लोगोंसे कह दिया कि एक तो मैं अभी ब्याहके झमेलेमें हूँ और दूसरे रणदूलहखाँ या शाहंशाह औरंगजेबकी आज्ञाके विरुद्ध कोई प्रयत्न करना ठीक नहीं होगा; अभी रणदूलहखाँको मनमानी कर लेने दो, उसके चले जाने पर फिर नए मन्दिर बन जायँगे । बस इतनी ही बातचीतके बाद उन नागरिकोंको छुट्टी मिल गई । इस कारण ओड़छेके नागरिकोंकी निराशा परमावधिको पहुँच गई थी । उन्हें कोई योग्य सहायक या मार्गदर्शक दिखाई न पड़ता था । सूर्योदयके समयसे ही झुण्डके झुण्ड लोग चतुर्भुज परमात्माके अन्तिम दर्शन करनेके लिए मन्दिरकी ओर जाने लगे । सारे नगरमें दुःखका रोना, शोककी ध्वनि, संतापके उद्गार और आत्म-निन्दाके वचन सुनाई पड़ने लगे । उस दिन नागरिकोंने अन्न-ग्रहण न किया । सब लोगोंको यह दुःखदायक भावना असह्य वेदना देने लगी कि थोड़ी ही देर बाद हमें परम दयाघन चतुर्भुज परमात्माके दर्शन न हो सकेंगे । इतनेमें सब तरफ शोर मच गया कि प्राणनाथ प्रभु आ गये । ओड़छेके प्रत्येक निवासीके मनमें आशा-तन्तु उत्पन्न हो आया । सब लोग यह देखनेके लिए मन्दिरतक पहुँचने लगे कि अब प्रभु क्या करते हैं । थोड़ी ही देरमें प्राणनाथप्रभुके सामने असंख्य मनुष्योंकी भीड़ लग गई ।

प्राणनाथप्रभु एक ऊँचे आसनपर खड़े होकर उच्च स्वरसे बोलने लगे । उस समय सुननेवालोंको ऐसा जान पड़ने लगा कि हम लोगोंपर अमृतकी बूँदोंकी वर्षा हो रही है । इतना बड़ा समुदाय था, पर सब लोग एकाग्रचित्त होकर प्राणनाथप्रभुका उपदेशामृत ग्रहण करने लगे । प्रभु कहने लगे,—

" सज्जनो ! जबसे स्वतंत्रतादेवीके परम भक्त और उपासक महेवाके राजा चम्पतराय वीरगतिको प्राप्त हुए, तबसे बुन्देलखण्डकी प्रजाके मनमें स्वातंत्र्य-प्रेमका बीज बोनेके लिए मैं सारे देशमें घूम रहा हूँ । पहले मैंने समझा था कि इस काममें बहुत परिश्रम करना पड़ेगा और बहुत समय लगेगा । पर ज्यों ज्यों मैं प्रवास करने लगा, ज्यों ज्यों मुझे जन-साधारणके आन्तरिक भावोंका पता लगता गया, त्यों त्यों बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताका दिन मुझे पहले जितना दूर जान पड़ता था उतना ही वह समीप जान पड़ने लगा । गाँवके गरीब खेतिहरोंसे लेकर शहरके करोड़पतियोंतक, रंकसे लेकर रावतक मैंने सबके मनकी स्थितिका पता लगाया । तब मुझे मालूम हो गया कि सब लोग स्वतंत्रताके

इच्छुक हैं। स्वतंत्रता चाहते तो सब हैं पर स्वतंत्रताका वास्तविक ज्ञान बहुत ही थोड़े लोगोंको है। इसी लिए सारे बुन्देलखण्डमें यवनोंको मनमाना उत्पात करनेका अवसर मिला है। वास्तवमें सब लोग यही चाहते हैं कि अपने धर्म्मका भली भाँति प्रतिपालन करें, अपने तीर्थों और धार्मिक भावोंकी पवित्रताकी रक्षा करें, हमारे साथ अत्याचार और अन्याय न हो, हमपर अनुचित कर न लगें, हम लोगोंका दिया हुआ उचित कर हमारे हितके कामोंमें लगे, हमें राज-कार्य्योंमें सम्मति देनेका पूरा पूरा अधिकार मिले, आदि आदि। लेकिन यह बात बहुत ही कम लोग जानते हैं कि ऐसी सुविधायें केवल स्वतंत्रतासे ही मिल सकती हैं। स्वतंत्रताके फलोंसे तो सब लोग परिचित हैं, पर यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि वे फल किस वृक्षमें लगते हैं। दुष्ट और पातकी लोग सर्वसाधारणको समझाते हैं कि परतंत्रताके विषवृक्षमें स्वतंत्रताके सुन्दर फल लगते हैं; इस लिए स्वतंत्रताके मधुर फलोंकी इच्छा रखनेवाले लोग भूलसे स्वतंत्रताके वृक्षपर ही कुल्हाड़ी चलाते हैं और इस प्रकार अपने नाशका कारण बनते हैं। जब तक देश दासत्वमें फँसा हुआ है तब तक यह अन्याय और अत्याचार किस प्रकार नष्ट हो सकता है ? जब तक देश दासताके घोर नरकमें डूबा हुआ है तब तक अधिकारियोंके अत्याचारों और कुकर्मोंका किस प्रकार अन्त हो सकता है ? जब तक देश यवन-सेवामें लगा हुआ है तब तक दुष्काल, दरिद्रता और विपन्नावस्था कैसे दूर हो सकती है ? जब तक देश यवनोंके अधिकारमें है तब तक उच्च भावनाओं, उच्च मनोविकारों और उच्च तत्त्वोंका जनताके मनसे कैसे स्पर्श हो सकता है ? जब तक बुन्देलखंडको धर्मान्ध और अत्याचारी औरंगजेबके चंगुलसे न छुड़ा लिया जाय तब तक हमारे देव मन्दि-रोंकी कैसे रक्षा हो सकती है ? सज्जनो ! क्या प्रार्थना करने, याचना करने, भीख माँगने और क्षुद्रता स्वीकार करनेसे कभी आजका अनर्थ टल सकता है ? वीर बुन्देलो ! क्या तुम्हें अपनी इस नामर्दीके कारण लज्जा नहीं मालूम होती ? जिन हाथोंमें अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय देव-मन्दिरोंकी रक्षा करनेके लिए तलवार पकड़नेकी शक्ति नहीं उन हाथोंमें चूड़ियाँ पहनाई जानी चाहिए। जो मन अपने परम-पूज्य मन्दिरोंकी रक्षा करनेके लिए उद्विग्न न हो वह मन मर्दोंके शरीरमें नहीं बल्कि औरतोंके शरीरमें रहने योग्य है। जिस नगरमें प्रतापशाली रुद्रप्रतापने स्वतंत्रतादेवीकी उपासना की, उस नगरमें ऐसा दुःखकारक प्रसंग

हो ? सज्जनो ! यदि आज बुन्देलखंडमें स्वराज्य होता तो क्या कभी ऐसा अपमानकारक प्रसंग आ पड़ता ? यदि बुन्देलखंडमें स्वतंत्रता होती तो क्या यवनोंको इस प्रसार आसुरी दृष्टिसे हम लोगोंके मन्दिरोंकी ओर देखनेका साहस होता ? यदि आप लोगोंने परलोकवासी चम्पतरायके प्रयत्नमें सहायता दी होती तो क्या रणदूलहखाँकी इतनी मजाल थी कि वह इस आसुरी स्फूर्तिसे बुन्देलखण्डकी पवित्र भूमिपर पैर रखता ? आप लोग वहुत सोये, अव चैतन्य होइए ! अपने धर्म्म और देवमन्दिरकी रक्षा कीजिए ! नहीं तो थोड़ी ही देरमें धर्म्मान्ध यवन मार्गमें पड़नेवाले प्रत्येक बुन्देलेके प्राण लेते हुए इस पवित्र स्थानतक पहुँच जायँगे और इसे तहस नहस कर डालेंगे। थोड़ी ही देरमें परमात्मा चतुर्भुजकी मूर्तिपर पुष्पोंकी वर्षाके वदले फावड़ों और कुदालोंका प्रहार होने लगेगा। थोड़ी ही देरमें रणदूलहखाँके पैरोंकी ठोकरें—हाय वह दुर्निवार प्रसंग देखनेकी अपेक्षा जहाँके तहाँ मर जाना ही कहीं अच्छा है !”

प्राणनाथप्रभु शोकाकुल अन्तःकरणसे थोड़ी देर तक चुपचाप खड़े रहे। उस समय उनके सामने खड़े हुए असंख्य मनुष्योंकी आँखोंसे आँसुओंकी अविरल धारा वहती थी। उस समुदायमें कुछ लोग क्रूर भी होंगे और कुछ कपटी भी, कुछ अनाचारी भी होंगे और कुछ विश्वासघातक भी, कुछ दगावाज भी होंगे और कुछ गुलामीमें ही सुख माननेवाले भी, कुछ दयालु भी होंगे और कुछ धर्म्मात्मा भी, कुछ सदाचारी भी होंगे और कुछ परोपकारी भी, कुछ सुशील भी होंगे और कुछ स्वतन्त्रताप्रेमी भी; पर उस समय उन सभी लोगोंके मनमें धर्म-प्रेमकी एक ही ज्योति जल रही थी। यह देखकर प्राणनाथप्रभुने गद्गद स्वरसे कहा,—

“भारतवर्षके आर्योंके मन सदा मोक्ष-सुखकी ओर ही लगे रहते हैं, इसी लिए हम लोग अपने आचार-विचार, रुचि-अरुचि और प्रेमद्वेष आदिको अलग रखकर धर्म्म-प्रेमके एक ही झण्डेके नीचे खड़े हो सकते हैं। लेकिन उनका राष्ट्रोद्धारके एक ही झण्डेके नीचे खड़ा न होना जितना दुःखकारक है उतना ही आश्चर्यजनक भी है। राष्ट्रोद्धारसे ऐहिक सुखोंकी वृद्धि होती है। ऐसे प्रत्यक्ष ऐहिक सुखको छोड़कर परलोकके कल्पित मोक्ष-सुखकी ओर न जाने क्यों लोगोंकी अधिक प्रवृत्ति होती है। प्रत्यक्ष सुखको भासात्मक समझकर मृग-जलकी तरह अप्रत्यक्ष सुखकी अपेक्षा हम लोग क्यों करते हैं ? अप्रत्यक्ष सुखकी प्राप्तिके

लिए हम लोग जिस प्रकार एक हो सकते हैं, उसी प्रकार प्रत्यक्ष सुखकी प्राप्तिके लिए भी हम लोग क्यों न एक हो जायँ ? वह समय अवश्य आवेगा और बहुत शीघ्र आवेगा। मोक्ष-सुखकी प्राप्ति और धर्म-प्रेमके लिए एक हो जानेवाले लोगोंका राष्ट्रोद्धारके लिए मिलकर एक हो जाना असम्भव नहीं है। जो लोग नदीके उस पारतक जा सकते हैं उनके लिए बीच धारातक जाना कोई बड़ी बात नहीं है। सज्जनो! संसारका कारबार चलानेमें तुम लोगोंमें तरह तरहके जो विरोध खड़े हो गये हैं उन सबको भूलकर तुम लोग जिस प्रकार चतुर्भुज परमात्माके मन्दिरकी रक्षाके लिए एकत्र हुए हो उसी प्रकार तुम लोगोंको बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताके लिए भी एक हो जाना चाहिए। अब तक जिन जिन देशोंमें मुसल्मानोंका अधिकार हुआ है उन उन देशोंकी प्रजा बराबर अधर्मकी ओर ही प्रवृत्त होती गई है, उनके धर्म्मका बराबर धीरे धीरे नाश ही होता गया है और वह प्रजा बराबर नष्ट होती गई है। अतः अपना आस्तित्व बनाये रखनेके लिए और धर्म्मको रक्षित करनेके लिए हम लोगोंको स्वतन्त्र होनेका प्रयत्न करना चाहिए। आज तो भगवान् चतुर्भुजकी मूर्ति और मन्दिरका ही विध्वंस होता है, कलको कोई इससे भी भयंकर कार्य्य होगा। एक हाथमें कुरान और एक हाथमें तलवार लेकर शीघ्र ही धर्मान्ध मुसलमान सारे बुन्देलखण्डमें धमाचौकड़ी मचाने लगेंगे। आज जबरदस्ती तुम्हारे रिश्ते नातेके और भाईबन्द मुसलमान बनाये जा रहे हैं, कलको स्वयं तुम भी मुसलमान बनाये जाओगे। इस लिए उचित है कि तुम लोग इन सब बातोंका विचार करो और स्वतन्त्रतादेवीका जयजयकार मनाकर मुसल्मानोंको दिखला दो कि तुममें इतनी वीरश्री है जो तुम्हारी कीर्ति अनन्त कालतक बनाये रक्खेगी।"

इसपर एक युवक नागरिकने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा,—"प्रभो! यदि आप आज्ञा दें तो हम लोग आज ही भगवान चतुर्भुजका मंगलमय नाम लेकर यवन-सत्ताको जड़से उखाड़ कर फेंक दें और अपने पवित्र देश, धर्म्म और देवस्थानोंकी रक्षा करें।"

प्राणनाथ प्रभुने ओड़छेके नागरिकोंकी ओर दृष्टि फेरते हुए पूछा,—"स्वतंत्रताके लिए लड़नेको कौन कौन तैयार हैं?" उस समय स्वतन्त्रतादेवी विंध्यवासिनी और भगवान् चतुर्भुजके जयजयकारसे आकाश गूँज उठा। सब लोगोंने

मानो प्राणनाथप्रभुको बतला दिया कि हम लोग यवनसत्ताके विरुद्ध लड़नेके लिए तैयार हैं।

उस समय प्रभुने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—"जहाँ जहाँ मैं गया वहाँ वहाँ मुझे यही उत्तर मिला। आज अखिल बुन्देलखंड मन, वचन और कर्मसे स्वतंत्रताकी प्राप्तिके लिए लड़नेको तैयार है। इससे यह बात स्पष्ट जान पड़ती है कि बहुत शीघ्र इस देशसे यवनोंका अधिकार उठ जायगा। बुझनेसे पहले जिस प्रकार एक बार दीपकका प्रकाश बढ़ जाता है, अथवा मरनेसे थोड़ी देर पहले जिस प्रकार आसन्न-मरण मनुष्यके चेहरे पर कुछ तेज आ जाता है उसी प्रकार यवनसत्ता भी इस समय कुछ प्रबल हो गई है। यवनोंका कठोर और विकट अधिकार, उनकी धमानुषी धर्मान्धता और अत्याचार तथा दिन पर दिन बढ़ती हुई साम्राज्य-लालसा यह बात प्रकट कर रही है कि उनकी सत्ताका बहुत ही शीघ्र ह्रास होगा। वैभवके सबसे ऊँचे शिखरपर आनन्द करनेवाले काल-वशात् अपमान और अवनतिके गहरे गड्ढेमें गिर पड़ते हैं। अपने ऐश्वर्यका घमंड करनेवाले लोग शीघ्र ही दरिद्र हो जाते हैं। जो लोग अनुचित रूपसे अपना अधिकार दिखलाते हैं उन्हें शीघ्र ही दूसरे प्रबल सत्ताधारीकी सेवा करनी पड़ती है। रहटकी मालामें बँधी हुई भरी हाँड़ियाँ धीरे धीरे खाली होती हैं और खाली हाँड़ियाँ धीरे धीरे भरती जाती हैं। इस समय मुसलमान ऐश्वर्य और अधिकारके सबसे ऊँचे शिखरपर पहुँच गये हैं और बुन्देलोंके वैभवका कलश बिलकुल खाली हो गया है। वह फिरसे भरा जानेके लिए कुएमें बहुत नीचे, पानीके बहुत ही पास पहुँच गया है। शीघ्र ही यवनसत्ताका अधःपतन होने लगेगा, उसके वैभवकी हाँड़ियाँ खाली होने लगेंगी और हमारे वैभवका कलश भरकर ऊपरकी ओर उठने लगेगा। सज्जनो! शीघ्र ही ऐसा प्रबन्ध हो जायगा कि जिसमें यवन हमारे पवित्र देवमान्दिरोंको स्पर्श तक न कर सकें, हमें जबरदस्ती मुसलमान न बना सकें और हम लोग स्वतंत्रतापूर्वक अपने धर्म्मका पालन कर सकें। स्वतंत्रता-प्रेमी बुन्देलोंके नेता शीघ्र ही विजयी होंगे। परतंत्रताराक्षसी और स्वतंत्रतादेवीका भीषण युद्ध होगा और बुन्देलखंड अपने नैसर्गिक और ईश्वर-दत्त अधिकार प्राप्त करेगा।"

कई नागरिकोंने अधीर होकर कहा,—"प्रभो! हम लोगोंने दृढ़ निश्चय कर लिया है कि बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके लिए लड़ेंगे; लेकिन इस समय आप वह

उपाय वतलाइए जिससे भगवान् चतुर्भुजकी मूर्ति और मन्दिरकी रक्षा हो। आप हमें वह युक्ति वतलाइए जिससे हमारे देव-मन्दिर विध्वंस होनेसे वचें। हम लोग अपने प्राणोंकी भी परवा न करके वह उपाय करेंगे।"

इसपर एक युवक नागरिक वोल उठा,—"यदि आप विधर्मी यवनों पर तलवार चलानेके लिए कहें तो जव तक यहाँके उपस्थित वुन्देलोंमेंसे एकके भी शरीरमें प्राण रहेंगे और जव तक मन्दिरका सारा आँगन लहूसे भर न जायगा, तव तक रणदूलहखाँ या उसका कोई सिपाही मान्दिरमें प्रवेश न कर सकेगा।"

एक दूसरे नागरिकने आवेशमें आकर कहा,—"स्वतंत्रताका युद्ध आजसे ही आरम्भ होने दीजिए। भगवान् चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षासे ही स्वतंत्रताके युद्धका मंगलमय आरम्भ होने दीजिए, इसका अन्त भी परम मंगल-कारक ही होगा; हम अवश्य विजय प्राप्त करेंगे।"

प्राणनाथ प्रभुने गम्भीर होकर कहा,—"मैं आज ही युद्ध आरम्भ करनेकी सलाह तुम लोगोंको कभी न दूँगा। इस समय सारे वुन्देलखंडमें लोग यवन-सत्ताको नष्ट करनेके लिए हाथमें तलवार लिये तव तरहसे तैयार हैं। जहाँ जहाँ मैंने लोगोंको उपदेश दिया वहाँ वहाँ लोगोंने इसी प्रकार अधीर होकर मुझसे प्रश्न किये और स्वावलंवनके लिए तत्परता दिखलाई, लेकिन सभी जगह मुझे यही कहना पड़ा कि तुम लोग कुछ समय तक और ठहरो; जव तक तुम लोगोंका नेता लौटकर वुन्देलखंडमें न आ जाय तवतक धीरज धरो। महेवाके छत्रसाल ही तुम लोगोंके नायक और पथ-प्रदर्शक होनेके लिए सव प्रकारसे योग्य हैं। लेकिन इस समय वे यहाँ नहीं हैं। इसी सम्वन्धके एक महत्त्वपूर्ण कार्य्यके लिए वे दक्षिण गये हैं। वह कार्य्य करके वे शीघ्र ही लौट कर यहाँ आ जायँगे। तव तक तुम लोगोंको यह सव अपमान सहकर चुपचाप वैठे रहना चाहिए।"

ओड़छेके नागरिकोंको जितना आनन्द यह सुनकर हुआ कि चम्पतरायके पुत्र छत्रसाल स्वतंत्रताप्राप्तिके कार्य्यमें हम लोगोंके नायक होंगे उतना ही उद्वेग और दुःख उन्हें यह जानकर हुआ कि अभी हम लोगोंको चुपचाप वैठे रहना पड़ेगा और भगवान् चतुर्भुजका मन्दिर अपनी आँखोंसे नष्ट होता हुआ देखना पड़ेगा। उनमेंसे कुछ लोग असन्तुष्ट होकर वोले,—

"प्रभो! कृपा कर आप हम लोगोंको चुपचाप वैठे रहनेका उपदेश मत दीजिए। हमारे शरीरमें जवतक एक वूँद भी रक्त रहेगा, तवतक हमारी शक्ति

ऐसा उपाय करनेमें ही लगी रहेगी जिसमें मुसलमानोंका मन्दिरमें प्रवेश न हो। वह देखिए। सामनेसे धर्मान्ध यवन असुर शस्त्रोंसे सुसज्जित होकर इसी ओर चले आ रहे हैं! बोलो, श्री चतुर्भुजमहाराजकी जाय!"

रणोत्साह-पूर्वक गरजते हुए ओड़छेके नागरिक रणदूलहखाँ और उनके सैनिकों-पर आक्रमण करनेके लिए तैयार हो गये। उनकी यह तैयारी देखकर प्राणनाथ-प्रभु वहुत ही चिन्तित हुए। उन्होंने कहा,—"ठहरो! ठहरो! ऐसा अविचार न करो। इन सशस्त्र यवनसैनिकोंके सामने तुम लोग न ठहर सकोगे। याद रक्खो तुम लोग निःशस्त्र हो। यह भी मत भूलो कि तुम लोगोंका कोई नेता या मार्ग-दर्शक नहीं है। व्यर्थ अपने प्राण देनेके लिए तैयार मत हो। पहले यह समझ लो कि तुम्हारे इस अविचारका दुष्परिणाम केवल ओड़छा नगरीको ही नहीं वल्कि सारे बुन्देलखंडको भोगना पड़ेगा, और तव आगे पैर बढ़ाओ।"

लड़-भिड़कर मुसलमानोंको मन्दिरमें घुसनेसे रोकनेके लिए जो लोग तैयार हुए थे वे प्रभुके आज्ञानुसार बड़े ही कष्टसे चुपचाप जहाँके तहाँ खड़े रह गये। उन्हें कुछ चिन्तित और कुछ शान्त देखकर प्रभुने कहा,—

"सज्जनो! यह वात ठीक है कि आज तुम लोगोंपर वड़ा भारी अत्याचार हो रहा है; लेकिन यही अत्याचार तुम्हारे अशुद्ध मनको पश्चात्तापकी आगसे तपाकर उज्ज्वल करेगा और धर्म्म तथा राष्ट्रसम्बन्धी कर्त्तव्योंका पालन करनेके लिए उसे उत्साहित करेगा।"

प्राणनाथप्रभु यह वात कह ही रहे थे, इतनेमें वहुतसे यवन सैनिक वहाँ आ पहुँचे और स्वतन्त्रतापूर्वक इस आशासे इधर उधर घूमने लगे कि इतने उपस्थित लोगोंमेंसे कोई हम लोगोंका प्रतिवन्ध, प्रतिकार या विरोध करेगा और तव हम लोगोंको सारे नगरमें लूटपाट करने और उत्पात मचानेका अच्छा अवसर मिलेगा। जिस स्थानपर स्वयं कभी विना शुद्ध और पवित्र हुए न जाते थे, जिस स्थानको स्वयं विना स्नान किये कभी स्पर्श न करते थे, उसी स्थानपर शरावमें वेहोश यवनोंको जूते पहने घूमते देखकर ओड़छेके प्रत्येक नागरिकका मन तलमलाने लगा। अपने पवित्र मन्दिरका यह अपमान उनसे सहा न जाता था। उनके चेहरेपर क्रोध, सन्ताप और जोशके स्पष्ट प्रतिविंव दिखाई पड़ते थे। उनके होंठ फड़कने लगे, उनकी आँखें लाल हो गईं, उनके हाथोंकी मुट्ठियाँ ऐंठने लगीं। इन सव वातोंको देखकर प्राणनाथप्रभुने कहा,—

"सज्जनो! धैर्य्य धरो! धैर्य्य धरो! यह अवसर यवनोंपर आक्रमण करनेका नहीं है। अपनी वीरता और आवेशका व्यर्थ नाश मत करो। शीघ्र ही बुन्देल-खण्डको तुम्हारे इस रणोत्साह और आवेशकी आवश्यकता पड़ेगी। शीघ्र ही वह समय आवेगा जब कि युद्धमें लड़कर मरनेवालेका जीवन ही सार्थक समझा जायगा। अभी बुन्देलखण्ड पूरी तरहसे तैयार नहीं है। विश्वास रक्खो कि यदि तुम लोग अभी यवनोंसे भिड़ जाओगे तो विजय-श्री तुम लोगोंकी तरफ झाँकेगी भी नहीं, अभी तुम लोग शान्त रहो। तुम्हारे इस निष्कारण आत्म-यज्ञसे भगवान् चतुर्भुज प्रसन्न न होंगे।"

इतनेमें एक मत्त यवन-सैनिकने आगे बढ़कर बड़े ही उजड्डपनसे प्राणनाथप्रभुसे कहा,—"अरे ओ! तू कौन है और क्यों तूने यहाँ इतनी भीड़ लगा रक्खी है? तू बड़ा भारी बागी मालूम होता है और लोगोंको शाहंशाह आलमके बरखिलाफ भड़काता है। सच सच बतला तू कौन है और अभी इन लोगोंसे क्या कह रहा था?"

प्राणनाथप्रभु एक शब्द भी न बोले। वे गम्भीरता और शान्तिपूर्वक खड़े रहे।

प्रभुका वह गम्भीर और शान्त भाव देखकर वह यवन सैनिक मन ही मन बहुत कुढ़ा और तलवार खींचकर यह कहता हुआ उन्हें मारनेके लिए आगे बढ़ा—"ओ कम्बख्त! मैं तुझसे सवाल करता हूँ और तू चुप रहकर मुझे अपनी शेखी दिखलाता है? ठहर! मैं तुझे इस शेखी, शरारत और बगावतका कैसा मजा चखाता हूँ।"

इसपर प्राणनाथप्रभुने गम्भीरता-पूर्वक कहा,—

"जबतक बुन्देलखण्डसे मुसल्मान निकल न जायँ, जबतक यह देश स्वतन्त्र न हो जाय, तबतक मैं कभी मर नहीं सकता। तू मेरे पास मत आ, वहीं दूर खड़ा रह। तेरे जैसे नीच शराबियोंको मैं नहीं छूता। (डपटकर) तू दूर ही खड़ा रह।"

प्राणनाथप्रभुकी बातोंमें न जाने कौनसा जादू भरा था जिससे वह यवन सचमुच दो कदम पीछे हट गया। उसे पीछे हटते देखकर ओड़छेके निवासि-योंने प्राणनाथप्रभुका प्रचण्ड जयजयकार किया। इसपर उस यवनने जो वास्त-

वमें स्वयं रणदूलहखाँ था, कुछ चिढ़कर अपने ही पास खड़े हुए एक आदमीसे कहा,—

"ओ कासिम! देख, इस बागीकी खबर लेनेके लिए फिदाईखाँ अपनी फौज लेकर आता होगा। तू फौरन् जा और उसे अपने साथ लेकर जल्दी आ। उससे कह देना कि बागी गोसाई परानननाथ पकड़ा गया। जा जल्दी कर। (प्राणनाथप्रभुकी ओर मुड़कर) ओ गोसाई! तू फौरन इन लोगोंको यहाँसे हटा दे, नहीं तो मैं अभी तेरे सामने ही इन सबको कत्ल करवा दूँगा।"

ओड़छेके नागरिकोंसे प्राणनाथप्रभुका यह अपमान सहा न गया। वे रणदूलहखाँकी बोटी बोटी काटनेके लिए उसपर टूटना ही चाहते थे पर प्रभुने संकेत करके बड़ी कठिनतासे उन लोगोंको रोका, पर स्वयं उसकी बातोंका कोई उत्तर नहीं दिया।

थोड़ी ही देरमें बहुतसे हथियारबंद मुसलमान सिपाहियोंको साथ लिये हुए फिदाईखाँ वहाँ पहुँच गया। उसे देखते ही फिर बड़े क्रोधमें आकर रणदूलहखाँने प्राणनाथ प्रभुसे कहा,—

"ओ गोसाई! मैंने सुना है कि तू सारे बुन्देलखंडमें बगावत फैलाता फिरता है और लोगोंको शाहंशाह आलमके बरखिलाफ भड़काता है। इस लिए मैं चाहता हूँ कि तेरी जिन्दगीका खातमा कर दिया जाय।"

प्राणनाथप्रभुने बहुत ही शान्त भावसे कहा,—"लेकिन यह मैं तुझसे पहले ही कह चुका हूँ कि जब तक बुन्देलखण्डसे मुसलमानोंको बाहर न निकल दूँगा तब तक मैं नहीं मर सकता।"

रण०—"तेरी क्या मजाल जो तू मेरी मरजीके खिलाफ जीता बच सके। फिदाईखाँ! फौरन् इस नाबकारकी गरदन उड़ा दे।"

लेकिन प्राणनाथ प्रभुका तेजस्वी चेहरा देखकर फिदाईखाँको उनपर हाथ छोड़नेकी हिम्मत न हुई। उसने अपने एक सरदारकी ओर देखते हुए कहा,—"हैदरखाँ! तलवारके एक ही हाथसे इस गोसाईका सिर धड़से अलग कर।"

रणदूलहखाँने जो काम फिदाईखाँको सौंपा था, वही जब उसने हैदरखाँपर छोड़ दिया तब प्राणनाथ प्रभु मुस्करा पड़े।

प्रभुका मुस्कराता हुआ पर गम्भीर मुख देखकर हैदरखाँने अपने एक साथीसे कहा,—

" मुहम्मदखाँ ! वगलें क्यों झाँक रहे हो ? खाँ साहवका हुक्म वजा लाओ और इस काफिरकी गरदन भुट्टेकी तरह उड़ा दो । "

वेचारा मुहम्मदखाँ वहुत घवराया । वह किससे कहने जाता ? इस लिए लाचार होकर उसने हैदरखाँसे ही कहा,—

" क्या खूव ! आपकी मौजूदगीमें और मैं एक वागी काफिरकी गरदन उड़ाऊँ ? वल्लाह ! मुझसे तो यह गुस्ताखी हरगिज न होगी । आप जरा भी पसोपेश न करें और एक ही हाथ ऐसा चलावें कि इस वद-वख्तकी गरदन जमीनपर कलावाजियाँ खाती नजर आवे । "

हैदरखाँसे और कुछ तो करते धरते न वन पड़ा; उसने फिदाईखाँकी तरफ देखकर कहा,—

" जनाव ! ऐसे वड़े वड़े वागियोंको मारना आप ही जैसे सरदारों और सूरमाओंका काम है । ये वेचारे मामूली सिपाही कव ऐसी हिम्मतका काम कर सकते हैं ? "

इसपर फिदाईखाँ चुपचाप रणदूलहखाँका मुँह ताकने लगा । रणदूलहखाँने समझ लिया कि प्राणनाथपर हाथ चलाना मामूली काम नहीं है । इस वातसे यद्यपि वह मन ही मन वहुत कुढ़ा था, तथापि वह किसीसे कुछ कह न सका । उसने सोचा कि जिस आदमीपर हाथ चलानेकी खुद मेरी ही हिम्मत नहीं पड़ती उसे मामूली सरदार और सिपाही क्या मार सकेंगे । जवसे वह चम्पत-रायकी कैदसे छूटा था तवसे निरपराध हिन्दुओंकी गरदनें काटना ही उसने अपना सिद्धान्त वना लिया था । तलवारके एक ही एक वारसे उसने अवतक वहुतेरे हिन्दुओंके सिर काटे थे और इस कामका उसने वहुत अच्छा अभ्यास कर लिया था; पर तो भी प्राणनाथ प्रभुपर हाथ छोड़नेकी उसकी हिम्मत न होती थी और इसी लिए वह मन ही मन वहुत कुछ लज्जित भी हुआ था । वड़ी कठिनतासे उसने खूव हिम्मत की, होठोंको दाँतोंसे खूव कसकर दवाया, अपनी मुद्रा खूव उग्र की, सारे शरीरका वल एकत्र किया और आगे वढ़कर प्राणनाथप्रभुपर वार करनेके लिए हाथ उठाया । लेकिन प्राणनाथप्रभुने प्रति-

कारका कोई आयोजन न किया और वे शान्तभावसे पर्वतकी भाँति अटल होकर खड़े रहे। प्रभुका संकेत पाकर सब नागरिक भी ज्योंके चुपचाप खड़े रहे। ज्यों ही उसने हाथ उठाकर प्रभुपर वार करना चाहा त्यों ही एक ओरसे तीरकी तरह एक सुन्दरी बाला वहाँ आ पहुँची और रणदूलहखाँका हाथ पकड़कर बोली,—"रणदूलहखाँ! तुम यह क्या गजब कर रहे हो? तुम जानते नहीं, ये बुजुर्ग कौन हैं? खबरदार आइन्दः कभी ऐसा काम न करना।"

बहुत ही क्रोधमें आकर रणदूलहखाँने उस बालाका हाथ झटक दिया और कहा,—"ओ नादान! तू कौन है? क्यों तेरी शामत तुझे यहाँ खींच लाई है? चल, दूर हट। नहीं तो पहले यह तलवार तेरे ही खूनसे अपनी प्यास बुझाएगी।"

वह बाला हँसती हुई बोली,—"रणदूलहखाँ! जरा होशमें आओ। आँखें खोलकर पहले अच्छी तरह देख लो, मैं कौन हूँ; तब इस तरहकी फजूल बातें करना।"

इस समय नगरनिवासी समझ रहे थे कि प्रभुकी रक्षा करनेके लिए स्वयं कोई देवी चलकर आई है। प्राणनाथ प्रभुको भी यह जाननेकी बहुत उत्कंठा हुई कि मेरे लिए इतना कष्ट करके यहाँ आनेवाली यह बाला कौन है। सब लोग आश्चर्यसे उस सुकुमार बालाकी ओर देखने लगे।

रणदूलहखाँने उस बालाकी ओर देखकर कहा,—"मालूम होता है कि यह लड़की पागल हो गई है या कमसे कम इसे अपनी जान भारी पड़ी है। मैं फिर भी तुझसे कहता हूँ कि अगर तुझे अपनी जान प्यारी हो तो फौरन मेरे सामनेसे हट जा। नहीं तो एक ही हाथमें मैं तेरा काम तमाम कर दूँगा।"

बालाको कुछ अधिक आवेश आ गया। उसने तेज होकर कहा,—"ओ नाबकार! होशमें आ और आँखें खोलकर देख, मैं कौन हूँ। शाहजादी बदरुन्निसा तुझे हुक्म देती है कि तू फौरन् यहाँसे अपने सिपाहियोंको लेकर निकल जा।"

शाहजादी बदरुन्निसाका नाम सुनते ही रणदूलहखाँको मानो काठ मार गया। काटो तो खून नहीं। उसका चेहरा पीला पड़ गया और वह थर थर काँपता

हुआ हाथ जोड़कर शाहजादीके सामने खड़ा हो गया। मारे भयके उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। शाहजादीने उसे पैरोंसे ठुकराकर कहा,—

"पहले तू उन्हीं महात्मासे माफी माँग। अगर उन्होंने तुझे माफ कर दिया तो मैं भी तुझे माफ कर दूँगा।"

रणदूलहखाँने शाहजादीकी आज्ञाका यथावत् पालन किया। प्रभुने भी बड़ी प्रसन्नतासे उसे क्षमा कर दिया। जब वह अपने सिपाहियोंके साथ वहाँसे चलने लगा तब बदरुन्निसाने उससे कहा,—

"देखो! तुम शाहंशाह देहलीके नमकख्वार हो। तुम्हें कोई ऐसा काम न करना चाहिए जो हजरत सलामतकी बदनामीका बाइस हो। सलतनतका सारा दार-मदार रिआया और वह भी खास कर हिन्दू रिआयापर है। इसके अलावः हिन्दू हमेशहसे वफादार और सच्चे होते आये हैं। इनके साथ कभी कहीं जुल्म न करना। जहाँ इनके साथ अच्छा सलूक और उम्दः बरताव किया जायगा वहाँ ये पानीकी जगह अपना खून बहानेके लिए तैयार हो जायँगे। इन्हें सताना या इनके मजहबी मामलेमें दखल देना बड़ी भारी नादानी है। अगर इनके साथ अच्छा बरताव किया जायगा तो ये कभी तुम्हें किसी तरहकी तकलीफ न पहुँचावेंगे, हमेशह तुम्हारी मदद करेंगे और सलतनतमें अमन कायम रक्खेंगे। और अगर ये कहीं बिगड़ गये तो हिन्दुस्तानमें सलतनत-इसलामका खातमा ही समझना। साथ ही यह भी याद रखना कि जालिमपर खुदाका कहर पड़ता है। नाइन्साफी और जुल्म खुदाको कभी पसन्द नहीं है। तुम्हारे इन जुल्मोंसे हजरत-सलामतकी भी बदनामी होती है। खबरदार! आइन्दः कभी ऐसा काम न करना जिससे तुम दोनों जहानमें गुनहगार बनो। जाओ, अपना काम करो।"

रणदूलहखाँ अपने सिपाहियोंको साथ लेकर चुपचाप वहाँसे चल दिया। चलते समय उसने पहले शाहजादीको और तब प्राणनाथ प्रभुको कई बार झुककर फर्शी सलाम किया था। सब नगरनिवासी भी इस अकल्पित रीतिसे चतुर्भुजके मन्दिर और प्राणनाथप्रभुकी रक्षा होते देखकर परमात्मा और बदरुन्निसाको धन्यवाद देते हुए, प्रभुकी आज्ञा पाकर वहाँसे अपने अपने घर चले गये। इसके बाद उस दिन और कोई विशेष बात नहीं हुई।

ब्याहकी तैयारियोंमें फँसी हुई हीरादेवीको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि अभी तक चतुर्भुजका मन्दिर गिराया नहीं गया! इतनेमें उसने सुना कि रणदूलह-

माँकी सवारी लौटकर आ गई। उसका आश्चर्य और भी बढ़ गया। जब उसे यह मालूम हुआ कि स्वयं शाहंशाह औरंगजेबकी कन्याने मेरी राजधानीमें पहुंचकर चतुर्भुजका मन्दिर नष्ट होनेसे बचाया तब उसे अपने चुपचाप बैठे रहनेपर बड़ी लज्जा आई। तो भी उसने यह सोचकर अपना समाधान कर लिया कि छत्रसालका विनाश करके मैं मुसल्मानोंके इस अत्याचारको रोकनेका प्रबन्ध करूँगी। इससे अधिक उसने कुछ और सोचने समझनेकी आवश्यकता न समझी और वह फिर अपने लड़केके ब्याह और बरातकी तैयारियोंमें लग गई।

× × × × ×

विन्ध्यवासिनीके ध्यानमें एकाग्र चित्तसे मग्न रहनेके कारण प्राणनाथप्रभुको यह भी पता न लगा कि कब आधी रात बीत गई। ध्यान विसर्जन करनेके बाद जब उन्होंने सामने देखा तब उन्हें जान पड़ा कि सूर्य भगवान्की कड़ी अमल्दारी खतम हो गई और रजनीनाथका शीतल राज्य बहुत देरसे आरम्भ हो चुका है। उन्होंने देखा कि सबेरे हमारे सामने जितने लोग एकत्र थे वे सब हट गये, चतुर्भुज भगवान्का मन्दिर ज्योंका त्यों है और प्रत्यक्ष विन्ध्यवासिनी हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी है! उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। पहले तो उनकी समझमें यह बात न आई कि विन्ध्यवासिनीकी मनोज्ञ मूर्ति चित्रकूटवाला अपना मन्दिर और दिव्य आयुध छोड़कर यहाँ क्यों चली आई और उग्र आसनपर बैठकर भक्तोंसे सेवा करनेवाली देवी हाथ जोड़कर इतने नम्र-भावसे मेरे सामने क्यों आ खड़ी हुई। वे विनय-पूर्वक उस मूर्तिसे कहना ही चाहते थे कि,—"जगन्माते विध्यवासिनी! इस दासके लिए तुम्हारी क्या आज्ञा है?" पर इतनेमें ही कुछ ध्यानसे देखकर उन्होंने पहचान लिया कि सामने शाहजादी बदरुन्निसा खड़ी है। ध्यानस्थ होनेसे पहलेके सब चित्र उनकी मानसिक दृष्टिके सामने फिर गये। तब वे उस बालाके उच्च और उदार आशयोंकी प्रशंसा करते हुए बोले,—

"कोयलेकी खानमें जिस प्रकार हीरा निकलता है, कंटकमय जंगलमें जिस प्रकार गुलाबका सुन्दर फूल फूलता है अथवा तरह तरहके भीषण जीवोंसे युक्त समुद्रमें जिस प्रकार बढ़िया आबदार मोती निकलता है ठीक उसी प्रकार असुरोंके कुलमें तुम देवी उत्पन्न हुई हो; तुम्हारे असाधारण गुण अवश्य ही देवि-

नोंके गुणोंके से हैं। मैं तो अभी तुम्हें भ्रमसे देवी समझ कर ही सम्बोधित करनेको था। असुरोंके गुरु शुक्राचार्य्यको भी तुम्हारे ही समान देवयानी नामक एक अद्वितीय कन्या-रत्न मिला था। कहते हैं, श्री रामचन्द्रजीकी पत्नी सीता-देवी भी लंकाके रावणकी ही कन्या थी। भला यह तो बतलाओ, तुम इस प्रकार हाथ जोड़े कबसे खड़ी हो?"

बद०—"जबसे प्रभु ध्यानस्थ हुए तभीसे।"

प्रभु०—"क्या इतने कोमल पुष्पको मैंने लगातार चार पहर तक खड़ा रक्खा? सुकुमारी, तुम्हारे कोमल चरण दुखने लगे होंगे। बैठ जाओ और मुझे बतलाओ कि तुम्हारी इस कठिन तपश्चर्य्याका क्या कारण है?"

प्रभुकी आज्ञा पाकर बदरुन्निसा जमीन पर बैठ गई और बहुत ही नम्रता-पूर्वक बोली,—"प्रभो! आप ज्ञानी और सर्वज्ञ हैं। वर्त्तमान कालके भारी परदेकी आड़में छिपा हुआ भविष्यकाल आपको अपनी दिव्यदृष्टिके कारण स्पष्ट दिखाई पड़ता है। मैं आपके श्रीमुख और पवित्र वाणीसे केवल यही सुनना चाहती हूं कि बुन्देलखंड कब स्वतंत्र होगा।"

प्रभु०—"न तो मैं दिव्य दृष्टिवाला ही हूँ और न मुझे अन्तर्ज्ञानी होनेका ही अभिमान है। तथापि बुन्देलखंडकी प्रजाके मनकी स्थितिका मैंने ध्यान-पूर्वक अवलोकन किया है, इस लिए मैं कह सकता हूँ कि बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताका दिन अब दूर नहीं है। लेकिन दिल्लीपतिकी कन्याको बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताकी इतनी चिन्ता क्यों है? उसके स्वतंत्र होनेका समय जाननेके लिए ही उसे चार प्रहर तक खड़े रहनेकी क्या आवश्यकता थी?"

बद०—"मेरे ऐहिक जीवनका सुखमय या दुःखपूर्ण होना पूर्ण रूपसे बुन्देलखंडकी स्वतंत्रतापर ही अवलंबित है। प्रभो! क्या कभी मैं बुन्देलखंडको स्वतंत्र देख सकूँगी?"

प्रभु०—बहुत ही शीघ्र, प्रायः चार महीनेके अन्दर ही बुन्देलखंडसे यवनोंकी सत्ता उठ जायगी और यहाँके निवासी स्वतंत्र हो जायँगे। दिल्लीपतिका बल बहुत अधिक है, इस लिए वे बुन्देलोंकी स्वतंत्रता नष्ट करनेके लिए कोई बात उठा न रक्खेंगे। पर तो भी जहाँ एक बार बुन्देले स्वतंत्र हुए और उन्हें स्वतंत्रताका चसका लगा तहाँ फिर कोई उनकी स्वतंत्रता छीन न सकेगा।

बुन्देलखंडकी प्रजाको मैंने स्वतंत्रता प्राप्तिके प्रयत्नके लिए तैयार कर लिया है। बड़े बड़े सरदारों और राजाओंके पुत्रोंको छत्रसालके पक्षमें मिलानेके लिए सागरके युवराज दलपतिराय सारे बुन्देलखंडमें घूम रहे हैं। चम्पतरायके स्वर्गवासी हो जानेके कारण सब लोगोंने अपना वह पहला द्वेष भुला दिया है जो किसी समय चम्पतराय और उनके उद्देश्य और कार्य्यके प्रति उनके मनमें था। यही कारण है कि छत्रसालके स्वतंत्रताका झंडा खड़ा करते ही सभी राजकुमार और सरदारोंके पुत्र उसके नीचे एकत्र होनेके लिए तैयार हैं। यही नहीं बल्कि दलपतिरायका यहाँ तक कहना है कि हीरादेवी और उनके भक्त कंचुकीराय सरीखे दो चार लोगोंको छोड़कर बाकी सभी राजे सब प्रकारसे छत्रसालकी सहायता करने और बुन्देलखंडको स्वतंत्र बनानेके लिए तैयार हैं। हीरादेवीके पुत्र विमलदेवको समझा बुझाकर अपने पक्षमें लानेके लिए दलपतिराय आज यहाँ आनेको ही थे। विमलदेवसे मिलकर वे यहाँ आनेवाले थे पर न जाने क्यों वे अभी तक नहीं आये।"

बदरुन्निसाने प्रसन्न होकर पूछा,—"क्या सागरके युवराज अभी यहीं आनेवाले हैं?"

प्रभु०—"हाँ सम्भवतः वे अभी आते ही होंगे, लेकिन तुम्हारी उनके साथ कहाँकी जान पहचान है?"

बदरुन्निसाके मुखपर लज्जाकी लाली छा रही। वह कुछ ठहरकर बोली,—"उनके साथ मेरी जितनी जान पहचान है उतनी त्रिभुवनमें और किसीके साथ नहीं है।"

प्राणनाथप्रभुको बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें युवराज दलपतिराय वहाँ पहुँच गये और उन्होंने प्रभुके चरणोंपर अपना सिर रख दिया। उन्हें बड़े प्रेमसे उठाते हुए प्रभुने पूछा,—"दलपति! इस बालाको तुम पहचानते हो?"

बहुत दिनोंपर आज दोनोंकी आँखें चार हुई थीं। बदरुन्निसाको अचानक वहाँ देखकर दलपतिरायको बहुत ही आश्चर्य हुआ और दलपतिरायके दर्शनसे बदरुन्निसाकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा। जब दलपतिरायका आश्चर्य कुछ कम हुआ तब उन्होंने कहा,—

"मैं जितना इस बालाको पहचानता हूँ उतना त्रिभुवनमें और किसीको नहीं पहचानता।"

लेकिन दलपतिराय और बदरुन्निसाकी गूढ़ बातोंका कुछ भी अर्थ प्राणनाथ-प्रभुकी समझमें न आया। उन्होंने सरल भावसे कहा,—

"ऐसी देवीसे जान पहचान होना बड़े सौभाग्यकी बात है। आज सवेरे रणदूलहखाँ यह मन्दिर और मूर्ति तोड़नेको था और मेरे प्राण लेना चाहता था; लेकिन इसी उदार बालाने बीचमें पड़कर इस मन्दिरकी और मेरी रक्षा की। यह बाला अपने आपको दिल्लीपतिकी कन्या बतलाती है, पर अपने सद्-गुणोंके कारण यह बुन्देलखंडके अच्छे अच्छे घरानोंकी राजकुमारियोंको भी लज्जित करती है। इसके निष्कलंक सौन्दर्य्य और सद्गुणोंको देखते हुए यही मालूम होता है कि यह साधारण बाला नहीं बल्कि असाधारण देवी है। दल-पति! यह बुन्देलखंडके परम शत्रुकी कन्या होकर भी इस चिन्तामें है कि बुन्दे-लखंड कब स्वतंत्र होगा। इसके सद्गुणों और सत्कार्य्योंको देखकर शंका होती है कि यह शुक्राचार्य्यके घर जन्म लेकर देवताओंके न्यायपक्षके लिए लड़नेवाली देवयानी अथवा लंकाके रावणसे उत्पन्न होकर असुरोंके नाशमें सहायता देने-वाली सीता तो नहीं है?"

दलपतिराय भला ऐसा सुयोग कब जाने देते, उन्होंने चट कहा,—"प्रभो! असुर कन्यका देवयानीने सुर-पुत्र कचके साथ अपना पाणिग्रहण करानेका प्रयत्न किया था और सीतादेवी तो श्रीरामचन्द्रजीकी पत्नी बनकर तीनों लोकमें धन्य ही हो गई थीं। यदि उसी प्रकार यह यवनकन्या भी किसी बुन्देले राजकुमारसे परिणीत होना चाहे तो उसमें इसका कोई अपराध तो न होगा?"

प्रभु०—"आजकलके अधिकांश यवन युवक नैतिकदृष्टिसे प्रायः बिलकुल ही पतित होते हैं; इस बालाके पवित्र मन, मंगल विचारों और बहुत ही कोमल अन्तःकरणको देखते हुए इसके लिए कोई योग्य हिन्दू युवक ही बहुत अनुरूप पति होगा।"

बदरुन्निसाने गद्गद स्वरसे पूछा,—"प्रभो! यदि उच्च कुलका कोई हिन्दू युवक मुझे ग्रहण करनेका वचन दे तो उसका यह कार्य्य नैतिकदृष्टिसे निन्दनीय तो न होगा?"

प्राणनाथप्रभुने आवेशमें आकर कहा,—"बदरुन्निसा ! तुम पवित्रता, मांगल्य और नीतिकी साकार मूर्ति हो । तुम्हें ग्रहण करके देवलोकके देवता भी धन्य होंगे, तब फिर मनुष्योंका तो पूछना ही क्या है ? वह कौन ऐसा भाग्यवान् बुन्देला है जो तुम्हें ग्रहण करनेके लिए तैयार है ? "

बदरुन्निसा लज्जा-युक्त भावसे दलपतिरायके चरणोंकी ओर देखने लगी ।

इतनी देर बाद प्राणनाथप्रभुपर सब बातें खुलीं । उनकी समझमें सब पहेलियाँ आ गईं । पहले उनका मन कुछ घबराया, तब चंचल हुआ और अन्तमें विचारमें पड़ गया ।

दलपतिरायने भी सोचा कि अब प्रभुको पूरी तरह विचार करनेका अवसर देना चाहिए । इस लिए उन्होंने कहा,—

"प्रभो ! छत्रसाल शीघ्र ही बुन्देलखंडमें आ पहुँचेंगे । राजा जयसिंहकी सेना छत्रसालके पराक्रमके कारण विजयी होकर दिल्ली लौट गई । राजा जयसिंहजीसे मुझे मालूम हुआ है कि महात्मा शिवाजीसे भेंट करनेके लिए छत्रसाल दक्षिण गये हैं और शीघ्र ही उनसे भेंट करके वे यहाँ लौट आवेंगे । छत्रसालके यहाँ पहुँचते ही स्वतंत्रताके लिए युद्ध आरम्भ कर दिया जायगा न ? ऐसा प्रयत्न होना चाहिए जिसमें विन्ध्यवासिनीके आगामी महोत्सव तक बुन्देलखंडमें स्वतंत्रताका झंडा फहराने लगे । "

उस समय दलपतिरायने बदरुन्निसासे पूछा,—"शाहजादी ! दिल्लीके शाही महलोंका आराम छोड़ कर तुम बुन्देलखंडमें क्यों और कब आईं ? ?"

बद०—" यमुनाके किनारे जिस दिन आपसे मेरी बातें हुई थीं, शाही महलोंके आरामसे उससे पहले ही मेरा जी भर चुका था । मैं जो सुख चाहती थी उसे पानेके लिए ही मुझे महलोंका सुख छोड़ना पड़ा । मैंने आपसे कहा था कि जहाँतक हो सकेगा मैं आपके काममें मदद दूँगी और उसी कामके लिए मैं लौटकर महलमें गई थी । मैंने मौका पाकर शाहंशाह आलमको बहुत कुछ समझा बुझाकर बुन्देलखंडको स्वतंत्र कर देनेके लिए राजी भी कर लिया था; पर उसी वक्त वे उठकर रोशनआराके महलमें पहुँच गये । वहाँ रोशनआराने उन्हें कुछ ऐसी उलटी सीधी बातें समझाईं कि उनका इरादा फिर पलट गया

और वे पहलेकी तरह बुन्देलों और बुन्देलखंडके दुश्मन बन गये। उसी दिन मेरी सारी उम्मीदें जाती रहीं और मैं महलोंसे निकल खड़ी हुई तथा आपको ढूँढ़ती हुई यहाँतक पहुँची हूँ।”

दलपतिरायने प्रेमपूर्वक कहा,—“तुममें जितनी ज्याद: खूबसूरती है उतनी ही ज्याद: खूबियाँ भी हैं। लोग कहते हैं कि सोनेमें सुगन्ध नहीं होती। पर मैं देखता हूँ कि तुम सोना भी हो और तुममें सुगन्ध भी है। सोना तुम्हारा रूप है और सुगन्ध तुम्हारी खूबियाँ हैं। अब तुम्हें ना-उम्मेद नहीं होना चाहिए। बुन्देलखंड अब बहुत जल्दी स्वतंत्र हो जायगा। ज्यों ही छत्रसाल बुन्देलखंडमें पहुँचेंगे त्यों ही हर एक बुन्देलेके हाथमें तलवार दिखाई देगी। उस वक्त बातकी बातमें मुसलमानोंकी हुकूमत यहाँसे उठ जायगी।”

बद०—“और तब?”

दल०—“और तब मैं पूरी तरहसे तुम्हारा हो जाऊँगा।”

इसके बाद बहुत देरतक उन दोनोंमें प्रेमालाप होता रहा।

लेकिन अभी हमें उस प्रेमालापसे कहीं बढ़कर महत्त्वपूर्ण विषयोंकी ओर पाठकोंको ले चलना है।

* * * *

तेईसवाँ प्रकरण।

शिवाजीसे भेंट।

गिरि-कन्दरामें जन्म लेनेवाली भिल्ल-कन्यायें जिस प्रकार अपना सारा जन्म उसी पहाड़की टेकड़ियोंमें घूम फिर कर ही बिता देती हैं, ऋषि-कन्याओंको जिस प्रकार अपना वन या उपवन छोड़कर और कहीं जाना अच्छा नहीं लगता अथवा विशाल नेत्रोंवाली हरिणी, पतली कमरवाली सिंहिनी, मनोहर गतिवाली हंसिनी या मधुर स्वरवाली कोकिला जिस प्रकार सहसा जन-समुदायमें नहीं जाती, उसी प्रकार हिमालय, विन्ध्याचल, सह्याद्रि जैसे गम्भीर जनकोंके यहाँ जन्म लेनेवाली कन्यायें भी अरण्य-वासमें ही अपना अधिकांश जीवन व्यतीत करती हैं। प्रत्येक पर्वत-कन्या यही समझती है कि मैं अरण्य-

वासिनी हूँ; जंगली पुष्पोंके सिवा मेरे लिए और कोई अलंकार नहीं है और बाल-सूर्य्यके दिए हुए पीले सालू, रजनीनाथके दिए हुए सफेद सालू अथवा पतिके परोक्षमें रजनीके दिये हुए काले सालूके सिवा मेरे लिए और कोई वस्त्र नहीं हैं । इस लिए जब अरण्य-वासिनी पर्वत-कन्या अपने पतिके पास जाने लगती है तब वह जगह जगह यह देखनेके लिए चक्कर लगाती फिरती है कि युवतियाँ किस प्रकार अपना शृंगार करती हैं । अपने पिता पर्वतके घरसे ससुराल जाते समय प्रत्येक नदी चक्कर लगा कर किसी वस्तीके पास जाती है, वहाँकी स्त्रियोंकी अभिरुचि अपने कोमल मनमें प्रतिविम्वित करती है और फिर जंगलका रास्ता लेती है । जंगलमें पहुँचते ही वहाँकी प्राकृतिक शोभा देखकर वह युवतियोंका कृत्रिम शृंगार भूल जाती है; फिर दो चार चक्कर लगाकर शृंगार-प्रिय युवतियोंको देखनेके लिए वह किसी दूसरी वस्तीमें जाती है और वहाँसे पहलेकी जानी हुई वातोंको भूल जानेके कारण अथवा न जाने क्यों वह फिर जंगलका रास्ता लेती है ।

बेचारी भीमा बड़ी ही भोली थी । उसका जन्म भोलेभाले शंकरके कुलमें हुआ था । फिर भला उसके भोलेपनका क्या पूछना ? शृंगारकी ठीक ठीक शिक्षा पानेके लिए भोली भीमाने कितने चक्कर लगाये थे, नगरकी विलासी स्त्रियोंसे लेकर गाँवकी नीरोग युवतियों तक, लिंबाजी पटेलकी कन्या सुभीसे लेकर शाह-जादी बदरुन्निसा तक उसने कितनी युवतियोंके शृंगार देखे थे, इसकी गिनती नहीं हो सकती । जंगलमें थोड़ी दूर जाते ही भोली भीमा सब कुछ भूल जाती थी और फिर शृंगारका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए वस्तीकी तरफ बढ़ने लगती थी । भीमामें आवश्यकतासे अधिक शृंगार-लालसा भी थी और जरूरतसे ज्यादः भोलापन भी; इस लिए वह सदा गाँवों और शहरोंकी शृंगारप्रिय युवतियोंके सहवासमें ही मग्न रहती थी ।

बाल-रविका झीना पीला सालू पहने हुए भोली भीमा अठलाती हुई लिंबाजी पटेलके मकानके पाससे जा रही थी । लिंबाजीकी एकलौती कन्या सुभी उसके पास ही खड़ी हुई उसकी चंचल चाल देख रही थी । भोली भीमा उसे अपनी योग्य अध्यापिका समझ कर बहुत ही प्रसन्न हुई । पहले उसने सुभीके कोमल चरण छूए जिससे सुभीको भी बहुत आनन्द हुआ; अब वह बड़ी प्रसन्नतासे भीमाकी सेवा ग्रहण करने लगी । भीमा भी सुभीसे मेलजोल बढ़ाने

लगी। यहाँ तक कि अन्तमें भीमाने सुभीकी कमरमें हाथ डाल दिया। भीमाने समझा कि प्रवासमें सुभीसे मेरा बहुत काम निकलेगा और वह मुझे शृंगारकी अच्छी तरह शिक्षा देगी, इस लिए उसने अपनी लहरोंसे सुभीको अपने और समीप कर लिया। अपने आनन्दमें भीमाको यह भी न मालूम हुआ कि सुभी घबरा गई है। सुभीको पाकर भीमाको इतना आनन्द हुआ कि उसकी समझमें न आया कि मैं इसे कहाँ रक्खूँ और कहाँ न रक्खूँ; अन्तमें उसने सुभीको अपने उदरमें डाल दिया।

थोड़ी ही देरमें सारे गाँवमें पुकार मच गई कि भीमाकी भँवरमें पड़कर सुभी डूब गई। कोई अपना जाल लेकर नदीकी तरफ दौड़ा और कोई तूंबे लेकर लपका। सब अपनी अपनी बहादुरी दिखानेके लिए तरह तरहके उपाय करने लगे। नावपर चढ़कर सुभीका पता लगानेवालोंमें नावपर चढ़नेसे पहले सुभीको उसके अल्हड़पनके कारण मनमाना कोसा और जिसके जीमें जो आया उसने सुभीको वही कह डाला। बेचारा पटेल अपने दालानमें अलग एक कोनेमें बैठा हुआ रो रहा था। उसे घेरकर बहुतसे लोग खड़े हो गये और लगे फटकारने कि तुम लड़कीका जरा भी ध्यान नहीं रखते और उसे मनमाना घूमने देते हो। डूबी हुई लड़कीको किसी तरह निकालनेका प्रयत्न तो कोई न करता था, पर अपनी अपनी बहादुरी और समझदारीका बखान सब लोग खूब करते थे। उसी भीड़में खड़ा हुआ एक तेजस्वी तरुण इन लोगोंका यह तमाशा देख रहा था। जब उसने देखा कि लड़कीको निकालनेका साहस किसीमें नहीं है तो उससे न रहा गया और वह आगे बढ़कर कहने लगा,—

"इस तरहकी हुज्जत-तकरारका यह समय नहीं है। जैसे हो चटपट लड़कीको निकालनेका प्रयत्न करना चाहिए; नहीं तो थोड़ी देरमें उसके प्राण निकल जायँगे। तुम लोगोंसे न कुछ हो सकता हो तो मुझे वह जगह बतलाओ जहाँ वह डूबी हो; मैं उसे तुरन्त निकाल लाता हूँ।"

यह कहकर वह तेजस्वी वीर पटेलके दालानसे बाहर निकलने लगा। इतनेमें शिवाजी और दूसरे बहुतसे लोगोंने बड़ी श्रद्धा और भक्तिसे प्रचण्ड घोष किया—"श्री शिवाजी महाराजकी जय।" जो युवक सुभीको निकालनेके लिए जा रहा था वह बीचमें ही रुक गया। उसने चकित होकर देखा कि एक बलिष्ठ मराठा एक हाथमें तलवार लिये और दूसरे हाथसे सुभीको सहारा दिये हुए

मुस्कराता हुआ आ रहा है । सिरसे पैर तक उसके सब कपड़े भींगे हुए थे जिससे उसका गठीला और कसा हुआ शरीर अच्छी तरह दिखाई पड़ता था। उसके बड़े बड़े और चमकीले नेत्रोंसे भूत-दयाकी अविरत वर्षा हो रही थी, दाढ़ीके कारण उसके प्रसन्नवदनकी गम्भीरता और भी बढ़ गई थी और उसका प्रशस्त ललाट उसकी अतुल बुद्धिमत्ताकी साक्षी दे रहा था। उस युवकने समझ लिया कि इतने कष्ट सहकर इतनी दूरका मेरा प्रवास करना सफल हो गया, मुझे साक्षात् परमेश्वरके दर्शन हो गये। इस विचारसे उसे हर्ष-रोमांच हो आया और वह झपटकर आगे बढ़ा। अर्जुनने भी जिस भक्ति भावसे परमात्मा श्रीकृष्णके चरण न छूए होंगे, राजा श्रेणिकने भी जिस भक्ति भावसे महावीर तीर्थंकरका वन्दन न किया होगा, सम्राट् अशोकने भी जिस भक्ति-भावसे बोधि-वृक्षके नीचे भगवान् गौतम बुद्धिकी चरण-सेवा न की होगी, उस विमल भक्ति-भावसे वह युवक शिवाजीके चरणोंपर पड़ गया।

अपरिचित वेष, अपरिचित भाषा और अपरिचित मुद्रासे एक तरुणको इतने प्रेम और भक्तिसे अपने पैरोंपर गिरते देख शिवाजीको बहुत आश्चर्य हुआ और उनके हृदयमें एक अपूर्व भाव उत्पन्न हो आया; उन्होंने गद्गद स्वरसे कहा,—"अपरिचित युवक! हम लोग एक ही भारत-माताके पुत्र हैं। जगदम्बा भवानी और भारत-माताके सामने उसके सब बालक समान हैं। तब भला मेरे चरणोंपर गिरनेकी क्या आवश्यकता है? उठो और मुझसे गले मिलो।"

इतना कहकर शिवाजी दोनों हाथोंसे पकड़कर उस युवकको ऊपर उठाने लगे। वह भी अपनी आँखोंके प्रेमाश्रु पोंछता हुआ और सूर्य्यके समान तेजस्वी और चन्द्रमाके समान शीतल, अग्निके समान तेज और जलके समान निर्मल, लोहेके समान कठोर और पुष्पके समान कोमल शिवाजीके रूपकी ओर देखता हुआ नम्रता-पूर्वक बोला,—

"महात्मन्! आपके ही दर्शनोंकी इच्छासे मैं बुन्देलखण्डसे चलकर यहाँ-तक आया हूँ। इतने दिनोंके प्रयत्नका फल मुझे आज मिला है । मैं महेवाके राजा चम्पतरायका पुत्र छत्रसाल हूँ, मेरे देशपर मुसलमानोंका अधिकार हो गया है और, वहाँकी प्रजा उनके उपद्रवों और अत्याचारोंसे बहुत दुःखी हो गई है। मैं उस देशको स्वतंत्र करना चाहता हूँ और इस सम्बन्धमें आपको अपना

गुरु मानकर मंत्र लेना चाहता हूँ। आपके सदुपदेशको वेद-वाक्यके समान पवित्र समझकर मैं उसीके अनुसार कार्य्य करूँगा। आप गुरु हैं और मैं शिष्य हूँ। गुरुकी चरण-सेवा करना शिष्यका परम कर्त्तव्य है, इसी लिए मैंने आपके चरण छूए। अनुग्रह करके मुझे अपना शिष्य बनाइए और मेरी सेवा स्वीकार कीजिए। यदि हो सके तो मुझे कुछ समयतक अपनी सेवामें रहने दीजिए और मुझे इतना अवकाश दीजिए कि आपके दैनिक कार्य्यों और प्रयत्नों आदिको कुछ समयतक देख कर मैं शिक्षा ग्रहण करूँ। इस प्रकार जब आप मुझे अपने शिष्य होनेका पात्र समझ लें तब मुझे गुरुमंत्र देकर अपना शिष्य बनावें और प्रसन्न होकर आशीर्वाद दें कि मेरे हाथोंसे बुन्देलखण्ड स्वतंत्र हो जाय।"

शिवाजीकी आँखोंसे प्रेमाश्रु बहने लगे। सुभीके कन्धेपरसे हाथ उठा कर उन्होंने वह हाथ छत्रसालके कन्धेपर रख दिया और प्रेमपूर्वक कहा,—

"मातृभूमिकी इतने मनोभावसे सेवा करनेवाले भाग्यशाली युवक! महाराष्ट्र देशमें मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। मुझे एक ऐसा मित्र पाकर अवर्णनीय आनन्द हुआ है जिसके उद्देश्य और कार्य्य मेरे उद्देश्यों और कार्य्योंके समान ही हैं। तुम थोड़ी देर यहीं ठहर जाओ; मैं इस लड़कीको इसके पिताके सपुर्द करके यहाँसे चलता हूँ। उस समय मैं शान्त होकर एकान्तमें तुमसे बातें करूँगा।"

इतना कहकर शिवाजी आगे बढ़कर लिंबाजी पटेलके पास पहुँचे और सुभीको उसके सपुर्द करके बोले,—"लो, यह तुम्हारी लड़की आ गई। यह बड़ी अल्हड़ है। अहमदनगरकी चाँदबीबीकी तरह तलवार चलानेमें यह आगा पीछा देखनेवाली नहीं है। दिल्लीके बादशाहके दो सरदार दिलेरखाँ और जयसिंह अपने साथ प्रबल सेना लेकर महाराष्ट्र देशपर आक्रमण करनेके लिए आ रहे हैं। उस समय तुम्हें कमसे कम एक सौ जवानोंको अपने साथ लेकर भगवे झण्डेके नीचे आना चाहिए।"

पटे०—"महाराज! मेरे गाँवमें तलवार चलाने योग्य जितने पुरुष हैं वे सब आज्ञानुसार सेवा करनेके लिए तैयार हैं। हम सब लोगोंको दृढ़ विश्वास है कि महाराजके मुखसे निकलनेवाला प्रत्येक शब्द जगन्माता भवानीके मुखसे ही निकल रहा है। मनुष्यकी आज्ञा भले ही टाली जा सकती है, पर भगवतीकी

आज्ञा टालनेका सामर्थ्य किसमें है ? महाराज! कृपाकर गीले वस्त्र उतार डालिए और ये सूखे वस्त्र पहन लीजिए।"

शिवाजीने बिना कुछ कहे सुने तुरन्त अपने गीले कपड़े उतार दिये और पटेलके दिये हुए कपड़े पहन लिये। इसपर लिंबाजी पटेलने बहुत ही प्रसन्न होकर कहा,—

"लोग जो यह कहा करते हैं कि महाराज निर्धनोंके धन, अनाथोंके नाथ, दुष्टोंके संहारक और गो-ब्राह्मणप्रतिपालक हैं सो वह बिलकुल ठीक है। महाराजके पवित्र चरण मेरी इस कुटियामें आये, इसे मैं अपना बहुत भारी सौभाग्य समझता हूँ। क्या मुझे इतना सौभाग्य प्राप्त हो सकता है कि महाराजका आतिथ्य करूँ और मेरे यहाँ जो कुछ मोटा झोटा अन्न हो उसे मैं महाराजकी सेवामें उपस्थित करूँ?"

शिवाजीने अभिमानपूर्वक कहा,—"मैं तुम्हारा हूँ और सारे महाराष्ट्र देशका हूँ। भला, मैं तुम लोगोंकी बात कब अस्वीकृत कर सकता हूँ? मुझे कुछ आवश्यक और महत्त्वपूर्ण बातें करनेके लिए इस बुन्देलखण्डके युवकके साथ बाहर जाना है। प्रायः दोपहरके अन्दर ही मैं लौट आऊँगा और तुम्हारे इच्छानुसार तुम्हारे यहाँ भोजन करूँगा।"

सब लोगोंका अभिनन्दन स्वीकृत करते हुए जब शिवाजी वहाँसे चलने लगे तब पटेलने कहा,—

"महाराज! वह बुन्देला युवक कल सन्ध्याको ही यहाँ आया था। अपने सुन्दर मधुर भाषण और पवित्र आचरणके कारण वह हम लोगोंको बहुत ही प्रिय हो गया है। शिवाजी महाराज देखनेमें कैसे हैं, वे कैसे चलते हैं, कैसे बोलते हैं, सब लोग उनके दर्शन कर सकते हैं या नहीं, उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए पहले क्या किया था, उनके लड़नेका ढंग कैसा है, वे किन शस्त्रोंका व्यवहार करते हैं, आदि आदि अनेक प्रकारके प्रश्न उसने आते ही हम लोगोंसे किये थे। महाराजके दर्शनोंके लिए वह इतना आतुर हो रहा था कि सारी रात उसकी आँख ही नहीं लगी। मैं उसे लेकर महाराजकी सेवामें उपस्थित होनेको ही था; लेकिन सुर्भीके डूब जानेके कारण मुझे रुक जाना पड़ा था। महाराजकी कृपासे सुर्भीके प्राण बच गये और उस बुन्देले युवकको अकल्पित रीतिसे महाराजके दर्शन मिल गये।"

इसके बाद फिर शिवाजी महाराजका जयजयकार हुआ। जयजयकारकी प्रतिध्वनि होनेसे पहले ही वे अपने साथ छत्रसालको लेकर वहाँसे चल दिये थे। एक मनचलेने कह दिया कि उस बुन्देले युवकके साथ महाराज देखते देखते जहाँके तहाँ लुप्त हो गये। गाँवके सभी लोग बड़ी गम्भीर मुद्रासे यह कहते हुए अपने अपने घर चले गये कि भवानीकी कृपा और सहायतासे महाराज जो चाहें सो कर सकते हैं!

महाराज शिवाजी अपने साथ छत्रसालको लेकर धीरे धीरे चलते हुए और स्वतन्त्रतासम्बन्धी बातें करते करते भीमा नदीतक पहुँच गये और उसके किनारे किनारे आगे बढ़ते हुए बहुत दूरतक चलनेके उपरान्त एक ऊँची टेकरीके पास पहुँचे। दूरसे उस स्थानको देखकर इस बातकी कल्पना भी न हो सकती थी कि वहाँ मनुष्योंके रहनेकी जगह हो सकती है। लेकिन ज्यों ही शिवाजी महाराजने एक बड़ी शिलाके पास पहुँचकर आवाज दी—'एसाजी' त्यों ही 'जी महाराज' सुनाई पड़ा। वह शिला मानो टूट गई और भीतर जानेके योग्य मार्ग निकल आया। इसपर छत्रसालको बहुत ही विस्मय हुआ। लेकिन वे एक शब्द भी न बोले और चुपचाप शिवाजीके पीछे पीछे उस गुफामें घुस गये। थोड़ी ही दूर चलनेपर उन्हें एक सभामंडप दिखाई पड़ा। वहाँ हवा भी खूब आ रही थी और प्रकाशकी भी कमी नहीं थी। पृथ्वीके गर्भमें छिपी हुई इतनी बड़ी इमारत देखकर छत्रसालके आश्चर्यकी सीमा न रही।

छत्रसालके मनकी स्थिति समझनेमें सारे महाराष्ट्रको अपने शब्दपर चलानेवाले चतुर शिवाजीको देर क्यों लगती? उन्होंने तुरन्त छत्रसालसे कहा,—

"छत्रसाल! यह भव्य सभामण्डप देखकर कदाचित तुम्हें बहुत आश्चर्य हो रहा है। लेकिन जब तुम्हें यह मालूम होगा कि इस प्रकारके गुप्त स्थानों और गुप्त मार्गोंकी स्वतन्त्रताके कामोंमें कितनी आवश्यकता पड़ती है तब तुम्हारा आश्चर्य और भी बढ़ जायगा। महाराष्ट्र देशके सन्तों और महात्माओंने यद्यपि यहाँके निवासियोंको समताका तत्त्व अच्छी तरह समझा दिया था तो भी स्वतंत्रताके वास्ते लड़नेके लिए बहुत ही कम लोग तैयार हुए थे। शूर, चतुर और राजनीतिज्ञ मराठे बहमनी राज्यकी सेवामें लगे हुए थे। इस लिए सबसे पहले जो लोग भगवे झण्डेके नीचे एकत्र हुए वे राजकीय विषयोंसे प्रायः बिलकुल ही अनभिज्ञ और अपरिचित थे। महाराज रामदास स्वामीने कर्म-मार्गका उप-

देश दे करके बहुतसे युवकोंको भगवे झण्डेके नीचे एकत्र किया था। सारे महाराष्ट्रमें पताकाओंके बदले तलवारें दिखाई पड़ने लगीं और हरिनामके बदले हर-हर-महादेव सुनाई पड़ने लगा। लेकिन हम लोगोंने समझ लिया कि अनुभवी यवन सेनाके सामने हम लोग न ठहर सकेंगे, इस लिए हम लोग समय पाकर छापे मारने लगे। मेरे शूर मराठे यद्यपि गिनतीमें बहुत ही कम थे पर तो भी बीजापुरकी प्रबल सेनापर समयपर छापे मारकर वे सदा विजयी होते थे। ऐसे आकस्मिक छापोंके समय लुकने छिपनेके लिए ऐसे गुप्त स्थानोंसे बड़ा काम निकलता है। गुप्त स्थानोंमें जगह जगहपर रास्ते भी बने हुए हैं, इसलिए आज जिस स्थानपर मराठे अन्तर्धान होंगे उनका किसीको पता भी न लगेगा और वे कल ही वहाँसे दस बीस कोस दूर कहीं जा निकलेंगे। बहुधा हम लोग दो चार छापे डालकर शत्रुको बेकाम कर देते हैं और बहुतसी रसद, गोली-बारूद और लूटका माल लेकर थोड़ी ही देरमें इसी प्रकारके किसी गुप्त स्थानमें अन्तर्धान हो जाते हैं। इसी लिए हम लोगोंकी तो कोई हानि नहीं होती पर शत्रु बड़ी ही विपत्तिमें पड़ जाते हैं। छत्रसाल ! अब तो तुम ऐसे गुप्त स्थानोंका उपयोग समझ गये न ? राजस्थानके राजपूत और बुन्देलखंडके बुन्देले बड़े वीर और लड़ाके होते हैं; पर वे बलाबल और समय असमयका विचार नहीं करते और न दाँवपेंच ही जानते हैं। वे सीधे चलकर शत्रुपर आक्रमण कर बैठते हैं और बहुधा अपने ही नाशका कारण होते हैं। लेकिन जब तक छापे न डाले जायँ तब तक प्रबल शत्रु कभी दबाया नहीं जा सकता।"

छत्रसाल एकाग्र चित्तसे शिवाजीकी सब बातें सुनते रहे। उनका हाथ पकड़कर शिवाजीने कहा,—

"चलो, हम लोग वहाँ चलकर बैठें। मैंने पहलेसे ही निश्चित कर लिया था कि इसी स्थानपर हमारी तुम्हारी बातें होंगी। मैं लिंबाजी पटेलके यहाँ बिना कारण नहीं गया था। मैं समझता था कि वहाँ तुमसे भेंट होगी।"

शिवाजीकी ओर भक्ति और आश्चर्यसे देखते हुए छत्रसालने पूछा,—"महाराज ! आपको यह कैसे मालूम हुआ कि मैं आपके दर्शनोंके लिए यहाँ आ रहा हूँ ? विशेषतः आपको यह कैसे मालूम हो गया कि आपको ढूँढ़ता हुआ मैं इसी गाँवमें पहुँचूँगा ? यह आपने किस प्रकार निश्चित किया कि इसी स्थानपर आप मेरे साथ बातें करेंगे ?"

छत्रसालके प्रश्नका उत्तर विना दिये शिवाजीने आवाज दी,—" एसाजी ! जरा इधर आना । "

तुरन्त एसाजी आकर शिवाजीके सामने खड़े हो गये । उन्हें देखकर शिवाजीने छत्रसालसे पूछा,—" छत्रसाल ! तुमने इन्हें पहले कभी कहीं देखा है ?"

छत्रसालने सिरसे पैरतक एसाजीको अच्छी तरह देखकर कहा,—"जी नहीं महाराज ! मैं इन्हें आज पहले ही पहल देख रहा हूँ ।"

इस पर शिवाजीने हँसते हुए कहा,—" जवतक राजधानीमें दिल्लीकी सेनाके मोरचे नहीं लग जाते तवतक राजस्थानके राजाओंको शत्रुकी सेनाका हालचाल ही नहीं मालूम होता । जव तक शत्रुकी सेनाका राजप्रासादमें प्रवेश न हो तव तक बुन्देलखंडके राजाओंको यह भी नहीं मालूम होता कि शत्रुने हमारा सारा देश नष्ट करके अपने अधीन कर लिया है । इसका मुख्य कारण यही है कि शत्रुका समाचार पानेके लिए बुन्देले और राजपूत कोई उपाय नहीं करते । या तो वे लोग शत्रुकी छावनीमें गुप्त रूपसे घुसकर उनका पूरा पूरा पता लगाना ही नहीं जानते और या वे इसे अनुचित और कायरताका काम समझते हैं । लेकिन यह वड़ी भारी त्रुटि या भूल है । छत्रसाल ! मेरे अनेक गुप्त दूतोंमेंसे एसाजी एक ऐसे ही गुप्त दूत है। मैंने इन्हें देवगढ़का समाचार लानेके लिए भेजा था। देवगढ़ जीतकर जव विजयी सेना वहाँसे दिल्लीको रवाना हुई तो ये भी लौटने लगे। जव तुम देवगढ़से चले तव ये भी भेस वदलकर तुम्हारे साथ हो लिए। रास्तेमें भी उन्होंने कई वार अपना भेस वदला था । समय समयपर अनेक रूपोंमें मेरा पता भी इन्हींने तुम्हें वतलाया था । "

अव छत्रसालकी आँखें खुलीं । उन्हें ध्यान आ गया कि देवगढ़से चलते समय एसाजीसे मिलते जुलते एक मनुष्यसे उनकी वातें हुई थीं । अव वे समझ गये कि वे एसाजी ही थे। अव उनकी समझमें आ गया कि जहाँ जहाँ मैं ठहरता था वहाँ वहाँ क्यों मुझे सव प्रकारका सुभीता होता था । शिवाजीकी ओर कृतज्ञतापूर्वक देखते हुए उन्होंने कहा,—

" महाराज आपकी चतुराई और राजनीतिज्ञताका वखान नहीं हो सकता । अव मैंने अच्छी तरह समझ लिया कि कल सन्ध्याको एसाजीने ही मुझे लाकर लिंवाजी पटेलके यहाँ ठहराया था । मैं वहुत ही गुप्त रूपसे यात्रा कर रहा था; लेकिन इतना होनेपर भी गुप्त दूतके द्वारा महाराजने मेरा पता लगा ही लिया,

और उसीकी सहायतासे आपने मुझे अपने चरणोंके समीप बुलवाकर मुझपर बहुत ही उपकार किया।"

शिवाजीने गम्भीरतापूर्वक कहा,—"छत्रसाल! मैंने केवल अपना कर्त्तव्य किया है। जिस समय मैंने सुना था कि अनेक कष्ट भोगता हुआ, प्रवासकी दारुण यातना सहता हुआ, दुर्लंघ्य विंध्याचल लाँघता हुआ, अपार नर्मदा पार करता हुआ, बुन्देलखंड सरीखे दूर देशसे केवल परोपकारके लिए एक युवक मेरे पास आ रहा है, उस समय यदि मैं चुपचाप बैठा रहता और प्रवासमें तुम्हारे सुभीतेका कोई प्रबन्ध न करता तो ईश्वरके सामने मैं बड़ा भारी अपराधी बनता। उचित तो यह था कि मैं स्वयं आगे बढ़कर तुमसे मिलता। लेकिन जिस समय तुम देवगढ़से चलने लगे थे उस समय मुझे तुम्हारा उद्देश्य ही मालूम न था; और जिस समय मुझे तुम्हारा उद्देश्य मालूम हुआ उस समय तुम बहुत जल्दी यात्रा कर रहे थे; इस लिए विवश होकर तुमसे भेंट करनेके लिए मुझे यही स्थान नियत करना पड़ा।"

इसके बाद शिवाजी थोड़ी देरतक चुप रहे। कमलोंका रस लेनेवाला भ्रमर जिस प्रकार तल्लीन होकर कमलकी ओर देखता है, छत्रसाल भी उसी प्रकार तल्लीन होकर शिवाजीकी ओर देख रहे थे। वे सोचते थे कि कब शिवाजीके मुखकमलसे उपदेशामृत निकलने लगे और कब मैं उसका आनन्द लूँ। कुछ देर तक विचार करनेके उपरान्त शिवाजीने कहा,—

"छत्रसाल! सुनते हैं, बुन्देलखण्डमें वहाँसे यवनोंको निकाल देनेके लिए आजतक अनेक प्रयत्न हुए हैं। लेकिन सदा परस्परके विरोध और द्वेष आदिके कारण ही आज तक उसमें कभी सफलता नहीं हुई। क्या यह बात ठीक है? बुन्देलखण्डकी भीतरी अवस्थाका तुम्हें बहुत कुछ ज्ञान होगा, इसी लिए मैं यह बात तुमसे पूछता हूँ। यह बात ठीक है न कि बुन्देलखण्डके सभी राजे और सरदार वहाँसे यवनोंको निकाल देनेके लिए मिलकर प्रयत्न नहीं करते?"

छत्रसालने बड़े दुःखसे कहा,—"महाराज! बुन्देलखण्डको स्वतंत्र करनेके प्रयत्नमें आज तक बराबर लोगोंको विफलता ही होती रही; और इसी लिए मुझे अब महाराजकी सेवामें उपस्थित होना पड़ा है। मेरे पिताजीको इस बातका बहुत बड़ा भरोसा था कि बुन्देलखंडपरसे यवनोंका अधिकार अवश्य उठ जायगा। उनमें बहुत अधिक साहस, विलक्षण धैर्य्य और अद्वितीय क्षात्र-

तेज था। लेकिन इसी परस्परकी कलहके कारण उनका राज्य गया, उनके प्राण गये और अन्तमें प्राणोंसे भी अधिक प्रिय उदात्त उद्देश्य नष्ट हो गया। उनकी आँखें उस समय खुलीं जिस समय उन्हें अंतकालकी शाश्वत निद्रा आई। जिस समय उनकी सारी सेना नष्ट हो गई, उनके राज्यपर यवनोंका अधिकार हो गया और वे अपनी ऐहिक आशायें छोड़कर परलोक जानेके लिए तैयार हुए उस समय उन्हें अपनी विफलताका कारण मालूम हुआ। उसी समय उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि मैं यहाँ आकर आपसे 'गुरु-मंत्र' लूँ। उनकी उसी आज्ञाका पालन करने, उनके उदात्त उद्देश्यको पूरा करने और बुन्देलखंडको मुसलमानोंके विकट चंगुलसे निकालनेके लिए ही इस समय मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। मुझे आप कृपा कर योग्य मंत्र और उपदेश दीजिए। स्वतंत्रता-प्राप्तिका सबसे सहज उपाय, सबसे निकटका मार्ग आप मुझे बतलाइए और ऐसा आशीर्वाद दीजिए जिसमें स्वतंत्रताके वास्ते लड़नेके लिए मुझमें दैवी शक्ति आ जाय।"

शिवाजीने स्नेहपूर्वक कहा,—"भूत-दयाका उदात्त चित्र साम्ने रखकर जो मनुष्य अपने देशके उद्धारके लिए हृदयसे प्रयत्न करता है उसका मार्ग बन्धुप्रेमके उज्ज्वल तेजसे प्रकाशित होता है। नीति, न्याय और समताके देवता मंगल गान गाते हुए उसके साथ साथ चलते हैं। बन्धुप्रेमकी दिव्य ज्योति हाथमें लेकर आत्मोन्नति उसको रास्ता दिखलाती चलती है। शालीनता, मधुरता, और सत्य प्रतिज्ञा उसपर चँवर डुलाती है। दक्षता और तत्परता उसका मार्ग निष्कण्टक और सुगम करती है। प्रसन्नता और सरलता उसके मनमें उत्साह उत्पन्न करती है। सम्पन्नता, नीरोगता और निर्व्यसनता उसकी कमाई लिये चलती है। इस प्रकार स्वतंत्रता देवीका सारा परिवार उसकी सहायता करता है। और नहीं तो मेरे सरीखे पामरसे और क्या हो सकता है? छत्रसाल! मैं भी तुम्हारी ही तरह स्वतंत्रता देवीका एक भक्त हूँ। इससे अधिक मैं तुम्हें और क्या बतला सकता हूँ?"

छत्रसालने गम्भीरतापूर्वक कहा,—"महाराज! आप ऐसा न कहें। आपमें बहुत सामर्थ्य है, आपका अधिकार बहुत अधिक है। समस्त भारतमें स्वतंत्रताका ठीक ठीक और पूरा ज्ञान पहले पहल आपको ही हुआ है। धर्म्मके भँवरमें घूमनेवाले महाराष्ट्रोंको सबसे पहले आपने ही स्वदेश-प्रेमकी ओर लगाया। भारतवर्षमें स्वतंत्रताका बीजारोपण सबसे पहले आपने ही किया है।

भारतवर्षके चैतन्यहीन होते जानेवाले पौरुषपर अमृतकी वर्षा सबसे पहले आपने ही की। भारतकी भावी स्वतंत्रताके सबसे पहले गुरु आप ही हैं। मेरे सरीखे जो अल्पज्ञ भक्त स्वतंत्रता देवीके मन्दिरतक पहुँचना चाहते हों आपके उपदेशके अनुसार चलना उनका सबसे पहला कर्त्तव्य है।"

शिवाजी उस समय कुछ विचारोंमें मग्न थे; छत्रसाल चुपचाप उन्हींकी ओर देखने लगे।

बहुत देरतक विचार-मग्न अवस्थामें रहकर शिवाजीने कहा,—"छत्रसाल! बुन्देलखण्डकी परिस्थिति और महाराष्ट्रकी परिस्थिति एक ही नहीं है। जिन प्रयत्नोंसे महाराष्ट्र देशमें स्वतन्त्रताकी प्राप्ति हुई है ठीक उन्हीं प्रयत्नोंसे ही बुन्देलखण्डमें सफलता नहीं हो सकती। देश, काल और परिस्थिति आदिका पूरा पूरा विचार करनेके उपरान्त अपने विवेकसे जो मार्ग ठीक जान पड़े उसीका अवलंबन करना सर्वोत्तम होता है। महाराष्ट्र बहुत दिनोंसे प्रायः स्वतंत्र ही रहा है; यहाँके निवासी स्वराज्य और स्वतंत्रताके सुखोंको भूले नहीं थे। इसी लिए उन्हें स्वराज्यकी ओर प्रवृत करनेमें न तो अधिक समय लगा और न अधिक परिश्रमकी आवश्यकता हुई। महाराज रामदासप्रभु और उनके कर्त्तव्य-दक्ष शिष्योंने कई वर्षों तक निरन्तर प्रयत्न करके दैवाधीन बने हुए निःसत्व महाराष्ट्रोंको उपदेशामृत बरसाकर सतेज, सबल और स्वावलंबी बनाया। महाराष्ट्रकी स्वतन्त्रताकी नीव तैयार होनेमें बहुत समय लगा था। लेकिन बुन्देलखण्डकी दशा वैसी नहीं है। बुन्देलखण्ड चाहे आज ही मुसलमानोंके अधिकारमें गया हो पर तो भी वहाँके स्वराज्य, स्वतन्त्रता और स्वावलंबका गौरवशाली इतिहास है। बुन्देले भले ही स्वराज्यका स्वरूप भूल गये हों, 'स्वतन्त्रता' शब्द उन्हें अपरिचितसा जान पड़ता हो, पर तो भी स्वराज्य और स्वतन्त्रताके फलोंका मधुर स्वाद वे अभीतक भूले न होंगे। इस लिए जब उन्हें एक बार इस बातका विश्वास हो जायगा कि जिन फलोंकी उन्हें आकांक्षा है वे फ़ल स्वराज्य या स्वतन्त्रताके वृक्षमें ही लगते हैं तब समझ लेना कि बुन्देलखंडकी स्वतन्त्रताकी पक्की नीव तैयार हो गई। बुन्देलखण्डकी प्रजा बहुत थोड़े समयमें और बड़ी सुगमतासे तैयार की जा सकती है। इसके अतिरिक्त वहाँकी प्रजा माण्डलिकों और सरदारोंके अधीन है; जब सब माण्डलिक और सरदार आपसमें मिल जायँगे तब वहाँकी प्रजाको भी विवश होकर उनका साथ देना पड़ेगा। छत्रसाल

तुम बुन्देलखंड पहुँचते ही पहले अपने स्वार्थका त्याग करके वहाँसे द्वेष और विरोधके बीजका नाश करो। अभिमानियोंके सामने नम्र बनकर, बुद्धिमानें समझा बुझाकर, अज्ञानियोंको उपदेश देकर और मूर्खोंको आशा दिलाकर उनके मनमें स्वतन्त्रताके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करो। सब लोगोंकी प्रकृति एक दूसरेसे अलग हुआ करती है इस लिए व्यक्तिगत कलह, व्यक्तिगत द्वेष और व्यक्तिगत मत्सरका पूर्ण रूपसे नाश नहीं हो सकता, तथापि जहाँतक हो सके तुम ऐसा उपाय करो जिसमें सब बुन्देले परस्परका वैरभाव, कलह, द्वेष और मत्सर भूलकर स्वतन्त्रताके कार्य्यमें सहायक बनें। पहले स्वतंत्रताके पवित्र झंडेके नीचे सब बुन्देलोंको एकत्र करो और तब स्वतन्त्रताके लिए लड़ना आरम्भ करो।"

उपदेशामृतवर्षासे पुलकित होकर छत्रसालने कहा,—"महाराज! जिस प्रकार महाराष्ट्रमें स्वामी रामदास लोगोंको स्वतन्त्रताका ज्ञान कराते फिरते हैं, उसी प्रकार बुन्देलखण्डमें प्राणनाथ प्रभु लोगोंको स्वतन्त्रताकी शिक्षा देते फिरते हैं। बुन्देलखण्डमें प्राणनाथप्रभुकी बातें राजाज्ञासे भी बढ़कर मान्य समझी जाती हैं। इसके अतिरिक्त दलपतिराय नामक एक तेजस्वी राजकुमार भी इसी उद्देश्यसे सारे बुन्देलखंडमें घूम रहे हैं। इस लिए मैं कह सकता हूँ कि बुन्देलखंडमें स्वतन्त्रतासम्बन्धी बहुत कुछ तैयारी हो चुकी है।"

शि०—"छत्रसाल! यदि बुन्देलखण्डमें इतनी तैयारियाँ हो चुकी हों तब तो तुम्हें बाकीका काम करनेके लिए तुरन्त वहाँ पहुँच जाना चाहिए। तुम वहाँ जाकर अपने शत्रुका संहार करो और विजयी हो। अपने देशपर फिरसे अधिकार करके राज्य करो। तुर्कों और मुगलोंका विश्वास न करके उनकी सेनायें नष्ट करो। यदि वे अधिक संख्यामें तुमपर आक्रमण करना चाहें तो मुझे समाचार दो; मैं सब प्रकारसे तुम्हें सहायता देकर उन्हें परास्त करूँगा। जिस समय उन्होंने मेरे साथ वैर आरम्भ किया था उस समय स्वयं भवानीने ही मेरी सहायता की थी जिसके कारण मैंने मुसलमानोंकी जरा भी परवा न की। बड़े बड़े यवन वीर मेरा सिर काटनेके लिए गर्व करके मुझपर आक्रमण करनेके लिए आये पर मैंने उन सबको काट गिराया। इस लिए तुम किसी बातकी चिन्ता न करो, अपने देशको लौट जाओ, सेना एकत्र करो और यवनोंको अपने देशसे बाहर निकाल दो। सदा हाथमें नंगी तलवार

रक्खो, परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करेगा। गो-ब्राह्मणका पालन करना, वेदोंकी रक्षा करना और समर-भूमिमें वीरता दिखलाना ही क्षत्रियोंका मुख्य कर्तव्य है। यदि इस काममें तुम्हारे प्राण भी निकल गये तो भी तुम सूर्य्यमण्डल भेदकर स्वर्ग पहुँच जाओगे और वहाँका अपार सुख भोगोगे। और यदि तुम युद्धमें विजयी हुए तो बुन्देलखण्डमें स्वराज्य स्थापित हो जायगा और तुम्हारी कीर्ति अमर हो जायगी। इसलिए स्वदेश जाओ और यवनोंसे युद्ध करो। यदि आवश्यकता पड़े तो बलिष्ठ शत्रु-सेनापर छापे डालकर उनका बल घटा दो। प्रामाणिक बुन्देले युवकोंको भेस बदलकर शत्रुका समाचार लानेकी आज्ञा दो। अपने अन्तःकरणमें बन्धु-प्रेमके तेलसे जलनेवाला भूतदयाका दीप सदा प्रज्वलित रहने दो। विश्वास रक्खो कि जबतक दासत्वका नाश न हो जायगा तबतक स्वदेशमें सुखों,सद्भावों और शान्तिकी वृद्धि नहीं होगी। स्वराज्यका पवित्र ध्येय सदा अपने सामने रक्खो। बुन्देले बहुत वीर होते हैं। जहाँ उनमें एक बार स्वराज्यप्रेम उत्पन्न होगा तहाँ वे यमराजकी तरह पराक्रम दिखलाकर स्वराज्य स्थापित कर लेंगे। छत्रसाल! हम लोग उसी जगन्नियन्ता परमेश्वरके बालक हैं न? हमने अन्याय या अत्याचारके लिए हाथमें तलवार नहीं ली है। अपना स्वार्थ सिद्ध करने, दूसरोंके नैसर्गिक अधिकार छीनने या अनावश्यक राज्य-तृष्णा पूरी करनेके लिए हम लोगोंने हथियार नहीं उठाये हैं। ईश्वर जो न्याय चाहता है वह जब दूसरे किसी मार्गसे नहीं हो सकता तभी विवश होकर हमें शस्त्र उठाना पड़ता है। हम लोग उस न्यायशाली परमेश्वरके एकनिष्ठ सेवक हैं। हमारे सरीखे सेवकोंको यशस्वी करना उसीके अधिकारमें है। हमारा काम निष्काम बुद्धिसे अपने कर्त्तव्योंका पालन करना ही है। यशस्वी होना उसी परमेश्वरकी इच्छापर अवलंबित है। जब हम मन लगाकर उसी परमेश्वरका काम करनेके लिए तैयार होंगे तब क्या वह हमसे सन्तुष्ट न होगा?"

छत्रसालने गद्गद होकर कहा,—"महाराज! आपके उपदेशामृतके सेवनसे मेरे मनमें एक प्रकारके नये तेजका संचार होने लगा है। मेरा निराश मन, किं-कर्तव्यविमूढ़ बनी हुई बुद्धि और तेजहीन आत्मनिष्ठा अब प्रबल, प्रगल्भ और तेजस्वी हो गई है। अब मैं यही चाहता हूँ कि जहाँतक शीघ्र हो सके मैं अपने देशमें पहुँचूँ। उसे स्वतंत्र करूँ और अपने भाइयोंको परतंत्रताके घोर नरकसे छुड़ाऊँ। लेकिन इससे पहले मुझे एक बार दिल्ली जाना पड़ेगा। महाराज!

राजा जयसिंह मुझपर बहुत प्रेम रखते हैं। देवगढ़वाले युद्धमें मैं दिल्लीपतिकी ओरसे लड़ा था।"

शिवाजीने छत्रसालकी ओर बड़े आनन्दसे देखते हुए कहा,—"दिल्लीपतिके साथ लड़नेसे पहले तुमने उसकी सेनाकी भीतरी अवस्था जान ली, यह बहुत ही अच्छा किया।"

राजा०—"राजा जयसिंह उनके सब सैनिकों और यहाँ तक कि स्वयं बहादुरखाँ कोकाने भी यह बात स्वीकृत की है कि देवगढ़के युद्धमें मेरे कारण ही दिल्लीपतिके पक्षकी जीत हुई है। इस लिए राजा जयसिंह चाहते हैं कि मैं एक बार दिल्ली जाकर बादशाहसे मिलूँ; वे बादशाहसे मेरे और मेरे देशके लिए सिफारिश करेंगे। उन्होंने मुझसे दिल्ली आनेके लिए बहुत आग्रह किया है; लेकिन मैं समझता हूँ कि दिल्ली जानेमें मेरा बहुतसा समय व्यर्थ नष्ट हो जायगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं दिल्ली न जाकर तुरन्त बुन्देलखण्ड पहुँच जाऊँ, और जहाँ तक शीघ्र हो सके लड़भिड़कर अपने देशको स्वतंत्र कर लूँ।"

शि०—"मैं यह मानता हूँ कि दिल्ली जानेमें तुम्हारा बहुतसा समय व्यर्थ नष्ट होगा। लेकिन युद्धका अन्तिम उपाय करनेके पहले यदि तुम दिल्ली हो आओगे तो समस्त बुन्देले अच्छी तरह समझ जायँगे कि अब युद्धके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। बुन्देलखण्डमें आलसी, निकम्मे और विलासी राजाओंकी ही अधिकता है, इस लिए जब तक शान्तिके सब उपाय न कर लिये जायँगे तबतक वे सहसा युद्धके लिए तैयार न होंगे। इस लिए दिल्ली जाकर पहले ही दिल्लीपतिसे नकारात्मक उत्तर पा लेना बहुत अच्छा है। तुम राजा जयसिंहकी बात मानकर पहले दिल्ली जाओ; पर वहाँ बादशाह तुमसे सीधी तरहसे बात भी न करेगा। जब बुन्देलखण्डके राजाओंको यह मालूम हो जायगा कि सीधे मार्गसे चलनेपर बादशाह नहीं मानता, तब उन्हें युद्धका अन्तिम मार्ग स्वीकृत करना पड़ेगा। दिल्लीसे होकर तुम तुरन्त बुन्देलखण्ड पहुँच जाओ। उपदेश देकर, प्रार्थना करके और जिस तरहसे हो सके लोगोंको अपने पक्षमें करो और बादशाहसे लड़नेके लिए तैयार हो। तुम्हारी मिलनसारी, तुम्हारा पवित्र उद्देश और तुम्हारा निःस्वार्थ व्यवहार देख कर युवक बुन्देले अवश्य ही तुम्हारी बात मान लेंगे। तुमने कहा था कि तुम

यहाँ रह कर कुछ दिनोंतक मेरी कार्य्यप्रणाली देखना चाहते हो। लेकिन परिस्थितिके कारण स्वतंत्रताका मार्ग सदा बदलता रहता है, इस लिए इस मार्गमें स्वातंत्र्य प्रेमसे बढ़कर और कोई अच्छा मार्गदर्शक नहीं हो सकता। इस लिए तुम व्यर्थ यहाँ भी समय मत गँवाओ। यदि तुमने इस प्रान्तमें रहकर मेरी सहायता ली और हम दोनोंने मिलकर शत्रुपर आक्रमण किया तो सारा यश लोग मुझे ही देने लगेंगे। उससे बुन्देलखंडका उतना लाभ नहीं होगा। इस लिए तुम स्वयं अपने देशमें जाकर युद्ध करो। थोड़े ही समयमें तुम्हें सैकड़ों मित्र मिल जायँगे, तुम यश-श्री प्राप्त करोगे और तुम्हारी कीर्ति अनन्त कालतक बनी रहेगी।"

शिवाजीके उपदेश सुनकर छत्रसालका हृदय आशा और उत्साहसे भर गया और उनकी आँखोंसे आनन्दाश्रु बहने लगे। वे बड़ी ही श्रद्धासे शिवाजीके चरणोंपर गिर पड़े। शिवाजीने प्रेमपूर्वक उन्हें उठाकर गले लगाया। भारतवर्षकी स्वतंत्रताके इतिहासमें यह मंगलमय प्रसंग बहुत ही महत्त्वपूर्ण समझा जायगा।

शीघ्र ही छत्रसाल दक्षिणसे चल पड़े। चलते समय शिवाजीने उन्हें प्रेमपूर्वक एक तलवार दी। छत्रसाल सदा यही समझते थे कि जबतक यह तलवार मेरे हाथमें है तबतक स्वयं शिवाजी मेरे साथ हैं।

देवगढ़के घनघोर युद्धमें औरंगजेबकी ही जीत हुई। औरंगजेब सारे दक्षिणको अपने अधिकारमें करना चाहता था और उसकी इस इच्छाकी पूर्तिका आरम्भ बहुत ही उत्तम रीतिसे हुआ था। इस विजयके कारण बादशाहके आज्ञानुसार दिल्लीमें बड़ा जशन हुआ था। सारा शहर खूब अच्छी तरह सजाया गया था, रोशनी हुई थी, अतिशबाजियाँ छूटी थीं, मसजिदोंमें नमाजें पढ़ी गई थीं और विजय करके लौटनेवाले राजा जयसिंह और बहादुरखाँ कोकाके नगर-प्रवेशके समय उनके आदर सत्कारका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था। शामकी नमाजके बाद तोपोंकी गड़गड़ाहट और अतिशबाजी आदिके उज्ज्वल प्रकाशमें उन विजयी वीरोंका स्वागत होनेको था। दिल्लीके उत्सवप्रिय नागरिक खूब बढ़िया बढ़िया कपड़े पहनकर चाँदनी चौकमें घूम रहे थे। विजयी वीरोंका स्वागत करनेके लिए नमाज पढ़कर स्वयं बादशाह भी वहाँ आनेको थे।

निरपेक्ष रूपसे पृथ्वीसे सब भागों, सब मनुष्यों और यहाँतक कि सभी सजीवों और निर्जीवोंपर समान रूपसे उपकार करनेवाले भगवान् अंशुमाली पृथ्वीके दूसरे गोलार्धको प्रकाशित करनेके लिए चले गये थे। आलमगीर बादशाहके मनमें पक्षपात भरा हुआ था और उसी पक्षपातके कारण वह थोड़ी देर बाद ही भारी अन्याय करनेवाला था; शायद इसी लिए अंशुमालीने वहाँ अधिक ठहरना उचित न समझा था। लोग समझते थे कि जब हाथीके हौदेमें बैठकर बादशाह सलामत इधर आवेंगे तब वे बहुत ही प्रसन्नवदन दिखाई पड़ेंगे। लेकिन सब लोगोंको यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि बादशाहका मुँह उस समय वैसा ही श्री-हीन हो रहा है जैसा कि किसी भयंकर पातक करनेवाले मनुष्यका मुँह लज्जा और आत्मनिन्दाके कारण हो जाता है। खैर! तोपें गड़गड़ाने लगीं; कर्कश रणवाद्य बजने लगे। जहाँपर दोनों विजयी वीरोंका स्वागत होनेको था वहाँ एक बहुत बड़ा शामियाना खड़ा किया गया था। उसी शामियानेके नीचे एक बहुत ऊँचे आसनपर औरंगजेब जा बैठा। इसके सिवा और भी बहुतसे सरदार, वजीर, उमरा आदि अपने अपने स्थानपर वहाँ बैठे हुए थे जो बादशाहके आते ही उठकर ताजीम बजा लाये। विजयी वीरोंका नगर-प्रवेश होने लगा।

बहादुरखाँ कोका अपने चुने हुए वीरोंके साथ बड़ी शानसे बढ़ता हुआ चाँदनी चौकके तरफ जा रहा था; पर उसकी ओर नागरिकोंका ध्यान नहीं गया। राजा जयसिंह भी कभी विजय-श्रीके कारण मन्द मन्द मुस्कराते हुए और कभी अपने साथके एक तरुण वीरसे बातें करते हुए चौककी तरफ बढ़ रहे थे; पर उनकी तरफ भी लोगोंका ध्यान नहीं गया। सबके मनों और सबके नेत्रोंका एक ही केन्द्र-स्थान था। सबकी उँगलियाँ एक ही ओर उठ रही थीं। सबके मनमें एक ही विषय वास कर रहा था। दिल्लीवालोंने किसी प्रकार पहले ही सुन रक्खा था कि देवगढ़का किला किसके अतुल पराक्रमसे सर हुआ है। बहुतसे लोग समझते थे कि देवगढ़को जीतनेवाला वीर खूब हट्टा-कट्टा, गठीले बदनका, अनुभवी, वृद्ध और क्रूरताकी प्रतिमा ही होगा। लेकिन जब उन्होंने सुना कि राजा जयसिंहकी बाईं ओरके घोड़ेपर सवार तेजस्वी वीरने ही देवगढ़का किला जीता है तब उनके आश्चर्यकी सीमा न रही। सबका ध्यान उसी वीरकी ओर लग गया। बहादुरखाँ कोका बादशाहके पास ही एक आसनपर बैठ गया। राजा जयसिंहको भी बैठनेके लिए बादशाहके निकट ही एक स्थान

मिल गया। पर सबके नेत्र उसी तरुण वीरकी ओर लगे हुए थे जो चुपचाप एक कोनेमें खड़ा हुआ था। सब लोग समझते थे कि उस वीरको भी बादशाहके पास बैठनेकी आज्ञा मिलेगी। लेकिन सब लोगोंको यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि देवगढ़का यशस्वी और विजयी वीर जिस ओर खड़ा हुआ था उस ओर औरंगजेब जान बूझकर न देखता था। राजा जयसिंहको इस बातसे बहुत ही दुःख और आश्चर्य हुआ; क्यों कि वे पहलेसे ही छत्रसालकी वीरताका पूरा पूरा समाचार बादशाहको भेज चुके थे। ऐसी दशामें बादशाहकी उदासीनता वे सहन न कर सके। छत्रसालके सम्बन्धमें वे कुछ कह न सकें, इसी लिये बादशाहने देवगढ़के युद्धकी बात छोड़ दी और राजा जयसिंह तथा छत्रसालको चिढ़ानेके लिए बहादुरखाँ कोकाकी बहुत कुछ तारीफ भी की। इसपर उन्हें और भी बुरा मालूम हुआ और वे कुछ कहनेके लिए उठकर खड़े हुए। पर कपटी औरंगजेबने उन्हें कुछ कहनेका अवसर ही न दिया और स्वयं उनसे कहा:—

"राजा साहब! आप शायद छत्रसालके बारेमें कुछ कहना चाहते हैं। मुमकिन है, देवगढ़ फतह करनेमें छत्रसालने भी कुछ बहादुरी दिखलाई हो और आप लोगोंको थोड़ी बहुत मदद दी हो, लेकिन उसकी यह खिदमत कुछ बहुत ज्यादः काबिल-कदर नहीं है। महेवाका खानदान हमेशासे सलतनत और दीन इस्लामका सख्त दुश्मन है और चम्पतराय या छत्रसालके बागी होनेमें किसी तरहका शक नहीं किया जा सकता। इस लिये उसके साथ किसी तरहकी रिआयत करना या उसे किसी मरतबेतक पहुँचाना सरासर बेजा और गैर-वाजिब है। एक बार चम्पतरायको मन्सब दिया गया; उसका जो कुछ नतीजा हुआ वह आप लोगोंपर रोशन ही है। छत्रसालके लिए यही बड़ी खुशकिस्मतीकी बात है कि उसे पुरानी बगावतों और गुस्ताखियोंकी कोई सजा नहीं दी जा रही है। सलतनतको ऐसे बागियोंकी खिदमतकी कोई जरूरत नहीं है। आप फजूल उसके लिए किसी तरहकी सिफारिश न करें। हाँ आप लोगोंने जो कुछ खिदमतें की है वे बेशक काबिल-कदर हैं।"

राजा जयसिंह बड़े ही लज्जित और दुःखी हुए। उनकी समझमें न आया कि क्या कहें और किस प्रकार कहें। इसी बीचमें एक बार बादशाहकी नजर छत्रसालपर जा पड़ी। उसने उनकी आन और तेजी देखी, वह पहले तो कुछ

लज्जित हुआ, फिर कुछ घबराया और अन्तमें क्रोधसे लाल हो गया । लेकिन उसने अपनी इस दशाका किसीको ज्ञान न होने दिया और तुरन्त दूसरी ओर दृष्टि फेर ली और धीरे धीरे एक अमीरसे बातें शुरू कर दीं। राजा जयसिंहने बादशाहकी यह दशा ताड़ ली थी। वे दुःखी तो पहलेसे ही थे; बादशाहकी वह विकट उदासीनता और क्रोध देखकर वे और भी आवेशमें आ गये। उनसे यह पक्षपात देखा न जाता था। उस समय और कोई उपाय न देखकर वे लहूका घूँट पी गये और चुपचाप अपनी जगहपर बैठ गये । इतनेमें छत्रसाल अपने स्थानसे बढ़कर उनके पास पहुँच गये और उनके सामने खड़े होकर कहने लगे,—

"चाचाजी! व्यर्थ विषकी अधिक परीक्षा करनेसे कोई लाभ नहीं। कोयलेको बार बार धोनेसे कोई फल नहीं । अब आप मुझे देश जानेकी आज्ञा दीजिए। मेरा मन देशवासियोंकी ओर ही लगा हुआ है। केवल आपकी आज्ञाके अनुसार और आपको सन्तुष्ट करनेके लिए ही मैं अपनी इच्छाके विरुद्ध यहाँ आया था। अब मैं चलता हूँ।"

इतना कहकर छत्रसाल वहाँसे चलनेके लिए तैयार हुए। उस समय उन्होंने देखा कि सब लोगोंकी, यहाँतक कि स्वयं बादशाहकी भी, दृष्टि मेरी ही ओर लगी हुई है, इस लिए उन्होंने वह अवसर हाथसे जाने देना ठीक न समझा और बादशाहकी ओर देखकर कहा,—

"मैं किसी मन्सब, खिताब या जागीरके लालचसे यहाँ नहीं आया था। राजा साहब मेरे चचाके बराबर हैं और मुझपर बहुत मेहरबानी रखते हैं। उन्हींके हुक्मसे मैं यहाँ आया था । सलतनतका नौकर बनकर मैंने देवगढ़का किला फतह नहीं किया था। जो शख्स बुन्देलोंको मुसलमानोंकी गुलामीसे निकालनेके लिए अपनी जान तक देनेको तैयार हो वह मुसलमानोंकी गुलामी नहीं कर सकता। मैं जिस मतलबसे राजा साहबके साथ दक्खिन गया था मेरा वह मतलब पूरा हो गया। मैंने जिस तलवारसे देवगढ़ जीता था अब मेरी वही तलवार बुन्देलोंको गुलामीसे निकालनेके लिए बिजलीकी तरह चमकेगी। याद रहे, बुन्देलखण्डका हर एक बुन्देला छत्रसाल है । (राजा जयसिंहकी ओर देखकर) चाचाजी! अब मैं चलता हूँ। विन्ध्यवासिनीके आगामी महो-

त्सवपर यदि आप पधारनेका कष्ट करेंगे तो बड़ी कृपा होगी। आप मेरे लिए किसी प्रकारकी चिन्ता न करें; मेरी रक्षा स्वयं भगवती विन्ध्यवासिनी करेगी।"

इतना कहकर छत्रसाल वहाँसे बड़ी तेजीसे निकल गये। दिल्लीके जो नागरिक उनके पराक्रमकी बात सुनकर चकित हो गये थे; वे उनका आवेशपूर्ण भाषण सुनकर और उन्हें अकस्मात् अदृश्य होते देखकर और भी स्तम्भित हुए। छत्रसालके सिवा और किसीका जिक्र उन्हें अच्छा ही न लगता था।

× × × ×

चौबीसवाँ प्रकरण।

विमल-विजय।

भगवान् श्री रामचन्द्रने स्वदेशसे पैर बाहर रखते समय कहा था,—"लक्ष्मण! यदि यह लंका सोनेकी भी हो तो भी वह मुझे अच्छी न लगेगी। जननी और जन्मभूमि स्वर्गसे भी बढ़कर श्रेष्ठ हैं।" भगवान्का यह अमृतोपम उद्गार प्रत्येक स्वदेशभक्तके मनमें किसी न किसी रूपमें निरन्तर घर किये रहता है। स्वदेशको निर्धन समझकर धन कमानेके लिए परदेश जानेवाला मनुष्य, स्वदेशको निर्वीर्य्य समझकर अपना बाहुबल दिखलानेके लिये विदेश जानेवाला वीर, या स्वदेशको नीरस समझकर सृष्टिसौन्दर्य्य देखनेके लिए आसपासके प्रदेशोंमें घूमनेवाला रासिक भी अपनी जन्मभूमिकी ओर लौटनेके लिए कितना आतुर होता है। तब रत्नोंकी खानोंसे भरे हुए, बड़े बड़े वीरोंसे पूर्ण और सृष्टि-सुन्दरीके विलासगृह बने हुए बुन्देलखंडको देखनेके लिए छत्रसाल सरीखे मातृ-भूमिके निस्सीम भक्त कितने आतुर हुए होंगे, इसका अनुमान मातृभूमिके सच्चे पुत्र और भक्त ही कर सकते हैं। पित्राज्ञाके भारी भारी पुश्ते तोड़कर, कठिन कर्तव्यके दुर्गम बुर्जोंको लाँघकर श्रीरामचन्द्रका जन्मभूमिके प्रति प्रेम स्वर्गसुखको धिक्कारकर भारतभूमिके दक्षिणी छोरसे उत्तरी छोरतक, लंकासे अयोध्यातक पलक मारनेमें पहुँच जाता था। उसी प्रकार देवगढ़के युद्धमें अनुपम वीरता दिखलाते समय, शिवाजी महाराजसे बातें करते समय, दिल्लीमें

बादशाहके सामने बोलते समय छत्रसालका शरीर तो उन उन स्थानोंपर ही रहता था पर मन सदा बुन्देलखंडमें ही संचार करता था। लेकिन जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रको सोनेकी लंका अच्छी नहीं लगी, और विभीषणका आदर-सत्कार छोड़कर अयोध्याकी ओर लौटना उन्हें स्वर्ग-सुखसे भी बढ़कर अच्छा जान पड़ा, उसी प्रकार दिल्लीकी सुन्दरता और शोभा छत्रसालको अच्छी न लगी और जयसिंहजीसे आज्ञा लेकर जहाँतक शीघ्र हो सका वे बुन्देलखण्ड पहुँचे। बुन्देलखण्डकी सीमामें पहुँचकर वे ज्यों ज्यों आगे बढ़ते जाते थे त्यों त्यों उन्हें मालूम होता जाता था कि प्राणनाथप्रभुके उपदेशोंने सारे बुन्देलखण्डकी प्रजाके विचारोंमें कितना अधिक विलक्षण परिवर्तन कर दिया है।

शीशेमें पड़नेवाले प्रतिबिंबको पकड़नेके लिए जिस प्रकार बालक तरह तरहके प्रयत्न करते हैं उसी प्रकार बेतवा नदीमें पड़नेवाले पेड़ोंके प्रतिबिंबको पकड़नेके लिए उसके तलपर सूर्य्य अपना सुवर्ण-कर बार बार फैला रहा था। बेतवा नदीके किनारे खड़े हुए दो सुकुमार बालक उसका यह निरर्थक प्रयत्न देख रहे थे। उनका वेष और चर्या आदि देखकर यह नहीं कहा जा सकता था कि ये केवल सृष्टिसौन्दर्य्य देखनेके लिए ही वहाँ आये हैं। सृष्टिकी शोभा देखनेके लिए निकलनेवालोंको इतने शस्त्रोंकी क्या आवश्यकता है? उनका मुँह इतना गम्भीर क्यों होने लगा? उनके मुँहपर आनन्दके अतिरिक्त दूसरे विकार क्यों झलकने लगे? एक एक पैर उठानेमें वे इतने सचेत और सावधान क्यों होने लगे?

लेकिन इतनेमें ही अपनी गम्भीरताका त्याग करके एक कुमारने अपने दूसरे साथीसे कहा,—"विमलदेव! वीरोचित आभूषण और वस्त्र आदि पहनकर तथा शस्त्र धारण करके अपने हाथके कृत्यों और मनके विचारोंको भी वैसा ही वीरोचित स्वरूप देना पड़ता है; नहीं तो असंबद्धताका दोष आ जाता है और सारा ढोंग खुल जाता है।"

अपने साथीकी ओर देखते हुए मधुर स्वरसे विमलदेवने कहा,—"मेरे लिए तुम जरा भी चिन्ता न करो। मेरा तो सदा यही वेष रहता है और उसका निर्वाह करना मुझे बहुत अच्छी तरह आता है। लेकिन विजयदेव! मुझे सबसे अधिक चिन्ता तुम्हारी है। मैं आठ दिनसे बराबर तुम्हें सिखाता हूँ, पर तो भी तुमसे बराबर भूलें होती ही रहती हैं।"

विज०—" भला बतलाओ तो सही मुझसे कब कौनसी भूल हुई ? किसीके 'विजयदेव' कहकर बुलानेपर मैं कब घबराया ? सेवकोंसे जुहार लेते समय मैं कब लजाया ? मेरे चेहरेपरसे मरदानापन कब कम हुआ ? मेरी गतिपर तुम मुझे कई बार रोक चुके हो, पर यहाँ आते समय रास्तेमें मेरी चाल कितनी मरदानी थी ! विमलदेव ! इस भेसके बदलनेमें तुम अवश्य ही मेरे गुरु हो; पर तो भी इस समयका मेरा व्यवहार देखकर तुम्हें मेरे सामने हार माननी पड़ेगी।"

विम०—" हाँ हाँ, क्यों न हो ! आज तुम्हारी चालका क्या कहना है ! तुम्हें चलते हुए देखकर मालूम होता है कि समुद्रमें लहरें उठ रही हैं। उसी दिन दिये हुए पाठको अपने शिष्यसे ठीक ठीक सुनकर और पुराने सब पाठोंको भूला हुआ देखकर जितना आनन्द गुरुजीको हो सकता है, उतना ही आनन्द तुम्हें और तुम्हारी चाल देखकर आज मुझे हो रहा है। विजयदेव ! जब छत्रसालसे मिलनेके लिए जानेके समय रास्तेमें ही तुम्हारी दृष्टि इतनी कोमल हो चली, तुम्हारे कपोल लज्जासे लाल दिखाई पड़ने लगे और तुम्हारे माथेपर पसीनेकी बूँदोंका सुन्दर किरीट बन गया, तब छत्रसालसे भेंट होनेपर तुम्हारी क्या दशा होगी ?"

विजयदेवने मुस्कराते हुए कहा,—"वही, जो तुम्हारी होगी। मनुष्यमात्रमें यह एक विशेष गुण होता है कि उसे दूसरोंके तो छोटेसे छोटे दोष दिखाई पड़ते हैं; पर अपने बड़ेसे बड़े दोष भी ध्यानमें नहीं आते। पर उससे भी बढ़कर तुममें एक यह विशेषता है कि तुम्हें स्वयं अपने दोष मुझमें दिखलाई पड़ते हैं। तुम्हारे मनोहर नेत्र अमृतकी वर्षा कर रहे हैं, तुम्हारी चंचल भ्रू-लता बराबर नृत्य कर रही है और तुम्हारे सुन्दर मुखसे भावी सुखकी आशाके कारण प्रसन्नता मानो टपकी पड़ती है, पर जान पड़ता है कि शायद तुम्हें यह बात मालूम नहीं है कि तुम ऐसी स्थितिमें छत्रसालके सामने जा रहे हो !"

विम०—" विजयदेव ! जयसागर सरोवरमें डूबते समय मैं जिस वेषमें था वह तो तुम्हें मालूम ही है। उस समय मुझे स्त्री-वेषमें देखकर जब छत्रसालको मेरे विषयमें कुछ भी सन्देह न हुआ, तब मुझे पुरुष-वेषमें देखकर वे क्यों कर सन्देह करेंगे ? जो लगातार सोलह वर्षोंसे इसी पुरुष वेषमें रहा आया है, जिसे सब लोग युवराज और राजपदका अधिकारी समझते हों, वर बनाकर जिसका विवाह किया गया, नृपति मानकर जिसका अभिषेक हुआ, उसे कौन कह

सकेगा कि यह पुरुष नहीं बल्कि स्त्री है ? मुझे दृढ़ विश्वास है कि छत्रसालको मेरे वास्तविक स्वरूपके सम्बन्धमें शंका नहीं होगी । शीघ्र ही मैं छत्रसालके स्वतंत्रता-सम्बन्धी युद्धमें भी सम्मिलित होऊँगा। लेकिन तुम्हारे विषयमें मुझे बड़ी शंका हो रही है । ऐसे गुलाबी गाल, सुन्दर और सुडौल हाथ, मधुर मुसकान और कोमल शरीर देखकर छत्रसाल तुरन्त ही समझ लेंगे कि यह समर-भूमिमें लड़नेके योग्य नहीं बल्कि अंतःपुरमें रहनेके योग्य है; और तब तुम्हें विजयदेवसे विजया बनकर छत्रसालका अंतःपुर सुशोभित करना पड़ेगा ।"

विजयदेवने हँसते हुए पूछा,—" लेकिन क्या मेरे वर्तमान पतिराज विमलदेव मुझे ऐसा करनेकी आज्ञा देंगे ? "

विम०—" यह तो विवाहके दिन ही निश्चित हो चुका है कि इस विवाहका अन्तिम परिणाम कैसा अच्छा होगा । जहाँ विजया, नहीं नहीं विजयदेव रहेंगे वहीं विमलदेव भी रहेंगे ।"

विज०—" जान पड़ता है कि तुम लौकिक दृष्टिकी इस सहधर्मिणीको अपनी सहवासिनी बनाना चाहते हो । पतिदेव ! समय पड़नेपर अपनी प्रिय पत्नीपर यह अनुग्रह करना तुम भूल तो न जाओगे ? "

विम०—" विजयदेव—"

विज०—" तुमने यह ' विजयदेव ' ' विजयदेव ' क्या लगा रक्खा है ? ऐसे एकान्त स्थानमें असली नाम लेकर क्यों नहीं पुकारते ? कमसे कम जब केवल तुम और हम ही हों तब तुम मुझे ' विजया ' ही कहा करो, मुझे इसीमें सबसे अधिक आनन्द होगा । "

विम०—" लेकिन तुम्हारे इस क्षणिक आनन्दके लिए मैं छत्रसालके सह-वास-सुखको नहीं छोड़ सकता । जब तक बुन्देलखण्ड स्वतंत्र न हो जायगा तब तक हम लोग विमलदेव और विजयदेव ही रहेंगे । क्योंकि इसी रूपमें हम लोग छत्रसालके साथ रह सकेंगे । जब बुन्देलखण्ड स्वतंत्र हो जायगा तब विमल-देवसे विमला और विजयदेवसे विजया बननेमें अधिक विलम्ब न लगेगा ।"

विज०—" विमलदेव ! तुम्हारा कहना बहुत ही ठीक है । जो उद्देश्य पूरा करनेके लिए हम लोग राजप्रासादसे निकले हैं जबतक वह पूरा न हो जाय तब तक हम लोगोंको इसी नकली भेसमें रहना चाहिये । अगर छत्रसाल हम

लोगोंका वास्तविक स्वरूप समझ गये तो वे हम लोगोंको अपने साथ समरभूमिमें क्योंकर ले जायँगे ? हम लोग उनकी सेवा किस प्रकार करने पावेंगे ?"

विम०—"विजयदेव ! भावी सुखका ध्यान रखकर हम लोगोंको बड़ी होशियारीसे चलना चाहिए। इस बातका पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए कि छत्रसाल या उनके साथी हमारा असली भेद न जान लें। नहीं तो सारा खेल बिगड़ जायगा। लेकिन विजयदेव ! छत्रसालके पास जाने और उनकी सेवा करनेके लिए तो हम लोग तैयार हो गये, पर हम लोगोंने यह न सोचा कि उनकी कौन सेवा करेंगे। क्या तुमने कुछ सोचा है कि तुम अपने लिए उनसे कौनसा काम माँगोगे ?"

विजयदेवने दृढ़ होकर कहा,—"मैंने तो निश्चित कर लिया है कि युद्धके समय हाथमें तलवार लेकर मैं छत्रसालकी सहायता करूँगा और जिस समय सब लोग छावनीमें आराम करेंगे उस समय छत्रसालके खेमेमें जाकर उनकी सेवा करूँगा।"

विमलदेवने कुछ चिन्तित होकर कहा,—"आठों पहर छत्रसालकी सेवा करनेमें तो मुझे बहुत आनन्द होगा; लेकिन समर-भूमिमें खड़े होकर तलवार किस प्रकार चलाई जायगी ? जो तलवार आजतक केवल शोभाके लिए ही मैं लटकाये फिरता था उसे म्यानसे बाहर निकाल कर मैं शत्रुओंपर किस प्रकार वार करूँगा। अपने समान जीते हुए मनुष्योंपर उसका आघात किस प्रकार हो सकेगा ? खूनकी बहती हुई नदियों और लाशोंके लगे हुए पहाड़ देखकर मन और नेत्र किस प्रकार स्थिर रक्खे जा सकेंगे ? विजयदेव ! समरभूमिसे तो हम लोग बिलकुल ही अपरिचित हैं। हाथमें तलवार लेकर हम लोग उनकी मदद किस तरह कर सकेंगे ?"

विज०—"विमलदेव ! तुम इन सब बातोंकी चिन्ता न करो। बड़े बड़े पराक्रमी वीरोंका भी समरभूमिमें जानेके लिए एक बार पहला दिन होता ही है। साहसी, वीर और कड़े दिलके होनेके लिए उन्हें भी समर-देवतासे बहुतसे पाठ पढ़ने पड़ते हैं। छत्रसाल और उनके पराक्रमी सैनिकोंको सहायता देनेके लिए स्वयं भगवती विन्ध्यवासिनी समरभूमिमें संचार करने लगेंगी। वे ही हम लोगोंको भी तलवार पकड़ने और चलानेमें समर्थ बनावेंगी। उन्हींकी स्फूर्तिसे स्वतंत्रताका कार्य पूरा होगा और छत्रसालको विमल-विजयकी प्राप्ति होगी।"

इतना कहकर विजयदेव धीरे धीरे आगे बढ़ने लगे। चार कदम आगे बढ़नेके उपरान्त जब उन्होंने पीछेकी ओर मुड़कर देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि विमलदेव हर्ष-रोमांचित वदनसे वहीं निश्चल खड़े हुए हैं और पासके एक वृक्षकी ओटसे आनेवाले एक व्यक्तिकी ओर टक लगाये देख रहे हैं। उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि उन्हें अपना परिचित प्रेमपूर्ण और मधुर स्वर सुनाई पड़ा—

"मित्रो! ठहरो, ठहरो! खोई हुई स्वतन्त्रता फिरसे प्राप्त करनेके लिए जब तुम्हारे सरीखे सुकुमार और कोमल तरुण समर-भूमिमें जानेके लिए तैयार हो गये तब छत्रसालको विमल-विजय मिलनेमें देर न लगेगी! बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके झण्डेके नीचे मैं अत्यन्त प्रेमसे तुम लोगोंका स्वागत करता हूँ।"

विमलदेव और विजयदेव टक लगाये छत्रसालके तेजस्वी वदनकी ओर देखते हुए चुपचाप खड़े रहे।

छत्रसाल ज्यों ज्यों विमलदेव और विजयदेवके पास पहुँचने लगे त्यों त्यों उनका आनन्द और आश्चर्य बढ़ता गया। विमलदेव और विजयदेवका सौन्दर्य एक दूसरेसे बढ़कर था, उनके मुखों और भावोंकी पवित्रता मानो विमलताको भी लज्जित करती थी, उनमें फूलोंकीसी मृदुलता और कोमलता थी, उनकी आँखें बिजलीकी तरह चमकती हुई मानो अमृतकी वर्षा कर रही थीं, उनका शरीर बड़ा ही सुन्दर और सुडौल था और उनकी कान्ति परम मनोहर और चित्ताकर्षक थी। उन्हें देखते ही छत्रसाल थोड़ी देरतक हक्के बक्केसे हो रहे। जयसागर सरोवरपर दैवी सौन्दर्य और मानवी सौन्दर्यके दर्शनसे छत्रसालके मनकी जैसी स्थिति हुई थी ठीक वैसी ही आज भी हुई। वे विमलदेव और विजयदेवकी ओर प्रेमपूर्वक देखने लगे।

अन्तमें विमलदेवने बहुत साहस करके नम्रतापूर्वक अभिवादन करते हुए कहा,—"महाराज! आपकी सेवाके लिए विमलदेव अपना शरीर अर्पित करनेको तैयार है।"

छत्र०—"कौन? विमलदेव!"

विज०—"महाराज! यह विजय भी आपकी सेवाके लिए अपना शरीर अर्पित करता है।"

छत्र०—"और तुम विजय! यह विमल विजयकी जोड़ी आजसे मेरी हुई न? चलो, आज मुझे विमल विजयका लाभ हुआ। रक्त बहाकर, मनुष्योंकी हत्या करके और क्रूरता दिखलाकर जो विजय प्राप्त हो उसकी अपेक्षा यह विमल-विजय बहुत ही पवित्र और मंगलकारक है। विमल! और तुम नव-परिचित विजय! क्या तुम लोग मेरे साथ भयावने समरक्षेत्रमें चलोगे?"

विमलदेव और विजयदेवने एक साथ ही उत्तर दिया,—"जी हाँ महाराज! तम्बूमें विश्रान्तिके समय आपकी सेवा करना हम लोगोंको जितना अच्छा लगता है, समरक्षेत्रमें अपने शत्रुके साथ लड़ना भी हम लोगोंको उतना ही भला मालूम होता है।"

बड़े कौतुकसे विमल विजयकी ओर देखते हुए छत्रसाल बोले,—"सुकुमार कुमारो! तुम्हारे फूलों सरीखे कोमल शरीरोंको देखनेसे जान पड़ता है कि तुम लोगोंने सेवा करनेके लिए नहीं बल्कि सेवा करानेके लिए जन्म ग्रहण किया है। छत्रसालको अपनी सेवा करानेकी आवश्यकता नहीं। बल्कि तुम्हारे सरीखे सुकुमारोंकी सेवा करनेमें ही मुझे विशेष आनन्द होगा। तुम लोग मेरे साथ मेरे तंबू तक चलो। महाराज प्राणनाथ प्रभुके दिव्य उपदेशसे सारा बुन्देलखण्ड कैसा खड़बड़ाकर जाग उठा है! रणवीर बुन्देले देखें कि उद्यानोंके पुष्पों, आकाशके नक्षत्रों और घरके बालकोंमें भी जो कोमलता नहीं मिल सकती, वह कोमलता केवल स्वतंत्रताके लिए भीषण रणक्षेत्रमें उतरनेके लिए तैयार हुई है। इन सुकुमार कुमारोंको रणक्षेत्रमें जाते देखकर प्रत्येक वीरमें आत्म-निष्ठा उत्पन्न होगी और उनमें रणोत्साहका तेज प्रकाशित होने लगेगा। तुम्हारे समान अलौकिक सुन्दर, पवित्र और कोमल देवदूतोंको बुन्देलखंडकी स्वतंत्रताके लिए लड़ते देखकर विन्ध्यवासिनीदेवी सन्तुष्ट होंगी, हम लोगोंको वरदान देंगी और हमारे देशको स्वतंत्र करेंगी।"

विम०—"महाराज! हम लोग आपके पास जानेके लिए तैयार हो कर ही घरसे निकले थे।"

छत्र०—"लेकिन तुम लोग मेरा पता किस प्रकार लगाते?"

विज०—"तारकाओंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि तारकापति कहाँ मिलेंगे, भक्तोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि परमे-

श्वर कहाँ मिलेंगे, भ्रमरको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं होती कि मकरंद कहाँ मिलेगा। ठीक उसी प्रकार हम लोगोंको यह जाननेकी आवश्यकता नहीं थी कि बुन्देलखण्डका स्वातंत्र्य-रवि हम लोगोंको कहाँ मिलेगा। तारकापतिका केवल तेज ही तारकाओंको आकर्षित करता है, परमेश्वरका केवल प्रेम ही भक्तोंको अपनी ओर खींचता है और मकरंदकी केवल सुगन्धि ही भ्रमरोंको अपने पास बुला लेती है। लेकिन महाराज आपके अद्वितीय तेज, अलौकिक प्रेम और उत्कट सद्गुण-सुगन्ध इन तीनों पदार्थोंके कारण कौन तारका आपके पास न पहुँचेगी, कौन भक्त आपके समीप न पहुँचेगा और कौनसा भ्रमर आपके चारों ओर न गुंजारेगा? आपकी सेवा करनेके उद्देश्यसे जिस समय हम लोग अपने स्थानसे चले उस समय आपका तेज गुप्त रूपसे हम लोगोंको मार्ग दिखाने लगा और आपका सद्गुण-सुगन्ध हम लोगोंके प्रवासका श्रम मिटाने लगा। इस प्रकार आपका पता लगानेमें हम लोगोंको कोई कठिनता नहीं हुई।"

"विम०—ओड़छेका राज-प्रासाद छोड़नेके क्षणभर बाद ही आपसे भेंट हो गई, इसीसे आप समझ सकते हैं कि हमारा मार्ग-दर्शक कितना चतुर है।"

छत्र०—"विमलदेव! क्या तुम्हारी माता रानी हीरादेवी तुम्हारा स्वतन्त्रताके झण्डेके नीचे जाकर लड़ना पसन्द करती हैं?"

विम०—"यदि उन्हें मेरा यह काम पसन्द होता तो मुझे इस प्रकार छिपकर अपने महलसे निकलनेकी क्या आवश्यकता थी? उस समय ओड़छेके प्रधान प्रवेश-द्वारपर स्वतंन्त्रताका झण्डा खड़ा करके, नौबत बजवाकर, विन्ध्यवासिनीका प्रचण्ड जयजयकार करके, चतुर्भुजका मंगल नामोच्चार करके, हजारों वीरोंके साथ मैं आपकी सहायताके लिए आता। लेकिन मेरा ऐसा भाग्य कहाँ? इसी लिए मुझे छुक छिपकर आपके पासतक आना पड़ा। महाराज! आपके पिताजीके राष्ट्रोद्धारके प्रयत्नमें मेरी माताने जितना विरोध किया था उतना ही विरोध वह आपके प्रयत्नमें भी करना चाहती है। जबसे उसने सुना है कि आप बुन्देलखण्डमें लौट आये हैं, बड़े उत्साहसे सेना एकत्र कर रहे हैं और बुन्देलखण्डके बड़े बड़े गरोह आपको खोजते हुए पहुँचते हैं तबसे वह बहुत ही घबरा रही है। परसों वह अपने पक्षवाले सहचरोंका फिर एक दरबार दीवानखानेमें करनेवाली है। उसमें इसी बातपर विचार होगा कि आपका प्रयत्न किस प्रकार निष्फल किया जाय और आपके सहायकोंका कैसे नाश हो—"

छत्रसाल एकाग्र चित्तसे विमलदेवकी बातें सुन रहे थे। विमलदेवने आगे कहा,—"लेकिन मैं जहाँतक समझता हूँ, उस दरबारमें भी उनका वह उद्देश्य पूरा न होगा। क्योंकि प्राणनाथ प्रभु और युवराज दलपतिरायके अविश्रान्त परिश्रमके कारण प्रत्येक बुन्देलेको अपना श्रेष्ठ कर्त्तव्य दिखाई पड़ने लगा है। इसी लिए जो बहुतसे राजा और सरदार पहले उनके पक्षमें थे, वे अब उनका पक्ष छोड़ कर आपकी ओर आ जायँगे।"

छत्र०—"विमलदेव! तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। प्राणनाथप्रभुने अपनी दिव्यवाणीसे सचमुच बुन्देलखण्डमें विलक्षण क्रान्ति कर दी है। अभी तक मैंने छावनीका स्थान निश्चित नहीं किया है, अभीतक मैंने युद्धका निश्चय प्रकट नहीं किया है, अभी तक मैंने अपने विचार लोगोंको नहीं बतलाये हैं तो भी असंख्य बुन्देले युवक मेरी खोजमें घूम रहे हैं। विमलदेव! मैं एक बार तुम्हारी मातासे मिलना चाहता हूँ। उनके पक्षके लोगोंको मैं एक बार समझाना चाहता हूँ। मैं यह सुनना चाहता हूँ कि वे लोग स्वतन्त्रताके विरुद्ध क्यों प्रयत्न करते हैं और तदुपरान्त मैं उनसे न्यायपक्ष ग्रहण करनेके लिए प्रार्थना करना चाहता हूँ। इस लिए मैं चाहता हूँ कि परसोंवाले दरबारमें मैं भी किसी प्रकार पहुँच जाऊँ।"

विजयदेवने पूछा,—"क्या आपको इस बातकी आशा है कि रानी हीरादेवी और उनके पक्षके लोग आपकी बात स्वीकार करेंगे?"

छत्र०—"चाहे वे लोग मेरी बात स्वीकार करें और चाहे न करें, पर मैं उन्हें एक बार अवश्य समझाऊँगा। मेरा दृढ़ विश्वास है कि परस्परके मत्सरकी आगमें जलनेवाली आत्मायें प्रार्थना और कोमल शब्दोंसे शान्त हो जाती हैं। इस लिए मैं मान—अपमान, सुख—दुःख आदिका विचार न करके अपने बुन्देले भाइयोंको स्वतंत्रतादेवीका सच्चा भक्त बनाऊँगा। विमलदेव! चतुर्भुजके देवालयकी मूर्ति तोड़नेके लिए फिदाईखाँने कौनसा दिन नियत किया है?"

विम०—"जब पहली बार चतुर्भुजका मन्दिर तोड़नेमें फिदाईखाँको सफलता नहीं हुई तब उसने दिल्लीसे उसके तोड़नेका एक शाही फरमान मँगवाया है। दो दिन बाद दीवानखानेमें हीरादेवीका एक दरबार फिर होगा। जिस समय दरबार होता रहेगा उसी समय फिदाईखाँके सिपाही जाकर मन्दिर तोड़ डालेंगे।"

छत्र०—"बहुत ठीक। लेकिन क्या तुम लोग जानते हो कि रणदूलहखाँ किस कामके लिए ढाँड़ेर गया है?"

पहले तो विमलदेव कुछ देर तक चुप रहे और तब विजयदेवकी ओर देखते हुए बोले,—"राजा कंचुकीरायने अपना राज्य उसे दे देना निश्चित किया है। इसी लिए वह बड़ी धूमधामसे कल सन्ध्या समय ढाँड़ेर गया है।"

छत्र०—(आश्चर्यसे) "क्या कहा? राजा कंचुकीराय अपना राज्य रणदूलहखाँको दे देंगे? उन्हें क्या हो गया है जो वे दुर्वल हिन्दुओंकी शक्तिका इस प्रकार नाश करनेपर तुल गये हैं? क्या उन्हें कोई कहने सुननेवाला नहीं है?"

विम०—"महाराज! आरम्भसे ही उनके कैसे विचार हैं वे किसीसे छिपे नहीं हैं। तिसपर मेरी माताने उनसे कह दिया है कि तुम अपना राज्य रणदूलहखाँको दे दो, नहीं तो महाराज छत्रसाल तुम्हारे राज्यपर आक्रमण करके उसपर अधिकार कर लेंगे। यह भी निश्चित हुआ है कि विजयाका विवाह किसी बहुत ही साधारण सरदारके पुत्रसे कर दिया जाय और उन दोनोंको राज्यका अंश भी न दिया जाय। ढाँड़ेरकी प्रजा और प्रधान सज्जनरायजीने इन बातोंका बहुत विरोध किया था पर राजा कंचुकीरायने किसीकी बात न मानी।"

छत्र०—"हे ईश्वर! तू कृपाकर इन लोगोंको सुमति दे। विमलदेव तुम इस समय लौटकर अपने महलमें चले जाओ। ढाँड़ेर राज्य और वहाँकी प्रजाकी सहायता इस समय बहुत आवश्यक है। हीरादेवीके दरबारके दिन मैं तुमसे मिलूँगा। तुम्हारे राज्यकी सारी सेना मुझे सहायता देनेके लिए तैयार है। तुम्हारे सेनापति चामुण्डराय मेरी आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम यह पत्र उन्हें दे देना। जिस समय हीरादेवीका दरबार आरम्भ हो उस समय तुम चामुण्डरायके साथ अपनी सारी सेना लेकर फिदाईखाँकी सेनापर आक्रमण कर देना। तुम्हारी सहायताके लिए कुछ चुने हुए बुन्देले वीरोंको साथ लेकर दलपतिराय ठीक समयपर वहीं पहुँच जायँगे। इसके अतिरिक्त प्रजासे भी तुम्हें यथेष्ट सहायता मिलेगी। परमात्मा चतुर्भुज तुम्हें यशस्वी करेंगे।"

विमलदेव तो वहाँसे लौट जानेके लिए तैयार हो गये; पर विजयदेव वहाँसे हटना नहीं चाहते थे। यह देखकर विमलने विजयसे कहा,—"अब क्या सोचते हो? चलो, लौट चलें।"

विजय०—" अब मैं व्यर्थ वहाँ चलकर क्या करूँगा ? मुझे कुछ काम करने दो । (छत्रसालसे) महाराज, यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं आपके साथ रहकर आपकी कोई सेवा करूँ ।"

छत्र०—" विजय, मुझे किसी प्रकारकी सेवाकी आवश्यकता नहीं है । तथापि तुम लोगोंके साथ रहनेसे मुझे स्वर्गका सुख मिलता है । विमल ! तुम अपने मित्रको दो दिनोंके लिए छोड़ दो । दो दिन बाद फिर तुम्हारी इनके साथ भेंट हो जायगी । "

विम०—" महाराज ! मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है । पर इस बातका आप मुझे वचन दें कि जो अनुग्रह आप इस समय विजयपर कर रहे हैं वही अनुग्रह मुझपर भी करेंगे । "

छत्र०—" विमल ! विजय मुझे जितने प्रिय हैं तुम भी उतने ही प्रिय हो । इस विमल विजयका लाभ मेरे लिए बहुत ही सुखदायक होगा । तुम दोनोंपर सदा मेरा निर्व्याज प्रेम रहेगा । "

विजय और विमलके आनन्दकी सीमा न रही । थोड़ी देर बाद विजयदेवके कोमल हाथोंके स्पर्शका सुख लेते हुए छत्रसाल वहाँसे चले गये ।

जब विमलदेव लौटकर अपने महलमें पहुँचे तब उन्हें मालूम हुआ कि उनकी नव-विवाहिता स्त्री अचानक लापता हो गई । वे बड़ी तत्परतासे उनकी खोजमें लग गये ।

\+ \+ \+

पच्चीसवाँ प्रकरण ।

छत्रसालका जयजयकार ।

जिस दिन चम्पतराय स्वर्गवासी हुए थे उसी दिनसे हीरादेवी अपने आपको कृतकृत्य समझने लग गई थी । जिस दिन उसके सुना कि चम्पतराय मारे गये, महेबा जब्त हो गया, सुफलादेवी और छत्रसाल जंगलोंमें मारे मारे फिरते हैं और आज नहीं तो कल उनका भी अन्त हो जायगा, उसी दिन

उसने समझ लिया कि चम्पतरायके परिवारका समूल नाश हो गया और मेरे जीवनका प्रधान कर्त्तव्य पूरा हो गया। उसने यह भी निश्चित कर लिया था कि अब मैं अमुक स्थानपर रहकर अमुक प्रकारसे अपने पुराने पापोंका प्रायश्चित्त करते हुए शेष जीवन विता दूँगी। जब कई दिनों तक उसे अपने जासूसोंसे छत्रसाल या सुफलादेवीके सम्बन्धमें कोई समाचार न मिला तब वह यह समझ-कर वहुत ही प्रसन्न हुई कि अवश्य ही इन दोनोंको जंगली जानवरोंने खा डाला होगा। उसी अवसरपर राजा शुभकरण युद्धक्षेत्रसे लौटकर आये। शुभकरणकी क्षणिक भेंट हीरादेवीको वहुत दिनों तक न भूली। पर वीचमें ही विमलदेवका राज्यारोहण और विवाह हुआ था और उसीके झमेलेमें वह शुभकरणको भूल रही थी कि इतनेमें उसने सुना कि देवगढ़के युद्धमें वादशाहकी ओरसे लड़कर छत्रसालने वड़ी भारी विजय प्राप्त की। अब उसे फिर भविष्य भवितव्य दिखाई पड़ने लगा। लेकिन इस वातकी उसने स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि वुन्देलखण्डकी प्रजाके विचार अब इतने अधिक वदल गये हैं। उसे इस वातका दृढ़ विश्वास था कि यदि राजा शुभकरण मेरी ओरसे न भी लड़ें, तो भी मैं अकेली ही छत्रसालको अवसर पड़नेपर अच्छी तरह परास्त कर सकूँगी। लेकिन इन वातोंकी उसे कल्पना भी न थी कि प्राणनाथप्रभुने लोगोंके विचार कहाँ तक वदल दिये हैं, उन्होंने लोगोंका आलस्य और भ्रम कहाँतक दूर कर दिया है, दासत्वसे मुक्त होनेका प्रयत्न करना लोग अपना कितना श्रेष्ठ कर्त्तव्य समझने लगे हैं, और हमारी प्रजा और यहाँतक कि हमारी सेना ही हमारे विरुद्ध शस्त्र उठानेके लिए कहाँ तक तैयार हो गई है। उसे पूरा पूरा विश्वास था कि हमारी मण्डलीका प्रत्येक राजा पहलेकी तरह ही हमारा साथ देगा, हमारी हर एक वात मानेगा और अच्छा वेतन पानेपर प्रत्येक वुन्देला वीर हमारी आज्ञाके अनुसार काम करेगा। इसी लिए ज्यों ही उसने सुना कि छत्रसाल सेना संग्रह कर रहे हैं त्यों ही उसने अपनी मंडलीके सव राजाओं और सरदारों आदिको निमंत्रण भेजा, दरवारका दिन नियत किया और सूवेदार फिदाईखाँको अध्यक्ष वनानेके लिए राजी किया। ओड़छेके नागरिकोंके नेत्र फिर मुलाकाती दीवानखानेकी ओर खिंचने लगे।

आज यह निश्चित करना वहुत ही कठिन था कि हीरादेवीका भेस जनाना है या मरदाना। उसने अपने मस्तकपर राजा पहाड़सिंहका शिरस्त्राण

रक्खा था जिससे उसका चेहरा मरदाना मालूम होता था। उसकी ओढ़-नीका आँचल कन्धे तक पहुँचकर ही रह गया था। उसके हाथोंमें एक नंगी तलवार लपलपा रही थी। विमलदेव इस बातकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि वह कब मुलाकाती दीवानखानेकी ओर जाती है। थोड़ी देर बाद वह महलसे निकलकर उक्त सजधजसे दीवानखानेकी तरफ बढ़ी। विमलदेव भी बड़े आनन्दमे अपने घोड़ेपर सवार होकर जल्दी जल्दी सेनापति चामुण्डरायको ओर चले।

जिस समय हीरादेवी दीवानखानेमें पहुँची उस समय फिदाईखाँ अध्यक्षके आसनपर बैठे हुए थे और सारा मण्डप बुन्देलखण्डके राजाओं और सरदारोंसे भरा हुआ था। वह मरदानी चालसे चलती हुई फिदाईखाँके पासतक पहुँची और वहाँ एक आसनपर बैठ गई। उसकी चाल ढाल देखकर सब लोग बहुत ही चकित हुए। उसी समय हीरादेवी गरज कर बोल उठी,—

"आप लोग जानते हैं कि शाहंशाह देहलीने बुन्देलखण्डसे विद्रोह और विद्रोहियोंका समूल नाश करके हम लोगोंपर कितना बड़ा उपकार किया है। इस प्रदेशको अपने संरक्षणमें लेकर उन्होंने सरदार फिदाईखाँ सरीखे नररत्नको उसका सूबेदार नियुक्त किया है; और इस प्रकार वे इस प्रदेशकी साम्राज्यनिष्ठ प्रजाके हितकी वृद्धिमें बहुत कुछ सहायक हुए हैं।"

बीचमें ही एक युवक सरदार बोल उठा, "रानी साहब! शायद आप यह समझ रही हैं कि इस समय जो लोग यहाँ उपस्थित हैं वे अन्धे, बहरे और मूर्ख हैं। फिदाईखाँ या शाहंशाहने हम लोगोंका कौनसा हित किया है? महेवाके चम्पतरायके प्राण लेकर शाहंशाहने बुन्देलखण्डपर फिरसे जजिया सरीखा अन्यायपूर्ण कर लाद दिया है। हमारे प्राणोंसे भी प्रिय देवमन्दिरोंका जल्दी जल्दी नाश किया जा रहा है। हमारी और हमारे धर्मकी ये लोग बराबर दुर्दशा कर रहे हैं। ऐसी अवस्थामें यह कहना कहाँकी बुद्धिमत्ता है कि हमारे हितकी वृद्धि हो रही है?"

हीरादेवीने आवेशमें आकर कहा,—"शायद तुम्हें मालूम नहीं कि तुम इस प्रकारकी बातोंसे मेरा और शाहंशाहका अपमान कर रहे हो; और तुम्हारे

लिए इसका परिणाम कैसा भयंकर हो सकता है। अभी तुम लड़के हो, अभी तुम सरदार फिदाईखाँ या शाहंशाहकी उदारताकी कल्पना नहीं कर सकते। जबतक तुम सयाने और समझदार न हो जाओ तबतक तुम्हारी भलाई इसीमें है कि तुम हम लोगोंके बतलाये हुए मार्गपर ही चलो।"

एक वृद्ध राजा साहब बीचमें बोल उठे,—"रानी साहब! लोगोंको बहकाकर उपदेशके बहानेसे और अपने अनुभवी होनेका ढोंग करके आपने आजतक बुन्देलखंडकी बहुत कुछ हानि की है। बुन्देलखण्डमें इस प्रकार आग लगाकर आप दूरसे तमाशा देख रही हैं। बुन्देलखंडकी एक पीढ़ीको आपने देशद्रोही बना दिया। लेकिन शायद इतने अनर्थोंको ही आप यथेष्ट नहीं समझतीं और अभी कुछ नये अनर्थ करना चाहती हैं। लेकिन अब आप कृपा कीजिए और इन युवकोंको बहकाकर नष्ट करनेका प्रयत्न छोड़ दीजिए।"

हीरादेवीका आवेश बढ़ गया। उसने कहा,—"राजा साहब! आप बिना सोचे समझे कैसी बातें कर रहे हैं! आप सठिया तो नहीं गये हैं?"

पास ही बैठे हुए एक वृद्ध सरदारने कहा,—"राजा साहब न तो सठिया गये हैं और न बिना सोचे समझे बोल रहे हैं। अब तक उन्होंने जो पातक किये हैं उन्हींके कारण उनके मनमें ग्लानि उत्पन्न हुई है।"

हीरादेवी चिल्लाकर बोल उठी,—"बस! अब आप लोग चुप रहिए। आप लोगोंकी ये बातें मुझे या सूबेदार साहबको बिलकुल पसन्द नहीं हैं। अगर अब आप लोग ऐसी बातें करेंगे तो लाचार होकर सूबेदार साहबको आप लोगोंकी रियासतें और जागीरें जब्त कर लेनी पड़ेंगी।"

हीरादेवीकी यह धमकी बहुतसे राजाओं और सरदारोंको बहुत बुरी और अपमानकारक मालूम हुई। एक राजा साहब बोल उठे,—

"आप रहने दीजिए। हम लोग अच्छी तरह समझ गये हैं कि अपने राज्योंकी रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए। अब हम लोग समझ गये हैं कि दूसरोंकी लातें खाने और 'जी हाँ, जी हाँ' करनेकी अपेक्षा अपने बाहुबलके भरोसे अपने राज्यका कहीं अच्छा संरक्षण होता है। हम लोगोंकी भलाई इसीमें है कि आप हम लोगोंके राज्योंकी रक्षाकी चिन्ता छोड़ दें।"

बहुत ही दुःखित होकर हीरादेवीने कहा,—"जान पड़ता है, आज आप लोगोंकी बुद्धि ठिकाने नहीं है।"

कालिंजरके बूढ़े राजा साहब बोल उठे,—“ रानीसाहब ! हम लोगोंकी बुद्धि तो पहले ही ठिकाने नहीं थी। आपके बहकानेमें आकर ही हम लोगोंने अबतक इतने अनाचार किये। इस समय बुन्देलखण्डमें धर्म और नीतिका जो ह्रास और नाश हो रहा है उसके मूल कारण हम राजा लोग ही हैं। यदि हम लोगोंकी बुद्धि ठिकाने होती तो अपने पतिकी हत्या करनेवालीकी बातोंमें न आते और न उनकी सम्मतिके अनुसार चलते। चम्पतरायका अत्यन्त पावन कृत्य हम लोगोंको सदोष न जान पड़ता, स्वयं अपनी हानि करनेके लिए हम लोग तलवार न चलाते और न अपने बचे बचाये अधिकार खो बैठते। लेकिन अब हम लोगोंकी बुद्धि ठिकाने आ गई है और हम लोग अच्छी तरह समझने लग गये हैं कि आपका पक्ष कितना अन्याय-पूर्ण, कितना अनीति-युक्त और कितना स्वार्थ-मूलक है।”

हीरादेवी आँखें फाड़कर बूढ़े राजा साहबकी ओर देखते हुए बोली,—“ हैं राजा साहब ! आपको क्या हो गया है ? खैर, यदि आपको इस प्रकार मेरा विरोध ही करना था तो आप इस दरबारमें ही क्यों आये ? अगर आप हमारी बातें नहीं मानना चाहते थे तो फिर आपने ओड़छेकी सीमामें पैर ही क्यों रक्खा ? ”

कालिंजरके राजाने कहा,—“ आपको ऐसी बातें कहनेका अधिकार ही नहीं है। ओड़छा राज्यके साथ आपका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। पहले मैं ही आपसे पूछता हूँ कि इस उच्च आसनपर बैठनेका आपको क्या अधिकार है ? ओड़छेकी प्रजापर शासन करनेवाली आप कौन होती हैं ? ”

मारे क्रोधके दाँतोंसे होंठ चबाते हुए हीरादेवी बोली,—“ मैं परलोकवासी राजाकी रानी और युवराज विमलदेवकी माता हूँ। ”

कालिंजरके राजाने कहा,—“ यह सब आप रहने दीजिए। मरते समय राजा पहाड़सिंहने जो कुछ कहा था वह हम लोग भूल नहीं गये हैं। सब लोग जानते हैं कि उन्होंने साफ कह दिया था कि विमलदेव हमारा पुत्र नहीं है और हमारे वास्तविक उत्तराधिकारी राजा चम्पतराय हैं। यहाँ जितने राजा और सरदार उपस्थित हैं, वे सब उस समय भी उपस्थित थे। वही लोग बतलावें कि मरते समय राजा पहाड़सिंहने क्या कहा था। उन्होंने साफ यह कहा था न

कि विमलदेव हमारा पुत्र नहीं है ? उनकी अन्तिम इच्छा यही थी न कि ओड़-छेके सिंहासनपर छत्रसाल बैठें ? "

बहुतसे लोगोंने कहा,—" हाँ हाँ, ठीक है । "

एक राजाने कहा,—" राजा पहाड़सिंहकी अन्तिम इच्छा पूरी करनी चाहिए । ओड़छेके सिंहासनपर छत्रसालको बैठाना चाहिए । अज्ञानके कारण हम लोगोंने चम्पतरायका जो कुछ विरोध किया था, उसका बदला चुका देना चाहिए । छत्रसाल ही ओड़छेके सिंहासनपर बैठनेके योग्य हैं । " इस पर कई राजाओंने कहा,—" हाँ, अवश्य ऐसा ही होना चाहिए । " इसके बाद बहुतसे लोगोंने जोरसे छत्रसालका जयजयकार मनाया ।

उसी समय सब लोगोंको एक युवक गम्भीर मुद्रासे सभा-मण्डपकी ओर आता हुआ दिखाई दिया। सब राजाओं और सरदारोंने उठकर फिर उन्नत स्वरसे कहा,—" छत्रसालकी जय । "

हीरादेवी मारे क्रोधके बहुत ही सन्तप्त हुई और ईर्ष्यासे जलने लगी । छत्र-सालका जयजयकार सुनकर फिदाईखाँ भी घबरा गया । सभा-मण्डपके राजा और सरदार बहुत ही प्रसन्न दिखाई पड़ने लगे । उस समय मानो उन्हें साक्षात् परमेश्वर ही मिल गये थे ।

हीरादेवीका क्रोध पराकाष्ठाको पहुँच गया । वह आँखें लाल करके छत्रसा-लकी ओर देखती हुई बोली,—" तुम यहाँ कैसे चले आये ? तुम तुरन्त इस मण्डपसे निकल जाओ, नहीं तो तुम जीते न बचोगे । विद्रोहियोंका यहाँ कोई काम नहीं है । "

छत्र०—(बहुत ही नम्रतापूर्वक) " यहाँसे निकल जानेके लिए मैं नहीं आया हूँ । मैं इन्हीं लोगोंमें मिलकर रहने, इनसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करने और इनके मनसे द्वेष-भाव निकालनेके लिए यहाँ आया हूँ । आप मुझपर क्यों व्यर्थ नाराज होती हैं ? मैंने आपका कौनसा अपराध किया है ?"

हीरा०—" तुम्हारे अपराधोंकी फेहरिस्त सुनानेकी मुझे फुरसत नहीं है । यह दरबार साम्राज्यके प्रति भक्ति दिखलानेके लिए किया गया है। जब दरबार बर-खास्त हो जायगा तब तुम्हारे अपराध बतलाये जायँगे और तुम्हें उचित दण्ड दिया जायगा ।"

फिदाईखाँने कुछ डरते हुए कहा,—" वेशक।"

छत्रसालने फिदाईखाँकी ओर देखते हुए शान्तिपूर्वक कहा,—" बुन्देलखंडमें अब मुसलमानोंके शासनकी अवधि पूरी हो चली है। शीघ्र ही बुन्देलखण्ड इस दासत्वसे मुक्त होकर स्वतंत्रताका आनन्द लेने लगेगा। आज ही स्वतंत्रताके प्रयत्नका मंगलकारक समारंभ चतुर्भुजके मन्दिरमें आरम्भ हुआ है। राजा विमलदेव अपने सेनापति चामुण्डरायको साथ लेकर चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षा कर रहे हैं। यहाँकी अधिकांश प्रजा भी उनकी सहायताके लिए तैयार है। थोड़ी ही देरमें विमलदेव, दलपतिराय और चामुण्डराय विजयी होकर यहाँ आवेंगे। फिदाई खाँ, चतुर्भुजका मन्दिर तोड़नेके लिए तुमने जो सैनिक भेजे हैं वे शीघ्र ही यमपुर पहुँचेंगे। तुम्हें गिरिफ्तार करनेका भार मैंने अपने ऊपर लिया है। अगर तुम चुपचाप उठकर मेरे साथ चले चलोगे तो तुम्हारी जान बच जायगी। लेकिन अगर तुम जरा भी चीं-चपड़ करोगे तो यह तलवार तुम्हारा काम तमाम कर देगी। चलो, इस सिंहासनपरसे नीचे उतरो। इस समय तुम हमारे कैदी हो।"

फिदाईखाँ थोड़ी देर तक चुपचाप सोचता रहा। उसने पहले चारों ओर दृष्टि फेरी तब अन्तमें हीरादेवीकी ओर देखा। अपने आपको हर तरहसे लाचार देखकर वह सिंहासनसे नीचे उतरना ही चाहता था कि इतनेमें हीरादेवीने कर्कश स्वरसे कहा,—

" सूबेदार साहब! आप इस छोकरेसे जरा भी न डरें। इसने अब तक जितनी बातें कही हैं वे सब झूठ हैं। आपके सैनिकोंने अबतक चतुर्भुजका मन्दिर तोड़ डाला होगा। चामुण्डराय या विमलदेव उनसे कभी न लड़ेंगे। ओड़छेके नागरिक बहुत ही विश्वसनीय और राजनिष्ठ हैं। वे कभी ऐसा अनुचित काम न करेंगे। आप निश्चिन्त होकर बैठे रहें। (राजाओं और सरदारोंकी तरफ देखकर) क्या आप लोग विद्रोही छत्रसालकी बातोंमें आकर शाहंशाह और साम्राज्यके साथ वैर करना कल्याणकारक समझते हैं? शाहंशाहका इतना प्रबल राज्य उठा देनेका प्रयत्न करना बड़ी भारी मूर्खता है। यदि आप लोग छत्रसालके इस प्रयत्नका विरोध न करेंगे तो सूबेदार साहब और शाहंशाह सलामत समझ लेंगे कि आप लोगोंकी उसके साथ सहानुभूति है। आजका दरबार इसी लिए किया गया है कि आप लोग छत्रसालके कृत्योंपर अपना

असन्तोप और साम्राज्यके साथ सहानुभूति प्रकट करें। जिसमें शाहंशाह आप लोगोंपर नाराज न हों, जिसमें आप लोगोंकी साम्राज्य-भक्तिमें कलंक न लगे और जिसमें बुन्देलखण्डकी शांति भंग न हो, इस लिए आप लोगोंको केवल शब्दोंसे ही नहीं बल्कि अपने कार्य्योंसे भी छत्रसालके कृत्योंका विरोध करना चाहिए। सूबेदार साहब! आपको जरा भी डरना न चाहिए। किसीकी मजाल नहीं जो आपको छू भी सके।"

छत्रसालने पहलेकी तरह ही शान्त और गम्भीर होकर कहा,—

"फिदाईखाँ! तुम व्यर्थ विषकी परीक्षा न करो। हम बुन्देलोंका साहस और शूरता तुम अच्छी तरह जानते हो। इस लिए चुपचाप अपने आपको मेरे सुपुर्द कर दो। अब मैं तुमसे कुछ अधिक नहीं कहूँगा। अब मेरा काम तलवारसे होगा।"

छत्रसालके शब्दोंमें इतना अधिकार और तेज भरा हुआ था कि हीरादेवीकी बातोंका बिना कुछ विचार किये ही चटपट फिदाईखाँ अपने आसनपरसे उतरकर छत्रसालके पास चला आया और सिर झुकाकर नम्रतापूर्वक कहने लगा,—

"मैं आपके हुक्मका बन्दा हूँ। बराय मेहेरबानी मेरी जान बख्श दें और मुझे अपने बाल-बच्चोंमें जानेकी इजाजत दें।"

छत्र०—"खान! तुम घबराओ मत, तुम्हारी जान नहीं ली जायगी।"

इसके बाद छत्रसालने सभा-मण्डपमें राजाओं और सरदारोंकी ओर देखकर कहा,—भाइयो! विन्ध्यवासिनीके आशीर्वाद और आप लोगोंकी सहायतासे मैं बुन्देलखण्डकी खोई हुई स्वतंत्रता फिरसे प्राप्त करनेके प्रयत्नमें लगा हूँ। लेकिन जब तक आप सब लोग एक न होंगे तब तक इस कार्य्यमें सफलता नहीं होगी। बुन्देलखण्डके स्वतंत्र हो जानेमें यहाँके प्रत्येक निवासीका हित है। जिन लोगोंके हितका प्रयत्न हो रहा है वे ही यदि एक न हुए, वे ही यदि अपने हित करनेवालोंसे लड़ने लगे तो फिर स्वतंत्रता कैसे मिल सकेगी? यदि आप लोग आपसमें लड़कर ही अपनी शक्ति और शूरताका नाश कर देंगे तो फिर गुलामीके गढ़ेमें ले जानेवाली परकीय शक्तिसे हम लोग किस प्रकार लड़ सकेंगे? अब तक हम लोगोंकी गृह-कलहसे जो कुछ हानि हुई वह आप लोगोंसे छिपी नहीं है। फिदाईखाँ

सूवेदार बनाकर ओड़छेमें रक्खे गये और उन्हें आप लोगोंको कठपुतलीकी तरह नचानेका अधिकार दिया गया, इसका कारण आप लोगोंकी गृह-कलह ही है। बुन्देलखण्डमें रावसे रंक तक प्रत्येक व्यक्तिपर जजिया सरीखा अन्यायपूर्ण कर लगाया गया, इसका कारण भी आप लोगोंका गृह-कलह ही है। बुन्देलखण्डके देव-मन्दिर गिराये जाने लगे, देवताओंकी परम पूज्य मूर्तियाँ पैरों तले रोंदी जाने लगीं, और धर्म्मका पग पगपर अपमान होने लगा, इसका कारण भी आप लोगोंका गृह-कलह ही है। आप लोगोंने पिताजीके साथ विरोध किया, उनके स्वतंत्रता-सम्बन्धी कामोंमें अड़चनें डालीं और उनके प्रयत्नोंको सब प्रकारसे निष्फल और व्यर्थ किया। आप ही लोग सोचिए कि इसमें आप लोगोंका क्या लाभ हुआ। इसमें आप लोगोंने बुन्देलखण्डकी प्रजाका कौनसा कल्याण किया? जरा आँखें खोलकर देशकी अवस्था देखिए, तब आपको मालूम होगा कि आप लोगोंकी इस गृह-कलहके कारण बुन्देलखंडकी कितनी अपरिमित हानि हुई है। महाभारत आदि ग्रन्थोंमें आप लोगोंने कौरवों और पाण्डवोंके घनघोर युद्धकी बहुतसी कथायें पढ़ी होंगी। परस्पर एक दूसरेका नाश करनेके लिए वे कितने प्रयत्न किया करते थे? लेकिन आप लोग इस बातका विचार नहीं करते कि जब दूसरोंके साथ लड़नेका प्रसंग आता था तब वे किस प्रकार मिलकर एक हो जाते थे। गृह-कलहमें पाँच पाण्डव भले ही सौ कौरवोंसे लड़ते हों; पर दूसरोंसे लड़नेके समय वे कितने अभिमानसे कहा करते थे कि हम लोग सौ कौरव और पाँच पाण्डव इस प्रकार एकसौ पाँच कौरव-पाण्डव हैं। आज हम लोगोंको कौरवों और पाण्डवोंके उपदेशपर ध्यान देना चाहिए। आप लोगोंसे तथा शाही सेनासे लड़ते लड़ते ही पिताजीके प्राण निकल गये। लेकिन अब वे जीवित नहीं हैं। अब तो उनके साथ आप लोगोंका किसी प्रकारका द्वेष नहीं है न? पिताजीने प्रमादके कारण, नासमझीके कारण अथवा ईर्ष्याके कारण आप लोगोंका अपमान किया होगा, आप लोगोंके साथ वैर खड़ा किया होगा, आप लोगोंको मानसिक और शारीरिक कष्ट पहुँचाये होंगे लेकिन ये सब कार्य उन्होंने स्वतंत्रताके उदात्त कार्य्यके लिए ही किये थे। लेकिन तो भी वह कार्य पूरा न हो सका। अन्तमें उन्होंने समझ लिया कि बन्धु-द्रोह और गृह-कलहके कारण ही हमें सफलता नहीं हो सकी। अपने इस घोर प्रमादके लिए उन्हें बहुत पश्चात्ताप हुआ था। लेकिन अपनी भूल उन्हें बहुत देरमें मालूम हुई थी। इस

लिए वे इस भूलका सुधार न कर सके थे। अब मैंने वह कार्य्य अपने ऊपर लिया है। पिताजीने आप लोगोंका जो कुछ अपराध किया हो, उसके लिए अब मैं आप लोगोंसे क्षमा माँगता हूँ। यदि आप लोगोंको पिताजीका अपराध अक्षम्य जान पड़ता हो तो उसके लिए आप लोग जो दण्ड उचित समझें वह मैं भोगनेके लिए तैयार हूँ। यह छत्रसाल निःशस्त्र होकर अपने पिताकी ओरसे क्षमा माँगनेके लिए आप लोगोंके सामने खड़ा हुआ है। यदि आप लोग उचित समझें तो पुरानी बातोंको भूलकर स्वतंत्रताके प्रयत्नमें मुझे सहायता दें। अथवा यदि आप लोगोंको उचित जान पड़े तो आप लोग मुझे प्राण-दण्ड दें और स्वयं सब लोग मिलकर स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करें। आप लोगोंके शस्त्रोंके घावों और क्षमाके शब्दोंको मैं समान प्रेमसे ही स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ।"

एक राजाने गद्गद स्वरसे कहा,—"छत्रसाल! तुम्हारे पिताने हम लोगोंका कोई अपराध नहीं किया। हम लोगोंने केवल इस दुष्टा हीरादेवीके फन्देमें फँसकर ही इतने अनर्थ किये और अन्तमें चम्पतरायके प्राण लिये। अब हम लोग समझने लग गये हैं कि आपसके वैरसे अबतक हम लोगोंकी कितनी हानि हुई है और कितनी हो रही है। महाराज प्राणनाथने हम लोगोंको वास्तविक अवस्थाका बोध करा दिया है। हमारी आँखोंके सामनेसे भ्रमका परदा बिलकुल हट गया है। हम लोग हीरादेवीका पक्ष छोड़कर तुम्हारा साथ देने और स्वतंत्रताके झण्डेके नीचे लड़नेके लिए तैयार हैं। हम लोगोंने अबतक जो निन्दनीय कृत्य किये हैं, आशा है, तुम उदारतापूर्वक उनके लिए हम लोगोंको क्षमा करोगे। हीरादेवी! तुम्हारा अन्यायपूर्ण और पातकी पक्ष आजसे हम लोगोंने छोड़ दिया। अब हम लोग छत्रसालके कथनानुसार सब काम किया करेंगे।"

हीरादेवीका क्रोध बहुत अधिक बढ़ गया; उसकी समझमें न आता था कि अब मैं क्या करूँ और क्या न करूँ। वह मानो उच्चाकांक्षाओंके शिखरपरसे अपमानके गहरे गड्ढेमें गिर पड़ी। उसे लाखों बिच्छुओंके एक साथ काटनेकासा कष्ट होने लगा। उसकी दृष्टि चंचल हो गई। सब लोगोंको ऐसा जान पड़ने लगा कि वह अपनी आँखोंसे छत्रसालपर चिनगारियाँ बरसा रही है। उसने बड़ी ही विलक्षण दृष्टिसे अपने हाथकी तलवार और पास ही खड़े हुए

८..,..लकी ओर देखा। उसके पैर काँपने लगे और वह छत्रसालपर वार करनेके लिए विकल हो गई। इतनेमें छत्रसालकी गम्भीर और मधुर ध्वनि उसके कानोंमें पड़ी। छत्रसालको बोलते देखकर वह बड़ी शानसे अपने स्थान-पर बैठ गई।

छत्रसालने बड़ी प्रसन्नतासे कहा,—"राजाओ और सरदारो! आप लोगोंने आज मुझे धन्य किया। आप लोगोंने प्राणनाथ प्रभुके प्रयत्नको धन्य किया। आप लोगोंने बुन्देलोंके तेजस्वी रक्तको धन्य किया। आप लोग परस्परके पिछले अपराधोंको क्षमा करें और बुन्देलखण्डके सुखके रथको दासताके अन्धेरे गड्ढेसे निकाल कर स्वतन्त्रताके भव्य प्रासादकी ओर ले चलें। आइए, हम सब लोग आनन्दपूर्वक एक दूसरेसे गले मिलें और आगेके लिए अपना कार्य्य-क्रम निश्चित करें।"

छत्रसाल यह बात कह ही रहे थे और राजा तथा सरदार प्रेमपूर्वक गले मिलनेके लिए आगे बढ़ ही रहे थे कि इतनेमें हीरादेवी बाघिनकी तरह गरजती हुई छत्रसालपर टूट पड़ी। छत्रसालके मस्तकपर वह अपने हाथकी तलवारसे वार करना ही चाहती थी कि किसीने ऊपरसे ही उसका हाथ पकड़ लिया। उसने क्रोधभरी दृष्टिसे अपना हाथ पकड़नेवालेकी ओर देखा। देखते ही उसका सारा क्रोध नष्ट हो गया और वह उसकी ओर भयभीत मुद्रासे देखने लगी।

मेघके गर्जनकी तरह भीषण गर्जन हुआ,—"पातकी स्त्री! तेरे अपवित्र हाथको स्पर्श करना मैं अपना दुर्भाग्य समझता हूँ। लेकिन बुन्देलखण्डके इस अमोल हीरेकी रक्षाके लिए मुझे विवश होकर ऐसा करना पड़ता है। अपना हाथ नीचे कर और अपनी आँखोंपर चढ़ा हुआ खून उतार डाल। तेरे समान राक्षसी इस संसारमें ढूँढ़े न मिलेगी। पर आज मैं तुझे सब अपराधोंका पूरा दण्ड दूँगा। उस दिन तू मुझे बहकाकर निकल भागी थी, पर आज तू मुझसे न बच सकेगी। मैं जो कुछ पूछता हूँ उसका ठीक ठीक उत्तर मुझे मिलना चाहिए। यदि उसमें तूने किसी तरहकी चालाकी की या कोई बात तेरे मुँहसे झूठ निकली तो तेरी ही तलवार तेरे खूनसे भरी हुई दिखाई देगी। तू सच सच बतला कि ललिताके प्राण किस प्रकार गये?"

हीरादेवीका चेहरा बिलकुल काला पड़ गया । उसमें एक शब्द बोलनेकी भी शक्ति न रह गई। थोड़ी ही देर बाद उसने समझ लिया कि अब शुभकरण मुझे किसी प्रकार न छोड़ेंगे। तो भी उसने उनके प्रश्नका कोई उत्तर न दिया। उसकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी।

शुभकरणने उसे चुप देखकर फिर कड़ककर पूछा—"हीरादेवी! मेरे प्रश्नका उत्तर तुरन्त मिलना चाहिए। नहीं तो क्षण भर बाद तेरी गरदन जमीनपर लोटती हुई दिखाई देगी।"

लाचार हीरादेवीने सिसकते हुए कहा—"ललिताका कौमार्य्य नष्ट नहीं किया गया था और न उसने आत्म-हत्या ही की थी। वह पहाड़ीपरसे गिरकर मर गई थी।"

हीरादेवीकी बात सुनकर शुभकरण थोड़ी देर तक चुप रहे। तदनंतर उन्होंने यह जानना चाहा कि हीरादेवी इस सम्बन्धमें झूठ क्यों बोली थी। पर हीरादेवी केवल रोती ही रही, वह एक शब्द भी न बोली। बहुत देर बाद उसने केवल इतना कहा,—"मैंने लोगोंके मनमें केवल चम्पतरायके प्रति घृणा उत्पन्न करनेके लिए झूठमूठ वह बात कही थी।" इसके बाद वह फिर पहलेकी तरह रोने लगी।

शुभकरणने आवेशमें आकर कहा,—"राजाओ और सरदारो! आजसे सोलह वर्ष पहले इसी दीवानखानेमें आप लोगोंके सामने मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं चम्पतरायके प्राण लूँगा और उनके स्वतंत्रतासम्बन्धी कार्य्योंको विध्वंस करूँगा। लेकिन आज मैं आप लोगोंके सामने अपने आपको उस प्रतिज्ञासे मुक्त करता हूँ। मुझे धोखा देकर और बहका कर मुझसे वह प्रतिज्ञा कराई गई थी। इस लिए उस प्रतिज्ञासे मुक्त होनेका मुझे पूरा अधिकार है। हीरादेवीने मुझसे जिस प्रकार प्रतिज्ञा कराई थी वह आप लोग जान ही चुके हैं। अब आप ही लोग बतलावें कि मुझे उस प्रतिज्ञासे मुक्त होना चाहिए या नहीं?"

सब राजाओं और सरदारोंने कहा,—"आजसे हम लोगोंने भी हीरादेवीका पक्ष छोड़ दिया और छत्रसालका पक्ष ग्रहण किया है। आपको इस नीच प्रतिज्ञाके छोड़नेका पूर्ण रूपसे अधिकार है। आप सरीखे योद्धाकी सहायतासे बुन्देलखण्ड शीघ्र ही स्वतंत्र हो जायगा।"

शुभ०—“ अब आप लोग बुन्देलखंडको स्वतंत्र हुआ समझिए । मैं आप लोगोंके सामने अपनी पुरानी प्रतिज्ञाका त्याग करता हूँ और इस बातकी नई प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक मैं जीता रहूँगा तब तक बुन्देलखण्डको स्वतंत्र करनेका प्रयत्न करता रहूँगा । आप लोग स्वातंत्र्य-रवि और अपने युवक नायकका जयजयकार मनावें । ”

सब लोगोंने उन्नत और गम्भीर स्वरसे कहा,—“ छत्रसालकी जय । ”

इसके उपरान्त शुभकरणने छत्रसालसे कहा,—“ छत्रसाल ! मेरा प्रिय पुत्र दलपतिराय कहाँ है ? उससे मिलनेके लिए मेरा जी घबरा रहा है । ”

छत्र०—“ महाराज ! वे अपनी सेना लेकर विमलदेवकी सहायताके लिए चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर गये हैं । ”

शुभ०—“ क्या विमलदेव हाथमें तलवार लेकर लड़ रहे हैं ? ”

छत्र०—“ जी हाँ । ”

शुभ०—“ विमलदेव किससे लड़ रहे हैं ? ”

छत्र०—“ चतुर्भुजका मन्दिर तोड़नेके लिए गई हुई फिदाईखाँकी सेनासे ।”

शुभ०—“ राजाओ और सरदारो ! जब विमलदेव सरीखा युवक हाथमें तलवार लेकर शत्रुसे लड़ रहा है तब हम लोगोंका यहाँ बैठकर वाग्युद्ध करना ठीक नहीं । चलिए सब लोग चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर चलें । ”

शस्त्रोंकी प्रचण्ड झनझनाहट हुई । तुरन्त ही सब लोग “ छत्रसालकी जय ” कहते हुए चतुर्भुजके मन्दिरकी ओर दौड़ पड़े ।

\+ \+ \+ \+

छब्बीसवाँ प्रकरण ।

बुन्देलखण्डकी स्वतन्त्रताका दिन ।

ओड़छेके युद्धमें विजय-श्रीने छत्रसालके गलेमें माला डाली । ओड़छेके प्रासाद और प्रवेशद्वारपर बुन्देलखण्डकी स्वतंत्रताके निशान फड़कने लगे । स्वातन्त्र्यरविकी पहली किरणका आनन्द ओड़छेके नागरिकोंके हिस्सेमें

ही आया और उनके चतुर्भुजके मन्दिरकी रक्षा वड़ी ही चतुरता और दक्षतासे हुई। इसी लिए ओड़छेके लोग छत्रसालको ईश्वरका अवतार समझने लगे। स्वतन्त्रताके लिए उन्होंने तन, मन, धनसे लड़ना निश्चित किया।

ओड़छेमें छत्रसालके विजयी होनेका समाचार वड़ी फुरतीसे सारे वुन्देलखण्डमें फैल गया। थोड़ी ही देरमें सबके मुँहसे यही सुनाई पड़ने लगा कि छत्रसालने फिदाईखाँको हराकर कैद कर लिया। जो थोड़े वहुत मुसलमान वुन्देलखण्डमें इधर उधर पड़े हुए थे वे फिदाईखाँके कैद हो जानेकी खवर सुनकर भाग खड़े हुए। ज्यों ही युवक वुन्देलोंको यह मालूम हुआ कि छत्रसाल ओड़छेमें स्वतन्त्रताके लिए युद्धकी तैयारियाँ कर रहे हैं त्यों ही उन युवकोंकी टोलियोंकी टोलियाँ उनके पास पहुँचने लगीं। छत्रसालका तेज और वल नित्यप्रति शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी तरह वढ़ता गया।

दीवानखानेमें एकत्र राजाओं और सरदारोंको अपने पक्षमें होते देखकर छत्रसालको वहुत ही आनन्द हुआ था। लेकिन जव उन्होंने देखा कि शुभकरण सरीखे वीर भी उनकी ओरसे लड़ेंगे तव तो उनके आनन्दकी सीमा न रही। उन्होंने समझ लिया कि अव यह कार्य्य अवश्य पूरा हो जायगा।

यद्यपि दलपतिराय और शुभकरण दोनों परस्पर गले नहीं मिले तो भी उन्होंने युद्धमें जो अप्रतिम पराक्रम दिखलाया वह अवश्य ही इस योग्य था कि उसके लिए आकाशसे देवता उनपर पुष्प-वृष्टि करते। वे दोनों परस्पर नेत्रोंसे मिले, वदनकी प्रफुल्लतासे मिले, रणोत्साहके गर्जनसे मिले और इस भावनासे मिले कि हम लोग एक ही पक्षमें होकर लड़ रहे हैं। तो भी उन लोगोंको जितना आनन्द हुआ उतना आजतक संसारमें कदाचित् ही किसी और पिता-पुत्रको हुआ होगा।

लेकिन पुष्पके समान कोमल, नवनीतके समान मृदु और नक्षत्रके समान तेजवान् विमलदेवका अद्भुत धैर्य्य और शौर्य्य छत्रसालकी आँखोंके सामनेसे हटता ही न था। उन्होंने विमलको युद्धके अन्ततक तलवार चलाते हुए देखा था। श्रमसे रक्तवर्ण होनेके कारण जो ठीक दोपहरमें वाल-सूर्य्यके समान सुन्दर जान पड़ता था, जिसके मुखपरके पसीनेको अपने हाथसे पोंछनेमें शुभकरणको अभिमान होता था, उस सुन्दर सुकुमार कुमारके एकदम अदृश्य हो जानेके

कारण छत्रसालको रह रह कर बहुत आश्चर्य होता था। उन्हें सन्देह होने लगा कि कहीं वह सुन्दर पुष्प रणक्षेत्रमें गिर तो नहीं पड़ा और इसी लिए वे स्वयं उसे ढूँढ़नेके लिए जाने लगे। इसपर शुभकरणने हँसते हुए कहा,—

"छत्रसाल! तुम विमलके विषयमें चिन्ता न करो। वह कुशल है, पर वह अभी तुम्हारे सामने नहीं आना चाहता।"

शुभकरणकी बात सुनकर छत्रसाल और भी चकराये। छायाकी तरह हर दम अपने साथ रहनेवाले सुकुमार मित्र विजयदेवसे उन्होंने अपने मित्र विमलका पता लगानेके लिए कहा। लेकिन उनसे भी उन्हें वही शुभकरणवाला उत्तर मिला। छत्रसाल बहुत ही चकित हुए। उन्होंने विजयदेवसे पूछा कि क्या विमल-देव मुझसे मिलना नहीं चाहते? इसपर विजयने उत्तर दिया कि उपयुक्त अव-सर आनेपर वे स्वयं ही आपसे मिलेंगे। छत्रसालने बड़ी कठिनतासे अपना समा-धान किया और वे ढाँड़ेर चलकर रणदूलहखाँका प्रबन्ध करनेकी तैयारी करने लगे।

प्राणनाथप्रभु और छत्रसालको कल्पनासे भी अधिक यश मिलने लगा। बुन्दे-लोंकी नैसर्गिक उदार मनोवृत्ति पूर्णरूपसे जाग्रत हो गई। धीरे धीरे छत्रसालकी शक्ति इतनी बढ़ गई कि ओड़छेमें रहना उन्हें असम्भव जान पड़ने लगा। ओड़छेका किला छोटा था और युद्धके कामके लिए उपयुक्त नहीं था; इस लिए प्राणनाथ महाराज और शुभकरणकी सम्मतिसे गढ़ाकोटेके किलेमें सब सामान रक्खा गया और वहीं सैनिक केन्द्रस्थान बनाया गया। चामुण्डराय ओड़छेमें रहकर वहाँकी रक्षा करने लगे।

हीरादेवी मुलाकाती दीवानखानेसे निकलते ही एकदम गायब हो गई। किसीको पता भी न लगा कि वह कब कहाँ चली गई। छत्रसालके एक दूतने आधी मरदानी पोशाक पहने एक पागल स्त्रीको दिल्लीकी ओर जाते हुए देखा था; पर यह निश्चय नहीं हो सका कि वह हीरादेवी ही थी या कोई और।

छत्रसालने गढ़ाकोटाको अपनी सेनाका मुख्य केन्द्र बनाकर कुछ सेनाके साथ ढाँड़ेरकी ओर प्रस्थान किया। उस समय शुभकरण और दलपतिरायने भी ढाँड़े-रसे होकर अपनी राजधानी सागर जानेकी इच्छा प्रकट की। प्राणनाथ महाराजने सुफलादेवीसे मिलनेके लिए जाना चाहा। इस लिए छत्रसाल अपने साथ उन लोगोंके अतिरिक्त थोड़ीसी चुनी हुई सेना लेकर ही ढाँड़ेरकी ओर बढ़े।

ढाँड़ेर जब एक ही पड़ाव बाकी रह गया तो अचानक विजयदेव भी गायब हो गये। पहले विमलको खोकर तो छत्रसाल दुःखी हुए ही थे, इस बार विजयको भी खोकर वे और भी अधिक दुःखी हुए। लेकिन प्राणनाथप्रभुके इस सूखे उपदेशसे ही उन्हें अपना समाधान करना पड़ा कि संसारमें जो कुछ होता है वह अच्छेके लिए ही होता है।

रणदूलहखाँको अपना राज्य देनेकी इच्छा कर [illegible]ी दशा बहुत ही शोचनीय हो गई थी। रणदूलहखाँको मालूम हो गया कि विजयाका विवाह किसी साधारण सरदारके लड़केके साथ नहीं बल्कि चोरीसे ओड़छेके युवराज विमलदेवके साथ कर दिया गया है। उसने समझा कि कंचुकीराय मेरे साथ छल कर रहे हैं। उसने सोचा कि शायद मुझे राज्य देनेमें भी वे इसी प्रकारका कोई कपट करें। इसके अतिरिक्त विजयाके विमलदेवके साथ व्याहे जानेमें उसने अपना भारी अपमान समझा। इस लिए उसने बहुत ही नाराज होकर कंचुकीरायसे कहला दिया कि या तो तुम तुरन्त अपना सारा राज्य मेरे सुपुर्द कर दो और स्वयं मेरे वन्दी हो जाओ और नहीं तो युद्ध करने और मरनेके लिए तैयार हो जाओ। यद्यपि कंचुकीराय उसे अपना राज्य देना चाहते थे, पर अपने जीवनकालमें नहीं। पर जब उन्होंने देखा कि रणदूलहखाँ मुझको ही कैद किया चाहता है तब वे बहुत घबराये। विशेषतः युद्धका प्रसंग देखकर तो उनकी घबराहट और भी बढ़ गई। उनकी समझमें न आता था कि अब क्या करें। वे राज-पदको प्राणोंसे भी अधिक और प्राणोंको राजपदसे भी अधिक प्रिय मानते थे। वे दोनोंमेंसे एकको भी न छोड़ सकते थे और इसी लिए वे कुछ निश्चय भी न कर सकते थे।

सन्ध्याके समय स्वयं रणदूलहखाँ क्रोधसे आँखें लाल किये हुए कंचुकीरायके दरबारमें पहुँचा। उस समय वह उन्हें ठीक यमदूतसा मालूम हुआ। उनके हसे आप ही आप निकल गया,– " इस यमदूतसे मेरी रक्षा कौन करेगा ? "

इतनेमें ही किसीने मानो उनसे कहा,—" छत्रसाल। "

भयसे आँखें फाड़कर कंचुकीरायने सामने देखा। सचमुच उन्हें कुछ लोगोंके साथ छत्रसाल आते हुए दिखाई पड़े। उन्हें निश्चय हो गया कि इस समय

छत्रसालके अतिरिक्त और कोई मेरी रक्षा नहीं कर सकता। वे दौड़कर छत्रसालके पैरोंपर गिरना ही चाहते थे कि इतनेमें महाराज प्राणनाथने कहा,–

“ अपने जामाताके पैर पड़ना ठीक नहीं । संकटसे आपकी रक्षा करना छत्रसालका कर्त्तव्य है । ”

कंचुकीरायने थोड़े शब्दोंमें–पर बड़े ही प्रेमसे छत्रसालका स्वागत किया और उन्हें अपने बहुत ही पास एक आसनपर बैठाया । शुभकरण और दलपतिराय भी पास ही आसनोंपर बैठ गये । उसी समय प्रधान सज्जनराय भी दरबारमें पहुँच गये । दरबारके सब कार्य्य उनके आज्ञानुसार होने लगे । शुभकरणके साथ घूँघट काढ़े तीन स्त्रियाँ भी थीं जो परदेकी आड़में जाकर सुफलादेवीके पास बैठ गईं । छत्रसालको इस बातका बहुत ही आश्चर्य था कि शुभकरणके साथ एक एक करके ये तीन स्त्रियाँ कहाँसे हो गईं । उन्हें चकित देखकर दलपतिराय मुस्करा रहे थे ।

रणदूलहखाँको छत्रसालके दो सैनिकोंने गिरिफ्तार कर लिया। इसके उपरान्त सज्जनरायने प्राणनाथप्रभुसे कहा,—

“ प्रभो ! विन्ध्यवासिनीके गत वार्षिक महोत्सवके समय विमलदेव और राजकुमारी विजयाकी तैयार की हुई माला देवीने छत्रसालके गलेमें डलवाकर जो इच्छा प्रकट की थी, उसका पूर्णरूपसे पूरा होना यद्यपि असम्भव है तो भी रानी सुफलादेवीने मुझसे कहा है कि वे उसे अंशतः पूरा करना चाहती हैं। राजकन्या विजया राजा छत्रसालकी बहुत ही अनुरूप वधू है और इस सम्बन्धमें वर–माता सरलादेवी और वधू–माता सुफलादेवीमें पहले ही बातें हो चुकी हैं; और इसी लिए विजया पहलेसे ही छत्रसालकी वाग्दत्ता वधू हो चुकी है। यदि आपकी अनुमति हो तो शीघ्र ही विवाहका प्रबन्ध किया जाय। ” प्राणनाथप्रभुने कंचुकीरायसे पूछा,—“ आप रानी सुफलादेवीके विचारसे सहमत हैं न ? छत्रसालके साथ आप अपनी कन्याका विवाह करना चाहते हैं न ?”

कंचु०—“ प्रभो ! भला इससे बढ़कर और कौनसी बात हो सकती है। लेकिन कठिनता तो यह है कि विजयाका विवाह पहले ही विमलदेवसे हो चुका है। ”

प्रा०—" नहीं, आप इसकी चिन्ता न करें। विजया और आपके राज्यको बचानेके लिए ही यह युक्ति की गई थी। विमलदेव भी वास्तवमें विजयाकी तरह कुमारी ही हैं। इस लिए विजयाको अभी तक अविवाहिता और कुमारी ही मानना चाहिए। "

कंचु०—(प्रसन्न होकर) " मैं कभी आपकी आज्ञासे बाहर नहीं हूँ। आप जो कहें वह सब मुझे मंजूर है। मैं केवल यही चाहता हूँ कि मेरा राज्य रण-दूलहखाँके हाथमें न पड़ जाय।"

प्रभु०—" इस सम्बन्धमें आप कोई चिन्ता न करें।"

इतना कहकर प्रभुने विजयाको बुलवाया।

थोड़ी देर बाद विजया परदेसे बाहर आई। लेकिन वह अकेली नहीं थी। उसके साथ एक दूसरी सुन्दरी बाला भी प्राणनाथप्रभुकी ओर आ रही थी।

विजयाको तो सबने पहचान लिया, पर उसके साथ एक दूसरी बालाको शुभकरण, दलपतिराय और छत्रसालके अतिरिक्त और कोई पहचान न सका।

छत्रसालको जयसागर सरोवरवाले दैवी-सौन्दर्य्य और मानवी-सौन्दर्य्यका ध्यान आ गया। उन्होंने कई बार सुना था कि विमलदेव वेषधारी स्त्री है। उस समय उन्हें शंका होने लगी कि कहीं विन्ध्यवासिनीका भविष्य पूरा तो नहीं उतरेगा।

प्राणनाथप्रभुने विजयासे पूछा,—" विजया! मैंने तो तुम्हें अकेले बुलाया था, तुम इस बालाको अपने साथ क्यों ले आई?"

विज०—" देवी विन्ध्यवासिनीने हम दोनोंपर अनुग्रह किया है। हम लोग चाहती हैं कि उसका फल भी हम लोगोंको बराबर बराबर ही मिले।"

प्राण०—" क्या यही बाला युवराज विमलदेवके वेषमें थी?"

विज०—" जी हाँ। "

प्राण०—" लेकिन पहाड़सिंहकी कन्याका छत्रसालके साथ किस प्रकार विवाह सम्बन्ध हो सकता है?"

शुभकरण अपने आसनपरसे उठ खड़े हुए और गम्भीरतापूर्वक कहने लगे,—" यह विमला पहाड़सिंहकी कन्या नहीं है; बल्कि मेरी कन्या है। "

शुभकरणकी बात सुनकर सब लोग बहुत ही चकित हुए।

शुभकरणने लोगोंको चकित देखकर फिर कहा,—" आप लोगोंको यह सुनकर आश्चर्य हो रहा है कि विमलदेव अर्थात् विमला मेरी कन्या है। हीरादेवीने चम्पतरायके विरुद्ध जो षड्यंत्र रचा था, विमलदेव उसका एक मुख्य अंग था। हीरादेवीको कोई पुत्र नहीं था और उसे भय था कि ओड़छेका राज्य चम्पतराय या उनकी सन्तानके हाथ लग जायगा, इस लिए उसने चार गर्भवती स्त्रियोंको अपने पास महलमें रक्खा था और यह प्रसिद्ध कर दिया था कि मैं गर्भवती हूँ। हीरादेवीको आशा थी कि यदि उन चारों स्त्रियोंमेंसे किसी एकको भी पुत्र हुआ तो ओड़छेका राज्य चम्पतराय या उनकी सन्तानके हाथमें जानेसे बच जायगा। उन चारों स्त्रियोंमेंसे एक मेरी पत्नी भी थी। पहले बाकीकी तीनों स्त्रियाँ प्रसूत हुईं, पर उन सबको कन्यायें ही हुईं। अन्तमें मेरी स्त्रीके गर्भसे भी इसी कन्या विमलाका जन्म हुआ। हीरादेवी इससे बहुत दुःखी हुई। लेकिन वह सहजमें ही माननेवाली स्त्री नहीं थी, इसलिए उसने यह प्रसिद्ध किया कि मुझे पुत्र हुआ है। और तभीसे ओड़छेके युद्ध तक मेरी कन्या विमला विमलदेवके रूपमें रही थी।"

विमलदेवका इतिहास सुनकर सब लोगोंको बहुत ही आश्चर्य हुआ। हाँ, छत्रसालके आश्चर्यमें आनन्दका भी बहुत कुछ पुट मिला हुआ था।

सज्जनरायने इस बातपर बहुत ही आनन्द प्रकट किया कि विन्ध्यवासिनीकी इच्छा अंशतः नहीं बल्कि पूर्णतः पूरी होती दिखलाई पड़ती है।

छत्रसालके प्रफुल्लित वदनकी ओर देखते हुए प्राणनाथप्रभुने विमला और विजयाके हाथ छत्रसालको पकड़ा दिये।

सब लोगोंने विन्ध्यवासिनीका जयजयकार मनाया और वर तथा वधुओंको शुभ आशीर्वाद दिये।

उस समय बदरुन्निसा और दलपतिरायके सम्बन्धकी भी प्राणनाथ प्रभुको बहुत चिन्ता थी। उस समय तक वे कुछ भी कर्त्तव्य निश्चित न कर सके थे। पर तो भी इस प्रश्नको उसी अनिर्णीत अवस्थामें छोड़ना उन्हें उचित न जान पड़ा। अंतः उन्होंने पहले तो परदेमेंसे बदरुन्निसाको बुलाया और सब लोगोंको—विशेषतः शुभकरणको— दलपतिराय और बदरुन्निसाके पारस्परिक प्रेमकी बातें बतलाईं और तदुपरान्त यह निश्चय किया कि बदरुन्निसा यवन-कन्या है;

और एक हिन्दू राजकुमारके साथ उसका विवाह-सम्बन्ध होना लौकिक दृष्टिसे ठीक नहीं जँचता। इसके अतिरिक्त इस विवाह-सम्बन्धसे सागरके राजकुलके दूषित और कलंकित होनेकी भी सम्भावना थी, इस लिए उन्होंने यही निश्चय किया कि वदरुन्निसा कुमारी रहकर ही युवराज दलपतिरायकी सेवा करे। वदरुन्निसाने इतनेमें ही अपने आपको धन्य माना। सब उपस्थित लोगोंको भी यह व्यवस्था वहुत ही ठीक मालूम हुई।

जिस दिन सब बुन्देले एकत्र हुए, जिस दिन शुभकरण और सब राजा छत्रसालके पक्षमें मिले उसी दिन बुन्देलखण्ड स्वतंत्र हो गया। रणदूलहखाँकी भी फिदाईखाँकी तरह जान वख्श दी गई, पर उसने कृतघ्नता की। हीरादेवीने वादशाहसे मिल कर बुन्देलखण्डपर फिर आक्रमण करनेके लिए जो सेना भिजवाई थी, उसका आधिपत्य स्वयं रणदूलहखाँने लिया। जिस समय गिरहा नामक गाँवमें विमला और विजयाके साथ बड़े समारोहसे छत्रसालका विवाह हो रहा था, उसी समय उपयुक्त अवसर देख कर रणदूलहखाँने उनपर आक्रमण किया। ज्यों ही यह समाचार छत्रसालको मिला, त्यों ही वे विवाहके कपड़े पहने हुए ही रणदूलहखाँसे लड़नेके लिए चल पड़े।

उस युद्धमें रणदूलहखाँ पूर्णस्वरूपसे परास्त हुआ। हीरादेवी भी उसी युद्धमें मारी गई।

बुन्देलखंडको स्वतंत्र करनेवाले राजा छत्रसालको विमल-विजयके साथ ही साथ विमला और विजया भी मिली, और शीघ्र ही उन्होंने बड़े समारोहसे अपनी राजधानीमें प्रवेश किया।
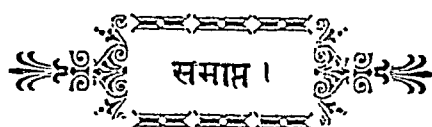
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज ।

यह हिन्दी संसारमें नये ढंगके उच्चश्रेणीके ग्रन्थ प्रकाशित करनेवाली सबसे प्रसिद्ध और सबसे पहिली ग्रन्थमाला है जो विक्रम संवत् १९६५ से बराबर निकल रही है। इसमें अब तक नीचे लिखे ६० ग्रन्थ निकल चुके हैं। स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतसे दिये जाते हैं। एक रुपया 'प्रवेश फी' देनेसे चाहे जो ग्राहक बन सकता है।

१ स्वाधीनता	२)
२ जॉन स्टुअर्ट मिल	॥=)
३ प्रतिभा (उप०)	१।)
४ फूलोंका गुच्छा (गल्पें)	॥<)
५ आँखकी किरकिरी	१॥)
६ चौबेका चिट्ठा	॥=)
७ मितव्ययता	॥≡)
८ स्वदेश (निबन्ध)	॥=)
९ चरित्रगठन और मनोबल	≡)
१२ सफलता	॥)
१३ अन्नपूर्णाका मन्दिर (उ०)	१।=)
१४ स्वावलम्बन	१॥)
१५ उपवास-चिकित्सा	॥)
१६ सूमके घर धूम (प्रहसन)	।)
१७ दुर्गादास (नाटक)	१)
१९ छत्रसाल (उप०)	१॥)
२० प्रायश्चित्त (नाटक)	।)
२२ मेवाड़-पतन (नाटक)	॥=)
२३ शाहजहाँ ,,	१)
२५ उस पार ,,	१=)
२७ देश-दर्शन	?)
२९ नव-निधि (गल्पें)	॥)
३० नूरजहाँ (नाटक)	१=)
३१ आयर्लैण्डका इतिहास	१॥=)
३२ शिक्षा (निबन्ध)	॥)
३३ भीष्म (नाटक)	१।)
३४ काबूर (चरित)	१)
३५ चन्द्रगुप्त (नाटक)	१)
३६ सीता ,,	॥<)
३८ राजा और प्रजा	१)
३९ गोबर-गणेश-संहिता	॥)
४१ पुष्प-लता	१)
४२ महादजी सिन्धिया	॥=)
४३ आनन्दकी पगडंडियाँ	१॥)
४४ ज्ञान और कर्म	३)
४५ सरल मनोविज्ञान	१॥)
४६ कालिदास और भवभूति	१॥)
४७ साहित्यमीमांसा	१।=)
४८ महाराणा प्रतापसिंह	१॥
४९ अन्तस्तल	॥=)
५० जातियोंको सन्देश	॥<)

५१ वर्तमान एशिया	२)	५६ मुक्तधारा (नाटिका)	॥≡)
५२ नीतिविज्ञान	२।)	५७ सुहराव रुस्तम ,,	॥=)
५३ प्राचीन साहित्य	॥-)	५८ चन्द्रनाथ (उपन्यास)	।।।)
५४ समाज	।।।=)	५९ भारतके प्राचीन राजवंश	३)
५५ अञ्जना	१=)	६० रवीन्द्रकथाकुंज (गल्पें)	१)

प्रकीर्णक पुस्तकमाला ।

सीरीजके सिवाय हमारे यहाँसे नीचे लिखी हुई फुटकर पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं । ये भी स्थायी ग्राहकोंको पौने मूल्यमें दी जाती हैं ।

व्यापार-शिक्षा ...	... ।।।)	ब्याही बहू (स्त्रीशिक्षा) ...	।)
शान्ति वैभव ...	... ।-)	श्रमण नारद ...	... =)
कोलम्बस (जीवनी)	... ।।।)	सदाचारी वालक ...	... =)॥
सन्तान-कल्पद्रुम ...	... १)	दियातले अँधेरा ...	... =)॥
पिताके उपदेश ...	... =)	भाग्य-चक्र ...	... -)
अच्छी आदतें ...	... =)॥	विद्यार्थी जीवनका उद्देश्य	... -)॥
अस्तोदय और स्वावलम्बन ...	१=)	सिंहल विजय (नाटक)	... १=)
देवदूत (काव्य)	... ।=)	पाषाणी ,,	... ।।।)
देवसभा (काव्य)	... ।-)	कर्नल सुरेश विश्वास (जी० च०)	॥)
भारत-रमणी (नाटक)	... ।।।=)	अरवीकाव्यदर्शन ...	... १।)
बूढेका ब्याह (काव्य)	... ।=)	सुखदास (प्रेमचन्द)	...॥=)
प्राकृतिक चिकित्सा	... ।=)	जीवन-निर्वाह ...	... १)
योग-चिकित्सा ...	... =)	जननी और शिशु	...॥=)
दुग्ध-चिकित्सा ...	... =)	भारतके प्राचीन राजवंश प्र०	३)
सुगम-चिकित्सा ...	... =)	,, द्वि०	३)

नोट—हमारे यहाँ अन्यान्य प्रकाशकोंके भी उत्तमोत्तम ग्रन्थ विक्रीके लिये मौजूद रहते हैं ।

मैनेजर—हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पोष्ट गिरगाँव, बम्बई ।

आँखकी किरकिरी ।

सरस और सुन्दर उपन्यास ।

सवा लाख रुपयेका पारितोषिक (नॅबिल प्राइज) प्राप्त करनेवाले, एशियाके सर्वश्रेष्ठ लेखक और महाकवि श्रीयुक्त डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुरके प्रसिद्ध उपन्यासका हिन्दी अनुवाद । हिन्दीमें तो क्या अँगरेजी फ्रेंच जैसी प्रौढ़ भाषाओंमें भी इसकी जोड़का कोई उपन्यास नहीं । मनुष्यके आन्तरिक भावचित्रोंका, उनके उत्थान पतन और घात प्रतिघातोंका इसमें बड़ा सुन्दर वर्णन है । यद्यपि इसका कथानक बहुत ही सीधा सादा है, पात्र भी इसमें केवल चार पाँच ही हैं, तो भी ग्रन्थकारमें जो मनुष्य-स्वभावका गंभीरज्ञान है और उस स्वभावके ज्योंके त्यों चित्र खड़े कर देनेका जो विलक्षण कौशल है, उससे यह उपन्यास बहुत ही मनोवेधक बन गया है ।

इसमें कोई आश्चर्यजनक अद्भुत तिलिस्मोंका वर्णन या रोमांच करनेवाले दृश्य नहीं हैं, तो भी इसमें एक छोटेसे कुटुम्बका सीधा सादा चित्र इतनी उत्तमतासे खींचा गया है कि मुग्ध हो जाना पड़ता है । इसके हृदयद्रावक संभाषण और मार्मिक उत्तर प्रत्युत्तर बाँचते समय पढ़नेवाला मनुष्य स्वभावके प्रवाहके साथ इस तरह सहज ही बहता जाता है कि उसे अपनी गतिका भान ही नहीं रहता । जब इस उपन्यासका पूर्वभाग बाँचा जाता है तब ऐसा मालूम पड़ता है कि यह पुस्तक सभी अवस्थाओंके स्त्रीपुरुषोंके पढ़ने योग्य नहीं; परन्तु उत्तरार्धका आरंभ करते ही यह विचार बदल जाता है । क्योंकि वहाँ शृङ्गारका पर्यवसान करुणरसमें होने लगता है और परिणामदर्शी शिक्षाका बोध होने लगता है । ज्यों ही ग्रन्थ समाप्त होता है त्यों ही यह कहे बिना नहीं रहा जाता कि मानवीय मनकी गूढ विचार-कन्दराओंमें छुपी हुई सूक्ष्मसे सूक्ष्म तहोंको हलके हाथोंसे खुरच लेनेमें लेखक बहुत ही कुशल हैं । इस पुस्तकको पढ़कर पाठक जान सकेंगे कि वास्तविक उपन्यास कैसे होते हैं । चौथी बार छपा है । मूल्य १।।।), राजसंस्करण २।।)। देखिए विद्वानोंने इसकी कैसी समालोचना की है:—

सरस्वती । " यह उपन्यास बहुत ही मनोरंजक और सुशिक्षादायक है । हमारे एक मित्रकी राय है कि—' हिन्दीमें इसकी जोड़का एक भी उपन्यास नहीं । इसमें मनुष्यके स्वाभाविक भावोंके चित्र खींच कर उनके द्वारा मित्रकी

तरह—आत्माकी तरह-शिक्षा दी गई है। स्वतः हृदयको गुदगुदा कर, परिणामोंको दिखाकर, अच्छे विचारोंको विजय दिलानेवाली शिक्षा ही चिरस्थायिनी होती है। क्योंकि उसे ग्रहण करनेके लिए लेखक किसी तरहका आग्रह या अनुरोध नहीं करता। इस उपन्यासमें इस वातपर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है। स्वाभाविक चरित्र—चित्रण अगर चित्रका रेखाचित्र है तो छोटे छोटे भावोंका चित्रण उसमें तरह तरहके रंगोंका भरना है, जिन रंगोंसे वह चित्र प्रस्फुटित हो उठता है। ऐसा चित्र वनाना रवीन्द्रवावू जैसे सुचतुर शब्दचित्रकारका ही काम है। इसमें भावोंके उत्थान-पतन और उनकी विकासशैली वर्षामें पहाड़ोंपरसे गिरते हुए झरनोंकी तरह वहुत ही मनोहारिणी है। हृदयके स्वाभाविक उद्गार छोटी छोटी घटनाओंका वड़ी वड़ी घटनाओंके वीच हो जाना और उनके चकित कर देनेवाले परिणाम वड़े ही स्पृहणीय हैं।"

पं० रघुवरप्रसाद द्विवेदी वी० ए०। "इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आँखकी किरकिरी वहुत ही उत्तम लिखी गई है। हिन्दीमें इतनी उच्चश्रेणीका उपन्यास कदाचित् यही एक है। इसका चरित्र-चित्रण वहुत ही वढ़िया हुआ है और मानव-हृदयके भिन्न भिन्न विकारोंका प्रदर्शन वहुत अच्छा किया गया है। × × मैंने ९ वजे रात्रिको पढ़ना आरंभ करके ४ वजे प्रातः काल तक सारा ग्रन्थ आद्योपान्त पढ़ डाला तभी शान्ति मिली। × ×"

पं० ज्वालादत्त शर्मा। "भावपूर्ण ग्रन्थोंको पढ़नेवाले और मनुष्योंकी मानसिक वृत्तियोंका चित्र देखनेकी इच्छा करनेवाले सज्जन इस ग्रन्थको वड़ी आदरकी दृष्टिसे देखेंगे। × × × अनुवादक पाण्डेयजीने रविवावूके वहुत ही वारीक़ और वड़ी मुश्किलसे भाषासूत्रमें गुँथनेवाले भावोंको हिन्दीमें ज्यूंका त्यूं उतारनेमें वहुत ही कमाल किया है। हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकरने वास्तवमें अपना नाम सार्थक किया है।"

कविवर मैथिलीशरण गुप्त। "आँखकी किरकिरीको पढ़ा—और दो वार पढ़ा। वड़ी ही प्रसन्नता हुई। वड़ा ही भावपूर्ण उपन्यास है। इसका एक एक परिच्छेद मानों एक एक चित्र है, अतएव इसे चरितचित्रोंका एक चित्राधार—अलवम—कह सकते हैं। उन चित्रोंकी चित्रणकुशलता अवनीन्द्र ठाकुरकी अङ्कनकुशलतासे भी वढ़कर है। वह सजीव सी होकर आँखोंके सामने आ जाती है।"